HINDI ME KINNAR KENDRIT KATHA SAHITYE KA SAMAJSHASTRIYE ADHYAYAN

A Thesis submitted in Partial Fulfilment of the Requirement for the Degree of Doctor of Philosophy in Hindi

Researcher

VANDANA SHARMA

17HHPH02

Supervisor

DR. M. ANJANEYULU

2022

Department of Hindi,

School of Humanities University of Hyderabad, Hyderabad - 500 046 Telangana India

हिंदी में किन्नर केंद्रित कथा-साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन

हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच. डी उपाधि(हिंदी) हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबंध

शोधार्थी

वंदना शर्मा

17HHPH02

शोध-निर्देशक- डॉ. एम. आंजनियुलू

2022

हिंदी विभाग

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद-500-046 तेलंगाना, भारत

DECLARATION

I, **VANDANA SHARMA** hereby declare that this thesis entitled **"HINDI ME KINNAR KENDRIT KATHA-SAHITYE KA SMAJSHASTRIYE ADHYAYAN" (हिंदी में किन्नर केंद्रित कथा-साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन)** submitted by me under the guidance and supervision of **dr.m anjaneyulu** is a bonafied research work. I also declare that it has not been submitted previously in part or full to this university or any other university or institution for the award of any degree or diploma which is plagiarism free thesis.

I hereby agree that my dissertation can be deposited in shodhganga/INFLIBNET

Signature of supervisor

(Dr. m anjaneyulu)

signature of student

vandana Sharma

17hhph02

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled "**HINDI ME KINNAR KENDRIT KATHA-SAHITYE KA SMAJSHASTRIYE ADHYAYAN" (हिंदी में किन्नर केंद्रित कथा-साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन)** submitted by **VANDANA SHARMA** bearing reg. no. **17HHPH02** in partial fulfillment of the requirements for the award of doctor of philosophy in hindi is a bonafide work carried out by her under my supervision and guidance

The thesis has not been submitted previously in part or full to this or any other university or institution for the award of any degree

Signature of the supervisor

dean of the school of humanities

Head of the department

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled **"HINDI ME KINNAR KENDRIT KATHA-SAHITYE KA SMAJSHASTRIYE ADHYAYAN" (हिंदी में किन्नर केंद्रित कथा-साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन)** submitted by **VANDANA SHARMA** bearing reg. no. **17HHPH02** in partial fulfillment of the requirements for the award of doctor of philosophy in hindi is a bonafide work carried out by her under my supervision and guidance

The thesis has not been submitted previously in part or full to this or any other university or institution for the award of any degree.

Further, the student has the following publication(s) before submission of the thesis for adjudication and has produced evidence for the same in the form of acceptance letter or the reprint in the relevant area of his research:

A. **Published research paper in the following publications :**

   1.Kinnar samaj: samman ki darkar- hastakshar patrika, issue- oct.2017 (ISSN 2454-5684) sampadk .k.p. Anmol volume-44.

   2.Thardgender kanun ke dayre me: vaidhanik pravdhan, Drishtikon patrika march-April 2020 (ISSN 0975-119X) smpadak- dr.ashvini mahajan volume-2

B. Research Paper presented in the following conferences :

1. **Ikkisvi sadi ka hindi sahitye aivm vimarsh ke vividh aayam** (national)
   English and foreign language university, Hyderabad 11 OCT. 2018
2. **ikkisvi sadi ke hindi sahitye me nav vimarsh-kinnr samaj:samman ki darker (upnyason ke sandrbh me)** vivekanand college Kolhapur (national) 9 SEPT 2017

Further the student has passed the following courses towards fulfilment of coursework requirement for Ph.D

Course code	**NAME**	**CREDITS**	**RESULTS**
HN801	RESEARCH METHODOLOGY	4	PASS
HN802	PROJECT WORK-RESEARCH PAPER	4	PASS
HN826	IDEOLOGICAL BACKGROUND OF HINDI LITRATURE	4	PASS
HN827	PRACTICAL REVIEW	4	PASS

SEMESTER GRADE POINT AVERAGE (SGPA) 9.00

The student has also passed M.PHIL degree of this university. He studied the following course in this programme.

Course code		**NAME**		**CREDITS**	**RESULTS**
1.	701	Research Methodology	B+	4	Pass
2.	721	philosophy of history of Literature	B +	4	Pass
3.	722	Aesthetics and stylistics	B	4	pass
4.	723	Social Context of Hindi and Language Registers	B+	4	pass
5.	750	Dissertation	A+	16	Pass

TOTAL CGPA= 8.88

86% PERCENTAGE

Supervisor **Head of Department**

Dean of the School

<u>**अनुक्रमणिका**</u>

भूमिका **पृ.सं. I-V**

प्रथम अध्याय- साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन: एक अवधारणा **1-49**

1.1 समाजशास्त्र का स्वरूप : अर्थ और परिभाषाएँ

1.2 प्रमुख पाश्चात्य एवं भारतीय समाजशास्त्री और उनकी समाजशास्त्रीय मान्यताएँ

1.3 समाज और साहित्य का समाजशास्त्र

1.4 समाज और संवेदना

1.5 समाज और संस्कृति

1.6 समाज और लोकप्रिय साहित्य

1.7 समाजशास्त्र और भाषा

द्वितीय अध्याय: किन्नर समुदाय: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य **50-117**

2.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य: विविध आधार

2.2 किन्नर केंद्रित वैचारिकी का विकास

2.3 किन्नर समुदाय को देखने की विविध दृष्टियाँ

2.3.1अर्थ, परिभाषा और विशेषताएँ

2.3.2 कोशगत अर्थ

2.3.3 मिथकीय आधार

2.3.4 समूह और संगठन

2.4 लिंग सम्बंधी अवधारणा

2.5 धार्मिक आधार: प्राचीन साहित्य के आधार पर

(संस्कृत साहित्य- ऋग्वेद, पुराण, ब्राह्मण ग्रंथ, मनुस्मृति, अष्टाध्यायी, कामसूत्र, महाभारत, रामचरितमानस)

2.6 मध्यकालीन आधार

2.7 आधुनिक परिप्रेक्ष्य

2.7.1 तमिल साहित्य

2.7.2 मराठी साहित्य

2.7.3 अंग्रेजी साहित्य

2.7.4 हिंदी साहित्य और किन्नर विमर्श

2.8 किन्नर समुदाय: वैधानिक प्रावधान

2.9 भारतीय सिनेमा और किन्नर समुदाय

2.10 अश्लीलता और किन्नर समुदाय

तृतीय अध्याय:- किन्नर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का समग्र विश्लेषण 118-194

3.1 चयनित उपन्यासों के विश्लेषण का प्रमुख उद्देश्य

3.2 समकालीन भारतीय उपन्यास (किन्नर केन्द्रित)

3.3 प्रमुख हिंदी उपन्यास

3.3.1 यमदीप - नीरजा माधव (2002)

3.3.2 मैं भी औरत हूँ - अनुसूया त्यागी (2008)

3.3.3 किन्नर कथा - महेंद्र भीष्म (2011)

3.3.4 तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ (2011)

3.3.5 गुलाम मंडी - निर्मला भुराड़िया (2014)

3.3.6 पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा - चित्रा मुद्गल (2016)

3.3.7 मैं पायल - महेंद्र भीष्म (2016)

3.3.8 जिंदगी 50-50 - भगवंत अनमोल (2018)

3.3.9 दरमियाना - सुभाष अखिल (2018)

3.3.10 अस्तित्व- गिरिजा कुमार (2018)

3.3.11 अस्तित्व की तलाश में: सिमरन- मोनिका देवी (2019)

3.3.12 हॉफमैंन (ए पेनफुल जर्नी) - भुवनेश्वर उपाध्याय (2020)

3.3.13 ऐ जिंदगी तुझे सलाम - हरभजन सिंह मेहरोत्रा (2020)

3.3.14 मेरे हिस्से की धूप - नीना शर्मा 'हरेश' (2020)

3.3.15 मंगलमुखी- डॉ. लता अग्रवाल (2020)

चतुर्थ अध्याय- किन्नर केंद्रित चयनित हिंदी कहानियाँ 195-236

4.1 थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ- सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी (2018)

4.2 कथा और किन्नर- विजयेन्द्र प्रताप सिंह (2018)

4.3 जिंदगी के उस पार- राकेश शंकर भारती (2019)

4.4 थर्ड जेंडर की कहानियाँ- सं. विजेंद्र पताप सिंह, डॉ. रवि कुमार गौड़ (2020)

4.5 कबीरन- सूरज बड़त्या

4.6 किन्नर- पूनम पाठक

पंचम अध्याय:- किन्नर केन्द्रित कथा-साहित्य: समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण 237-302

5.1 सामाजिक दृष्टिकोण

5.1.1 रहन-सहन

5.1.2 किन्नर समुदाय की परंपराएँ

5.1.3 नैतिक मूल्य

5.1.4 किन्नरों के प्रति किया जाने वाला भेदभाव

5.1.5 किन्नर समुदाय और समाज

5.1.6 वास्तविक जीवन शैली- अतीत, वर्तमान और भविष्य

5.1.7 शिक्षा के क्षेत्र में किन्नर समुदाय

5.2 आर्थिक दृष्टिकोण

5.2.1 उपजीविका के साधन

5.2.2 सरकारी नौकरी में स्थान एवं उनकी स्थिति

5.3 राजनीतिक दृष्टिकोण

5.3.1 भागीदारी और अधिकार

5.3.2 राजनीति में प्रमुख किन्नर

5.4 धार्मिक दृष्टिकोण

5.4.1 किन्नर समुदाय का धर्म

5.5 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

5.5.1 किन्नर समुदाय और विस्थापन का दर्द

5.5.2 किन्नरों पर यौन अत्याचार

5.6 .सांस्कृतिक दृष्टिकोण

5.6.1 संस्कृति

5.6.2 लोकगीत

5.7 विशेष क्षेत्र में उल्लेखनीय किन्नर

षष्टम अध्याय: किन्नर केन्द्रित साहित्य की भाषा 303-321

6.1भाषा

6.2 भाषागत विविधता

6.3 व्यावहारिक भाषा

6.4 व्यवसायिक भाषा

उपसंहार 322-336

परिशिष्ट 337-341

संदर्भ-ग्रंथ सूची 342-348

भूमिका

वास्तविक अर्थों में संवेदनशील वही है जो समय की नब्ज को अपने हाथों में लिए अपने युग की पीड़ा के स्पंदन को महसूस करता हो और केवल महसूस ही नहीं उस पर विचार-विमर्श भी करता हो। साहित्य को सामाजिक परिवर्तन की धूरी कहा जाए तो कोई अतियुक्ति नहीं होगी क्योंकि साहित्य अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है जो समाज की दिशा और दशा दोनों में परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है। 'किन्नर' नाम सुनते ही एक लज्जा का भाव हमारे दिमाग में आ जाता है, लेखन तो दूर नाम लेने मात्र से भी लोग कतराते है शायद आपने भी यह भाव कभी महसूस किया हो! 'किन्नर' शब्द सुनते ही हमारे मस्तिष्क में एक मनोग्रंथि बन जाती है और हम शर्म महसूस करने लगते है। 'किन्नर' शब्द को मैंने इसीलिए विशेष जोर देकर कहा ताकि हमारा ध्यान आकर्षित हो सके और हम इस शब्द के परे जाकर इनके लिए सोचने और समझने की दृष्टि उत्पन्न कर सके।

किन्नर समाज जिसके साथ बिल्कुल उपेक्षित-सा व्यवहार किया जाता है, उपहास उड़ाया जाता है उसको आज सम्मान की दरकार है। वे आम आदमी की तरह जीने का अधिकार रखते है। आज उनकी व्यथा-कथा, समस्याएँ, उपेक्षा और तकलीफ से हमारे समाज को रू-ब-रू होने की आवश्यकता है। उनको भी समाज की मुख्य धारा, मुख्य समाज में रहने, जीने का अधिकार है। आज साहित्य उनकी पीड़ा की अभिव्यक्ति के लिए तरस रहा है किंतु उसको उचित अभिव्यक्ति नहीं मिल पा रही है। किन्नर समाज को लेकर अभी तक हिंदी साहित्य में कम लेखन हुआ है लेकिन जितना भी हुआ है उसने साहित्य के प्रति हमारे दृष्टिकोण में खासा परिवर्तन किया है।

जिस बालक को कलम पकड़कर लिखना चाहिए वह बालक विभिन्न स्थानों पर भिक्षापात्र लेकर घूमता है। अधिक से अधिक कला के नाम पर वह कलाकार तो बन जाता है लेकिन सम्मान नहीं पाता है। क्या समाज का यह किन्नर नामक घटक कभी प्रथम पंक्ति में सम्मिलित हो सकता है? क्या किन्नरों की कोई ऐतिहासिक या पौराणिक पृष्ठभूमि है? इन प्रश्नों की पड़ताल इस शोध-कार्य में की गई है।

यह उनकी पहचान का संकट, अस्मिता का संकट और उस वजूद को तलासने का संकट है जिसमें उनकों मनुष्य होने का भी प्रमाण देना पड़ता है। हिंदी साहित्य की गद्य विधाओं में उपन्यास और कहानी पाठकों को अधिक रूचिकर प्रतीत होती है। कथावस्तु को अपने में समेटे हुए यह विधाएं समाज का चित्रण हमारे सम्मुख प्रकट करती है। मैंने अपने शोध कार्य हेतु उपन्यास और कहानियों का चयन

किया है। किन्नर समुदाय के सुख-दुःख, आशा-निराशा, समता-विषमता, विश्वास-अविश्वास आदि भावों को प्रकट करने वाले उपन्यासों और कहानियों का चयन किया है जिनमें पंद्रह उपन्यास और चार कहानी संग्रह है।

मैंने हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय में पीएच. डी. में शोध कार्य करने के लिए 'हिंदी में किन्नर केंद्रित कथा-साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन' विषय को चुना। इस विषय को चुनने का उद्देश्य किन्नर समुदाय की स्थिति को अपने शोध-कार्य के माध्यम से प्रकट करना और हिंदी कथा-साहित्य में किन्नर समुदाय के स्थान पर प्रकाश डालना है। इस उपेक्षित किन्नर समुदाय के उन अनछुए पहलुओं को जानना इस शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य है। प्रस्तुत शोध-कार्य के लिए मैंने समाजशास्त्रीय अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया है जिसमें समाजशास्त्रीय मानदंडों को आधार बनाते हुए किन्नर समुदाय का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया।

मैंने शोध-कार्य को छः अध्यायों में विभाजित किया है। जिसमें प्रथम अध्याय 'साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन: एक अवधारणा' है। इसके भीतर समाजशास्त्र को समझने हेतु समाजशास्त्र का स्वरूप : अर्थ और परिभाषाएँ, प्रमुख पाश्चात्य एवं भारतीय समाजशास्त्री और उनकी समाजशास्त्रीय मान्यताएँ, साहित्य, 'समाज और साहित्य का समाजशास्त्र', (उपन्यास और कहानी विशेष) 'समाज और संवेदना', 'समाज और संस्कृति', 'समाज और लोकप्रिय साहित्य', 'भाषा और समाजशास्त्र' की चर्चा की गई है। समाजशास्त्र में मनुष्य और समाज का अध्ययन किया जाता है। इस अध्याय में साहित्य और समाज को जोड़कर देखा गया है तथा साहित्य के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय में किन्नर समुदाय के जन्म, स्थान धर्म और उनके इतिहास से जुड़े तथ्यों और मिथकों का अध्ययन किया गया है साथ ही साहित्य प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक साहित्य में किन्नरों की उपस्थिति इस अध्याय में दर्ज की गई है। 'किन्नर समुदाय: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य' शीर्षक के अंतर्गत इस अध्याय को विविध उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है यथा: 'ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य: विविध आधार', 'किन्नर केंद्रित वैचारिकी का विकास', 'किन्नर समुदाय को देखने की विविध दृष्टियाँ', 'अर्थ, परिभाषा और विशेषताएँ', 'कोशगत अर्थ'-मिथकीय आधार, समूह और संगठन, 'लिंग सम्बंधी अवधारणा, धार्मिक आधार में प्राचीन साहित्य के आधार पर किन्नरों की उपस्थिति दर्ज की गई। (संस्कृत साहित्य-ऋग्वेद, पुराण, ब्राह्मण ग्रंथ, मनुस्मृति, अष्टाध्यायी, कामसूत्र, महाभारत, रामचरितमानस) मध्यकालीन आधार, आधुनिक परिप्रेक्ष्य में तमिल साहित्य, तेलगु साहित्य, मराठी साहित्य, अंग्रेजी

साहित्य, हिंदी साहित्य और किन्नर विमर्श, किन्नर समुदाय: वैधानिक प्रावधान संबंधी सभी बिंदुओं का उल्लेख किया गया है।

इतिहास समाज के निर्माण और पतनशीलता की जानकारी प्रस्तुत करता है। बगैर इतिहास के हम जिस समाज का अध्ययन कर रहें है उसकी जानकारी प्राप्त नहीं कर सकतें। प्रत्येक बीता हुआ अतीत इतिहास बन जाता है जो उस समाज के मूल्यों को प्रकट करता है चाहे उस समाज का अस्तित्व रहे अथवा ना रहे। प्राचीनकालीन जितनी भी सभ्यताएँ थी वे समाप्त हो चुकी है लेकिन जब उनका इतिहास खोजते हैं तब उनके बारे में विस्तृत जानकारी बाहर निकलकर आती है। किन्नर समुदाय लुप्त हो चुका समुदाय नहीं है लेकिन फिर भी इसका अपना इतिहास में स्थान दर्ज है चाहे वह अल्प मात्रा में ही क्यों न हो। प्राचीन धार्मिक ग्रंथो, वेदों, पुराणों, स्मृति-साहित्य, रामचरितमानस, महाभारत, आधुनिक साहित्य में तमिल, तेलगु, मराठी, अंग्रेजी, हिंदी आदि भाषाओं में साहित्य लिखा जा रहा है। ये सभी ग्रंथ और भाषाएँ इनकी अभिव्यक्ति का माध्यम बन रहें है। जहाँ आधुनिक साहित्य में तो इनका वर्तमान संदर्भ प्रस्तुत किया जा रहा है वहीं प्राचीन ग्रंथों में इनका ऐतिहासिक और धार्मिक संदर्भ प्रस्तुत किया गया जो प्राचीनकाल में इनकी उपस्थिति को प्रस्तुत करता है चाहे वह कम ही क्यों न हो।

मेरे शोध विषय का तृतीय अध्याय 'किन्नर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का समग्र विश्लेषण' है। इसके अंतर्गत मैने सभी चयनित उपन्यासों का समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया और इसमें शोध-विषय से सम्बंधित विविध बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है:- 'उपन्यासों के विश्लेषण का प्रमुख उद्देश्य', 'समकालीन भारतीय उपन्यास'(किन्नर केन्द्रित), प्रमुख हिंदी उपन्यास जो मैंने अपने शोध कार्य के अंतर्गत लिए है- यमदीप - नीरजा माधव (2002) मैं भी औरत हूँ - अनुसूया त्यागी (2008) किन्नर कथा - महेंद्र भीष्म (2011) तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ (2011) गुलाम मंडी - निर्मला भुराड़िया (2014) पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा - चित्रा मुद्गल (2016) मैं पायल - महेंद्र भीष्म (2016) जिंदगी 50-50 - भगवंत अनमोल (2018) दरमियाना - सुभाष अखिल (2018) अस्तित्व- गिरिजा कुमार (2018) अस्तित्व की तलाश: सिमरन- मोनिका देवी (2019) हाफमैंन (ए पेनफुल जर्नी) - भुवनेश्वर उपाध्याय (2020) ऐ जिंदगी तुझे सलाम - हरभजन सिंह मेहरोत्रा (2020) मेरे हिस्से की धूप - नीना शर्मा 'हरेश' (2020) मंगलमुखी- डॉ. लता अग्रवाल (2020)प्रमुख हैं।

इन उपन्यासों में अलग-अलग पात्रों के माध्यम से किन्नर जीवन की विभीषिका, उत्पीड़न, वेदना और समाज में उनके प्रति मानसिकता को प्रकट किया गया है। इन उपन्यासों में किन्नर समुदाय की जिंदगी की गुजर-बसर और उनके पहचान के संकट की समस्या को उजागर किया गया है। प्रत्येक उपन्यास के

पात्र अपने जीवन के लिए जूझते है कोई अपनी स्थिति ऊपर उठा लेता है तो कोई लड़ते-लड़ते हार जाता है। 'यमदीप' की नाजबीबी, 'मैं भी औरत हूँ' की रोशनी 'किन्नर कथा' की सोना 'तीसरी ताली' का राजू 'नाला सोपारा' का बिन्नी उर्फ़ विनोद 'मैं पायल' की पायल सिंह 'जिंदगी 50-50 का सूर्या 'दरमियाना' की रेशमा और तारा, 'अस्तित्व' की प्रीत 'अस्तित्व की तलाश' की सिमरन 'हाफमैन ए पेनफुल जर्नी' का अर्जुन 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम' की रोशनी 'मेरे हिस्से की धूप' की मोनी आदि सभी पात्र अपने आपसे लड़ते हैं, परिस्थितियों का सामना करते हैं और किन्नर समुदाय के समक्ष साहस और हौसले से जीवन जीने की राह दिखाते हैं।

चतुर्थ अध्याय 'किन्नर केंद्रित चयनित हिंदी कहानियाँ' है जिनमें पहला कहानी संग्रह 'थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ' सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी का है दूसरा 'कथा और किन्नर' विजयेन्द्र प्रताप सिंह, 'जिंदगी के उस पार' राकेश शंकर भारती, 'थर्ड जेंडर की कहानियाँ' सं. विजेंद्र प्रताप सिंह, डॉ. रवि कुमार गौड़ प्रमुख कहानी संग्रह हैं, 'कबीरन' सूरज बड़त्या, 'किन्नर' पूनम पाठक की कहानियाँ हैं जो कहानी संग्रह में प्रकाशित नहीं हैं। इन सभी कहानी संग्रहों में से मैंने उन्हीं कहानियों को आधार बनाया जिनमें किन्नर जीवन को बखूबी दर्शाया गया। लघु-कथानक में किन्नर जीवन को समेटे हुए यह कहानियाँ बहुत कुछ कह जाती है। जिनमें उनके नारकीय जीवन की विभीषिका का दंश झलकता है।

पंचम अध्याय 'किन्नर केन्द्रित कथा-साहित्य: समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण' है जिसको सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आधार पर उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। सामाजिक दृष्टिकोण में रहन-सहन, किन्नर समुदाय की परंपराएँ, नैतिक मूल्य, किन्नरों के प्रति किया जाने वाला भेदभाव, किन्नर समुदाय और समाज, वास्तविक जीवन शैली- अतीत, वर्तमान और भविष्य, शिक्षा के क्षेत्र में किन्नर समुदाय पर चर्चा की गई है साथ ही समाज में इनकी विविध गतिविधियों का अध्ययन किया गया है।

इस अध्याय के अंतर्गत आर्थिक दृष्टिकोण में उपजीविका के साधन, सरकारी नौकरी में स्थान एवं उनकी स्थिति तथा धार्मिक दृष्टिकोण में किन्नर समुदाय का धर्म और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण में किन्नर समुदाय और उसके विस्थापन के दर्द, किन्नरों पर होने वाले यौन अत्याचार पर विचार किया गया है। राजनीतिक दृष्टिकोण किन्नर समुदाय की राजनीति में भागीदारी और अधिकार तथा राजनीति में प्रमुख किन्नर व्यक्ति विशेष पर प्रकाश डाला गया है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण में किन्नर समुदाय की संस्कृति और लोकगीत तथा विशेष क्षेत्र में उल्लेखनीय किन्नरों पर अध्ययन किया गया है।

षष्ठम अध्याय में किन्नर समुदाय की भाषा से संबंधित जानकारी प्रदान की गई है। जिसमें भाषा की परिभाषा, भाषागत प्रयोग के उदाहरण ध्वनि, चयन, अर्थ चयन, वाक्य चयन, उनकी भाषागत विविधता-मौखिक, लिखित और सांकेतिक व्यवहारिक भाषा तथा व्यवसायिक भाषा के बारे में जानकारी दी गई है।

मैं आभारी हूँ मेरे शोध निर्देशक डॉ. एम. आन्जनूयुलु जी की जिन्होंने पूरे शोध-कार्य में मेरा मनोबल बढ़ाया और समय-समय पर मुझे प्रेरणा व मार्गदर्शन देते रहते हैं। उन्होंने विषय चयन से लेकर शोध कार्य को अंतिम रूप देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। साथ ही विभाग के सभी प्राध्यापकगणों का मार्गदर्शन समय-समय पर मिलता रहा| मेरे DRC मेम्बर आदरणीय प्रो.आर.एस.सर्राजू सर और प्रो. गजेंद्र पाठक सर का भी मैं धन्यवाद करती हूँ जिनका दिशा-निर्देश हमेशा मिलता रहा|

शोध-कार्य की इस यात्रा में मेरे माता-पिता मंजू शर्मा और राजेंद्र प्रसाद का महत्वपूर्ण योगदान रहा जिन्होंने हमेशा उत्साहपूर्वक कार्य करने के लिए मुझे प्रेरित किया। मेरे सास-स्वसुर (जयराज शर्मा और सीता जी) ने भी विवाह के पश्चात भी मेरे कार्य में निरंतरता बनाये रखने में मेरा सहयोग किया। साथ ही मेरे जीवनसाथी स्नेहिल सिद्धार्थ जी ने मेरा अंत तक साथ दिया। अटल-गौरी, अन्नू दीदी, स्मृति, अमित दादा-सीमा भाभीजी, बरजी भुआ, धाय सुशीला देवी और अपने सभी मित्रों देविका, प्रियंका दीदी, गंगा, स्वाति, सुरेश, श्रुति, कुलदीप भैया, वंदना जांगिड, महिमा, नगेन्द्र भैया, राजेश भैया आदि की आभारी हूँ जिन्होंने मुझे संबल प्रदान किया और कार्य करने के लिए प्रेरित किया और ऐसे चुनौतीपूर्ण कार्य को करने का हौंसला प्रदान किया।

इनके अलावा थर्डजेंडर समुदाय पायल सिंह, गंगा सिंह, फातिमा बीबी का भी बहुत-बहुत आभार जिन्होंने अपने समुदाय से जुड़ी हुई जानकारी को मुझसे साझा करके शोध-कार्य में सहायता की।

प्रथम अध्याय- साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन: एक अवधारणा

1.1 समाजशास्त्र का स्वरूप : अर्थ और परिभाषाएँ

1.2 प्रमुख पाश्चात्य एवं भारतीय समाजशास्त्री और उनकी समाजशास्त्रीय मान्यताएँ

1.3 समाज और साहित्य का समाजशास्त्र

1.4 समाज और संवेदना

1.5 समाज और संस्कृति

1.6 समाज और लोकप्रिय साहित्य

1.7 समाजशास्त्र और भाषा

साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन: एक अवधारणा

'समाजशास्त्र' किसी विषय पर अध्ययन या शोध कार्य करने की दिशा में व्यापक दृष्टि प्रदान करता है। विषय के विश्लेषण की एक ऐसी पद्धति; जिसका व्यावहारिक और सैद्धांतिक पक्ष, विषय से संबंधित अध्ययन की सूक्ष्म और तार्किक शक्ति प्रदान करता है। अध्ययन की यह पद्धति नई नहीं अपितु बहुत पुरानी है और इसका अपना लंबा इतिहास है। हम समाज में रहते हैं, उठते-बैठते हैं तो स्वभाविक है कि इसका हमारे ऊपर प्रभाव अवश्य पड़ता है और मनुष्य की गतिविधियों का समाज पर प्रभाव पड़ता है। इस तरह से दोनों अन्योन्याश्रित है। परस्पर एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यदि यह एक-दूसरे से अलग होना चाहे तो इनका कोई अस्तित्व नहीं रह जाता है। प्रमुख विचारकों ने समाज और मनुष्य के अवयवों का अध्ययन करके एक पद्धति विकसित की जिसे समाजशास्त्रीय पद्धति कहा गया। समाजशास्त्रीय अध्ययन के अपने मानदंड है। साहित्य और समाज दोनों परस्पर एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।

लेखक अपनी दृष्टि से समाज को जिस तरह से देखता है, उसी तरह का वह साहित्य लिखने की कोशिश करता है। हिंदी साहित्य में कहानी, कविता, उपन्यास, नाटक आदि विविध विधाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जाता है; लेकिन इसके अलग-अलग दृष्टिकोण होते हैं जैसे- ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक आदि। इसमें सामाजिक ताना-बाना अधिक जुड़ा हुआ रहता है। मानवीय जीवन का प्रत्येक वह पहलू जो मनुष्य जीवन से जुड़ा हुआ है उसका अध्ययन इस पद्धति के अंतर्गत किया जाता है।

व्यक्ति समाज में अकेला नहीं रहता है और न ही रह सकता है इसलिए वह आपस में सामाजिक संस्थाओं से संगठित रहता है। चूँकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इस कारण वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु एक-दूसरे पर निर्भर रहता है। इस तरह से व्यक्तियों की सामाजिक क्रियाओं एवं अंत:क्रियाओं का अध्ययन समाजशास्त्र में किया जाता है।

यहाँ समाजशास्त्र और साहित्य में निहित संबंधों की व्याख्या करना अनिवार्य हो जाता है क्योंकि समाजशास्त्र मानवीय सम्बन्धों की पड़ताल करता है और साहित्य उन संबंधों की व्याख्या करने का काम करता है। कथा-साहित्य में समाजशास्त्रीय अध्ययन पद्धति के अपने नियम हैं। मैंने अपने शोध कार्य में कथा-साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन विषय का चयन किया है, इसीलिए इसके अंतर्गत कथा-साहित्य में चयनित कहानियों एवं उपन्यासों का अध्ययन किया जाएगा। हिंदी साहित्य में उपन्यास और कहानी गद्य-साहित्य की सशक्त विधाएँ हैं। प्रथम अध्याय में मैं अपने शोध कार्य के अंतर्गत समाजशास्त्रीय अध्ययन के सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों पक्षों के साथ साहित्य में समाजशास्त्र के महत्त्व और उसकी भूमिका को प्रस्तुत करूंगी।

1.1 समाजशास्त्र का स्वरूप:- अर्थ एवं परिभाषाएँ

समाजशास्त्र एक ऐसी प्रणाली है जो समूचे समाज और उसके परिवेश को अपने में समेटे हुए रहती है। यह व्यापक स्वरूप में समाज को देखता है। साथ ही इसमें केवल व्यक्ति ही नहीं अपितु समाज और उससे जुड़ी सभी चीजे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में समाहित रहती है। इसके अंतर्गत हम यह जानने का प्रयत्न करेंगे कि समाजशास्त्र होता क्या है? क्यों इसके विविध क्षेत्रों में अलग-अलग दृष्टिकोणों से कार्य किए जाते है। किसी भी वस्तुस्थिति को देखने के विविध आयाम हो सकते है और इन आयामों को देखने हेतु कुछ निश्चित उद्देश्य और मानदंड होते है। कुछ विद्वानों का मानना है कि समाजशास्त्र एक ही पद्धति को लेकर चलता है लेकिन यह सत्य नहीं है; यह विविध आयामों से भरा पड़ा है। समाजशास्त्र के व्यावहारिक और सैद्धांतिक दो पक्ष होते है। इन दो पक्षों का क्षेत्र भी काफी विस्तृत है। समाजशास्त्र समाज की विभिन्न स्थितियों और समस्याओं के अध्ययन में सहायक है।

समाजशास्त्री समाज की संपूर्ण स्थिति का जायजा लेने हेतु समाजशास्त्रीय अध्ययन करता है। जिसके अंतर्गत सामाजिक परिवर्तन के मापदंड और उसके विविध घटकों का अध्ययन किया जाता है। यह statistical analysis (सांख्यिकीय विश्लेषण), सामाजिक उन्मुखताओं (social attitudes) तथा social problems (सामाजिक समस्याओं) का अध्ययन करता है। समाजशास्त्रीय अध्ययन के दौरान जिस समाज का हम अध्ययन कर रहें हैं हमें उस संपूर्ण समाज का

नक्शा मिल जाता है। समाजशास्त्र जिसे विज्ञान कहा जाता है, विकासशील विज्ञान की श्रेणी में आता है। विश्व के समाजशास्त्रीय विचारकों की इस संबंध में अलग दृष्टि रही है। अगस्त कौंत इसे सामाजिक व्यवस्था एवं प्रगति का विज्ञान कहते हैं तो, दुर्खिम 'सामूहिक प्रतिनिधानों का विज्ञान', मैक्सवेबर 'सामाजिक क्रियाओं के अर्थपूर्ण बोध का विज्ञान' मानते हैं तो मैकाइवर और पेज 'सामाजिक संबंधों का अध्ययन करने वाला विज्ञान', गिलिन और गिलिन 'सामाजिक अंत:क्रियाओं का अध्ययन करने वाला विज्ञान', सीमेल 'मानवीय अंत: संबंधों के स्वरूपों का विज्ञान', सोरोकिन 'सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाओं सामान्य स्वरूपों, प्रकारों और उनके अंत: संबंधों का सामान्य विज्ञान' कहते हैं। सामाजिक संबंधों से तात्पर्य दो या दो से अधिक व्यक्तियों अथवा उनके समूह को जिन्हें एक-दूसरे का आभास है। जो एक-दूसरे के लिए कुछ कर रहें हैं। उसके संबंध सहयोगपूर्ण, तनावपूर्ण अथवा संघर्षात्मक कैसे भी हो सकते हैं। व्यक्तियों में पाये जाने वाले यह सामाजिक सम्बंध ही है जिनके आधार पर समाज का निर्माण होता है। इस प्रकार से पाश्चात्य विचारकों ने समाजशास्त्र को विज्ञान की संज्ञा दी है जो अध्ययन का एक ही प्रकार है। समाज के अध्ययन हेतु उसकी आरंभिक शर्त सामाजिक व्यवस्थाओं का अध्ययन करना हैं।

सामाजिक व्यवस्थाओं में उनकी रचना, निर्माण, गठन का पता लगाया जाता है। यदि एक सामाजिक संस्था पहले से ही स्थापित है तो उससे जुड़े सभी पहलुओं का अध्ययन किया जाना जरूरी हो जाता है। सामाजिक व्यवस्था की स्थिरता हेतु सामाजिक संतुलन आवश्यक है, और यह संतुलन किस प्रकार से आ सकता है यह तो उस व्यवस्था में रहने वाले लोगों की जानकारी में ही अधिक हो सकता है। कोई भी सामाजिक संस्था एक मूल्य पर टिकी हुई नहीं रह सकती। उसके विविध मूल्य होते हैं और उन मूल्यों के पीछे अनेक कारण विद्यमान होते है, इस संदर्भ में पारसंस लिखतें हैं कि:- "सामाजिक व्यवस्था तब तक नहीं पनप सकती जब तक की वैयक्तिक कर्ताओं को उनकी स्थिति के अनुसार भूमिका निर्वाह हेतु पर्याप्त मात्रा में इस प्रकार प्रेरित न किया जाये कि सकारात्मक रूप में वे उन आशाओं को पूरा करें जिनकी कि अन्य व्यक्ति या समाज अपेक्षा करते हैं और नकारात्मक रूप में वे स्वयं को भ्रष्ट व विनाशक प्रवृत्तियों या समाज विरोधी आचरणों से पृथक रखें।"[1] यहाँ पारसंस उस सामाजिक व्यवस्था के विकास की बात करते हैं जो सकारात्मक कारणों के

[1] talcott parsons, the social system', the free press, glencoe illinois (1952) p.27

परिणामस्वरूप पनपी हो न कि नकारात्मक दृष्टि से। समाज की प्रगति उसके नैतिक आचरण में छिपी हुई रहती है न कि अनैतिक आचरण में, इसलिए दुष्प्रवृत्तियाँ समाज को पतन की ओर अग्रसर करती है न कि विकास की ओर। यही विद्वान पारसंस का सामाजिक संस्थाओं के मूल में मंतव्य दिखाई पड़ता है इस कारण वे नैतिकता पर अधिक बल देते है।

समाज का आवरण काफी विस्तृत है इसलिए समाज में असंतुलन की स्थिति न्यूनाधिक मात्रा में विद्यमान रहती हैं। इस असंतुलन की स्थिति को शीघ्रता से समाप्त नहीं किया जा सकता। अपितु धीरे-धीरे कम किया जा सकता है। यह भेद पूर्णतया समाप्त होने वाला नहीं है क्योंकि समाज विविधताओं से भरा पड़ा होता है। समाज की विविधताओं के चलते ही एक परिप्रेक्ष्य को आधार बनाकर समाज को नहीं देखा जा सकता। कहीं वर्ग की असमानता है तो कहीं अर्थ की, और इसी असमानता के कारण व्यक्ति के सामाजिक मानदंड और जीवन जीने का तरीका भी अलग-अलग होता है।

सर्वप्रथम सन् 1780 में फ्रांसीसी निबंधकार इमेनुअल जोसफ सीयस द्वारा एक अप्रकाशित पांडुलिपि में 'ocialogical' शब्द का प्रयोग किया गया था। इसके बाद अगस्ट कौंत ने इस शब्द का व्यक्तिगत रूप से प्रयोग किया। इन्हें समाजशास्त्र का जनक भी कहा जाता है क्योंकि आरंभिक रूप में समाजशास्त्र की शुरुआत इन्हीं महोदय के द्वारा की गई। कौंत ने समाजशास्त्र के साथ-साथ अन्य इतिहास, मनोविज्ञान और अर्थशास्त्र को भी एकजुट करने का प्रयत्न किया। जहाँ कौंत को इसे स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है वही विचारक एमिल दुर्खिम इसे व्यावहारिक पक्ष प्रदान करते है। बींसवी शताब्दी तक आते-आते समाजशास्त्र अपने व्यापक स्वरूप में सामने आने लगा और इसकी शुरुआत अमेरिका से मानी जाती है। अमेरिका और फ्रांस में हुई दोनों क्रांतियों से समाजशास्त्र का उदय माना जाता है।

समाज एक संस्था है, समूह और व्यवस्था है; जिसके अपने नियम होते है, उसी प्रकार समाजशास्त्र के भी नियम होते है उन्हीं नियमों को ध्यान में रखकर समाज का समाजशास्त्रीय दृष्टि से अध्ययन किया जाता है; जिसमें समाज को सामाजिक संबंधों का जाल या सामाजिक ताने-बाने के

रूप में देखा जाता है। समाजशास्त्र समाज का क्रमबद्ध अध्ययन करने वाला विज्ञान है। समाजशास्त्र शब्द दो शब्दों socio और logy से मिलकर बना है जिनका अर्थ क्रमश: समाज तथा विज्ञान है।

वैसे देखा जाए तो समाजशास्त्र की अनेकों परिभाषाएँ है लेकिन कुछ विद्वानों ने गहन अध्ययन के उपरांत कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएँ इस प्रकार दी है:-

<u>पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार समाजशास्त्र की परिभाषाएँ:-</u>

अगस्त कौंत के अनुसार:-

वे लिखतें हैं कि "समाजशास्त्र इस बात का अध्ययन करता है कि किस प्रकार सामाजिक जीवन के प्रभाव से मानव का मस्तिष्क और युक्ति विकसित होते है। व्यक्ति एक अमूर्त धारणा है। समाज एक वास्तविकता है। समाज प्राकृतिक नियमों के अनुसार चलता है। समाजशास्त्र का उद्देश्य समाज को चलाने वाले इन्हीं प्राकृतिक नियमों को जानना है।"[2] कौंत अपने समय के प्रखर समाजशास्त्री थे। उन्होंने समाज की संरचना और बनावट का गहन अध्ययन किया इसीलिए वे इतने बड़े सिद्धांत के जन्मदाता माने जाते है। उन्होंने समाज को प्राकृतिक नियमों से युक्त एक सामाजिक व्यवस्था स्वीकार किया है।

गिडिंग्स के अनुसार:- "समाजशास्त्र समाज का वैज्ञानिक अध्ययन है।"[3]

मैक्सवेबर के अनुसार:- "science which attempt the interpreative understanding of social actions in order there by to arrive at casual explanation of its course and effects ।"[4]

(समाजशास्त्र वह विज्ञान है, जो सामाजिक क्रियाओं का विश्लेषणात्मक बोध कराने का प्रयत्न करता है और सामाजिक क्रियाओं का मनन और विवेचन प्रस्तुत करता है।)

---

[2] मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचार', ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली पृ.सं.15

[3] वही, पृ.सं.-11

[4] Sociology- all blogspots.com.com, 2009- home page (maxweber-theory of social and economic)

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार- "समाज रीतियों, कार्य विधियों अधिकार और पारस्परिक सहायता अनेक समूहों और उपविभागों, मानव व्यवहार के नियंत्रणों तथा स्वतंत्रता की व्यवस्था है। यह सामाजिक संबंधों का जाल है तथा सदैव परिवर्तित होता रहता है।"[5]

हिलर के अनुसार:- "व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन, एक-दूसरे के प्रति उनका व्यवहार, उनके मापदंडों जिनसे वे अपने व्यवहार को नियंत्रित करते हैं, समाजशास्त्र के विषय के अंतर्गत आते हैं।"[6]

दुर्खिम के अनुसार:- "समाजशास्त्र सामूहिक प्रतिनिधित्वों का विज्ञान है।"[7]

पी.सेरोकिन के अनुसार:- "समाजशास्त्र वस्तुत: अंत: क्रियाओं का विज्ञान है।"[8]

समाजशास्त्र को विज्ञान समाज के क्रमबद्ध अध्ययन करने को लेकर कहा जाता है, उदाहरण के लिए एक कामकाजी महिला के घर में होने वाले झगड़ों के बारे में अध्ययन करके बताया जा सकता है कि इसके पीछे क्या-क्या कारण हो सकते हैं? कामकाजी महिलाओं की मन:स्थिति, कामकाजी महिलाएँ ही ऐसा क्यों करती है? क्या अन्य परिवारों में भी ऐसा होता है? आदि का अध्ययन किया जा सकता है। समाज का क्रमबद्ध अध्ययन करने के कारण ही समाजशास्त्र को विज्ञान की संज्ञा दी जाती है। लेकिन कुछ समाजशास्त्री इसको विज्ञान मानने का विरोध करते हैं; क्योंकि यह तर्क के आधार पर विश्लेषण तो करता है लेकिन भविष्यवाणी नहीं कर सकता।

भारतीय विद्वानों के अनुसार समाजशास्त्र की परिभाषाएँ :-

डॉ. निर्मला जैन के अनुसार:-

"समाजशास्त्र अनिवार्य रूप से समाज मे स्थित मनुष्य का वैज्ञानिक, वस्तुपरक अध्ययन हैं। यह सामाजिक संस्थाओं और सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन है।"[9]

---

[5] वीरेंद्र प्रकाश शर्मा, 'समाजशास्त्र विश्वकोश', पंचशील प्रकाशन जयपुर, (2011) पृ.सं.259
[6] https://www.kailasheducation.com/2020/04/samajshastra-arth-paribhasha-visheshtaye.html
[7] https://www.rsedublog.in/meaning-and-definition-of-sociology/
[8] एस.एल. दोषी, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.348
[9] डॉ. निर्मला जैन, 'साहित्य का समाजशास्त्रीय चिंतन', आदेश बुक डिपो नई दिल्ली, (प्रथम.सं.1985) पृ.सं.147

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार-

“समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत और नियामक व्यवस्था से है जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित्त जाने-अनजाने कर लेते है।”[10]

इस प्रकार भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों के द्वारा दी गई परिभाषाएँ समाजशास्त्र संबंधी विचारों को प्रकट करती है। इन सभी के मूल में समाज ही है और उसमें रहने वाले लोग। उनके क्रियाकलाप जो समाज को प्रभावित करते हैं जिनका अध्ययन समाजशास्त्र में किया जाता है। समाज के अध्ययन की प्रक्रिया के बिना समाज के विकास की प्रक्रिया को नहीं समझा जा सकता। प्रमुख पाश्चात्य विद्वानों में कौंत, दुर्खिम, रेमंड विलियम्स, तेन, मादाम स्टेल, मेक्सवेबर, मार्क्स आदि ने समाजशास्त्र के माध्यम से सामाजिक जीवन की पद्धति विकसित की और लोग जिस समाज में रहते हैं उसके विकास और नियमों को समझाया।

1.2 प्रमुख पाश्चात्य एवं भारतीय समाजशास्त्री और उनकी समाजशास्त्रीय मान्यताएँ

समाजशास्त्र का कैनवास काफी विस्तृत है इसीलिए पश्चिम के विचारकों ने इस पर बड़ी गंभीरता से अध्ययन किया है। विद्वानों में भी समाजशास्त्र को लेकर एकमत नहीं है। प्रमुख समाजशास्त्रियों में अगस्ट कौंत, रेमंड विलियम्स, तेन, मादाम स्टेल, लूसिए गोल्डमान, हर्बर्ट स्पेंसर, कार्ल मार्क्स आदि का नाम लिया जा सकता है। इन विचारकों ने इस विषय पर गंभीरता से सोच-विचार किया और अपनी-अपनी मान्यताएँ स्थापित की। इस बात से यह सिद्ध नहीं होता कि भारतीय विद्वानों का इस ओर ध्यान ही नहीं गया। यद्यपि यह चिन्तन भारत में अठाहरवीं शताब्दी के उतरार्द्ध तक आया लेकिन भारतीय विचारकों ने भी इस पर गंभीरता से विचार किया। प्रमुख विचारकों में नाम लिया जा सकता है:- राधाकमल मुखर्जी, गोविंद सदाशिव घुर्ये (1893-1983) धुर्जटि प्रसाद मुखर्जी, (1894-1961) अक्षय रतनलाल देसाई (1915-1994) डॉ. अम्बेडकर (1891-1956) श्यामाचरण दुबे आदि। इन समाजशास्त्रियों से प्रेरणा लेकर ही साहित्य के समाजशास्त्रियों ने इस दिशा में आगे कार्य किया। प्रमुख पाश्चात्य और भारतीय समाजशास्त्रियों की सूक्ष्म आलोचनात्मक दृष्टि इस प्रकार है:-

---

[10] डॉ. नगेन्द्र, ‘साहित्य का समाजशास्त्र’, पृ.सं. 06

अगस्ट कौंत:-

समाजशास्त्र की एक व्यवस्थित विज्ञान के रूप में स्थापना करने का श्रेय प्रत्यक्षवाद के जनक प्रसिद्ध दार्शनिक अगस्त कौंत को जाता है। समाजशास्त्र का जन्म वास्तव में अगस्त क्रांति के परिणामस्वरूप हुआ। सन् 1838 में अगस्त कौंत ने 'समाजशास्त्र' नामक शब्द का अविष्कार किया। कौंत समाजशास्त्र को पहले 'फिजिक्स' कहते थे। कौंत के अनुसार "समाजशास्त्र इस बात का अध्ययन करता है कि किस प्रकार सामाजिक जीवन के प्रभाव से मानव का मस्तिष्क और युक्ति विकसित होते है। व्यक्ति एक अमूर्त धारणा है। समाज एक वास्तविकता है। समाज प्राकृतिक नियमों के अनुसार चलता है। समाजशास्त्र का उद्देश्य समाज को चलाने वाले इन्हीं प्राकृतिक नियमों को जानना है। प्राकृतिक विज्ञान प्रकृति के नियमों को जानकर मानव जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास करते है। समाजशास्त्र का उद्देश्य समाज के नियमों को जानकर समाज को बेहतर बनाना है।"[11] वे समाजशास्त्र की श्रृंखला का गठन मुख्यतया समाज से ही मानते हैं, किताबें पढ़कर या चिंतन के माध्यम से समाजशास्त्र की व्याख्या को वे बेकार मानते थे।

उनका उद्देश्य समाजशास्त्र को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करना था। वे समाजशास्त्र के उपयोगिता सम्बंधी विचार भी प्रस्तुत करते है तथा समाज और सामाजिक घटनाओं, सामाजिक संस्थाओं का विश्लेषण करने में इसकी उपयोगिता समझते है। यथा 'Society is governed by natural and definite rules similar to other events. The aim of sociology is to explore these rules as a positivism subject and to reconstruct society on the basis of them.' "समाज अन्य घटनाओं के समान प्राकृतिक एवं निश्चित नियमों से संचालित होता है। समाजशास्त्र का उद्देश्य एक प्रत्यक्षवाद विषय के रूप में इन नियमों का पता लगाना है एवं इनके आधार पर समाज का पुनर्निर्माण करना है।"[12] कौंत प्रत्यक्षवादी सिद्धांत के समर्थक थे इसके अंतर्गत अनुभव और अवलोकन से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर विषय-वस्तु की व्याख्या करना, यही उनका प्रत्यक्षवाद था।

---

[11] मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचारक',ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली पृ.सं. 35

[12] https://www.informise.com/auguste-comte-father-of-sociology-full-description-in-hindi/

उस समय यूरोप में हलचल मची हुई थी इसी बीच कौंत ने प्रगति और विकास के मुद्दे को उठाया, इस कारण भी उनका नाम बड़े विचारकों में आदर के साथ लिया जाता है। कौंत ने समाजशास्त्र शब्द का प्रयोग अपनी पुस्तक 'पॉजिटिव फिलॉसोफी' में किया और इसमें समाजशास्त्र के जन्म की चर्चा की। प्रारंभ में इसका नाम सामाजिक भौतिकी रखा बाद में इसका नाम समाजशास्त्र कर दिया। कौंत ने समाजशास्त्र को एक विज्ञान माना है उनके अनुसार:- "समाजशास्त्र से मेरा तात्पर्य उस विज्ञान से है जो सामाजिक प्रघटनाओं का अध्ययन ठीक उसी तरह करते हैं जिस तरह प्राकृतिक घटनाओं का अध्ययन खगोलशास्त्र, भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र और प्राणिशास्त्र में किया जाता है।"[13] इस प्रकार कौंत ने समाजशास्त्र की धारणा ही प्रस्तुत नहीं की बल्कि विस्तृत पद्धति, दृष्टिकोण और उसकी विषयवस्तु को भी स्पष्ट किया है। कौंत ने समाज को परिवारों का संग्रह माना है। कौंत के समाजशास्त्रीय विचारों का यदि मूल्यांकन किया जाए तो कहा जा सकता है कि कौंत ने समाजशास्त्र विषय को आरंभ किया था। वह एक नए समाज की रूपरेखा रखना चाहते थे। उनके व्यक्तिगत जीवन में भी त्रासदी थी जिसने उनके विचारों को प्रभावित किया। कौंत ने समाजशास्त्र पर धीरे-धीरे फ्रांसिसी प्रभाव स्वीकार कर लिया जिसके परिणामस्वरूप लगने लग गया कि समाजशास्त्र केवल फ्रांसिसी समाज की ही देन है। इनके परवर्ती विद्वानों ने उनकी इस बात को नकार दिया और उनसे भिन्न अपने मतों की प्रस्तुति की।

तेन:-

तेन अपने युग के प्रमुख समाजशास्त्रीय विचारक थे। वे कला और साहित्य के एक दार्शनिक, इतिहासकार और समालोचक थे। अपने विधेयवादी दृष्टिकोण से उन्होंने समाज की संकल्पना प्रस्तुत की। वे साहित्यिक कृतियों की उत्पत्ति के कारणों की पड़ताल करते है। उनके अनुसार महान रचनाओं के माध्यम से हम जान पाते है कि किसी समय में मनुष्य किस प्रकार सोचता था और चीजों को कैसे अनुभव करता था। इस हेतु उनकी तीन प्रकार की मान्यताएं है:- प्रजाति, वातावरण और क्षण, को वे विकास की अवस्था के महत्वपूर्ण कारक मानते है। यथा:- "किसी प्रजाति की चरित्रगत विशेषताएँ जलवायु, मिट्टी और इतिहास की महान घटनाओं की उपज होती है। प्रजाति के

[13] एस.एल.दोषी, पी.सी जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', रावत प्रकाशन (2018) पृ.सं.22

चरित्र की बुनियादी विशेषताएँ प्रजाति की विशिष्ट चेतना और सौंदर्यानुभूति में प्रकट होती है।"[14] वे प्रजाति को बहुत महत्त्व देते है। प्रजाति के विचारों से युग विशेष के साहित्य पर प्रभाव पड़ता है और उसी अनुरूप विचारों का पीढ़ी-दर-पीढ़ी आदान-प्रदान होता रहता है।

यद्यपि प्राकृतिक परिवेश का महत्त्व होता है लेकिन तेन प्राकृतिक परिवेश के साथ-साथ सामाजिक परिवेश को भी जोड़कर देखते है। मनुष्य समाज की आदिम प्रवृतियाँ तथा प्रजातिगत भौतिक, सामाजिक परिस्थितियों, घटनाओं आदि से प्रभावित होती है, कभी पुष्ट होती है और कभी बदलती रहती है। उन्होंने मानव स्वभाव और प्राकृतिक परिवेश के बीच कार्य-कारण संबंध बैठाने की कोशिश की है और उसी आधार पर साहित्य की विशेषताओं की व्याख्या की है। इस सबंध में वे लिखते हैं:- "मनुष्य समाज की स्थिति भी वनस्पतियों के समान होती है। एक ही मिट्टी, गर्मी और तापमान से विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे पैदा होते है। उनके विकास में कम से कम एक अवस्था होती है, पूर्वापर संबंध भी होता है।"[15] तेन हमेशा मनुष्य को सामाजिक प्राणी स्वीकार करते है। तेन की तीसरी धारणा युग विशेष की है। उनके अनुसार प्रत्येक युग के अपने प्रधान विचार और बौद्धिक ढाँचा होता है जो उस युग विशेष और संपूर्ण समाज के चिन्तन को प्रभावित करता है। विचार परिवर्तित होते रहते है लेकिन एक विचार दूसरे से आपस में जुड़े हुए रहते है।

तेन अपने समय के समाज को लेकर काफी चिंतित थे। उन्होंने समाज ही नहीं अपितु उससे जुड़े आवरण का भी अध्ययन किया; जिससे वे समाज का सूक्ष्म अध्ययन कर पाए। उनकी विधेयवादी अवधारणा को आगे चलकर हिंदी साहित्य में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपनाया और साहित्य के संबंध में अपनी प्रामाणिक स्थापनाएं स्थापित की।

मादाम स्तेल:-

मादाम स्तेल ने प्रगति की धारणा, सामाजिक विकास की अवस्थाओं का सिद्धांत, युगचेतना और जातीय चरित्र आदि के माध्यम से साहित्य के सामाजिक चरित्र को समझने की कोशिश की। फ्रांस में उपजी राजनीतिक अस्थिरता के परिणामस्वरूप मादाम स्तेल ने समाज की

---

[14] मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं. 124

[15] Taine, 'twentieth century criticism', p. 314

स्थिति का जायजा लिया। वे अपनी पुस्तक 'सामाजिक संस्थाओं से साहित्य के संबंध पर विचार' की भूमिका में लिखती है कि "मैंने साहित्य पर धर्म, नैतिकता और कानून के प्रभाव तथा उन सब पर साहित्य के प्रभाव की जाँच-परख का प्रयत्न किया है।"[16] उन्होंने इन तीनों पर साहित्य की पड़ताल की, साथ ही साहित्य के महत्वपूर्ण तत्वों और उस पर पड़ने वाले प्रभाव की व्याख्या की।

इस संबंध में उन्होंने तीन अवधारणाएँ प्रस्तुत की यथा:- 1. वह साहित्य और राजनीति में दोनों को परस्पर आवश्यक मानती है। उनका मानना है कि प्रत्येक समाज के साहित्य का अपने समय के राजनीतिक विश्वासों से गहरा परिचय होता है और आपस में संबंध होना चाहिए। इस सन्दर्भ में उन्होंने फ्रांस की जनता और वहाँ की राजनीतिक उथल-पुथल से साहित्य पर पड़ने वाले प्रभाव को दृष्टिगत किया। 2. दूसरी बात यह थी कि उपन्यास के उदय में मध्यम वर्ग की भूमिका किस प्रकार रही है। मध्यम वर्ग एक ऐसा वर्ग है जिसे समाज की हर आवश्यकता का पता रहता है। वह निम्न वर्ग से भी जुड़ा रहता है तो पूंजीपति वर्ग से भी। 3. तीसरी बात में मादाम स्तेल ने समाज में स्त्रियों की स्थिति पर अपना ध्यान केंद्रित किया है। उनका कहना है कि जिस समाज में स्त्रियों की स्थिति जितनी अच्छी होगी वह समाज उतना ही अधिक उन्नति करेगा और वहाँ का साहित्य भी विकसित होता रहेगा लेकिन जिस समाज में नारी की स्थिति पतनशील होती है वह समाज भी उतना ही पतनशीलता की ओर उन्मुख होता है। मादाम स्तेल अपने समय की प्रखर विचारक थी। उनका समाजशास्त्रीय अध्ययन उनके द्वारा समाज के गहन अध्ययन का परिणाम था।

रेमंड विलियम्स:-

समाज और संस्कृति पर अपनी मजबूत पकड़ बनाने वाले विलियम्स का मानना था कि समाज और संस्कृति में परिवर्तन होते रहते है। वे संपूर्ण सांस्कृतिक प्रक्रिया को एक 'सम्प्रेषण व्यवस्था' इसीलिए मानते थे कि संचार माध्यमों के सांस्कृतिक महत्त्व पर विचार करना स्वाभाविक ही है। यूरोप में संस्कृति और साहित्य के समाजशास्त्र की अनेक परम्पराएँ है और उनकी अपनी-अपनी विशेषताएँ भी। वे साहित्य को संस्कृति का केंद्रबिंदु मानते है और जीवन भर संस्कृति के एक

[16] मैनेजेर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', हरियाणा ग्रंथ अकादमी पंचकूला, चतुर्थ सं. 2014 भूमिका से-

ऐसे सिद्धांत के निर्माण का प्रयास करते रहे जिसमें संप्रेषण की एक व्यापक व्यवस्था के रूप में संस्कृति का समाज के परिवर्तनशील ऐतिहासिक, भौतिक संदर्भ से गतिशील संबंध प्रकट हो सके। यद्यपि रेमंड विलियम साहित्य को संस्कृति का प्रमुख रूप मानते है लेकिन वे साहित्य में ही संस्कृति की खोज नहीं करते बल्कि व्यापक सामाजिक संदर्भ में जोड़कर देखते हैं। इसीलिए संस्कृति के साथ-साथ समाज भी उनके अध्ययन का मुख्य केंद्र-बिंदु बना। इस कारण मुख्य समाजशास्त्रियों में उनका नाम लिया जाता है।

वे उपन्यास के बारे में लिखते हैं कि:- "जब मैं उपन्यास की यथार्थवादी परंपरा के बारे में बात करता हूँ तो मेरा आशय उन उपन्यासों से होता है, जिनमें व्यक्तियों के गुणों के माध्यम से समाज के जीवन की समग्र पद्धति के गुणों और विशेषताओं का सृजन और मूल्यांकन होता है। वार एंड पीस, मिडिल मार्च, दी रेनबो जैसे उपन्यासों में यह विशेषता मिलती है।"[17] अपने व्यापक चिंतन क्षेत्र के परिणामस्वरूप उन्होंने ब्रिटिश समाज की विभिन्न समकालीन, राजनीतिक, सांस्कृतिक समस्याओं पर भी विस्तार से लिखा है। रेमंड विलियम्स ने संस्कृति के समाजशास्त्र की परंपरा की भी बात की। इस अंतर्गत उन्होंने फ्रांस, इंग्लेंड और जर्मनी की जनता की संस्कृति, समाज और साहित्य के आपसी संबंधों का अध्ययन किया। इन्होंने संवाद और विवाद की यह व्यापक प्रक्रिया चलाकर संस्कृति और साहित्य का अपना समाजशास्त्र निर्मित किया। इनके अनुसार साहित्य परिचर्चात्मक, व्यवस्थात्मक संगठित वस्तु न होकर व्यावहारिक चेतना के रूप में विशिष्ट इतिहास में विशेष अभिलेखन से संगठित हुआ है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'दीर्घ क्रांति' (long revolution) में संस्कृति की परिभाषा दी है। इस प्रकार सांस्कृतिक अध्ययन जीवन या साहित्यिक रचनाओं में से सार्वभौमिक मनुष्य की स्थिति संबंधित विभिन्न मूल्यों की खोज और विश्लेषण है। आदर्श तथ्य की खोज तक आलोचना के द्वारा छानबीन करने का कार्य ही सांस्कृतिक अध्ययन है।

कार्ल मार्क्स

जर्मनी के यहूदी परिवार में जन्मे कार्ल हेनरिख मार्क्स (1818-1883) दार्शनिक, अर्थशास्त्री, इतिहासकार, राजनीतिक सिद्धांतकार, समाजशास्त्री, पत्रकार और वैज्ञानिक समाजवाद के प्रणेता थे।

---

[17] raymond williams. the long revolution p.304 (उपन्यास का समाजशास्त्र)

सन् 1824 में इनके परिवार ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। सत्रह वर्ष की अवस्था में मार्क्स ने कानून का अध्ययन करने के लिए बॉन विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। तत्पश्चात उन्होंने बर्लिन और जेना विश्वविद्यालयों में साहित्य, इतिहास और दर्शन का अध्ययन किया। इसी काल में वह हीगेल के दर्शन से बहुत प्रभावित हुए। 1839-1941 में उन्होंने 'दिमोक्रिटस' और 'एपीक्युरस' के प्राकृतिक दर्शन पर शोध-प्रबंध लिखकर डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। मार्क्स ने वर्ग संघर्ष, अर्थव्यवस्था और पूंजीवाद से सम्बंधित अपनी मान्यताएं रखी। वे पूंजीवाद के घोर विरोधी थे। उन्होंने वर्ग-संघर्ष के माध्यम से समाज के ढ़ांचे को समझाने का प्रयास किया।

अपनी पुस्तक 'पॉवर्टी ऑफ़ फिलोसोफी' में सामाजिक वर्ग को परिभाषित किया:- "पहला तो यह है कि आर्थिक दशाएं आम जनता को कामगारों की श्रेणी में रख देती है। दूसरा इस वर्ग के लिए पूंजीपति अपने प्रभुत्व के कारण काम करने की एक जैसी स्थितियाँ और हेतु उत्पन्न कर देते हैं। इस तरह यह गरीब-गुरबों का समूह जहाँ तक पूंजीपतियों के प्रति अपने सम्बन्धों का सवाल है, पृथक वर्ग बन जाता है।"[18] वर्गों की उत्पति के साथ ही वर्ग-संघर्ष प्रारंभ हो गया था। समाज में परिवर्तन का मूल कारण अन्तर्विरोध है और इसमें द्वंद्वात्मकता होती है। शुरुआत में यह संघर्ष मानव और प्रकृति के मध्य था लेकिन इनमें संघर्ष और सहयोग की दोनों भावनाएँ विद्यमान थी क्योंकि आदिम समाज सामूहिक था। उत्पादन के साधनों का असमान वितरण वहाँ नहीं था। लेकिन धीरे-धीरे मनुष्य वस्तुओं पर अपना स्वामित्व स्थापित करने लगा जिससे वर्ग भेद बढ़ता गया। मार्क्स सामाजिक परिवर्तन के लिए समाज सुधार के साथ समझौता नहीं करते। मार्क्स ने एक वर्ग-विहीन और राज्य विहीन समाज की कल्पना की।

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य विश्व में कई प्रकार की विचारधाराएँ चल रही थी। कुछ ने उदारतावाद को अपनाया तो कुछ ने मार्क्सवाद को। जब एक विचारधारा एक समय में सक्रिय हो जाती है तो धीरे-धीरे उसका अवसान काल भी आता है। मार्क्स ने वर्ग-संघर्ष, इतिहास की भौतिकवादी अवस्था आदि पर अपने विचार प्रस्तुत किये। मार्क्स का समाजशास्त्र वास्तव में वर्ग-संघर्ष का समाजशास्त्र है। किसी भी समाज में सामाजिक परिवर्तन लाने की दो मुख्य प्रक्रियाएं हैं

---

[18] एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं. 91

समाज सुधार अथवा सामाजिक क्रांति। इससे समाज में परिवर्तन तो आता ही है। मार्क्स क्रांति के लिए कई शर्ते रखते हैं। उनका मानना है कि क्रांति रातों-रात नहीं होती इसकी भी एक प्रक्रिया है जब किसी युग में उत्पादन की पद्धति और उत्पादन शक्तियों के मध्य खाई चौड़ी हो जाती है तब क्रांति होना आवश्यक हो जाता है, यही मार्क्स की क्रांति की अवधारणा है।

"Marx believed that this cycle of growth, collapse, and growth would be punctuated by increasingly severe crises. Moreover, he believed that the long-term consequence of this process was necessarily the enrichment and empowerment of the capitalist class and the impoverishment of the proletariat. He believed that were the proletariat to seize the means of production, they would encourage social relations that would benefit everyone equally.।"[19] अर्थात मार्क्स का मानना था कि विकास और पतन का यह चक्र तेजी से गंभीर संकटों से प्रभावित होगा। इसके अलावा उनका मानना था कि इस प्रक्रिया का दीर्घकालीक परिणाम अनिवार्य रूप से पूंजीपति वर्ग का संवर्धन और सशक्तिकरण और सर्वहारा वर्ग की दरिद्रता था। उत्पादन के साधनों को जब्त करने के लिए सर्वहारा वर्ग था, जो सामाजिक सम्बन्धों को प्रोत्साहित करेगा, जो सभी को समान रूप से लाभान्वित करेंगे।

मार्क्स सभी प्राणियों में मानव को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं और अलग इसलिए मानते हैं, श्रम के कारण। वे मानव और पशु में भेद करते हुए लिखते हैं कि:- "मानव प्रौद्योगिकी से जुड़ा हुआ है। मानव और पशु में यही अंतर है। अन्य सभी प्राणी प्रकृति से अपनी आवश्यकताओं की वस्तुओं को उसी रूप में ग्रहण कर लेते है। यह सही है कि मकड़ी और मक्खी बहुत अच्छा निर्माण करती हैं परंतु वे पूर्व योजना से नहीं, सहजात प्रवृति के कारण निर्माण करती है।"[20] वे मानव की सृजनात्मक बुद्धि को उसकी विशिष्ट क्षमता मानते हैं इसीलिए उसे विशेष श्रेणी में रखते है और पशु से अलग करते है। मार्क्स के समाजशास्त्रीय विचार उनके समाजवादी विचारों से जुड़े हुए है। वे समाजवाद के आधार

[19] https://www.sociologyguide.com/thinkers/Karl-Marx.php

[20] मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचार', ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली पृ.सं.82-83

पर समाजशास्त्र की बात करते है और ज्ञान के समाजशास्त्र की व्याख्या करते है। मार्क्स ज्ञान के समाजशास्त्र को सामाजिक और संरचनात्मक आधारों की खोज का माध्यम मानते है। मार्क्स के विचारों के आधार पर अनेक क्रांतियाँ हुई। इसलिए कार्ल मार्क्स के विचारों को समझना महत्त्वपूर्ण है।

एमिल दुर्खिम:-

जहाँ कौंत को समाजशास्त्र का जनक माना जाता है वही दुर्खिम को समाजशास्त्र का पिता माना जाता है। दुर्खिम के नैतिक पोषण का उनके समाजशास्त्रीय चिंतन पर गहरा प्रभाव पड़ा। किसी भी समाज की मुख्य विशेषता में उसकी नैतिक संहिताओं को माना जाता है। जो व्यक्तिगत आचरण को निर्धारित करती है। एक धार्मिक परिवार से आने के कारण धर्म संबंधी धर्म-निरपेक्ष चिन्तन उन्हें बेहद प्रिय था जिसको वे विकसित करना चाहते थे। वे समाज को एक प्रकार से सामाजिक सत्य स्वीकार करते है। वे बंधन जो मनुष्य के समूहों को आपस में बांधते थे, वही बंधन समाज के अस्तित्व हेतु निर्णायक तत्व साबित हुए। यही समाज की वैज्ञानिक समझ है, जिसे दुर्खिम विकसित करना चाहते थे। वे समाज को लेकर चिंतित थे इस कारण नैतिक आचरण पर बल देते थे।

दुर्खिम ने अपनी समाजशास्त्रीय दृष्टि में भी वैज्ञानिक अध्ययन को अधिक महत्त्व दिया। साथ ही वे इसे अनुभव का विषय भी स्वीकारते है। इनका शोध प्रबंध ‘द डिविजन ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी’ नाम से प्रकाशित हुआ जिससे इन्हें समाजशास्त्री के रूप में मान्यता मिलनी प्रारंभ हुई। । सामाजिक तथ्य को लेकर वे इस प्रकार के विचार रखते हैं:- “A social fact is every way of acting, fixed or not, capable of exercising on the individual an external constraint; or again, every way of acting which is general throughout a given society, while at the same time existing in its own right independent of its individual manifestations.।”[21]

अर्थात एक सामाजिक तथ्य अभिनय का हर तरीका है, निश्चित है या नहीं। वह सक्षम है व्यक्तिगत और बाह्य बाधाओं पर ध्यान देने में या फिर अभिनय का वह हर तरीका समाज में सभी

[21] https://en.wikipedia.org/wiki/Social_fact

रूपों में सामान्य है जबकि वह तथ्य एक ही समय में अपनी व्यक्तिगत अभिव्यक्तियों को अपने स्वतंत्र अधिकार के अंतर्गत विद्यमान हैं।

दुर्खिम के अनुसार- "समाजशास्त्र एक ऐसा शास्त्र है जो अमूर्त तत्वों, जैसे सामाजिक तथ्यों, का विज्ञान हो सकता है। जो अवलोकन, आनुभविक, इन्द्रियानुभवी, सत्यापनीय साक्ष्यों पर आधारित हो। हांलाकि व्यवहार प्रत्यक्ष रूप में अवलोकित नहीं होता, सामाजिक तथ्यों को अप्रत्यक्ष रूप से व्यवहार के प्रतिमान में अवलोकित किया जा सकता है।"[22] वे कानून धर्म और शिक्षा जैसी संस्थाओं को सामाजिक तथ्यों के गठन में सहायक स्वीकार करते हैं। ये समाजशास्त्र को एक अलग विषय के रूप में स्थापित करने वाले थे इसीलिए इनको समाजशास्त्र के वास्तविक पिता के नाम से जाना जाता है। उनके अनुसार सरल शब्दों में समाजशास्त्र को समाजशास्त्र या समाजशास्त्रीय यथार्थ का अध्यापन कहा जाता है। सामाजिक तथ्य वस्तुनिष्ठ होते है। एक व्यक्ति की इच्छा और चेतना पर यह निर्भर नहीं है। यह व्यक्ति को प्रभावित करते हैं, एवं उस पर दबाव भी डालते है। दुर्खिम ने समाजशास्त्र को एक व्यापक समाजविज्ञान के रूप में माना है। वे मानते है कि इसका कार्य केवल सामाजिक तथ्यों की खोज और विश्लेषण करना ही नहीं अपितु समाज विज्ञान को एक पद्धति और सिद्धांत के रूप में देखा जाना चाहिए जिससे इसके अलग-अलग पक्षों को जान सके।

मैक्स वेबर:-

वेबर एक महत्वपूर्ण सामाजिक विचारक थे। इनकी 'द रिलिजन ऑफ़ इंडिया', 'इकॉनॉमी एण्ड सोसायटी', 'एसेज इन सोशियोलॉजी' नामक तीन पुस्तके चर्चित रही। इन्होंने और भी कई पुस्तकें लिखी जो इनके चिंतन, मनन और अध्ययन की परिचायक है। इन्होंने सामाजिक विश्व की खोज, मनुष्य के अर्थों, मूल्यों, समझ, पूर्वाग्रह, आदर्शों इत्यादि पर आधारित विचार प्रस्तुत किए है। आधुनिक समाजशास्त्र को वेबर की प्रमुख देन रही है। वेबर के अनुसार सामाजिक क्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका व्यक्तिनिष्ठ अर्थ एक या अनेक कर्ता देते है। इसमें दूसरे लोगों की अभिवृतियाँ

[22] एनसीईआरटी, कक्षा-11 पृ.सं. 82

और क्रियाएँ होती है जिन्हें अंत:क्रियाओं में देखा जा सकता है।"[23] समानुभूत समझ के अतिरिक्त वेबर ने समाजशास्त्र के लिए एक अन्य पद्धतिशास्त्रीय उपकरण 'आदर्श प्रारूप' की बात की। मूलत: अर्थशास्त्री होने के उपरांत भी समाजशास्त्र की ओर उनकी रुचि थी।

वे मूलतः विचारवादी थे। उनका समाज प्राचीन पारंपरिक सामाजिक क्रिया पर आधारित था तथा आधुनिक समाज युक्तिपूर्ण सामाजिक क्रिया पर आधारित है। वेबर सामाजिक स्वरूपों को दो हिस्सों में विभाजित करते हैं- 1.पारंपरिक समाज 2.आधुनिक जिसके उत्पति संबंधी आदर्श प्रारूप और सामान्य आदर्श होते हैं। वे व्यक्ति को केंद्र में रखकर अपनी सामाजिक क्रिया के विश्लेषण का आधार भी उसे ही मानते हैं। उन्होंने समाजशास्त्र को कभी विषय के रूप में पढ़ाया नहीं बस अलग-अलग स्थानों पर व्याख्यान देते रहे। पहले समाजशास्त्र को विज्ञान की श्रेणी में नहीं रखा जाता था। लेकिन अब धीरे-धीरे इसे विज्ञान का विषय भी समझा जाने लगा और उसी अनुरूप विश्लेषण किया गया। वेबर मानते थे कि इसे एक विज्ञान होना चाहिए इसीलिए वे सामाजिक क्रिया को विज्ञान कहते है।

प्रमुख भारतीय समाजशास्त्री

भारत में समाजशास्त्र का उदय 1914 में कलकत्ता विश्वविद्यालय के कुलपति सर आशुतोष मुखर्जी की प्रेरणा से स्वदेशी आंदोलन तथा रेनेसा के परिणामस्वरूप हुआ। आधुनिक युग के प्रमुख समाजशास्त्रियों में आनंदकुमार स्वामी, डी. पी. मुखर्जी, राधाकमल मुखर्जी, डी.एन मजुमदार, श्यामाचरण दुबे आदि का नाम लिया जा सकता है।

प्रो. राधाकमल मुखर्जी:-

भारतीय संस्कृति और समाजशास्त्र के विद्वान प्रो. राधाकमल मुखर्जी का जन्म 7 दिसंबर 1889 को पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले में हुआ। इन्होंने कोलकाता विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की डिग्री प्राप्त की। इन्हें आधुनिक भारत के प्रसिद्ध चिंतक एवं समाजविज्ञानी के रूप में जाना जाता है। वे लखनऊ विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र के प्राध्यापक तथा उप-

[23]एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.140

कुलपति रहे। इनके नेतृत्व में ही उत्तरप्रदेश में सर्वप्रथम लखनऊ विश्वविद्यालय में सन् 1921 में समाजशास्त्र का अध्ययन प्रारम्भ हुआ। इन्होंने समाजशास्त्र के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया। इसलिए उत्तरप्रदेश में इन्हें समाजशास्त्र के मुख्य प्रणेता के रूप में भी जाना जाता है। इन्होंने अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र, दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, साहित्य, धर्मशास्त्र, अध्यात्मशास्त्र, कलाशास्त्र, संगीत आदि विभिन्न विषयों को अपने चिंतन का आधार बनाया। इसके लिए इन्होंने 'सामाजिक मूल्य और उनका समाजशास्त्रीय परिवेश में स्थान' (social and its position sociological environment) का सिद्धांत दिया।

यह अर्थशास्त्र के प्रोफ़ेसर थे लेकिन इन्होंने समाजशास्त्र जैसे विषय पर कई पुस्तकें लिखी। 'द इंडियन वर्किंग क्लास', 'रीजनल सोशियोलॉजी', 'सोशियल इकॉलोजी', 'दी सोशल फंक्शन ऑफ़ आर्ट', दी सोशल स्ट्रक्चर ऑफ़ वेल्यूज'। इन्होंने अपने चिंतन में भारतीय समाजशास्त्र के उत्थान की दिशा में प्रयास किया। नैतिक और आध्यात्मिक तथ्यों के साथ-साथ ऐतिहासिक दृष्टिकोण को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया। उनका मानना है कि समाजशास्त्र सामाजिक सम्बन्धों की एक दुनिया है जो मानव अंतर-क्रियाओं एवं पारस्परिक सम्बंधों से जुड़ा हुआ रहता है। समाजशास्त्र के अंतर्गत इन्होंने विशेष रूप से सामाजिक मूल्यों और सामाजिक पारिस्थितिकी पर अपने विचार प्रस्तुत किये।

सामाजिक मूल्यों को परिभाषित करते हुए वे इस प्रकार लिखते हैं:- "सामाजिक मूल्य में वे सामाजिक मान, लक्ष्य या आदर्श है जिनके आधार पर विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों तथा विषयों का मूल्यांकन किया जाता है। इन मूल्यों का व्यक्ति के लिए विशेष अर्थ होता है और उन्हें सामाजिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण समझते हैं।"[24] वे धर्म और राजनीति को पृथक-पृथक मानते थे। इन मूल्यों की उत्पति समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु की जाने वाली अंत:क्रियाओं के परिणामस्वरूप होती है।

धुर्जटि प्रसाद मुखर्जी

[24]एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.358

समाजशास्त्र के क्षेत्र में इनका योगदान भी राधाकमल मुखर्जी के समतुल्य माना जाता है। ये सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में भारतीय संस्कृति के पश्चिमीकरण को महत्वपूर्ण बिंदु मानते हैं और इसका अध्ययन वे भारतीय इतिहास के संदर्भ में होना मानते हैं। इनका जन्म 5 अक्तूबर 1894 एक मध्यमवर्गीय बंगाली ब्राह्मण परिवार में हुआ इन्होंने विज्ञान में कलकत्ता विश्वविद्यालय से इतिहास तथा अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर किया। बाद में वे परम्पराओं को अधिक महत्त्व देने लगे। इनका मानना है कि "मेरे विचार से भारतीय परंपराओं का अध्ययन करना भारतीय समाजशास्त्रियों का पहला कर्तव्य है। इसके साथ ही भारतीय परम्पराओं में उत्पन्न होने वाले समाजवादी परिवर्तनों की व्याख्या आर्थिक शक्तियों के संदर्भ में ही की जानी चाहिए।"[25] वे परंपरा और उसमें होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन आर्थिक संदर्भों में करना देखते थे। इसी कारण उन्हें समन्वयवादी भी कहा जाता है। वे भारतीय संस्कृति को व्यक्तिवादी न मानकर समन्वयवादी मानते है। इनका अध्ययन संपूर्णवादी माना जाता है जिसमें समाजशास्त्र के साथ-साथ इतिहास, अर्थशास्त्र, कला, साहित्य, संगीत आदि विषयों का भी अध्ययन किया जाता है। डी.पी. मुखर्जी का भारतीय इतिहास और अर्थव्यवस्था के प्रति असंतोष उत्पन्न हो गया इसी कारण इन्होंने समाजशास्त्र की ओर रूख किया। उनका विचार था कि भारत में सामाजिक व्यवस्था ही उसका विशिष्ट लक्षण है, इसलिए इसको उन्होंने प्रत्येक सामाजिक विज्ञान के लिए अनिवार्य माना। इनके सामाजिक आयाम के मानदंड अधिक विकसित थे।

उनका मानना था कि भारत में समाज को केंद्र में रखकर समाजशास्त्री का प्रमुख कर्तव्य यह है कि वह सामाजिक परम्पराओं के बारे में जाने। वे परम्परा का अध्ययन केवल भूतकाल तक ही नहीं मानते थे बल्कि इसे परिवर्तन की संवेदनशीलता के साथ भी जोड़कर देखते थे। उनके अनुसार:- "सिर्फ भारतीय समाजशास्त्री के लिए एक समाजशास्त्री होना काफ़ी नहीं होता है। बल्कि उसकी प्रथम आवश्यकता एक भारतीय होना है, क्योंकि वह लोक-रीतियों, रूढ़ियों, प्रथाओं तथा परंपराओं से जुड़कर ही अपनी सामाजिक व्यवस्था के अंदर तथा उसके आगे क्या है? को समझ पायेगा।"[26] डी.पी. मुखर्जी भारतीय सामाजिक व्यवस्था की दिशा, समूह, संप्रदाय तथा जाति के

---

[25] डॉ. एम.एम. लवानिया, 'भारत का समाजशास्त्र', रिसर्च पब्लिकेशन, पृ.सं.65

[26] एनसीईआरटी. कक्षा-11 'समाज का बोध', पृ.सं.99

क्रियाकलापों द्वारा निर्धारित होती है न कि स्वैच्छिक होती है। वे वर्ग संघर्ष को भी जातीय परम्पराओं से प्रभावित मानते हैं, अर्थात भारत में जो वर्ग संघर्ष की स्थिति पैदा हुई उसके मूल में जाति-विभाजन की प्रणाली छिपी हुई है। वे आधुनिकता को आवश्यक मानते थे लेकिन अन्धानुकरण के लिए नहीं।

प्रो. गोविंद सदाशिव घुर्ये

इनका जन्म 12 दिसंबर 1893 को मालवान, पश्चिम भारत के कोंकण तटीय प्रदेश के छोटे से कस्बे में हुआ। बंबई विश्वविद्यालय के विभाग से समाजशास्त्र की उपाधि प्राप्त की। इनके द्वारा 'इंडियन सोशियोलॉजिकल सोसायटी' की स्थापना की गई तथा एक सोशियोलॉजिकल जर्नल भी निकाला। सर्वप्रथम अध्यापन कार्य से इन्होंने समाजशास्त्र की शुरुआत की तथा अनेक शोधार्थियों का निर्देशन किया। घुर्ये ने समाजशास्त्र का एक भारतीय विषय के रूप में पोषण किया। घुर्ये द्वारा स्थापित बम्बई विश्वविद्यालय विभाग ऐसा पहला विभाग बना जिसने दो महत्वपूर्ण विषयों को लागू किया- पहला सक्रिय रूप से शिक्षण तथा शोध कार्यों को एक ही संस्था में लागू करना, तथा सामाजिक मानव विज्ञान और समाजशास्त्र को एक वृहत वर्ग के रूप में स्थापित करना। यह अन्तराष्ट्रीय समाजशास्त्री माने जाते हैं।

इन्होंने अंग्रेजी और भारतीय समाज की जातियों, समुदायों, क्षेत्रों, धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रतीकों व वेशभूषा आदि के मौलिक समाजशास्त्रीय अध्ययन पर कार्य किया। इन्होंने भारतीय समाज का गहन अध्ययन किया। भारत की जाति-प्रथा आदिवासियों का जीवन, ग्रामीण जीवन, भारतीय नगर, सभ्यताओं आदि को देखा परखा। जाति व्यवस्था पर इन्होंने 'भारत में जाति और प्रजाति' (1932) नाम से पुस्तक भी लिखी। इन्होंने अपने समाजशास्त्रीय अध्ययन में भारत और पश्चिम के परिवारों का तुलनात्मक अध्ययन किया।

इन्होंने समाजशास्त्र को एक वैज्ञानिक ज्ञान शास्त्र के स्थान पर हिन्दू समाजशास्त्र बनाने पर बल दिया। इन्हें भारतीय समाजशास्त्र का जनक माना जाता है। उन्होंने भारतीय सभ्यता व संस्कृति पर अपने विचार प्रस्तुत किये उनका मानना था कि कोई भी संस्कृति छोटी अथवा बड़ी नहीं होती बल्कि प्रत्येक समूह अपनी संस्कृति को बड़ा समझता है। संस्कृति और सभ्यता पर विचार करके

लिखते हैं कि:- "सभ्यता और संस्कृति दोनों एक ही प्रघटना के अंग है। उन्हें पृथक नहीं समझा जाना चाहिए। संस्कृति सभ्यता है और व्यक्ति इसे अपने मस्तिष्क और व्यवहार में ढाल लेता है।"[27] इस प्रकार से सभ्यता और संस्कृति के मूल में इन्होंने व्यक्ति के व्यवहार को आधार बनाया।

प्रो. श्यामाचरण दुबे:-

इनका जन्म 6 जुलाई 1901 को कलकत्ता के एक अत्यंत प्रतिष्ठित परिवार में हुआ। उनके पिता सर आशुतोष मुखर्जी एक शिक्षाविद् थे। श्यामाचरण दुबे का नाम प्रतिष्ठित मानवशास्त्री एवं समाजशास्त्रियों के रूप में लिया जाता है। यह एक भारतीय शिक्षाविद्, चिंतक, राजनेता और भारतीय जनसंघ के संस्थापक थे। उन्हें एक प्रकार से राष्ट्रवादी के रूप में जाना जाता है। वह पंडित जवाहर लाल नेहरू के उद्योग और आपूर्ति मंत्री रहे तथा बाद में एक अलग पार्टी 'भारतीय जनसंघ' की स्थापना की। इन्होंने ग्रामीण जीवन, जनजातियों का प्रबंधन तथा विकास आदि पर विशेष अध्ययन किया है। प्रो. दुबे ने सामुदायिक विकास योजनाओं के भारतीय ग्रामों पर पड़ने वाले प्रभावों को लेकर एक अतिरिक्त अध्ययन 'भारत के बदलते हुए गाँव' नाम से किया था। इस अध्ययन में उन्होंने सामुदायिक जीवन एवं बदलते स्वरूप की व्याख्या की। योजनाओं के फलस्वरूप उत्पन्न हुए परिवर्तन और तत्जनित समस्याओं का अध्ययन भी किया।

अक्षय रतनलाल देसाई:-

1915 में जन्में रतनलाल देसाई का जन्म बड़ौदा में हुआ। जी.एस. घुर्ये के निर्देशन में इन्होंने बंबई विश्वविद्यालय से पीएच.डी की तथा 'सोशल बैकग्राउंड ऑफ़ इंडियन नेशनलिज्म'(1948) 'रूरल ट्रांजिशन इन इंडिया' (1961), 'स्टेट एंड सोसायटी इन इंडिया' (1975) 'पेजेंट स्ट्रगल इन इंडिया'(1979) आदि पुस्तकें प्रकाशित हुई। इन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद के सामाजिक पहलुओं पर अपना शोधग्रंथ लिखा जिसमें आर्थिक प्रक्रियाओं और विभाजनों को महत्त्व दिया गया। इस ग्रंथ में उन्होंने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के समय भारत की आर्थिक स्थिति का अध्ययन किया। उन्होंने एक कल्याणकारी राज्य की विशेषताएँ बतायी। उनके अनुसार "कल्याणकारी राज्य एक सकारात्मक राज्य होता है, इसका अर्थ यह है कि वह उदारवादी राजनीति के शास्त्रीय सिद्धांत की लेसेज फेयर

---

[27] एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.386

नीति से भिन्न होता है। कल्याणकारी राज्य केवल न्यूनतम कार्य ही नहीं करता जो कानून तथा व्यवस्था को बनाये रखने के लिए आवश्यक होते हैं बल्कि कल्याणकारी राज्य हस्तक्षेपीय राज्य होता है। और समाज की बेहतरी के लिए सामाजिक नीतियों को तैयार तथा लागू करने के लिए अपनी शक्तियों का प्रयोग सक्रिय रूप से करता है।"[28] उन्होंने कल्याणकारी राज्य की अवस्था मिश्रित मानी है जहाँ निजी कम्पनियाँ तथा सामूहिक कम्पनियाँ एक साथ कार्य कर सके।

1.3 समाज और साहित्य का समाजशास्त्र (उपन्यास और कहानी विशेष)

बीसवीं शताब्दी के अस्सी के दशक में हिंदी में साहित्य के समाजशास्त्र विषय पर चिंता और चर्चाएँ की जाने लगी। इससे पूर्व भी चर्चाएँ होती थी लेकिन बहुत ही संक्षिप्त धरातल पर। यह चर्चाएँ मौखिक रूप में अधिक और लिखित रूप में कम होती थी। साहित्य का समाजशास्त्र आलोचना की सामाजिक सार्थकता का भी एक माध्यम बनता जा रहा है। साहित्यिक समाजशास्त्र न केवल कृति की व्याख्या करता है अपितु उसकी सामाजिक अस्मिता की भी व्याख्या करता है। साहित्य लिखना भर ही पर्याप्त नहीं हो जाता पाठक वर्ग उस साहित्य और लेखक को अमर बना देता है; इसीलिए लेखन से पूर्व पाठक वर्ग की आवश्यकता का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता हैं। जब कोई भी रचना पाठक वर्ग तक पहुँचती है तो इस बीच उसे लंबी सामाजिक-सांस्कृतिक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। कृति और पाठक के संबंध पर यदि विचार नहीं किया जाता है तो साहित्य प्रक्रिया की समझ अधूरी ही रह जाती है। पाठक के पास पहुँचकर कृति अपना सार्थक रूप धारण करती हैं।

रोला बार्थ इस संबंध में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त करते है:- "इस अभियान की घोषणा करते हुए लिखा है कि लेखन का लक्ष्य है पाठक, इसलिए आलोचना में लेखक की मौत की कीमत पर पाठक का जन्म लेना आवश्यक है ।"[29] साहित्य में समाज की गहरे स्तर पर पड़ताल करने पर पता चलता है कि ऊपरी तौर पर इसका संबंध जितना सरल दिखाई देता है उतना है नहीं। अनेक दिशाएँ हो सकती है समाजशास्त्रीय अध्ययन की। किसी एक ढर्रे पर चलकर यह कार्य नहीं करता हैं। कोई साहित्यकार या रचनाकार अपनी रचना का निर्माण योजनाबद्ध और बुद्धिसम्मत आधार पर

---

[28] एनसीईआरटी. कक्षा-11 'समाज का बोध', पृ.सं.103

[29] मैनेजर पाण्डेय, 'साहित्य और समाजशास्त्रीय दृष्टि', (2016) आधार प्रकाशन पंचकूला (हरियाणा) पृ.सं.41

करता है; जिसकी पृष्ठभूमि में सामूहिक चेतना का प्रतिबिंब व प्रेरणा छिपी हुई रहती है। यदि इस प्रकार की चेतना उसमें नहीं रहती है तो वह कृति मृतप्राय: हो जाती है अर्थात वह कब प्रकाश में आयी और कब चली गई इसका पता भी नहीं चलता है। लेखक अपनी लेखनी को समाज और व्यक्ति से साकार कर एक नई सृष्टि का सृजन करता है और उसकी इसी सामाजिक प्रतिबद्धता को विचारक स्वीकार करते रहें हैं। साहित्य और समाज के संबंध का परिचय देने में चार प्रमुख पाश्चात्य विद्वानों का नाम अग्रणी है:- एडोल्फ इपलित तेन, लियो लावेंथल, लुसिए गोल्डमन और रेमंड विलियम्स आदि।

साहित्य को समझने के लिए विद्वानों के विचार जानना आवश्यक है। साहित्य और समाज को लेकर श्यामसुंदर दास मानते हैं कि "किसी कवि या ग्रंथकार पर तीन बातों का प्रभाव अवश्य पड़ता है- "जाति, स्थिति और काल। जाति से हमारा तात्पर्य किसी जन-समुदाय के स्वभाव से है, स्थिति का तात्पर्य उस सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और प्राकृतिक अवस्था से है जो जन-समुदाय पर अपना प्रभाव डालती है और काल से तात्पर्य उस समय की जातीय विकास की विशेषता से है।"[30] समाज में साहित्य की भौतिक सत्ता और साहित्यकार की वास्तविक स्थिति क्या है? इसका पता साहित्य और समाज के विश्लेषण से ही चल सकता है। साहित्य और समाज के बारे में मैनेजर पांडेय इस प्रकार लिखतें हैं:- "आज के समाज में साहित्य और साहित्यकार कि वही स्थिति नहीं है, जो गण समाज या सामंती समाज में थी। भारतीय समाज में साहित्यकार की बदलती स्थिति पर विचार करें तो यह बात समझते देर न लगेगी कि अपने समाज में जो स्थिति वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति, कबीरदास, बिहारी या भूषण की थी, वह आज के लेखक की नहीं है । कठिनाई तब होती है जब कुछ लोग आज की समस्याओं का हल भवभूति या कबीरदास से पाने की कोशिश करते हैं।"[31] इस प्रकार साहित्य और साहित्यकार का स्वरूप भी बदल चुका है। आज का समाज पूंजीवादी समाज है जिसमें साहित्य और साहित्यकार की स्थिति अच्छी नहीं है और कई बार राजसत्ता की सांस्कृतिक दृष्टि साहित्य की दिशा तय करती है तात्पर्य है कि राजनीति के आधार पर साहित्य गढ़ा जाता है; जिससे साहित्य अपने ऊपर दबाव महसूस करता है और स्वतंत्रता की

[30] श्यामसुंदर दास, 'साहित्यालोचन', पृ.सं.53

[31] मैनेजर पाण्डेय, 'साहित्य और समाजशास्त्रीय दृष्टि', (2016) आधार प्रकाशन पंचकूला (हरियाणा) पृ.सं.36

कल्पना करने लगता है। राजनीति के आधार पर लिखे गए साहित्य पर राजा की कृपा होती है। प्राचीन काल में चारण-भाट आदि कवियों को इसी प्रकार की रचनाएँ लिखनी पड़ती थी जिसमें राजाओं का यशोगान हो।

समाज और साहित्य का समाजशास्त्र

समाज एक अकेली इकाई नहीं अपितु कई व्यक्तियों, समूहों और संस्थाओं से निर्मित है। समाज के बिना हमारी प्रवृति पशु समान हो जाती है। समाज मनुष्यों की अंत:क्रियाओं का ही एक प्रतिफल है। एक अकेली इकाई समाज में पृथक रूप से रहना चाहती है तो वह बिना समाज के पंगु हो जायेगी। समाज में मनुष्य का आचरण, क्रिया-कलाप, उनकी गतिविधियाँ आदि सम्मिलित रहते हैं और यह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से एक-दूसरे पर निर्भर रहते हैं।

कोई भी साहित्यकार अपने समय में हो रही घटनाओं से न तो निरपेक्ष रह सकता है और न ही अपने आस-पास के वातावरण में रहकर उसकी उपेक्षा कर सकता है। समाज व्यक्ति विशेष को नहीं अपितु संपूर्ण सामाजिक सरंचना को प्रभावित करता हैं। समाज में घटित हो रही घटनाओं से प्रत्येक वह व्यक्ति प्रभावित होता हैं जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में समाज से जुड़ा हुआ रहता है। समाज और व्यक्ति भी परस्पर अन्योन्याश्रित हैं क्योंकि व्यक्ति से ही समाज का निर्माण होता है। व्यक्ति अपने क्रिया-कलापों के माध्यम से समाज को प्रभावित करता है। साहित्य में सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में किया जाता हैं। साहित्य में अपने समकालीन समाज का ज्यों का त्यों चित्रण नहीं किया जाता अपितु उसको विविध स्तरों में प्रसंगानुसार चित्रित किया जाता है ताकि बाद में भी उसकी प्रासंगिकता बनी रहे।

सामाजिक पुनर्निर्माण के संबंध में बोटमोर का कथन इस प्रकार है:- ‘‘समाजशास्त्र पहला विज्ञान था जो संपूर्ण सामाजिक विज्ञान और समाज का निर्माण करने वाली सामाजिक संस्थाओं एवं सामाजिक समूहों की संपूर्ण जटिल व्यवस्था से संबंधित था।’’[32] इस प्रकार सामाजिक संस्थाओं की प्रक्रिया जटिल थी। उनकों समझना कठिन कार्य था। समाजशास्त्र आधुनिक पश्चिमी चिंतन की देन है और साहित्य का समाजशास्त्र और भी बाद की विद्या। इस दृष्टिकोण को लेकर समाजशास्त्रियों के

[32] टी.बी. बोटमोर, ‘समाजशास्त्र’ पृ.सं.8

मध्य मतभेद की स्थिति है। कुछ विद्वान इसे समाजशास्त्र के अंतर्गत मानते हैं और कुछ इसे अलग विषय के रूप में लेते हैं। साहित्य और समाजशास्त्र को एक मानने वाले विद्वानों में पी. फोस्टर और सी. केनफोर्ड, जॉन होफ, रिचर्ड होगार्ड आदि को लिया जा सकता है। लेकिन हिंदी के प्रसिद्ध आलोचक प्रो.मैनेजेर पाण्डेय इस बात को स्वीकार नहीं करते है। उनका मानना है कि समाजशास्त्र साहित्य से भिन्न और अलग विधा है। इस विषय को लेकर सन् 1971 में मुद्दा उठा। एलेन सेगल ने 'ब्रिटिश जनरल ऑफ़ सोशियोलोजी' में यह प्रश्न उठाया कि- क्या साहित्य का समाजशास्त्र संभव है? साहित्य के समाजशास्त्र को लेकर विवाद बना हुआ है। क्या यह एक स्वतंत्र विधा है अथवा समाजशास्त्र की ही एक शाखा है? समाजशास्त्रियों का मानना है कि यह ज्ञान की एक शाखा है और समाजशास्त्र के भीतर ही इसका अस्तित्व है; लेकिन साहित्यिक विचारक इसे साहित्य की एक स्वतंत्र विधा स्वीकार करते है। साहित्य के समाजशास्त्र का अनेक स्थानों पर विरोध दिखाई पड़ता है। कुछ लोग समझते हैं कि यह किसी साजिश की उपज है लेकिन यह तो ज्ञान की विविध शाखाओं से निकला है। रूपवादियों और नई समीक्षा ने साहित्य के समाजशास्त्र के प्रत्येक रूप का विरोध किया हैं। उनका मानना है कि यह साहित्यत्तर आलोचना है या बाह्यवर्ती आलोचना है? इसीलिए वे इसका विरोध करते हैं। नई समीक्षा के समीक्षक लीविस ने साहित्य और समाज संबंधी टी.एस. इलियट की अधिकांश मान्यताओं को और भी विकसित करने का प्रयत्न किया है। इलियट समाजशास्त्रीय आलोचना को किसी भी स्थिति में साहित्यिक आलोचना नहीं स्वीकार करते थे। वे मानते थे कि वही आलोचना उपयोगी है जो साहित्य को समझने में मदद दे और सुख भी।

अगस्त कौंत (1798-1857) इन्होंने समाजशास्त्र को सामाजिक व्यवस्था एवं प्रगति का विज्ञान के रूप में परिभाषित किया। कोम्टे का समाजशास्त्र उन नियमों की खोज करता है जिनसे समाज नियंत्रित एवं प्रगतिशील बनता हैं। जेने उल्फ़ साहित्य के समाजशास्त्र के तीन पक्ष मानते हैं 1.कृति की व्याख्या 2.कृति में विचारधारा की पहचान 3. विचारधारा के सौन्दर्यबोधीय रूप का विवेचन। साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन में सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का वर्णन आवश्यक हो जाता है। आज के समाज में साहित्य और साहित्यकार की जो स्थिति है, उसका विवेचन साहित्य के समाजशास्त्र में किया जाता है। इस संदर्भ में प्रेमचंद लिखतें हैं कि:- "साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल की परिस्थितियों से प्रभावित रहता है। जब कोई लहर देश में

उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव हो जाता है और उसकी आत्मा देश-बंधुओं के कष्टों से विकल हो उठती है और उस तीव्र विकलता में वह रो उठता है। पर उसके रूदन में भी व्यापकता होती है वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौमिक रहता है।"[33] इस तरह से सार्वभौमिक की अनुभूति ही सामाजिक अनुभूति है। जब व्यक्ति, व्यक्ति-विशेष से सामाजिक होने लगता है तब वह सार्वभौमिक होने लगता हैं और सबकी अनुभूति उसे अपनी लगने लगती है। यही प्रक्रिया साहित्यकार के साथ होती है तभी वह सफल रचनाकार माना जाएगा। साहित्यकार समाज के मूलभूत ढांचे को समझ पाने की दृष्टि रखता हैं। अपने समाज की भीतरी परतों में बैठकर साहित्यकार जीवन और समाज के आपसी संबंधों की गहन पड़ताल करता हैं, उस पड़ताल के उपरांत निकाले गए निष्कर्ष को ही वह साहित्य के रूप में जनमानस के बीच रखता है यदि उसके द्वारा किया गया चिंतन समाज को स्वीकार्य हो जाता है तो उसकी रचना सफल मानी जाती हैं अन्यथा उसका कोई महत्त्व नहीं रहता हैं।

कुछ आलोचक साहित्य और समाज के एक साथ अध्ययन करने के विचार का खंडन करते हैं। उनका मानना हैं कि साहित्य में समाजशास्त्र लाने से न तो वह साहित्य रहता है और न समाजशास्त्र इसलिए आवश्यक है कि क्यों न साहित्य को समझने के लिए समाजशास्त्र को पढ़ लिया जाये, केवल उसी से काम चल जायेगा लेकिन ओमप्रकाश ग्रेवाल इस मत का खंडन करते है, उनके अनुसार:- "साहित्य एक ओर तो वास्तविक जीवन का प्रतिबिंब होने के कारण उस ऐतिहासिक-सामाजिक वस्तुस्थिति से घनिष्ठ संबंध रखता है जिसके अंदर उसकी रचना हुई हैं, परंतु इसके साथ ही दूसरी ओर वह परिस्थिति वैष्ठित भी होता है। जहाँ साहित्यकार वर्तमान के सभी सारभूत एवं अनिवार्यता प्राप्त को अपनी कृति में दिग्दर्शन करवाता है, वहाँ इसके साथ ही वर्तमान स्थिति का अतिक्रमण करके संभव परिवर्तनों की यही दिशा भी वह परिलक्षित कर सकता हैं।"[34] साहित्य और समाज के आपसी संबंध को हम किसी भी स्थिति में नकार नहीं सकतें लेकिन साहित्य और समाजशास्त्र और साहित्य के समाजशास्त्र में पर्याप्त अंतर विद्यमान हैं। साहित्य के समाजशास्त्र के विवेचन में इस बात का ध्यान रखना अतिआवश्यक है कि साहित्य और समाजशास्त्र के अपने-

[33] प्रेमचंद, 'हंस', अप्रैल-1930 पृ.सं.40

[34] ओमप्रकाश ग्रेवाल, 'नयापथ', जुलाई 1997, पृ.सं.90

अपने मूल्य और प्रतिमान होते हैं। रचनाकार समाज से जो अर्जित करता हैं और वही उसकी अभिव्यक्ति होती है।

सर्वप्रथम हमारे मस्तिष्क में यह बात आती है कि साहित्य में समाजशास्त्र की क्या उपयोगिता है? इसके अंतर्गत समाजशास्त्र की आवश्यकता क्यों महसूस होती है। साहित्य और समाजशास्त्र का अपना एक अलग ही अटूट रिश्ता है। साहित्य सामूहिक अभिव्यक्ति का माध्यम है जिसके अंतर्गत समाज जुड़ा हुआ रहता है। साहित्य समाज की उपज है; जो रचनाकार साहित्य और पाठक के मध्य होने वाली एक अंत:क्रिया है। जहाँ साहित्य के समाजशास्त्र की अवधारणा का प्रादुर्भाव अठाहरवीं शताब्दी में एडमंड विल्सन विको के द्वारा होमर के महाकाव्यों के लिए किए गए अध्ययन से प्रारंभ हुआ वही साहित्य के समाजशास्त्र शब्द का प्रथम प्रयोग अगस्त कौंत ने किया तथा साहित्य के समाजशास्त्र को वैचारिक आधार इपलित अडोल्फ़ तेन ने प्रदान किया। अपने निबंध 'कला का दर्शन' में वे साहित्य और कला को 'सामाजिक तथ्य' के रूप में देखते है और विभिन्न ज्ञानानुशासनों के समन्वित प्रभाव को रचना में स्वीकृति देते हैं। साहित्य के समाजशास्त्र की विवेचन दृष्टि अलग है। साहित्य और समाजशास्त्र के अपने अलग-अलग प्रतिमान होते है। जब से साहित्य ने समाजशास्त्र के मानदंडों के आधार पर चलना प्रारंभ किया तब से साहित्य का समाजशास्त्र कहलाने लगा। समाज अपने व्यापक परिवेश में साहित्य को समेटे हुए दिखाई देता है। समाज के अभाव साहित्य की परिकल्पना एकदम निराधार साबित होती हैं।

इसी प्रकार से डॉ. रामविलास शर्मा अपना विचार इस तरह से प्रकट करते है:- "जो लेखक समाज को गतिशील मानता है, समाज की गति के लक्ष्य को पहचानता है, उसके क्रांतिकारी और अग्रगामी तत्वों से सहानुभूति रखता है, इस गति, दिशा और लक्ष्य का उल्लेख अवश्य करेगा, इसलिए उसका चित्रण केवल तथ्य कथन होगा, यह कहना भ्रम है।"[35] रामविलास शर्मा लेखक की केवल तथ्य विवरण प्रस्तुत करने वाली बात को नकारते है। उनका मानना है कि वह तथ्यों से परे समाज को भी साथ लेकर चलता है। यदि लेखक केवल तथ्यों को ही साथ लेकर चलेगा तो समाज

[35] डॉ. रामविलास शर्मा, 'आस्था और सौंदर्य', पृ.सं.-21-22

का सही ढंग से चित्रण नहीं कर पायेगा। क्योंकि तथ्यों से इतिहास का निर्माण होता है समाज का नहीं। समाज का निर्माण तो सामाजिक अनुभूति से ही संभव हैं।

प्रसिद्ध विचारक अडोल्फ़ इपलित तेन का मानना था कि "कलाकार जितना अपनी कला में अंत:प्रविष्ठ होता है उतना ही वह अपने युग और जाति की चेतना में अंत: प्रवेश करता है, जबकि एक सामान्य कलाकार, जिसकी रचना भले ही समाज का प्रामाणिक दस्तावेज हो, प्रभावहीन होने के साथ-साथ अपने युग का प्रतिनिधित्व भी नहीं करती। कला को वे समाज के समूहमन की अभिव्यक्ति मानते थे।"[36] इनके समाजशास्त्र को कलाओं का समाजशास्त्र कहा गया है; जो साहित्य की सामाजिकता की व्याख्या करता है। साहित्य के समाजशास्त्र को व्यवस्थित अनुशासन प्रदान करने का श्रेय लुसिए गोल्डमान को जाता है। इन्होंने 'उत्पतिमूलक संरचनावाद' सिद्धांत की स्थापना की, जो केवल साहित्य के समाजशास्त्र का सिद्धांत न होकर अन्य विविध रूपों जैसे ऐतिहासिक, सामाजिक के विश्लेषण की पद्धति भी है। उनके अनुसार प्रत्येक कृति का अपना सामाजिक अस्तित्व होता है जिसमें रचनाकार के अपने विचारों की अभिव्यक्ति होती है। मार्क्सवादी विचारकों ने भी इस पर विचार किया है। मार्क्स, लेनिन, एंगेल्स ने साहित्य के स्वरूप पर विचार नहीं किया लेकिन अपने सामाजिक विचारों से साहित्य चिन्तन पर विचार किया। मार्क्स मानते थे कि कला को सामाजिक जीवन और विचार कला को प्रभावित करते है।

प्रो. मैनेजर पांडे ने साहित्य और समाजशास्त्र के संबंध को बड़ी बखूबी परिभाषित किया है। उनके अनुसार:- "कुछ लोग नये-पुराने साहित्य चिंतन में जहाँ कहीं समाज से साहित्य के संबंध का उल्लेख देखते है, वे उसे साहित्य का समाजशास्त्र या समाजशास्त्रीय आलोचना मान लेते है तब उनके लिए यह कहना आसान हो जाता है कि हमारे यहाँ भी साहित्य के बारे समाजशास्त्रीय चिन्तन की परंपरा मौजूद है वे यह नहीं समझते कि समाजशास्त्र आधुनिक पश्चिमी चिन्तन की देन है और साहित्य का समाजशास्त्र तो और भी बाद की विद्या है। वे इस प्रकार की भ्रान्ति से एकदम साफ़ इंकार करते है कि कहीं एक दृष्टिकोण से साहित्य के समाजशास्त्र का विकास हुआ क्योंकि इसका फलक बहुत विस्तृत है। इसीलिए साहित्य के समाजशास्त्र के उदय की पृष्ठभूमि अलग-अलग है।

---

[36] गरिमा श्रीवास्तव, 'उपन्यास का समाजशास्त्र", पृ.सं.-11 भूमिका से-

सामाजिक पुनर्निर्माण, सामाजिक परिवर्तन की ही एक प्रक्रिया है। समाजशास्त्र और साहित्य समान रूप से सामाजिक परिवर्तन की ओर आकर्षित रहे हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण में साहित्य और समाज का संबंध अन्योन्याश्रित है। किसी भी रचना की बेहतर समझदारी के लिए उसके सामाजिक संदर्भ की जानकारी जरूरी है। रचना के किसी एक पक्ष पर यदि समाज की अभिव्यक्ति की कल्पना की जाए तो यह असंभव है। रचना के प्रत्येक स्तर पर अंतर्वस्तु, संरचना, शिल्प और भाषा में समाज की अभिव्यक्ति होती है। इस संदर्भ में मैनेजर पांडेय लिखते हैं कि:- "आज के साहित्यिक समाजशास्त्री रचना की अस्मिता स्वीकार करते हुए समाज से उसके संबंध का विश्लेषण करते है। लेकिन समाज से रचना की संबंध भावना या समाजशास्त्रीय संबंध भावना का स्वरूप और उसकी खोज की प्रक्रिया अब भी जटिल समस्या बनी हुई है।"[37] वे रचना के प्रत्येक स्तर पर समाज का प्रभाव स्वीकार करते हैं।

हिंदी में प्रेमचंद ने साहित्य और समाज के संबंध को सरल तरीके से समझाया है:- "साहित्यकार बहुधा अपने देश-काल की परिस्थितियों से प्रभावित रहता है। जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव हो जाता है और उसकी आत्मा अपने देश-बंधु के कष्टों से विकल हो उठती है और उस तीव्र विफलता में भी वह रो उठता है। पर उसके रूदन में भी व्यापकता होती है। वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौमिक रहता है।"[38] साहित्य और समाज को समझने के लिए रचनाकार को इतिहास बोध भी होना चाहिए। साहित्य के इतिहास में मनुष्य जीवन का इतिहास झलकता है।

किसी भी विषय को एक निश्चित दिशा में ले जाने हेतु उसका सैद्धांतिक आयाम होना आवश्यक है अन्यथा विषय में भटकाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। साहित्य के समाजशास्त्र का भी एक सैद्धांतिक पहलू है जिसमें साहित्य को समाजशास्त्र के अंतर्गत सैद्धांतिक पक्ष प्रदान किया जाता है। विभिन्न विचारकों के द्वारा इस गंभीर विषय पर विचार प्रस्तुत किये गए। साहित्य और समाज को लेकर दुनियाभर के विचारकों में वाद-विवाद हुआ। इसको व्यवस्थित दार्शनिक आयाम

---

[37] मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं.40

[38] प्रेमचंद, 'हंस', अप्रेल (1932) पृ.सं. 40

देने का श्रेय पश्चिम के विचारकों को दिया जाता है। लुसिए गोल्डमान, रेमंड विलियम्स, विको और हर्डर जैसे विद्वानों ने गहन अध्ययन किया। उनके गहन अध्ययन के उपरांत समाजशास्त्र के सिद्धांत गढ़े गये। गोल्डमान ने साहित्य कृति और इतिहास के बीच विश्वदृष्टि के स्तर पर संरचनात्मक संबंधों की खोज की है। विवेचन की यह प्रक्रिया दोहरी है जिसमें एक बार कृति से समाज की ओर जाने और दूसरी बार समाज से कृति की और लौटने की आलोचनात्मक प्रक्रिया चलती रहती है। इस प्रकार गोल्डमान साहित्यिक कृति की विश्वदृष्टि की प्रक्रिया पर बल देते हैं। जिसमें एक बार वह दृष्टि समाज की पड़ताल करती है तो दूसरी और वह कृति की व्याख्या भी करती है।

समाजशास्त्र एक विकासशील विज्ञान है। यह विज्ञान का दूसरा रूप है जिसमें प्रयोग तो होते हैं लेकिन उसकी अवस्था अन्य प्रकार की होती है। प्रत्येक कार्य के पीछे कारण होता है तथा उस कारण की छानबीन करते-करते उसका सामान्यीकरण किया जाता है। आरंभ में समाजशास्त्र की अवधारणाएँ तथा सैद्धांतिक कोटियाँ पश्चिमी समाज के संदर्भ में विकसित हुई, लेकिन वे भारतीय संदर्भ से मेल नहीं खाती है। दोनों के समाजों में पर्याप्त भिन्नता है। इन विभिन्नताओं को हमें दोनों समाजों में पृथक अवधारणात्मक एवं सैद्धांतिक कोटियों का निर्माण करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार से समाजशास्त्र के सैद्धांतिक पक्ष को समझा जा सकता है।

उपन्यास का समाजशास्त्र:-

साहित्य के समाजशास्त्रियों के बीच उपन्यास एक लोकप्रिय विद्या है। गद्य साहित्य में व्यक्तिगत, सामाजिक अनुभूति की अभिव्यक्ति करने के लिए सशक्त विधा है। उपन्यास को हमारे आधुनिक पूंजीवादी समाज का महाकाव्य कहा जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। इसे आधुनिक युग की प्रतिनिधि कला कहा जाये तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। उपन्यास में कोई भी पात्र यदि आता है तो उसके साथ सामाजिकता जुड़ी हुई रहती है। इसका सीधा सम्बंध समाज से है। इसका कलेवर व्यापक होता है, उसमें यथार्थ को व्यक्त करने का अवसर मौजूद रहता है। ग्रैबियल गार्सिया मार्खेज का उपन्यास के संबंध में कथन इस प्रकार है:- "यदि आप कहते है कि उपन्यास की मौत हो चुकी है तो वास्तविकता यह है कि उपन्यास नहीं बल्कि आप ही निष्प्राण हो गये हो।"[39] उपन्यास समाज

[39] https://www.hindisamay.com/contentDetail.aspx?id=2442&pageno=1

सापेक्ष होता है इस कारण भी उपन्यास और समाजशास्त्र दोनों समान स्तर रखते हैं। इस पद्धति में उपन्यास का सार्वभौमिक विश्लेषण किया जाता है जो कि समाज की कलात्मक अभिव्यक्ति है। हीगल उपन्यास को 'आधुनिक युग का महाकाव्य' कहते हैं। उपन्यास और समाज के संबंधों को देखने पर पता चलता है कि इनका जटिल संबंध है। लेकिन उपन्यास के माध्यम से इन संबंधों को बहुत ही सरल ढंग से अभिव्यक्त किया जाता है।

इनका संबंध एक ही काल अथवा परिवेश से है। प्रो. मैनेजर पाण्डेय का मानना है कि- "समाजशास्त्र में मनुष्य की सामाजिकता की पहचान के अनेक रास्ते है। उनमें से जो रास्ता साहित्य संसार से होकर जाता है वह सुगम और विश्वसनीय तब होता है, जब वह उपन्यास के रचना संसार से होकर गुजरता है क्योंकि वहाँ न तो कविता की तरह आत्मपरकता की फिसलन होती है और न नाटक के यथार्थ का मायालोक।"[40] अर्थात उपन्यास अधिक भावनाओं की फिसलन में नहीं फिसलता उसे यथार्थ का ज्ञान बराबर रहता है, यदि वह ऐसा करना भी चाहे तो वह एक अच्छे उपन्यास की श्रेणी से बाहर निकल जाता है।

वर्ग विकास के साथ उपन्यास की संरचनात्मक समानता है। यह विभिन्न संरचनाएं तथा वर्ग की विश्वदृष्टि है जिससे कि लेखक का संबंध है, उपन्यास में अभिव्यक्त होती है। उपन्यास पाठक वर्ग पर अपने विचार नहीं थोपता अपितु नई समाज व्यवस्था के निर्माण के लिए संघर्षरत मानव का रचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। उपन्यास समाज की उपज है। जिसमें आदर्श और यथार्थ का योग बराबर रहता है। रॉल्फ फॉक्स ने उपन्यास को बुर्जुआ अथवा पूंजीवादी सभ्यता की देन माना है, उनके अनुसार:- "उपन्यास विश्व की कल्पना प्रसूत संस्कृति को बुर्जुआ अथवा पूंजीवादी सभ्यता की एक महत्वपूर्ण देन है। उपन्यास उसकी एक साहसपूर्ण खोज है-मानव के द्वारा मानव की खोज।"[41] पश्चिम में आरंभ से ही साहित्य के समाजशास्त्र के विकास को लेकर विवाद की स्थितियाँ बनी रही। उपन्यास के उदय को लेकर भी चर्चाएँ हुई। इसकी उत्पति में तेन ने विधेयवादी दृष्टिकोण अपनाया। उपन्यास के उदय के रूप में मार्क्सवादी विश्लेषण को भी आधार बनाया गया है जिसमें शोषक और शोषित की परिकल्पना प्रस्तुत की गई है।

---

[40] मैनेजर पाण्डेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं.227
[41] रॉल्फ फॉक्स, 'उपन्यास और लोक जीवन', पृ.सं.43

लुसिए गोल्डमान ने मार्क्सवाद और संरचनावाद के मध्य एकता स्थापित करने का प्रयास किया। उपन्यास की प्रवृत्ति आरंभ से ही लोकतांत्रिक रही है। डब्लू. जे. हार्वे. ने लिखा है कि:- "उपन्यास की रचना में क्रियाशील मानसिकता समाज में लोगों की पूर्णता, विविधता और वैक्तिकता को स्वीकार करती है। सहिष्णुता, संशयवाद और दूसरों की स्वायत्तता के प्रति आदर भाव उसके आदर्श हैं, मतांधता और कट्टरता से उसे घृणा हैं।"[42] उपन्यास जीवन मूल्यों के चुनाव का संकेत देता है। वह सामाजिक यथार्थ के साथ पूरी तरह से जुड़ा हुआ रहता है। लेकिन इसकी अभिव्यक्ति में भी पर्याप्त अंतर होता है। एक रचनाकार यथार्थ के एक स्तर और रूप को महत्त्व देता है तो दूसरा किसी अन्य रूप को। उपन्यास में यथार्थवाद पर एक लम्बी बहस चली। एंगेल्स, टेरी एग्ल्टन, जार्ज लुकाच आदि विद्वानों ने इस विषय पर जमकर वाद-विवाद किया तथा अपने-अपने विचार रखे। उपन्यास के समाजशास्त्र के निर्माण में जार्ज लुकाच की महती भूमिका है और इसका आरंभ उनकी पुस्तक 'उपन्यास का सिद्धांत' (1916) से माना जाता है।

एंगल्स लिखते हैं कि:- "मैं जिस यथार्थवाद की बात कर रहा हूँ वह लेखक के विचारों के बावजूद प्रकट हो सकता है। इस बात को समझने के लिए बाल्जाक का उदाहरण दिया जा सकता है। बाल्जाक राजनीतिक दृष्टि से 'लिजिटिमिस्ट' था। उसकी महान रचनाओं के बारे में कहा जाता था कि यह एक अच्छे समाज के अनिवार्य विनाश पर लिखे गये सच्चे शोक गीत के समान है। बाल्जाक अपने राजनीतिक पूर्वाग्रहों और वर्गीय सहानुभूति के विपरीत जाने को मजबूर होता है। उसने भविष्य की उन वास्तविक शक्तियों को भी देखा जो उस समय उपलब्ध थी। मैं इसे यथार्थवाद की महान विजय समझता हूँ।"[43] मादाम स्तेल उपन्यास के उदय के लिए मध्यम वर्ग की भूमिका को अनिवार्य मानते थे। साथ ही नारी की सम्मानजनक स्थिति को भी। वे कहते थे कि जिस समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी होगी वहीं उपन्यास का विकास हो सकता है। वे लिखते हैं कि "आखिर 'प्रेम करने की क्षमता के अतिरिक्त' स्त्रियों को जीवन के बारे में कोई जानकारी नहीं होती। इंग्लैण्ड की कविता यद्यपि 'अवसादपूर्ण कल्पना' से सरोबार है किंतु यह एक ऐसा देश है जहाँ 'स्त्रियों को

[42] मैनेजेर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं.230
[43] मैनेजेर पांडेय, साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं.236

बड़ी सच्चाई से प्यार किया जाता है।"[44] उपन्यास समाजशास्त्रीय विश्लेषण में अधिक अनुकूल कैसे है? समय, समाज और इतिहास से परिभाषित मनुष्य ही उपन्यास रचना का लक्ष्य है। समाजशास्त्र में मनुष्य की सामाजिकता की पहचान का जो सबसे सुगम रास्ता है; वह उपन्यास को ही माना जाता है।

भारत में उपन्यास कला का मार्गदर्शन करने वाले बांग्ला के सुप्रसिद्ध लेखक बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की भूमिका को आलोचकों ने स्वीकार किया है। अपने समय और समाज के निरीक्षण और परिक्षण की जो दृष्टि उपन्यास विद्या में दिखाई पड़ती है वह अन्य विधा में इतनी प्रबलता से दिखाई नहीं पड़ती है। सबसे अधिक प्रतिबंधित साहित्य में उपन्यास का नाम आता है और उपन्यास की लोकतान्त्रिक चेतना इसका प्रमुख कारण रही है। उपन्यास अपने पाठकों को जीवन मूल्यों के बीच चुनाव का संकेत देता है, सहानुभूति का विस्तार करता है और जीवन की कला भी सिखाता है। उपन्यास को कई बार अनैतिक कहकर भी प्रतिबंध लगाये जाते है। जेम्स ज्वायस के 'युलिसिस' और डी. एच. लारेंस के 'लेडी चेटेरलीज लवर' जैसे उपन्यास भी है। हिंदी में 'शेखर: एक जीवनी' पर भी अनैतिकता का आरोप लगा था। उपन्यास की यह वास्तविकता है कि वह सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति से भागकर उपन्यास नहीं रह सकता। हिंदी के प्रमुख उपन्यासकार प्रेमचंद उपन्यास के बारे में इस प्रकार लिखतें हैं:- "मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र समझता हूँ, मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।"[45] उन्होंने मानव के सम्पूर्ण जीवन को प्रकट करना ही उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य माना है। प्रेमचंद आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से प्रेरित होकर उपन्यास लिखते थे। इनके उपन्यासों को आदर्शोन्मुख यथार्थवादी साहित्य की संज्ञा दी गई है।

विजय बहादुर सिंह हिंदी उपन्यास की प्रखर चेतना को लेकर इस प्रकार लिखतें हैं कि:- हिंदी उपन्यास की सामाजिक चेतना प्रखर हुई है और उसका राष्ट्रीय बोध तीव्र और सम्पन्न हुआ है। आजादी, लोकजागरण, समतावादी समाज की नव रचना, जनोन्मुख गणतंत्र के आग्रहों के साथ-साथ स्त्रियों, दलित और पिछड़ों के साथ अल्पसंख्यक समाजों और वनवासियों, हरिजन-गिरिजनों

---

[44] ian watt, 'the rise of the novel', लंदन, पैग्विन बुक्स (1963)

[45] डॉ. अमरनाथ, 'हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली', पृ.सं.91

की कहानी भी वह कह रहा है।”[46] इसमें सभी पक्षों की स्थिति का चित्रण होता है जो उस समय के समाज को संवेदना से जोड़े रखता है।

इस प्रकार स्पष्ट है की साहित्य के समाजशास्त्र के अध्ययन हेतु सर्वप्रथम उपन्यास के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणों का अध्ययन करना अतिआवश्यक है। पश्चिम के विचारकों ने भी उपन्यास के विकास की अगली कड़ी के रूप में ही अन्य विधाओं के विकास की स्थिति को स्वीकार किया है। उपन्यास साहित्य में आदर्श और यथार्थ दोनों रूपों में दिखाई पड़ता है। वह केवल आदर्शवादी नहीं रह सकता तो कोरा यथार्थवादी भी नहीं रह सकता अपितु दोनों का मिला जुला रूप रहता है।

कहानी का समाजशास्त्र:-

समाजशास्त्रीय अध्ययन का महत्त्व यह नहीं है कि साहित्यिक रचना को कहीं गुम कर दिया जाये। कहानी जो एक साहित्यिक उत्पाद्य है उसके भूत, वर्तमान और भविष्य के विविध संदर्भों को परखना आवश्यक है। कहानी का समाजशास्त्रीय अध्ययन मनुष्य की संस्कृति के, उसके इतिहासबोध के, उसकी उन्मुखताओं की सम एवं विषम स्थितियों के सरोकारों का एक विविध अर्थों में दस्तावेज हो जाता है। कहानी का आकार लघु ही रहता है, कभी-कभी इसका आकार दीर्घ भी हो जाता है लेकिन इन्हें उपन्यास की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। समाजशास्त्र साहित्य से भिन्न विषय है किंतु इसका अवलंब इसलिए लिया जाता है ताकि कहानी के विविध पक्षों को गंभीर बनाया जा सके। कहानी के साथ केवल एक पक्ष जुड़कर नहीं आता बल्कि धर्म, वर्ग अधिकार, उपनिवेशवाद, मूल्य आदि कई मुद्दे इससे जुड़कर आते है।

कहानी के समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए स्वीकृत विषय का सम्बंध समाज से ही हो यह जरूरी नहीं है, असामाजिक कहानियों का भी समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जा सकता है। कोई भी असामाजिक समझी जाने वाली कहानी समाज निरपेक्ष नहीं होती उसमें कुछ न कुछ सामाजिक पुट अवश्य होता है। किसी कहानी के अमुक पात्रों के व्यवहार का कारण जानना भी सामाजिक संदर्भ के अंतर्गत आता है। कहानी में यदि यथार्थ की खोज करते है तो उसे मात्र रचना तक सीमित नहीं कर सकते बल्कि कहानीकार और उससे जुड़े सामाजिक संदर्भों को जानना भी अति-आवश्यक है।

[46] विजय बहादुर सिंह, 'उपन्यास समय और संवेदना', (2007) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

इसमें कहानीकार के व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ, लेखकीय विचार आदि का विश्लेषण किया जाता है।

कहानी के समाजशास्त्रीय अध्ययन में रचना की आत्मनिष्ठता की और ध्यान दिया जाता है। इसमें लेखक की विचारधारा की जानकारी होना आवश्यक है ताकि उसके मनोभावों को जाना जा सके। लेकिन कभी-कभी लेखक की विचारधारा कृति पर भारी पड़ जाती है जैसे प्रेमचंद की कहानियों के संदर्भ में कहा जाता है कि इन्होंने अपनी विचारधारा के आधार पर कहानी में समस्या प्रकट की और उसी के अनुसार कहानी को मोड़ दिया इसलिए कुछ आलोचक उसकी विचारधारा का विरोध करते हैं।

इसी प्रकार कहानी समय के अलग-अलग कथा-बिन्दुओं का अर्थ पूर्ण संयोग है। यह संयोग तभी संभव है जब मनुष्य के जीवन के सूक्ष्म बिन्दुओं को गहराई में उतरकर ढूंढा जाये। कहानी में जीवन के विविध पक्षों को लेकर रचनात्मक संरचना होती है। वह कम शब्दों में ही जीवनबोध का सृजन करने में सक्षम होती है। कहानी के द्वारा सृजित जीवनबोध समाप्त होने वाला नहीं है। समाजशास्त्र कहानी से भिन्न विधा है लेकिन इसके अध्ययन को अधिक गंभीर बनाने के साथ ही विविध पक्षों का सूक्ष्म अंकन करने के लिए कहानी के समाजशास्त्र का सहारा लिया जाता है। यथार्थ को प्रकट करना भी कहानी के अध्ययन में आवश्यक तत्व है। किसी रचना की सामाजिकता की खोज करने हेतु यथार्थ की पद्धतियों पर भी विचार किया जाता है। इस आधार पर प्रेमचंद और अज्ञेय की कहानियों की तुलना की जाती है। दोनों की कहानियों में व्यक्त सामाजिक वास्तविकता, जीवन के अनुभवों के प्रति दोनों के दृष्टिकोण कलागत वैविध्य आदि का अध्ययन किया जाता है।

कहानी के समाजशास्त्रीय अध्ययन में कहानी की अपनी स्वायत्तता कभी भी समाप्त नहीं होती है। उपन्यास के बाद कहानी गद्य साहित्य की प्रमुख विधा है। जैसे उपन्यास और अन्य विषयों का अपना समाजशास्त्र होता है वैसे ही कहानी का भी समाजशास्त्र होता है। यदि किसी कहानी में जीवन जीने के लिए तनिक भी सच्चाई मिलती है और हमें जीने में मदद करती है तो वह निश्चित ही यथार्थवादी कहानी होगी। उपन्यास के बाद ही कहानी का विकास हुआ। किसी भी साहित्यकार द्वारा समाज के जीवन मूल्यों से प्रेरित होकर जो साहित्य लिखा जायेगा, वही उस साहित्य का

समाजशास्त्र कहलायेगा। हिंदी साहित्य में मुंशी प्रेमचंद जी की कहानियों से समाजशास्त्र का आरंभ माना जा सकता हैं। यह एक ऐसे रचनाकार है जिन्होंने हिंदी में सामाजिक जीवन से प्रेरित कहानियाँ लिखी। उनकी 'बड़े घर की बेटी', 'पूस की रात', 'कफन', 'पंच परमेश्वर', 'नमक का दारोगा' आदि कहानियों में समाज के यथार्थ पक्ष को इंगित किया। समकालीन कहानियों का यदि परिदृश्य देखे तो एक कालखंड में लिखी गई कहानियाँ जिसका उद्देश्य पूर्व में लिखी गई कहानियों से अपने-आपको अलग करना नहीं है अपितु उस समय विशेष का निर्धारण करती है।

समकालीन कहानी के बारे में विश्वम्भर उपाध्याय लिखते है कि:- "समकाल शब्द यह बताता है कि काल के इस प्रचलित खंड या प्रवाह में मनुष्य की स्थिति क्या है? इसे उलटकर कहे तो कहेंगे कि मनुष्य की वास्तविक स्थिति देखकर या उसे अंकित करके ही हम समकालीनता की अवधारणा को समझ सकते हैं शर्त है कि मनुष्य आज के अंकन में वस्तुगत रहे यानि उसके अंकन की विधि कोई भी हो लेकिन उससे जो मानव बिम्ब उभरता हो, वह वास्तविक जीवन के निकट हो।"[47] कहानी में रचनाकार की सामाजिक दृष्टि निहित रहती है साथ ही मूल्यों की अभिव्यक्ति भी होती है। कहानी में मूल्य की परख का आधार मानवीय संसक्ति है। इसमें मूल्यों का निरंतर विकसित होना एक पक्ष के रूप में देख सकते हैं। इन मूल्यों की खोज करना भी कहानी के समाजशास्त्रीय अध्ययन का मुख्य पक्ष है। यदि निष्कर्ष में संक्षिप्त रूप से कहे तो कहानी अपने विशेष अस्तित्व के माध्यम से जीवन का बोध कराती है।

1.4 समाज और संवेदना:-

समाज और संवेदना का आपस में गहरा संबंध है। संवेदनहीन समाज की कल्पना करना उसी प्रकार है जिस प्रकार प्राण-रहित मनुष्य की कल्पना करना क्योंकि बिना संवेदना के मनुष्य पत्थर के समान बन जाता है, जिसकी कोई भावनाएँ नहीं होती। संवेदना एक ऐसा तत्व है जो मानव मन को आपस में जोड़े रखती है। संवेदना साहित्य का मूल तत्त्व है। मानव कभी भी संवेदनाहीन नहीं हो सकता और यदि वह संवेदनहीन होता है तो पशु के समान समझा जाता है। संवेदना से अभिप्राय है, वह अनुभूति-प्रवणता जो सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रभावों को ग्रहण करने में क्षमता से पूरित होती है।

[47] विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, 'समकालीन कहानी की भूमिका', (1977) पृ.सं.2

भावनाओं के स्तर आधुनिक भी होते है और विविध भी। साहित्य का संबंध मानवीय संवेदना से है। प्रत्येक साहित्यकार अपने युग की चेतना से प्रेरित होकर ही साहित्य का निर्माण करता है। मानवीय संवेदना सुखात्मक और दुखात्मक दोनों प्रकार की होती है। वेदना की अनुभूति बड़ी व्यापक और गंभीर होती है। इसीलिए दुःख के क्षण में संवेदना का प्रवाह अधिक होता है। संवेदना मानसिक अनुभूति है। सामान्यत: संवेदना का प्रयोग मनोविज्ञान और साहित्यिक स्तर पर किया जाता है।

संवेदना को अंग्रेजी में 'सेंसेशन' अर्थात 'ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव' कहा जाता है। इसे 'सिम्पैथी' के नाम से भी जाना जाता है। 'सेंसेशन' शब्द का प्रयोग यद्यपि उत्तेजना के लिए होता है लेकिन घटना या परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में प्राप्त अनुभूति की अभिव्यक्ति को भी संवेदना कहा जाता है। संवेदना का अर्थ सहानुभूति, दुःख-सुख आदि के रूप में लिया जाता है। मनोविज्ञान कोश के अनुसार:- "संवेदना चेतना की व्यवस्था है जो किसी एक इंद्रिय के उत्तेजित हो जाने पर उत्पन्न होती है और जिसका तात्विक विश्लेषण नहीं किया जा सकता। मनोविज्ञान में संवेदना ज्ञान का सर्वाधिक सरल रूप अनुभव करना, सुख-दुःख आदि की प्राप्ति करना। द्वेष, आनंद, शोक, ताप, आदि को मन में मालूम करना , प्रकट करना, जताना आदि संवेदना के लक्षण हैं।"[48] साहित्य में संवेदना शब्द का प्रयोग आल्हाद, आस्वाद, जिज्ञासा, राग-विराग, निराशा, कुंठा, सुख-दुःख, अनुभूति आदि के रूप में किया जाता है। मनोविज्ञान और साहित्य में संवेदना को अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखा जाता है। लेकिन फिर इसमें प्रयुक्त होने वाले समानार्थी शब्द और भाव मिल जाते हैं। संवेदना अनुभूति प्रवणता का एक माध्यम है जो सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों को ग्रहण करने की क्षमता प्रदान करता है। इन भावों के विविध स्तर होते हैं। संवेदना को यदि सशक्त अभिव्यक्ति किसी माध्यम से मिलती है तो वह साहित्य ही है।

भाषा, भाव और प्रेरणा ये तीनों माध्यम साहित्य की संवेदना को अर्थ प्रदान करते हैं। वैयक्तिक संवेदना ही धीरे-धीरे सामाजिक संवेदना में परिवर्तित होने लगती है। संवेदना मानव मन की एक प्रतिक्रिया है। व्यक्ति को समाज में कई प्रकार के अनुभव मिलते हैं। साहित्यकार के बारे में कहा

---

[48] विजय वर्गीय, 'आधुनिक हिंदी कवियों का सामाजिक दर्शन', पृ.सं.3

जाता है कि वह अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील होता है। समाज, व्यक्ति और जीवन के प्रति उसकी निजी धारणाएँ होती है।

इसके लिए विविध शब्द प्रयुक्त किए जा सकते हैं- अनुभूति ज्ञात होना अथवा विदित होना। "साहित्य में इस शब्द का प्रयोग इस सीमित अर्थ में नहीं किया गया है। विशेषत: जब हम मानवीय संवेदना की बात करते है तो उसका आशय मात्र ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव न रहकर मानव मन की अतल गहराइयों में छिपी करूणा, दया एवं संवेदना की 'अनुभूति' का भी व्यंजक है ।"[49] अंग्रेजी में 'संवेदन' शब्द के नजदीक पड़ने वाले शब्द है- सेंसेशन, फिलिंग [FELLING] सेंसेटिव [SENSITIVE] आदि।

अलग-अलग विद्वानों ने इसकी भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ दी है, इसी संदर्भ में डॉ. देवीप्रसाद गुप्त लिखते हैं कि:- "साहित्य के चेतनानुभूति की उस मनोदशा या अवस्था को संवेदना कहते है जो उसे सृजन की प्रेरणा, रचना विधान की क्षमता एवं लोकजीवन के प्रति आस्था प्रदान करती है।"[50] समाजशास्त्रीय अध्ययन में समाज के संवेदनात्मक पक्ष को भी देखा जाता है। समाज में रहते हुए ही व्यक्ति सुख-दुःख का अनुभव करता है। मनुष्य के इन्हीं भावों में संवेदना का पुट छिपा हुआ रहता है। इस प्रकार से समाज और संवेदना दोनों परस्पर जुड़ी हुई है। साहित्यिक संदर्भ में यदि संवेदना की बात की जाए तो यह साहित्यकार की चेतनानुभूति की उस मनोदशा का द्योतक है जो उसे रचनाविधि की शक्ति और सामर्थ्य प्रदान करती है। प्राचीन काव्यों में जो भाव कहलाया आधुनिक युग में उसे ही संवेदना कहा जाने लगा।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार:- "अनुभूति एवं भाव प्रवणता व्यक्ति की संवेदनाएं होती है। अत: भावप्रवण व्यक्ति नि:संदेह कही अधिक संवेदनशील व्यक्ति होता है साधारण सी घटना भी संवेदनशील व्यक्ति के मन में भावनाओं का तूफ़ान उठा सकती है। जबकि उसी साधारण सी घटना की ओर सामान्य व्यक्ति का ध्यान तक आकृष्ट नहीं हुआ करता।"[51] संवेदना उस महल की आधार शिला है जिस पर संस्कृति और सभ्यता रूपी महल का निर्माण होता है। इसी प्रकार डॉ. नगेंद्र

---

[49] उषा यादव, 'हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना', पृ.सं.11

[50] कमलेश्वर, 'नई कहानी की भूमिका', अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली पृ.सं.34

[51] डॉ.शेखर शर्मा, 'समकालीन संवेदना और हिंदी नाटक', पृ.24-25

मनोविज्ञान और संवेदना में अंतर स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि:- "मुख्यत: संवेदना का अर्थ ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त अनुभव का ज्ञान है।"[52] संशय, विद्रोह, संत्राश, कुंठा, विराग, आस्था, अनास्था आदि संवेदना के भेद है।

मनुष्य अपने जीवन काल में कुछ न कुछ प्राप्त करने हेतु प्रयत्नशील रहता है। उस प्रयत्न में असफल होने पर उसके मन में निराशा उत्पन्न होती है। उसी निराशा से असंतोष एवं वेदना जन्म लेकर मानव जीवन को नष्ट कर देती है। निराशाएँ और असफलताएँ ही मनुष्य जीवन को असहाय बना देती है। संवेदना में किसी वस्तु को देखकर उसके प्रति हमारे मस्तिष्क में उठने वाले दुखात्मक-सुखात्मक विचार क्रियाशील हो उठते हैं जो अलग-अलग रूपों में दिखायी पड़ते हैं।

साहित्यकार किसी न किसी रूप में समाज से जुड़ा हुआ रहता है। समाज के आचार-विचार, नैतिक, आर्थिक, राजनीति, आदि परिस्थितियों से वह जुड़ा हुआ रहता है। इस कारण वैयक्तिक संवेदना भी सामाजिक संवेदना से जुड़ी हुई रहती है। संवेदना मनुष्य के अंदर बदलाव की स्थिति उत्पन्न करती है । साहित्य के मूल में संवेदना छिपी हुई रहती है और उसी के परिणामस्वरूप समाज को एक नई दिशा प्रदान होती है। एक सामान्य प्राणी की अपेक्षा साहित्यकार अधिक संवेदनशील होता है। उसमें सहानुभूति के साथ-साथ संवेदना भी होती है लेकिन केवल सहानुभूति के बल पर ही रचनाकार अच्छी रचना नहीं कर सकता। सहानुभूति और संवेदना के लिए अलग-अलग मापदंड निर्धारित है।

संवेदना में अधिक गहराई होती है अपेक्षा सहानुभूति के। किसी के दुःख को देखकर सहानुभूति जताई जा सकती है लेकिन संवेदना उसके लिए कुछ करने हेतु प्रेरित भी करती है। राममनोहर त्रिपाठी इसके संदर्भ में कहतें है, यथा: "संवेदना द्वारा ही साहित्य के सृजन के लिए साहित्यकार के मन में सर्वप्रथम भाव उत्पन्न होते हैं और इन भावों को साहित्यकार अपनी लेखनी द्वारा अभिव्यक्त करता है तभी साहित्य की रचना होती है।"[53] सामाजिक परिवेश में उत्पन्न संवेदना साहित्य के रूप में प्रकट होती है। साहित्य और संवेदना का संबंध अटूट होता है। संवेदना के बगैर

---

[52] philip lawrance harina, 'the new dictionary of psychology', p.303
[53] राम मनोहर त्रिपाठी, हिंदी कविता: संवेदना और दृष्टि', पृ.सं.36

साहित्य नहीं लिखा जा सकता। साहित्यकार के हृदय की संवेदनात्मक अनुभूति ही संवेदना के रूप में बाहर निकलकर आती है। वह अपने मन की अनुभूतियों को अपनी कृति के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। प्रत्येक साहित्यकार अपने समाज और परिवेश से संवदेनाओं को ग्रहण करने की क्षमता रखता है। वह सामाजिक अनुभूतियों को नवीन अर्थ प्रदान करता है और उसे जनमानस के मध्य रखता है। उससे रचनाकार की संवेदना साधारण मनुष्यों से जुड़ जाती है; इसीलिए दोनों का संबंध परस्पर अन्योन्याश्रित है।

1.5 **समाज और संस्कृति:-**

'संस्कृति' शब्द अपनी विशालता और विविधताओं को साथ लेकर चलता है। इसे किसी सीमा या विषय-विशेष में नहीं बांधा जा सकता है। क्योंकि अपने क्षेत्र-विस्तार के इसके विविध आयाम है। भारतीय और विदेशी संस्कृति के अपने अलग-अलग दृष्टिकोण हैं। 'संस्कृति के चार अध्याय' पुस्तक की भूमिका में जवाहर लाल नेहरू भारतीय संस्कृति के बारे में लिखते हैं कि "दिनकर ने भी जोर देकर दिखलाया है कि भारतीय जनता की संस्कृति का रूप सामासिक है और उसका विकास धीरे-धीरे हुआ है। एक ओर तो इस संस्कृति का मूल आर्यों से पूर्व, मोहनजोदड़ो आदि की सभ्यता तथा द्रविड़ों की महान सभ्यता तक पहुँचता है।"[54] संस्कृति मानव की प्रगति के इतिहास को आगे लेकर बढ़ती है। अन्य प्राणियों की तुलना में मानव अपना विकास करने के लिए अधिक प्रयत्नशील रहता है। अन्य प्राणी अपनी जीवन शैली में कोई विशेष परिवर्तन नहीं कर पाते, जैसे पशु। जैसे हैं वैसे ही रहते है जबकि मनुष्य अपने में परिवर्तन करता हुआ अपनी संस्कृति में भी परिवर्तन करता चलता है जो संस्कृति के विविध रूपों को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। इस परिवर्तन हेतु वह विशेष प्रयास नहीं करता अपितु उसके विकास के साथ-साथ होता चला जाता है।

रामजी उपाध्याय के अनुसार-"मानव स्वभावत: अपनी या प्रकृति की किसी रचना को पूर्ण मानकर संतोष नहीं कर लेता, बल्कि नित्य ही उसे अधिक पूर्ण या सुंदर बनाने का यत्न करता रहा है। सुंदर बनाने, सुधारने और पूर्ण बनाने के प्रयत्न मनुष्य की बुद्धि और सौंदर्य-भावना के विकास का परिचय देते है । मानव का यही विकास संस्कृति है। संस्कृति का अर्थ सुधारना, सुंदर या पूर्ण बनाना

[54] रामधारी सिंह दिनकर, 'संस्कृति के चार अध्याय', लोकभारती प्रकाशन तीसरा सं.(2010) इलाहबाद

है।"[55] समाज और संस्कृति का आपसी अटूट संबंध है। संस्कृति रूपी उपवन में ही समाज रूपी वृक्ष अपनी-अपनी शाखाएँ चारों और फैलाता है। संस्कृति के भीतर ही हमारा समाज विविध रूप-आकार ग्रहण करता है। वैसे संस्कृति शब्द सुनने में सरल लगता है लेकिन इसके भीतर भी कई प्रकार की जटिलताएं समाहित है।

समाज और संस्कृति को मानवता के मुख्य आधार स्तम्भों के रूप में देखा जा सकता है। इन्हीं आधार स्तम्भों के आधार पर समाज विशेष की संस्कृति तय की जाती है। यथा- "संस्कृति किसी जाति या समाज की अंतर्रात्मा होती है। इसके द्वारा उस देश के समस्त संस्कारों का ज्ञान होता है। जिनके आधार पर वह अपने सामाजिक व सामूहिक आदर्शों का निर्माण करता है। अत: प्रत्येक देश की संस्कृति का और उसके अनुकूल उसकी सामाजिक रचनाओं का अन्य देशों की संस्कृति और सभ्यताओं से भिन्न होना तो एक स्वाभाविक बात है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति जहाँ भारतीय समाज की आत्मा की अभिव्यक्ति है वही दूसरी पाश्चात्य संस्कृति पश्चिम के समाज के संस्कारों का बोध कराती है।"[56] व्यक्ति के जीवन मूल्यों के साथ-साथ उसकी संस्कृति में भी परिवर्तन होता रहता है। समाज में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक बदलाव के साथ-साथ सांस्कृतिक बदलाव भी होते रहते है। जब तक समाज का वर्चस्व रहता है उसकी संस्कृति भी बनी रहती है। समाज के वर्चस्व की समाप्ति के साथ ही संस्कृति भी लुप्त हो जाती है। इसीलिए परस्पर दोनों का संबंध दृष्टिगोचर होता है।

समाज की संस्कृति और समाजशास्त्रीय संकल्पना के बारे में मेहरोत्रा लिखते हैं कि:- "सामाजिक घटनाओं में समाज की संस्कृति, सभ्यता के घटक, समूह-समितियाँ, संस्थाएं, जाति, परिवार, कानून, धर्म, दर्शन, राजनीति, साहित्य, कला, भाषा आदि इन तत्वों का भोक्ता सामाजिक मनुष्य और उसके अंत:सम्बंध, अंत:क्रियाएँ आदि है।"[57] इसका मानना हैं कि इन सबके मध्य समाज की संस्कृति के तत्व निहित रहते हैं। समाज के भीतर इस प्रकार की क्रियाएं होती रहती है। जिनसे समाज संस्कृति को और संस्कृति समाज को प्रभावित करती है।

---

[55] रामजी उपाध्याय, 'भारतीय धर्म और संस्कृति', लोकभारती प्रकाशन (2014) इलाहबाद पृ.सं.56

[56] विकिपीडिया से-

[57] मेहरोत्रा, 'साहित्य का समाजशास्त्र: मान्यता और स्थापना', रचना प्रकाशन, वाराणसी (1970) पृ.34

समाज के भीतर मनुष्य रहता है उसका एक समाज होता है और उस समाज की एक संस्कृति। समाज में मनुष्य पलकर बड़ा होता है और अपनी संस्कृति के अनुसार ढ़लता है यदि वह ढल नहीं पाता है तो समाज से अलग रहने का प्रयास करता है, जब वह समाज से कट जाता है तो उसका भी कोई अस्तित्व नहीं रहता। उसे समाज में रहनें के लिए समाज के नियम, कानून-कायदे मानने ही पड़ते हैं। समाज में रहकर व्यक्ति अपनी संस्कृति के साथ-अन्य संस्कृति को भी अपना सकता है। समाज और व्यक्ति के संबंधों, संस्कृति के महत्त्व को प्रकट करते हुए मैनेजर पांडेय का कथन दृष्टव्य है:- "कभी-कभी एक मानव समुदाय की समग्र जीवन पद्धतियाँ सामाजिक विरासत या समस्त सृजन को संस्कृति कहा जाता है। इसके अंतर्गत समाज के मूल्य, मान्यताएँ, विश्वास, विचार, भाव, रीति-रिवाज, परंपरा, भाषा, ज्ञान, कला, धर्म आदि के मूर्त-अमूर्त रूपों को शामिल किया जाता है।"[58] संस्कृति शब्द की उत्पति 'संस्कृत' शब्द से हुई है संस्कृति एवं संस्कृत दोनों ही शब्द संस्कार से बने हैं। संस्कार का अर्थ है कुछ कृत्यों की पूर्ति करना। इन कृत्यों की पूर्ति करके ही मानव 'सामाजिक प्राणी' बनता है। संस्कृति को एक प्रकार से सामाजिक प्राणी माना जाता है। यह समाज द्वारा दिया गया उपहार है जिसे मनुष्य जन्म लेने के बाद प्राप्त करता है।

संस्कृति का प्रभाव मानव के संपूर्ण जीवन पर दिखाई पड़ता है। वह व्यक्ति को एक ऐसा मानव बनाती है जिसके बिना उसकी स्थिति बर्बर पशु के समान मानी जाती है। मनुष्य, मनुष्य को आपस में जोड़ने का काम संस्कृति करती है। प्रत्येक मनुष्य का जन्म अपने समाज में होता है। जिसका एक सांस्कृतिक वातावरण होता है, जिसमें वह रहता है, क्रिया-प्रतिक्रिया करता है। हमारा जीवन रहन-सहन और हमारी विचारधारा हमारी संस्कृति का ही फल है। जैसी हमारी संस्कृति होती है उसी अनुरूप हम बनते जाते हैं। किंग्सले डेविड ने अपनी पुस्तक 'ह्यूमन सोसाइटी' में लिखा है कि:- "यदि कोई एक ही कारक मनुष्य के अनूठेपन की व्याख्या कर सकता है तो वह तत्व यह है कि केवल मनुष्य में ही संस्कृति जैसी विशिष्टता पाई जाती है इसी से अन्य विभिन्नताएँ पैदा होती है।"[59] संस्कृति की अपनी निम्न विशेषताएँ है; जो उसको प्रकट करती है:-

संस्कृति मानव निर्मित है।

---

[58] मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पंचकुला साहित्य अकादमी, हरियाणा, (तृ.सं.2006) पृ.66

[59] kingsley devid, 'human society', p.1

संस्कृति सीखा जाने वाला व्यवहार है।

संस्कृति सदैव समूह द्वारा वहन की जाती है और समूह में ही व्यक्त होती है।

संस्कृति गत्यात्मक है।

संस्कृति हस्तांतरित की जाती है।

संस्कृति समूह के लिए आदर्श होती है।

संस्कृति मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती है।

संस्कृति में अनुकूलन की क्षमता होती है।

संस्कृति मानव व्यक्तियों के निर्माण में मौलिक है।

1.6 समाज और लोकप्रिय साहित्य

लोकप्रिय साहित्य से तात्पर्य है; प्रचलित साहित्य जो जन-समाज के प्रचलन में हो। केवल गंभीर साहित्य ही साहित्य नहीं है अपितु लोकप्रिय साहित्य की भी अपनी एक वास्तविकता है। जब से साहित्य राज-दरबार की कैद से निकला है तब से साहित्य बाजार से ही संचालित होने लग गया है और पूंजीवाद का पर्दा अपने ऊपर ओढ़ लिया है। आमतौर पर इसे सस्ता साहित्य, लुगदी आदि कहकर टाल दिया जाता है। सहजता, सरलता, सुबोधता आदि इसके अनिवार्य गुण मान लिए जाते हैं। लेकिन केवल सरलता के आधार पर ही साहित्य लोकप्रिय नहीं हो जाता इसके लिए तो जन-जीवन की वास्तविक स्थिति और महत्वाकांक्षाओं से जुड़ना पड़ता है इसीलिए साहित्य की अंतर्वस्तु में मौजूद यथार्थ-चेतना का होना भी आवश्यक है। आज का लोकप्रिय साहित्य केवल प्रकाशन के पैमाने पर बनता जा रहा है जो केवल व्यवसायिकता को बढ़ा रहा है। लोकप्रिय साहित्य जिससे उपभोक्तावाद को बढ़ावा मिला है ऐसा साहित्य लोक-साहित्य से भिन्न होता है। पूंजीवादी युग में आर्थिक उद्देश्य हेतु साहित्य लिखा जाता है जिसका मूल्य बाजार से तय होता है। लोकप्रिय साहित्य का सबसे अधिक विस्तार उपन्यास के क्षेत्र में हुआ है। प्रकाशन और पत्र-पत्रिकाओं के

विकास के साथ उपन्यास का विकास जुड़ा हुआ है और उसकी लोकप्रियता का प्रसार भी। उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त सस्ता जीवनीपरक साहित्य भी लोकप्रिय साहित्य के अंतर्गत आता है।

1.7 समाजशास्त्र और भाषा

भाषा का समाजशास्त्र भाषा और समाज के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन है। भाषा पर समाज का प्रभाव और समाज पर भाषा के आपसी प्रभाव का अध्ययन इसमें किया जाता है। भाषा का समाजशास्त्र इस बात को समझने में सहायता प्रदान करता है कि व्यक्तिगत और समूह में भाषा के उपयोग से सामूहिक गतिशीलता प्रभावित होती है।

भाषा मनुष्य के व्यवहार को प्रकट करने का सबसे महत्वपूर्ण साधन होती है। भाषा के बिना कोई भी समाज अविकसित अवस्था में रहता है। भाषा एक समाज का निर्माण करती है और एक समाज दूसरे समाज से भाषा के माध्यम से जुड़ता हुआ चला जाता है। किसी भी समुदाय की अपनी एक भाषिक पहचान होती है। भाषागत विविध रूप हो सकतें है, लेकिन विविधता के बावजूद वह समाज दूसरे समाज से जुड़ना चाहता है। भाषा विचारों के आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम होती है। भाषा के विकास के लिए उसके लोक व्यवहार में प्रयुक्त होना अति-आवश्यक है। भाषा व्यक्ति में सम्प्रेषण शक्ति उत्पन्न करती है। भाषागत व्यवहार में सामान्यत: व्यक्ति अपने मन के भाव एक-दूसरे को समझाने व समझने के लिए संकेतों का सहारा लेता है।

निष्कर्ष

समाजशास्त्र का कैनवास काफी विस्तृत है इसीलिए पश्चिम के विचारकों ने इस पर बड़ी गंभीरता से अध्ययन किया है। विद्वानों में भी समाजशास्त्र को लेकर एकमत नहीं है। प्रमुख समाजशास्त्रियों में अगस्त कौंत, रेमंड विलियम्स, तेन, मादाम स्टेल, लूसिए गोल्डमान, हर्बर्ट स्पेंसर, कार्ल मार्क्स आदि का नाम लिया जा सकता है। प्रमुख भारतीय विचारकों में इनका नाम लिया जा सकता है:-गोविंद सदाशिव घुर्ये (1893-1983) धुर्जटि प्रसाद मुखर्जी(1894-1961) अक्षय रतनलाल देसाई(1915-1994) डॉ.अम्बेडकर(1891-1956)आदि। इन समाजशास्त्रियों से प्रेरणा लेकर ही साहित्य के समाजशास्त्रियों ने इस दिशा में आगे कार्य किया।

समाजशास्त्र एक विकासशील विज्ञान है। यह विज्ञान का दूसरा रूप है जिसमें प्रयोग तो होते हैं लेकिन उसकी अवस्था अन्य प्रकार की होती है। प्रत्येक कार्य के पीछे कारण होता है तथा उस कारण की छानबीन करते-करते उसका सामान्यीकरण किया जाता है। आरंभ में समाजशास्त्र की अवधारणाएँ तथा सैद्धांतिक कोटियाँ पश्चिमी समाज के संदर्भ में विकसित हुई, लेकिन वे भारतीय संदर्भ से मेल नहीं खाती है। दोनों के समाजों में पर्याप्त भिन्नता है। इन विभिन्नताओं को हमें दोनों समाजों में पृथक अवधारणात्मक एवं सैद्धांतिक कोटियों का निर्माण करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार से समाजशास्त्र के सैद्धांतिक पक्ष को समझा जा सकता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि साहित्य के समाजशास्त्र के अध्ययन हेतु सर्वप्रथम उपन्यास के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणों का अध्ययन करना अतिआवश्यक है। पश्चिम के विचारकों ने भी उपन्यास के विकास की अगली कड़ी के रूप में ही अन्य विधाओं के विकास की स्थिति को स्वीकार किया है। उपन्यास साहित्य में आदर्श और यथार्थ दोनों रूपों में दिखाई पड़ता है। वह केवल आदर्शवादी नहीं रह सकता तो कोरा यथार्थवादी भी नहीं रह सकता अपितु दोनों का मिला जुला रूप रहता है।

कहानी में रचनाकार की सामाजिक दृष्टि निहित रहती है साथ ही मूल्यों की अभिव्यक्ति भी होती है। कहानी में मूल्य की परख का आधार मानवीय संसक्ति है। इसमें मूल्यों का निरंतर विकसित होना एक पक्ष के रूप में देख सकते हैं। इन मूल्यों की खोज करना भी कहानी के समाजशास्त्रीय

अध्ययन का मुख्य पक्ष है। यदि निष्कर्ष में संक्षिप्त रूप से कहे तो कहानी अपने विशेष अस्तित्व के माध्यम से जीवन का बोध कराती है।

संवेदना के बगैर साहित्य नहीं लिखा जा सकता। साहित्यकार के हृदय की संवेदनात्मक अनुभूति ही संवेदना के रूप में बाहर निकलकर आती है। वह अपने मन की अनुभूतियों को अपनी कृति के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। प्रत्येक साहित्यकार अपने समाज और परिवेश से संवदेनाओं को ग्रहण करने की क्षमता रखता है। वह सामाजिक अनुभूतियों को नवीन अर्थ प्रदान करता है और उसे जनमानस के मध्य रखता है। उससे रचनाकार की संवेदना साधारण मनुष्यों से जुड़ जाती है; इसीलिए दोनों का संबंध परस्पर अन्योन्याश्रित है।

संस्कृति का प्रभाव मानव के संपूर्ण जीवन पर दिखाई पड़ता है। वह व्यक्ति को एक ऐसा मानव बनाती है जिसके बिना उसकी स्थिति बर्बर पशु के समान मानी जाती है। मनुष्य, मनुष्य को आपस में जोड़ने का काम संस्कृति करती है। प्रत्येक मनुष्य का जन्म अपने समाज में होता है। जिसका एक सांस्कृतिक वातावरण होता है, जिसमें वह रहता है, क्रिया-प्रतिक्रिया करता है। हमारा जीवन रहन-सहन और हमारी विचारधारा हमारी संस्कृति का ही फल है। जैसी हमारी संस्कृति होती है उसी अनुरूप हम बनते जाते हैं।

लोकप्रिय साहित्य का सबसे अधिक विस्तार उपन्यास के क्षेत्र में हुआ है। प्रकाशन और पत्र-पत्रिकाओं के विकास के साथ उपन्यास का विकास जुड़ा हुआ है और उसकी लोकप्रियता का प्रसार भी। उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त सस्ता जीवनीपरक साहित्य भी लोकप्रिय साहित्य के अंतर्गत आता है।

भाषा विचारों के आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम होती है। भाषा के विकास के लिए उसके लोक व्यवहार में प्रयुक्त होना अति-आवश्यक है। भाषा व्यक्ति में सम्प्रेषण शक्ति उत्पन्न करती है। भाषागत व्यवहार में सामान्यत: व्यक्ति अपने मन के भाव एक-दूसरे को समझाने व समझने के लिए संकेतों का सहारा लेता है।

संदर्भ

1. talcott parsons, the social system', the free press, glencoe illinois (1952) p.27

2. मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचार', ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली
वही, पृ.सं.-11
3. Sociology- all blogspots.com.com, 2009- home page (maxweber-theory of social and economic)
4. वीरेंद्र प्रकाश शर्मा, 'समाजशास्त्र विश्वकोश', पंचशील प्रकाशन जयपुर, (2011) पृ.सं.259
5. https://www.kailasheducation.com/2020/04/samajshastra-arth-paribhasha-visheshtaye.html
6. https://www.rsedublog.in/meaning-and-definition-of-sociology/
7. एस.एल. दोषी, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.348
8. डॉ. निर्मला जैन, 'साहित्य का समाजशास्त्रीय चिंतन', आदेश बुक डिपो नई दिल्ली, (प्रथम.सं.1985) पृ.सं.147
9. डॉ. नगेन्द्र, 'साहित्य का समाजशास्त्र', पृ.सं. 06
10. मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचारक', ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली
11. https://www.informise.com/auguste-comte-father-of-sociology-full-description-in-hindi/
12. एस.एल.दोषी, पी.सी जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', रावत प्रकाशन (2018) पृ.सं.22
13 मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं. 124
14. Taine, 'twentieth century criticism', p. 314
15. मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', हरियाणा ग्रंथ अकादमी पंचकूला, चतुर्थ सं. 2014 भूमिका से-
16. एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं. 91
17 https://www.sociologyguide.com/thinkers/Karl-Marx.php
18. मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचार', ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली पृ.सं.82-83
19. https://en.wikipedia.org/wiki/Social_fact
20. एनसीईआरटी, कक्षा-11 पृ.सं. 82
21. एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.140
22. मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचारक', ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, (2010) नई दिल्ली
23. एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.358
24. डॉ. एम.एम. लवानिया, 'भारत का समाजशास्त्र', रिसर्च पब्लिकेशन, पृ.सं.65
25. एनसीईआरटी. कक्षा-11 'समाज का बोध', पृ.सं.99
26. एनसीईआरटी. कक्षा-11 'समाज का बोध', पृ.सं.99
27. एस.एल. दोषी, पी. सी. जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', पृ.सं.386
28. एनसीईआरटी. कक्षा-11 'समाज का बोध', पृ.सं.103
29. मैनेजर पाण्डेय, 'साहित्य और समाजशास्त्रीय दृष्टि', पृ.सं.41
30. श्यामसुंदर दास, 'साहित्यालोचन', पृ.सं.53
31. मैनेजर पाण्डेय, 'साहित्य और समाजशास्त्रीय दृष्टि', पृ.सं.36
32. टी.बी. बोटमोर, 'समाजशास्त्र' पृ.सं.8
33. प्रेमचंद, 'हंस', अप्रैल-1930 पृ.सं.40
34. ओमप्रकाश ग्रेवाल, 'नयापथ', जुलाई 1997, पृ.सं.90
35. सं.विनोद कुमार तनेजा, 'ब्रज के आधुनिक कवियों का समीक्षात्मक अध्ययन', भूमिका से- पृ.96
36. डॉ. रामविलास शर्मा, 'आस्था और सौंदर्य', पृ.सं.-21-22

37. गरिमा श्रीवास्तव, 'उपन्यास का समाजशास्त्र'', पृ.सं.-11 भूमिका से-
38. मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं.40
39. प्रेमचंद, 'हंस', अप्रेल (1932) पृ.सं. 40
40 https://www.hindisamay.com/contentDetail.aspx?id=2442&pageno=1
41. मैनेजर पाण्डेय, 'साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन', पृ.सं.227
42. रॉल्फ फॉक्स, 'उपन्यास और लोक जीवन', पृ.सं.43
43. मैनेजेर पांडेय, साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका 230
44. मैनेजेर पांडेय, साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पृ.सं.236
45. ian watt, 'the rise of the novel', लंदन, पैग्विन बुक्स (1963)
46. डॉ. अमरनाथ, 'हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली', पृ.सं.91
47. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, 'समकालीन कहानी की भूमिका', (1977) पृ.सं.2
48. विजय वर्गीय, 'आधुनिक हिंदी कवियों का सामाजिक दर्शन', पृ.सं.3
49. उषा यादव, 'हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना', पृ.सं.-11
50. कमलेश्वर, 'नई कहानी की भूमिका', अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली पृ.सं.34
51. डॉ.शेखर शर्मा, 'समकालीन संवेदना और हिंदी नाटक', पृ.24-25
52. philip lawrance harina, 'the new dictionary of psychology', p.303
53. राम मनोहर त्रिपाठी, हिंदी कविता: संवेदना और दृष्टि', पृ.सं.36
54. रामधारी सिंह दिनकर, 'संस्कृति के चार अध्याय', लोकभारती प्रकाशन तीसरा सं.(2010) इलाहबाद
55. रामजी उपाध्याय, 'भारतीय धर्म और संस्कृति', लोकभारती प्रकाशन (2014) इलाहबाद
56. विकिपीडिया से-
57. मेहरोत्रा, 'साहित्य का समाजशास्त्र: मान्यता और स्थापना', रचना प्रकाशन, वाराणसी (1970) पृ.34
58. मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', पंचकुला साहित्य अकादमी, हरियाणा, (तृ.सं.2006) पृ.66
59.विकिपीडिया से-
60. kingsley devid, 'human society', p.1

द्वितीय अध्याय: किन्नर समुदाय: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

2.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य: विविध आधार

2.2 किन्नर केंद्रित वैचारिकी का विकास

2.3 किन्नर समुदाय को देखने की विविध दृष्टियाँ

2.3.1अर्थ, परिभाषा और विशेषताएँ

2.3.2 कोशगत अर्थ

2.3.3 मिथकीय आधार

2.3.4 समूह और संगठन

2.4 लिंग सम्बंधी अवधारणा

2.5 धार्मिक आधार: प्राचीन साहित्य के आधार पर

(ऋग्वेद, पुराण, ब्राह्मण ग्रंथ, मनुस्मृति, अष्टाध्यायी, कामसूत्र, महाभारत, रामचरितमानस,)

2.6 मध्यकालीन आधार

2.7 आधुनिक परिप्रेक्ष्य

2.7.1 तमिल साहित्य

2.7.2 मराठी साहित्य

2.7.3 अंग्रेजी साहित्य

2.7.4. हिंदी साहित्य और किन्नर विमर्श

2.8 किन्नर समुदाय: वैधानिक प्रावधान

2.9 भारतीय सिनेमा और किन्नर समुदाय

2.10 अश्लीलता और किन्नर साहित्य

किन्नर समुदाय: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

किन्नर समुदाय लुप्त हो चुका समुदाय नहीं है लेकिन फिर भी इसका अपना इतिहास में स्थान दर्ज है चाहे वह अल्प मात्रा में ही क्यों न हो। प्राचीन धार्मिक ग्रंथों, वेदों, पुराणों, स्मृति-साहित्य, रामचरितमानस, महाभारत, में इनके बारे में संक्षिप्त जानकारी मिलती है तथा आधुनिक साहित्य में तमिल, मराठी, अंग्रेजी, हिंदी आदि भाषाओं में साहित्य लिखा जा रहा है। ये सभी ग्रंथ और भाषाएँ इनकी अभिव्यक्ति का माध्यम बन रहें है। जहाँ आधुनिक साहित्य में तो इनका वर्तमान संदर्भ प्रस्तुत किया जा रहा है वहीं प्राचीन ग्रंथों में इनका ऐतिहासिक और धार्मिक संदर्भ प्रस्तुत किया गया जो प्राचीनकाल में इनकी उपस्थिति को प्रस्तुत करता है चाहे वह कम ही क्यों न हो।

इस अध्याय में मैंने किन्नर समुदाय के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को प्रस्तुत किया है। प्राचीनकाल, मध्यकाल और आधुनिक कालीन साहित्य में इनकी उपस्थिति दिखाई पड़ती है। कहीं नगण्य रूप में तो कहीं थोड़ा अधिक रूप से इनका उल्लेख मिल जाता है। जैसे-जैसे समाज प्रगतिशील होता गया वैसे-वैसे इनकी यथा-स्थिति से पर्दा उठता चला गया और यह समाज एक विषय के रूप में हमारे समक्ष आ खड़ा हुआ; जिन पर अध्ययन करने की आवश्यकता जान पड़ी। इस तरह से किन्नर समुदाय के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के माध्यम से इनकें इतिहास संबंधी बिदुओं की पड़ताल प्रस्तुत की जायेगी। इनका प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान संदर्भ इस अध्याय में प्रस्तुत किया जायेगा।

किन्नर समुदाय पर शोध कार्य में इनका अर्थ समझना और विद्वानों द्वारा इनकी अलग-अलग श्रेणियों की जो परिभाषाएं दी गई है; उनका उल्लेख करना जरूरी है। किन्नर का अर्थ क्या है? अलग-अलग क्षेत्रों में इनके जीवन और पहचान से संबंधित कौनसी परिभाषाएँ दी गई जो इनके बारे में जानकारी दे सके और उनकी विशेषताओं को प्रकट कर सके, आदि का वर्णन इस अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

2.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य: विविध आधार

किसी भी विषय का अध्ययन करने से पूर्व उसके इतिहास को जानना आवश्यक हो जाता है। इतिहास में अतीत का ज्ञान और सभी घटनाओं को कालक्रमानुसार रखा जाता है। जिससे की पूर्व की जानकारी प्राप्त की जा सके। यह जानकारी कहीं लिखित रूप में मिलती हैं तो कहीं अवशेषों के रूप में। प्राचीन सभ्यता का पता भी इतिहास के तथ्यों को खंगालने से चलता है। प्राचीनकाल में तथ्यों को सुरक्षित रखने के लिए इतिहास को ही मानव जीवन की विकास यात्रा का परिचायक माना जाता है। यह अतीत का लेखा-जोखा है। अतीत की संपूर्ण जानकारी प्राप्त करने का दायित्व इतिहास पर होता है।

साहित्य में जितने भी विमर्श हैं या जो चल रहे है उनका अपना एक इतिहास है जिसमें उस विमर्श के आरंभ से लेकर वर्तमान अवस्था पर प्रकाश डाला जाता है तथा साहित्य में उसके स्थान और महत्त्व को उद्घाटित किया जाता हैं। किन्नर समुदाय का इतिहास भी आज का इतिहास नहीं अपितु लगभग 4000 वर्ष पूर्व का माना जाता है। ऋग्वेद में, पुराण में, 'मनुस्मृति' में, वात्सायन के 'कामसूत्र' में इनका उल्लेख हुआ है फिर 'महाभारत', रामचरितमानस आदि अनेक पौराणिक, धार्मिक ग्रन्थों में भी इनका वर्णन किया गया है। इन ग्रंथों में इन लोगों को आदर की दृष्टि से देखा गया जो वर्तमान वास्तविकता से एकदम परे हैं। पौराणिक और ऐतिहासिक प्रसंगों और संदर्भों का सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन करने से पता चलता है कि वर्तमान समय में उपेक्षित और हिकारत की नजर से देखे जाने वाले किन्नरों का प्राचीन समय में सम्मान था। देवताओं ने भी स्वयं इनका उल्लेख किया है।

जब हमारा समाज श्रेणियों में विभाजित था तब भी इनके संबंध उच्च वर्गों के साथ देखने को मिलते हैं। इस प्रकार से इनका कोई विशेष लंबा इतिहास नहीं लिखा गया लेकिन कहीं-कहीं इनका उल्लेख मिलता है। उस समय लोगों को इनके बारे में इतनी जानकारी नहीं थी लेकिन धीरे-धीरे इनके बारे में पता चलने लगा, लोग लिखने लगे जिससे इन पर आलोचनाएँ लिखी गई और वर्तमान स्वरूप में यह सबके सामने है। अनेक भाषाओं में इनके जीवन से जुड़े पहलुओं पर भी लिखा जाने लगा, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि के माध्यम से इस समुदाय की जानकारी मिलने लगी। इस

समुदाय के इतिहास की पड़ताल करने के अंतर्गत इस अध्याय में इनकें जीवन के आरंभ और प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक की जानकारी प्राप्त की जायेगी।

इस प्रकार विविध ग्रन्थों और कालों को आधार बनाकर किन्नर समुदाय के इतिहास की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। लेकिन इनका निश्चित समय निर्धारित नहीं किया जा सकता। क्योंकि कहीं पर भी निश्चित तिथि का उल्लेख नहीं हैं। इनका 4000 ईस्वी पूर्व का समय बताया जाता है किंतु वह भी लगभग ही है। विविध ग्रंथो, 'पुराणों', 'मिथकीय साहित्य', 'मनुस्मृति' आदि में यत्र-तत्र इनका उल्लेख किया गया है जो तात्कालिक समय में इनकी स्थिति तथा समाज में उनकी अल्प उपस्थिति को दर्शाता है।

2.2 किन्नर केन्द्रित वैचारिकी का विकास

किसी भी विचारधारा का जन्म एकदम से नहीं हो जाता अपितु धीरे-धीरे परिस्थितिवश वह विचार उत्पन्न होता है। वैचारिकी से तात्पर्य 'विचारधारा' से लिया जाता हैं। 'विचारधारा' शब्द अपने-आप में एक विशेषता लिए हुए हैं। किसी विषय विशेष के विचार को आगे बढ़ाकर ही विचारधारा बनती हैं। उसके अपने मुद्दे एवं समस्याएँ होती है। विषय विशेष से तात्पर्य यहाँ किसी मुद्दे से लिया गया है जिससे समाज और उस समाज से जुड़ा हुआ प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित होता है। किन्नर जीवन की वैचारिकी पर विचार आज से नहीं अपितु बहुत पहले से ही होता आ रहा है। लेकिन हिंदी साहित्य में इसको प्रकाश में आये हुए ज्यादा समय नहीं हुआ है।

किन्नर समुदाय से संबंधित समस्याओं और विशेषताओं ने धीरे-धीरे विचारधारा का रूप लेना शुरू किया। इसे कोई आंदोलनवादी विचारधारा नहीं कहा जा सकता जिसमें क्रांति के माध्यम से सब-कुछ फेरबदल किया जा सके, अपितु इसे एक धारणा या विचार या एक प्रकार से यह कह सकते है कि मानसिकता जिसे तुरंत बदला जाना असम्भव है; जो किन्नर समुदाय के जीवन से संबंध रखती है। एक ऐसी मानसिकता जो हमें उनके साथ सहज न रहने पर मजबूर करती है। किन्नर केन्द्रित वैचारिकी को हम इनके साथ जुड़े पहचान के संकट के साथ जोड़कर देखे तो अभी उसमें अवहेलना का भाव छिपा हुआ है। अब देखना यह है कि इस समुदाय पर विचार करने की स्थिति कहाँ से पैदा

हुई? क्या हमारी संस्कृति के संवाहक ग्रंथों में भी इनका उल्लेख मिलता है? इन्हीं सब प्रश्नों से किन्नर समुदाय के इतिहास को समझा जा सकता है।

थर्ड जेंडर के साथ सबसे बड़ा संकट, पहचान का संकट है। देश आजाद होने के बाद सम्पूर्ण भारतीय समाज पहचान के संकट से गुजरा है लेकिन जैसे-जैसे स्थितियाँ बदलती गई, व्यवस्था में सुधार आता गया और समाज में रहने वाले मनुष्य को सभ्य समाज का दर्जा मिलना प्रारंभ हो गया। जो असभ्य लोग थे उनको कानूनों की दृष्टि से अपराधी ठहराया गया। किन्नर समुदाय अभी तक भी अपनी पहचान के संकट से जूझ रहा है। इनके हक में कानूनों का निर्माण भी हो गया फिर भी यह अपनी अस्मिता को खोजने में लगा हुआ है, इसके संदर्भ में चैनसिंह मीना इस प्रकार लिखते हैं कि:- "सदी के अंत तक साहित्य में अनेक विमर्श उभरकर सामने आये मसलन दलित, आदिवासी, स्त्री आदि। दरअसल इन विमर्शों के अंतर्गत 'अस्मिता' या 'पहचान' का सवाल ही सबसे महत्वपूर्ण था। इसी तरह एक मानवीय समुदाय (किन्नर) है, जो अपनी पहचान के लिए प्राचीनकाल से ही संघर्षरत है।"[60] इस प्रकार से किन्नर आधारित वैचारिकी में उनके उद्भव, विकास और अलग-अलग स्तरों पर हुए विकास पर विचार किया जाता है। किन्नर समुदाय के विकास की प्रक्रिया में भी अलग-अलग मान्यताएँ और विश्वास है। कुछ मान्यताएँ प्रामाणिक है तो कुछ भ्रामक धारणाओं का शिकार भी है। किन्नर जीवन के उद्भव को समझने के लिए हमें इनके जन्म तथा आरम्भ से लेकर अब तक समाज में इनकी उपस्थिति की पड़ताल करना आवश्यक है।

अत: स्पष्ट है कि किन्नर समुदाय का हमारे पुराणों, प्राचीन ग्रंथों में अस्तित्व ढूंढने पर पता लगाया जा सकता है कि उस समय इनकी स्थिति कैसी थी? इनकों पहचाना जाता था अथवा नहीं। पहले उनके वजूद की तलाश करनी आवश्यक है। बगैर पहचान के उनकी स्थिति से हम अवगत नहीं हो सकते। प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में जो उल्लेखित है वह सबको स्वीकार्य है अत: यहाँ उन ग्रंथों का हवाला देना आवश्यक हो जाता है। 'रामायण', 'महाभारत', 'पुराण', आदि में जो किन्नर समुदाय का उल्लेख हुआ है वह इस बात का द्योतक है कि जिस समय उनका उल्लेख हुआ उनके विविध नाम प्रचलित नहीं थे, इनका अल्प मात्रा में उल्लेख है वह भी अप्रत्यक्ष रूप से,

[60] चैनसिंह मीना, थर्ड जेंडर अस्मिता संघर्ष और वर्तमान परिदृश्य, सरस्वती, सं.महेश भारद्वाज, अप्रेल-सित.(2018) पृ.सं.14

'रामचरितमानस' में इनकों 'किन्नर' शब्द से अभिहित नहीं किया है। इस कारण भी इनकी जानकारी विस्तृत नहीं हो पायी, वर्तमान में इनकों अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है जिसमें उपहास का पुट अधिक दिखाई पड़ता है।

2.3 किन्नर समुदाय को देखने की विविध दृष्टियाँ

'किन्नर' शब्द हिंदी के दो शब्दों 'कि' और 'नर' से मिलकर बना हैं। हिंदी साहित्य में यदि किन्नर साहित्य की बात की जाये तो सर्वप्रथम पाण्डेय बैचेन शर्मा 'उग्र' की कहानियों में लौंडेबाजों का जिक्र किया जाता है, यही किन्नर है लेकिन मुख्य पात्र के रूप में इनका उल्लेख नहीं हो पाया है। इसका कारण यह है कि उस समय यह विषय इतना खुलकर सामने नहीं आया जितना स्वरूप वर्तमान समय में है। साहित्य समाज का मुख्य आधार स्तम्भ है जो उपेक्षित जन-मानस को वाणी प्रदान करने का कार्य करता है फिर चाहे वह दलित, स्त्री, आदिवासी, अल्पसंख्यक या किन्नर समुदाय कोई भी उपेक्षित वर्ग हो, उनकों लेखन के माध्यम से समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य साहित्य के माध्यम से किया जाता है।

किन्नर समुदाय को प्रकाश में आने का कोई निश्चित समय तय नहीं है और यदि है भी तो वह प्रामाणिक नहीं हैं। सब अलग-अलग मानदंडों से समय निर्धारण करने का प्रयास करते हैं। लेकिन व्यवस्थित रूप से अभी तक इनका कोई इतिहास नहीं लिखा गया यत्र-तत्र वांग्मय में इनका उल्लेख अवश्य मिलता है। किन्नर कौन थे? कहाँ से आये? इसका पता एक-दम सटीक रूप में अभी तक नहीं लगाया गया है। दुनिया में अलग-अलग प्रकार के लोग होते हैं। कुछ संख्या में कम होते है तो कुछ की संख्या अधिक होती है। किन्नर कम संख्या वालो की श्रेणी में आते हैं।

किन्नर प्रकृति की खोज कैसे हुई, इसका पता लगाना अत्यंत कठिन कार्य है। इस खोज के बारे में देवदत्त पट्टनायक विचार प्रस्तुत करते हैं कि- "जो हमें खोजने पर मिलता है, उसे प्राकृतिक समझा जाता है। जिसका हम अविष्कार करते है, वह अस्वाभाविक, बनावटी, मानव निर्मित या फिर संस्कारित यानि कृत्रिम समझा जाता है।"[61] लेकिन किन्नर समुदाय न तो कृत्रिम है और न ही बनावटी अपितु यह एक प्रकार की जैविक गड़बड़ी इसे कह सकते है। इस बात से लेखक का यही

---

[61] देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, पृ.सं.21

मंतव्य है कि किन्नरों को प्राकृतिक कहा जाए या कृत्रिम, इसमें संशय है। यह मानव निर्मित या बनावटी तो नही है, इसलिए वे इन्हें खोज के आधार पर प्राकृतिक ही स्वीकार करते है। प्राकृतिक भी प्रकृति प्रदत नहीं अपितु जैविक क्रिया के उपरांत प्राप्त होते है उनका यह अर्थ उनकी खोज से लिया गया है। किन्नर भी सृष्टि का ही एक अंग है इसलिए प्राकृतिक माना जाता है लेकिन दूसरा पक्ष यह है कि इनकें जन्म के लिए प्रकृति का दोष मानना उचित है अथवा अनुचित है? क्योंकि यह एक जैविक क्रिया के माध्यम से उत्पन्न जाति है, न कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त। लेकिन इसके लिए प्रकृति को बार-बार दोष दिया जाता है।

मनुष्यता की खोज में अनेक कहानियों, कथाओं और मिथकों का प्रचलन रहा है। किन्नर समुदाय भी इस धारणा से अछूता नहीं है। पौराणिक काल से लेकर मुगलकाल तक इनकी आवश्यकता और व्यवस्था को जात से बाहर नहीं समझा जाता था। किसी न किसी रूप में उनकी स्वीकारोक्ति 'पॉजिटिव सेंस' के रूप में में देखने को मिलती है। इनकी स्थिति को लेकर एक आलेख में इस प्रकार से उल्लेख किया गया है:- "भारत में आलोच्य समाज की दशा बड़ी ही दारूण है। वे आर्थिक, शैक्षिक, यौनिक व भाषाई धरातल पर वंचित है। यह दुर्दशा भारत के दोनों हिस्सों, वह उत्तर हो या दक्षिण, में समान है। मसलन उत्तर भारत के हिजड़े जहाँ अपनी आजीविका के लिए बधाई की रस्म पर निर्भर है, वही दक्षिण भारत के हिजड़े इस मामले में वैश्यावृति पर टिके हुए हैं।"[62] इस तरह से प्राचीनकाल और वर्तमान समय के अंतराल के मध्य उनमें काफी गैप आ गया है। प्राचीनकाल में संख्या के आधार पर भी कहा जा सकता है कि इसकी स्थिति ठीक थी लेकिन वर्तमान संदर्भ की यदि बात की जाए तो इनकी स्थिति अपमानजनक है।

इतिहास में हिजड़ों का उल्लेख मिलता है। मध्यकाल में राजा अपनी रानियों की सुरक्षा हेतु हरम में हिजड़ा सुरक्षाकर्मियों को रखते थे। सिकंदर लोदी ने पंद्रहवीं शताब्दी में हिजड़ों का खानगाह बनवाया था तो यह अनायास नहीं था। 'हिजड़ों' के प्रति यह एक आध्यात्मिक चेतना का उजास था। निश्चित रूप से समाज इनके प्रति ईमानदार नहीं रहा है। सामाजिक भेदभाव, सांस्कृतिक एकाकीपन तथा पारिवारिक रूप से इन्हें त्याग देने और नकारने के मध्य यह जिंदगी जीते हुए पुतले

[62] डॉ. सुनील कुमार द्विवेदी, भारतीय वांग्मय और हिजड़ा समुदाय, सं. विजेंद्र प्रताप सिंह- भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श, अमन प्रकाशन कानपुर (2016) पृ.सं.80

अपनी पहचान के लिए अब तक भटक रहे है। महाभारत में शिखंडी, वृहनल्ला के रूप में इनकी पहचान बनी तो कभी मिश्र, चीन, रोम में उच्च पदों पर आसीन रहे। इनका 'न स्त्री और न पुरूष ' होने का दंश इतिहास में दिखता रहा है। वे जो है उनकी पहचान अस्वीकार है। आधुनिकता के विकसित बौद्धिक बोध के द्वारा समय-समय पर कभी इनके द्वारा तो कभी अन्य समुदाय द्वारा आवाज उठाई जाती रही है।

अमेरिकी देशों और यूरोपीय देशों द्वारा लगातार आन्दोलन और दमन के माध्यम से बौद्धिक जगत में इस संवेदना को उठाया गया और 21वीं सदी में इसे अध्ययन और मनन का विषय मान लिया गया। अधिकारों को लेकर क़ानूनी लड़ाई होती रही। जेंडर के रूप में दर्जा दिलाने की मुहीम वैश्विक स्तर पर होते रहने के कारण कुछ देशों में इसे विधिक मान्यता मिली है लेकिन अभी लड़ाई बाकी है। एल.जी.बी.टी. अध्ययन आज अध्ययन का मुख्य हिस्सा है। शायद यही कारण है कि इस क्षेत्र में हो रहे अध्ययन और सम्बंधित पुरस्कारों की ओर बौद्धिक जगत की आँखे लगी रहती है।

संस्कृत व्याकरण में तीन लिंग निर्धारित है- पुर्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंग। अब तक भारतीय समाज में दो लिंगों को ही मान्यता प्राप्त है। लेकिन अब तृतीय लिंग जिसे तृतीयपंथी या थर्ड जेंडर के नाम से भी जाना जाता है, को मान्यता मिल चुकी है। इस तृतीय पंथी समुदाय का इतिहास अलग-अलग स्तरों पर वर्गीकृत किया गया है। इस विचारधारा को आगे बढ़ाने का कार्य अंग्रेजी साहित्य का माना जाता है लेकिन उससे भी पूर्व मिथकीय आधारों की चर्चा की जाती है। समाज का दोहरापन जो कभी नहीं मिटने वाला है। इसके लिए समाज ही जिम्मेदार नहीं है, समाज में रहने वाला प्रत्येक वह व्यक्ति जिम्मेदार है जो दोहरे आवरण को ओढ़े हुए रहता है। जो सदियों से लिंग आधारित संस्कृति की धारणाओं में जीता आ रहा है। तीसरे मानवीय संघर्ष की प्रेरणा इस विचारधारा से मिलती है। उनकी अस्मिता का संघर्ष ही हमें इस वैचारिकी पर विचार करने की प्रेरणा प्रदान करता है।

इस प्रकार से उपेक्षित किन्नर समुदाय को अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया जा सकता है। कुछ इन्हें जैविक गड़बड़ी मानते हैं तो कुछ इन्हें प्रकृति की विकृति करार दे देते हैं। लेकिन यह समुदाय अभी-अभी ही अचानक से पैदा नहीं हुआ है इसका उल्लेख तो मिथकों, कोशों में भी

किया गया है। इनकें नाम और इनकें प्रति प्राचीन और नवीन धारणाओं में भी काफी अंतर दिखाई पड़ता है जो इस प्रकार है।

2.3.1 अर्थ, परिभाषा और विशेषताएँ

अभी तक किन्नरों के उत्थान के लिए कोई ठोस प्रयास नहीं किए गये; यह बिंदु सोचने, समझने और अवलोकन करने के लिए हमारे सम्मुख उपस्थित है। हमारा समाज निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है लेकिन सभ्य समाज में अभी भी निम्न मानसिकता होना कोई नई बात नहीं हैं। कई बार हम किन्नरों को शुभ कार्यों में आने पर अशुभ मानते हैं। ऐसे में हमें अपनी मानसिकता को बदलना होगा। किसी भी माँ के गर्भ से कोई भी संतान किन्नर पैदा हो सकती है, ऐसी स्थिति में हमें अपनी जेंडर की जड़ हो चुकी परिभाषाओं को बदलना होगा।

हर इन्सान जो स्त्री या पुरूष की तरह नहीं है उसे उसकी पहचान को खुद परिभाषित करने की स्वतंत्रता देनी होगी और साथ ही उस माध्यम के साथ जीने का हौसला और हिम्मत भी। चित्रा मुद्गल इनके प्रति संवेदनशीलता प्रकट करती हुई कहती है कि:- "दुनिया भर में तिरस्कृत, दमित, शोषित, अधिकारच्युत वंचितों, यहाँ तक कि आधी आबादी और दलितों को भी हाशिये ने अपने भीतर मुट्ठी भर हाशिया उपलब्ध कराया है, लेकिन यह क्रूर विडंबना है कि लिंग वंचितों को हाशिये में भी कोई हाशिया नहीं मिला। धर्म, समाज, राजनीति और स्वयं मनुष्य ने मनुष्य होकर मनुष्यों पर सदियों-सदियों से जो यह अमानुषिक अन्याय किया है, सामाजिकता से उन्हें बहिष्कृत-तिरष्कृत कर उनसे, उनके मानवीय रूप से जीने का अधिकार छीन लिया है। जरूरत नहीं चेतने की, कि कलंक लिंग वंचित नहीं, कलंक तो वे स्वयं है, सभ्य समाज के माथे पर, जो रोज आईना देखकर भी अपने माथे पर उसकी कालिख को देख नहीं पा रहें हैं।"[63] इस प्रकार के भाव लेखिका अभिव्यक्त करती है थर्ड जेंडर के प्रति जिनको लिंग निर्धारण के अभाव में दुत्कार दिया जाता है। लेखिका का यहाँ पर यह मानना है कि किन्नर समुदाय को स्वीकारने की पहली शर्त लिंग आधारित मानसिकता है, इस प्रकार की मानसिकता से मनुष्य कभी बाहर नहीं निकल पाता है, स्त्री और पुरूष दो खेमे में बटें हुए

[63] चित्रा मुद्गल, 'सरस्वती' आरंभिक पृष्ठ से- अप्रेल-सित, 2018

हैं तो किन्नर समुदाय तो इनसे एकदम भिन्न प्रतीत होता है। इस प्रकार की मानसिकता से दूर रहकर ही किन्नर समुदाय को समझा जा सकता है।

भारत में हिजड़ों को कई नामों से जाना जाता है। यथा भाषा तथा नाम की तर्ज पर भारत में प्रचलित अनेक भाषाओं में कई नाम प्रचलित है हिजड़ों के लिए। इस समुदाय को उर्दू में 'खोजवां/ हिजड़', हिंदी और बंगाली में 'हिजड़ा', तमिल में 'नंगाई/अरुवन्नी', पंजाब-पाकिस्तान में 'खुसरा', तथा गुजराती में 'पवैया' अंग्रेजी में युनक (Eunuch) कहा जाता है। पुराणों में भले ही शिखंडी, बृहनल्ला, किन्नर आदि नामों से संबोधित किया गया हो पर यह सभ्य समाज उन्हें हिजड़ों, लौंडों, लौंडेबाजों, छक्का आदि नामों से संबोधित करता है।

इनके लिए प्रयोग में लाए जाने वाले ये सभी शब्द इनके लिए गाली के रूप में प्रयुक्त किये जाते है। भारतीय संस्कृति के तीन प्रमुख धर्म हिंदू, जैन और बौद्ध में हिजड़ों का उल्लेख मिलता है। वैदिक संस्कृति के अनुसार किसी मनुष्य को पुरूष , स्त्री या नपुंसक तीन प्रकृति में से एक में देखा जाता रहा। उस काल के ग्रंथों में 'जेंडर' को 'प्रकृति' के रूप में उल्लेखित किया गया है। कामसूत्र में भी इसकी व्याख्या की गई है। हमारे शास्त्रों में चार पुरूषार्थ बताएं गये हैं- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। मोक्ष की प्राप्ति के लिए पहले प्राथमिक तीनों पुरूषार्थ धर्म, अर्थ, काम आवश्यक है। इन तीनों के द्वारा ही मोक्ष की प्राप्ति संभव है। जिसमें भी काम को प्रमुख पुरुषार्थ के रूप में वात्स्यायन ने बताया हैं। वात्सायन ने पुरूष प्रकृति, स्त्री प्रकृति और तृतीय प्रकृति का उल्लेख किया है। मनुस्मृतिकार के अनुसार तृतीय प्रकृति के मनुष्यों की उत्पति जीव वैज्ञानिक कमी के कारण होती है; इसीलिए भी इन्हें हीनत्तर माना गया है। पाणिनी के 'संस्कृत व्याकरण' में भी तीन प्रकार के लिंग का उल्लेख है। तमिल व्याकरण की पुस्तक 'तोल्काप्पियम' में भी 'नपुंसकलिंग' का उल्लेख है।

पुराणों में तीन तरह के वाद्य यंत्रों का जिक्र है साथ ही अप्सरा, गन्धर्व और किन्नर नृत्य का जिक्र है। भारत में जितने भी नाम इस समुदाय के लिए प्रचलित हैं और प्राचीनकाल के ग्रंथों में इनका पृथक-पृथक उल्लेख मिलता है परन्तु सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है 'हिजड़ा' और 'किन्नर' शब्द का। अत: यह विचार करना सर्वाधिक जरूरी है कि सर्वाधिक प्रचलित इन नामों में से किसी एक सर्वमान्य नाम की स्वीकार्यता आवश्यक हो। क्या किन्नर और हिजड़ा एक ही है या कुछ

अंतर भी है इनमें? इनके संदर्भ में यह धारणा एकदम गलत एवं भ्रामक है कि 'किन्नर', एक विशेष भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले समुदाय को कहते है, जो नस्ल से मंगोल जैसे होते है। इनकी बोलियाँ कन्नौरी, गलचा और लाहौली मानी जाती है। किन्नर मनुष्य की वह जाति है, जो मुख्यत: हिमालय के हिमवत और हेमकूट क्षेत्रों में निवास करती है। किन्नर हिमाचल प्रदेश में निवास करने वाली जनजाति भी है जो किन्नौर नामक जिले के निवासी है इन्हें 'किनौरा' भी कहते है यह अत्यंत प्राचीन जाति है, जिसका उल्लेख वेदों, पुराणों, रामायण, महाभारत जैसे अन्य आख्यानों में भी मिलता है। लेकिन किन्नर कोई जाति नहीं है और न ही एक प्रदेश विशेष में रहने वाले लोग है, अपितु 'किनौर प्रदेश' हिमाचल के प्रदेश विशेष को कहा जाता है। उस प्रदेश में रहने वाली जाति अलग है और किन्नर या हिजड़ा समुदाय एकदम अलग है। जब उनके लिए किन्नर शब्द का प्रयोग किया गया तो उन्हें इस बात से एतराज हुआ। 'किन्नर' शब्द राहुल सांकृत्यायन ने अपने यात्रा वृत्तान्त 'किन्नर देश में' हिमाचल के किन्नौर क्षेत्र-विशेष में प्राचीन समय में निवास करने वाली विशेष जन-जाति के लिए इस शब्द का प्रयोग किया है।

कुछ लोग भ्रमवश इस जनजाति को ही किन्नर समझ बैठे है जो पूर्णतया सही नहीं है। अत: हिजड़ा समुदाय जो कि जैविक विकार के परिणामस्वरूप पैदा होते है; के लिए किसी ऐसे शब्द का प्रयोग किया जाना जो किसी जाति, समुदाय की भावनाओं को आघात पहुँचाए, गलत प्रतीत होता है। साधारणतया हम यदि 'हिजड़ा' शब्द की बात करें तो पुरूष या स्त्री जननांग की अनिमियतता वाले ऐसे मानव हिजड़ा कहलाते है; जिनकों हम लैंगिक रूप से न तो नर कह सकते है और न ही मादा। इन्हें तृतीय लिंग के रूप में पहचाना जाता है। नृवंश वैज्ञानिक नंदा के अनुसार "स्वयं किन्नर भी अपने आपको न तो आदमी और न ही औरत के रूप में स्वीकारते है बल्कि उनका मानना है कि महिला-पुरूष द्विआधारी के बीच में कहीं न कहीं एक जीवन ईश्वर ने बनाया है ...। अधिकांश हिजड़े शारीरिक रूप से नर होते है या अंत:लिंगी, किन्तु कुछ मादा भी होते है।"[64] आमतौर पर हिजड़ा एक पुरूष के शरीर में मानसिक रूप से एक महिला की अवस्थिति होता है। सामान्यत: हिजड़े पुरूष शरीर में क्रिया विज्ञान के साथ पैदा होते है इस कारण वे अपने लिए स्त्रीलिंग का प्रयोग करते है, जैसे

[64] सेरेना नंदा, 'नाइदर मैंन नोर अ विमन' पृ.सं.25

मैं सुंदर लग रही हूँ, मैं जाती हूँ इत्यादि। वे स्त्रीलिंग भूमिकाओं को अपनाते है और महिलाओं के वस्त्र पहनते है, साज श्रृंगार करते है और एक महिला की तरह ही अन्य कार्यों को भी करते है।

लोक और शास्त्रों में हिजड़ों की उपस्थिति पर विचार करें और देखें तो यह कहना गलत न होगा कि लोक से लेकर शास्त्र तक तृतीय प्रकृति के लोगों की उपस्थिति तो है लेकिन हमारी संस्कृति की वर्चस्ववादी अवधारणा सभी अस्मितामूलक वर्गों स्त्री, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक, इतर और तृतीय पंथी का किसी न किसी रूप में दमन ही करती आ रही है और जिसका उनको बिलकुल भी एहसास नहीं होता है और होता भी तो वे अपने दंभ में मानना नहीं चाहते कि यह भी इंसान है। इसी कारण तृतीय प्रकृति के मनुष्य को जैविक गड़बड़ी व कभी सामाजिक बुराई के रूप में ही हमेशा देखा जाता है।

भारतीय समाज एवं सत्ता व्यवस्था की विशेषता यह है कि वह दलित, स्त्री, आदिवासी, अल्पसंख्यक, इतर असक्षम और तृतीय प्रकृति सभी की क्षमताओं का अवमूल्यन करके, उनको एक दूसरे से हींन दिखाकर सदियों से किए जा रहे सामाजिक व सत्ताजनित अन्याय को ढंकने में सफल होती रही है। व्यक्तिगत एवं जातिवाचक अस्तित्ववादी संघर्षों के वर्तमान दौर में प्राचीन तंत्र एवं ढोंगी लोगों की समझ को विकसित करते हुए वस्तुस्थिति को स्वीकार कराने का समय आ गया है। आज जिस भारतीयता की बात चहुँ और हो रही है वह वंचित वर्गों की अस्मिताओं के मानवीय अधिकारों को सुनिश्चित किए बगैर पूरी हो ऐसा संभव नहीं हो सकता है। अस्मिताओं के विस्फोट के समय में जब हर समुदाय बौद्धिक स्तर पर विशेष रूप से सक्रिय होने लगा है, ऐसे में तमाम वंचितों की संवेदनाओं को उठाया जा रहा है, परन्तु हिजड़ा समुदाय की संवेदनाओं को उतनी तीव्रता के साथ उठाया नहीं जा रहा है। प्रारम्भ में खुशवंत सिंह द्वारा अपने उपन्यास 'दिल्ली' में भागमती के माध्यम से दिल्ली के राजनीतिक और तथाकथित सांस्कृतिक गलियारों की झलक दिखलाई गई। अंग्रेजी लेखिका कमलादास ने अपने कथा-संग्रह 'हिजड़ा' में चांदनी के माध्यम से हिजड़ों की दुनिया से जनमानस को अवगत कराया। प्रसिद्ध नाटककार महेश दत्तानी द्वारा लिखित नाटक 'सेवेन स्टेप्स अराउंड द फायर' में हिजड़ों की संवेदना को बहुत ही सशक्त ढंग से प्रस्तुत किया गया। अंग्रेजी में और भी कई पुस्तकें इस समुदाय के प्रति संवेदना प्रकट करने आई।

भारतवर्ष में सुप्रीम कोर्ट ने अप्रैल 2014 में हिजड़ा एवं ट्रांसजेंडर लोगों को 'थर्डजेंडर' के रूप में कानूनी मान्यता दी है। नेपाल, पाकिस्तान तथा बांग्लादेश में थर्डजेंडर के अस्तित्व से सम्बंधित सभी कानूनी अधिकार दिए गए है। बांग्लादेशी सरकार ने शिक्षा के क्षेत्र में उन्हें आगे बढ़ाने हेतु कई ठोस कदम उठाए है। आखिरकार 21वीं सदी में एल.जी.बी.टी. राइट्स को मानवाधिकार और नागरिक अधिकार माना जाने लगा। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में पहली बार इस बात की पहल की गई कि स्त्री-पुरूष शौचालय के साथ-साथ एक अलग से ट्रांसजेंडर का शौचालय भी होगा। ऐसी कई समस्याएँ है जिनसे इन्हें दो चार होना पड़ता है। लगातार कानूनी मुद्दे से जुड़े, गुणात्मक स्वास्थ्य, नामकरण सम्बन्धी दुविधा, पहचान पत्र में लिंग की पहचान आदि कई ऐसे मुद्दे है जो भावनात्मक विरोधाभासों को साथ लेकर चलते है।

पौराणिक काल से लेकर मुगलकाल तक इनकी आवश्यकता और व्यवस्था को जात से बाहर नहीं समझा जाता था। लेकिन अंग्रेजी सरकार के आगमन के बाद 1857 में कानून बनाकर इन्हें अपराधी घोषित किया गया है और इन्हें समय और समाज से अलगाने की कोशिश की गई। भारत में दलित, आदिवासी और स्त्रियों के साथ सालो-साल अत्याचार किया जाता रहा है। इन सबकी वजह हमारे समाज की रुढ़िवादी सोच और मानसिकता है; जिससे हमारा समाज अभी तक भी आक्रान्त है। जिस घर में ऐसे बच्चे पैदा हो जाते है उनका लालन-पालन न कर, शिक्षा, स्वास्थ्य की सुविधा न देकर लोकलाज के कारण उन्हें धकेल दिया जाता है। अपमान के बोध से परिवार अपने बच्चे को त्यागने पर मजबूर हो जाते है। आवश्यकता है समाज और परिवार द्वारा सशक्त पहल की।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नर समुदाय धीरे-धीरे कैसे अस्तित्व में आने लगा, अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग नामों से उच्चारण किया जाने लगा, साथ ही साहित्य के माध्यम से इसकी संवेदना प्रकट होने लगी; इसके परिणामस्वरूप इनकों जानने की जिज्ञासा होने लगी। इनकी प्रकृति को लेकर भी सवाल उठाया जाता है, कि इनके निर्माण में सारा दोष प्रकृति का है और इसी आधार पर हम इन्हें अस्वीकारते भी हैं। किंतु इसमें प्रकृति को दोष न देकर इसे जैविक गड़बड़ी मानना चाहिए ताकि इनकी स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकें। बांग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान आदि अलग-अलग देशों में इनकें अधिकारों को लेकर नियम बनाये गये हैं।

किन्नर समुदाय की समस्याओं को लेकर उनके जीवन-यापन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि मुद्दो को लेकर साहित्य में लिखा जाने लगा है। अंग्रेजी और भारतीय लेखकों ने इस उपेक्षित विषय को साहित्य के माध्यम से प्रकाश में लाने का प्रयास किया है। जब से साहित्य के माध्यम से इन पर लेखन कार्य की शुरुआत हुई है तब से किन्नर समुदाय के जीवन के बारे में सामान्य पाठक वर्ग भी जानने लगा और इनके प्रति संवेदना उत्पन्न होने लगी। किन्नर आधारित साहित्य धीरे-धीरे संवेदनात्मक अधिक होता जा रहा है, जो इनकी स्थिति सुधारने के लिए उपयुक्त नहीं है। लेकिन केवल संवेदना रखने मात्र से ही ये अपनी स्थिति में सुधार नहीं ला सकते, इससे उनकी वही स्थिति बनी रहेगी। जब तक मुख्यधारा के समाज से इनकों जोड़ा नहीं जाता तब-तक इन्हें पिछड़े, अल्पसंख्यक, हाशियाकृत कुछ भी तरह से देखा जा सकता हैं।

कृष्णमोहन झा ने 'हिजड़ा 2' कविता में इनकी स्थिति को इस प्रकार से प्रकट किया है:-

"उनकी गालियों और तालियों में भी

उड़ते हैं खून के छींटे

और जो यह गाते-बजाते,

उधम मचाते

हर चौक-चौराहों पर

वे उठा देते हैं अपने

कपड़े ऊपर

दरअसल उनकी अभद्रता नहीं

उस ईश्वर से प्रतिशोध

लेने का उनका एक तरीका है

जिसने उन्हें बनाया

या फिर नहीं बनाया।"[65]

इस विश्वव्यापी समाज में प्रत्येक व्यक्ति से समाज का निर्माण होता है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिकता का विस्तार करने में योगदान देता रहता है। सामान्यत: स्त्री-पुरूष के आपसी मेल से अगली पीढ़ी का निर्माण होता है जिसका अर्थ यह हुआ कि हमारे समाज के दो प्रमुख घटक हैं- स्त्री और पुरूष। पुरूष नर और स्त्री नारी कहलाती है। नर-नारी के मध्य "किम नर: नारिवा? ऐसा प्रश्न समाज के उस घटक के लिए उपस्थित होता है जिन्हें किन्नर नाम दिया गया है। यह अत्यंत विडंबना की स्थिति है कि समाज का यह तीसरा घटक अनुकूल प्रतिष्ठा और सामान्य जीवन प्राप्त नहीं कर पाता है। एक बालक जब संसार में अपनी किलकारियों के साथ प्रवेश करता है तब परिवारजनों के मुख मंडल पर प्रसन्नता की आभा छा जाती है। कोई कह उठता है कि बेटा है तो किसी के द्वारा कहा जाता है कि नहीं बिटिया है। किंतु जब उस बालक के विशिष्ट अंगों का परीक्षण किया जाता है तब वह प्रसन्नता की आभा दुःख की रेखा में परिवर्तित हो जाती है क्योंकि नवजात न तो बालक होता है और न ही बालिका। ऐसी स्थिति माता-पिता को व्यथित कर देती है।

किन्नर शब्द की व्युत्पति **'किम नर'** अर्थात विकृत पुरूष , पुराणोक्त पुरूष जिसका सर घोड़े का हो तथा शेष शरीर मनुष्य का हो, ऐसी मान्यता है। अर्थात क्या वह भी नर है? इसी अवधारणा से किन्नर शब्द का प्रचलन हुआ है। मुख्यतया तीन शब्द तृतीय प्रकृति, किन्नर और ट्रांसजेंडर शब्द का अर्थ यदि देखे तो "तृतीय प्रकृति शब्द पाकिस्तानी सरकार ने प्रदान किया। पश्चिमी देशों में इसके लिए यूनच शब्द पाया जाता है जिसका अर्थ है लिंगछेदन किया हुआ पुरूष।"[66] इसी प्रकार हिजड़ों के लिए आधुनिक रूप में किन्नर शब्द का प्रयोग किया जा रहा है। वर्तमान समय में हिंदी साहित्य में यह अधिकाधिक प्रयोग में लिया जाता है। प्राचीन भारतीय साहित्य में महाभारत में इसका उल्लेख किन्नर जाति के संदर्भ में मिलता है जो नृत्य-गायन में प्रवीण थी और देवताओं का मनोरंजन किया करती थी। इसी प्रकार 'ट्रांसजेंडर' शब्द अंग्रेजी का है जो 1960 के दशक में अस्तित्व में आया बाद में 1990 तक आते-आते राजनीतिक आयामों से जुड़ने

---

[65] कृष्णमोहन झा, 'हिजड़ा-2' कविताकोश से-

[66] शिला डांगा','किन्नर गाथा' पृ.सं.10

लगा और LGBT समुदाय के अंतर्गत इसे जोड़ दिया गया। क्या समाज का यह किन्नर नामक घटक कभी प्रथम पंक्ति में सम्मिलित हो सकता है? क्या किन्नरों की कोई ऐतिहासिक या पौराणिक पृष्ठभूमि नहीं है? इन प्रश्नों की पड़ताल इस कार्य में की गई है।

हमारे देश का समाज किन्नर(हिजड़ा) से भली-भांति परिचित है। किन्नर पैदाईशी रूप से न स्त्रीलिंग है और न ही पुर्लिंग। अपितु प्रकृति ने इन्हें अलैंगिक स्वरूप बनाया है। अर्थात इनके लिंग का कोई निर्धारण नहीं होता। अधिकांश किन्नर पुरूष शारीरिक सरंचना के होते है। परन्तु उनका व्यवहार, चाल-चलन स्त्रियों के समान प्रतीत होता है। वर्तमान समाज में इन्हें अनदेखा किया जा रहा है जिन्हें समाज में जो स्थान मिलना चाहिए उससे काफी दूर है इसी कारण अपने पेट-पालने को मजबूर किन्नर बसों में, ट्रेनों में दस-पाँच रूपये मांगते फिरते है। आखिर कब तक इस तरह दयनीय स्थिति में जीवन काटेंगे? भारत का सविधान सभी मनुष्यों को समानता से जीने का अधिकार देता है परन्तु इसकी वास्तविकता कुछ अलग ही है, इस बात से हम सभी भली-भांति परिचित है।

अभी कुछ समय पूर्व देश के सर्वोच्च न्यायालय ने हिजड़ों को तृतीय लिंग के रूप में स्वतंत्र पहचान प्रदान की है। उन्हें भी अन्य पिछड़ी जातियों के समान आरक्षण प्रदान करने की पहल की गई है। न्यायालय की इस घोषणा से निश्चित ही हिजड़ा समुदाय में ख़ुशी की लहर दौड़ गई है। वे भी सोचने लगे है कि उनके दिन भी फिरेंगे। लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न हमारे सम्मुख यह है कि सरकार द्वारा सब-कुछ सुविधाएँ मुहैया कराने पर भी क्या वास्तविक रूप में इनकी स्थिति में कोई सुधार आ पाया है? क्या औरों की तरह उनके भी अच्छे दिन आने वाले है या आ गए है ? उनकी जिन्दगी में भी कोई शाइनिंग आई है?

सर्वप्रथम स्वतंत्रता के बाद दलितों को सविधान के आधार पर आरक्षण दिया गया। आरक्षण के पीछे सीधा मंतव्य यही था कि दलितों को बराबरी का दर्जा मिले। ये भी मुख्यधारा से जुड़ जाए लेकिन क्या दलित मुख्य धारा में आ गए है? क्या हमारे देश में छुआछूत और जातिवाद जैसी बीमारियाँ समाप्त हो चुकी है। मिटना तो दूर की बात है अभी तक हालात वहीं के वहीं हैं जैसे पहले थे। आरक्षण के नाम पर सोशल मीडिया पर खबरे उछाली जाती है। फर्क अब सिर्फ इतना आया है कि पहले आमने-सामने अभद्र व्यवहार किया जाता था अब आँख दबाकर यह व्यवहार किया

जाता है। प्रत्येक वर्ग की उन्नति का आरंभिक काल होता है तो पतन का काल भी होता है। एक निश्चित काल के बाद वह समाज की मुख्यधारा का हिस्सा बन जाता है। भले ही बहुत से दलित पढ़-लिख गए है और नौकरियां भी कर रहे हैं परंतु उनके प्रति जातिवाद की जो जड़ें बैठी हुई है उससे अपने-आपको बाहर निकालने में वे असहाय महसूस करते हैं। उच्च वर्ग आज भी दलितों को अपने बराबर मानने को तैयार नहीं है।

वहीं स्थिति हैं स्त्रियों की, स्त्री चाहे सवर्ण घर की हो या दलित हो उसका हमेशा से ही शोषण होता आ रहा है। और न जाने कब तक होता रहेगा। स्त्रियों की सुरक्षा के लिए सरकार ने भी बहुत से नियम बनाए है। परन्तु आये दिन समाचार पत्रों में बलात्कार की ख़बरें आती रहती है। इनकी दशा में सुधार आने तथा इन्हें मुख्यधारा में लाने के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। हिजड़ों के लिए स्वतंत्रता और बराबरी, सामाजिक सांस्कृतिक भेदभाव से मुक्ति, रोटी, कपड़ा, मकान और शिक्षा का बुनियादी हक, यौन हिंसा और प्रताड़ना से मुक्ति, कहीं भी आने-जाने की आजादी, कानून में बराबरी का हक, सभी मानवाधिकार सुरक्षा के दायरे में लेना, अनुचित तरीकों से हिरासत में लेना, सार्वजनिक सेवाएँ, राशन कार्ड, पासपोर्ट, ड्राइविंग लाइसेंस का हक, अभिव्यक्ति की आजादी आदि की मांग वे करते रहे है जिसे ट्रांसजेंडर 'पर्सन राइट्स बिल 2019' पास करके उनकी मांगों की पूर्ति करने का प्रयास किया जायेगा। इस कानून के माध्यम से काफी हद तक उनकी स्थिति में सुधार हुआ है।

सन् 1990 में सेरेना नंदा द्वारा अपनी पुस्तक 'नाइदर मैंन नॉर अ वुमन: द हिजराज ऑफ़ इंडिया' में थर्ड जेंडर पर अध्ययन किया और उनकी मनौवैज्ञानिक स्थिति के बारे में विस्तार से चर्चा की गई। उन्होंने अपने शोध में भारतीय हिजड़ा समुदाय की स्थिति और सभी परिप्रेक्ष्यों का गहनता से अध्ययन किया। उनका रहन-सहन, जीवन यापन का तरीका, सामाजिक स्थिति के बारे में जाँच पड़ताल करके शोध कार्य किया गया। वे उनके बारे में लिखती हैं कि "भारतीय समाज में हिजड़ा की पारम्परिक भूमिका एक बच्चे के जन्म के आसपास विवाह और समारोहों में गायन और नृत्य करना है। वे महिलाओं के रूप में कपड़े पहनते हैं। माना जाता है कि उनके पास नपुंसकता और बांझपन को दूर करने वाली विशेष शक्तियाँ होती है । जो हिंदू धर्म से आते हैं, वे देवी बहुचरा की पूजा करते हैं, लेकिन जो मुस्लिम पृष्ठभूमि से आते हैं और खुद इस देवी को मुस्लिम मानते हैं, वे मुस्लिम रीतियों

का पालन करते हैं।"[67] आम तौर पर जनता जिस तृतीय लिंगी समाज को किन्नर नाम से पुकारती है उनका वास्तविक नाम किन्नर नहीं था इसका उल्लेख मैंने अपने शोध प्रबंध में पहले ही कर दिया है। मानव समाज की दृष्टि से संस्कृत में स्त्री-पुरूष के अतिरिक्त एक 'तृतीय प्रकृति' शब्द भी उपलब्ध होता है जो उनके लिए प्रयुक्त किया जाता है जो न तो पुरूष है और न ही स्त्री। इस समुदाय के लिए अलग-अलग भाषाओं, स्थानों में भिन्न-भिन्न शब्दों का प्रयोग मिलता है। किन्नरता से संबंधित विचारों और व्यवहार का लंबे समय से संस्कृत, प्राकृत, तमिल भाषाओं में परिचय मिलता है। वे क्लीव, नपुंसक, मुखभंग, शंड, पंड, पंडक और पेड़ी आदि नामों से जाने जाते हैं।

किन्नरों की अपनी कुछ खास विशेषताएँ होती है। कुछ विशेषताएँ नकारात्मक है तो कुछ सकारात्मक। नकारात्मक इस रूप में कि इनकी छवि को नकारात्मक बना दिया गया है। अधिकांशत: मनुष्य के मन में इनकों लेकर डर बैठा हुआ रहता है। वे सोचते हैं कि इनकी प्रवृति झगड़ालू होती है, यह दुर्व्यवहार करने में भी शरमाते नहीं है। सार्वजनिक स्थलों पर भी ये अभद्र व्यवहार करने लगते हैं इस तरह से ये अपनी छवि को नकारात्मक बना लेते है। सकारात्मक इस रूप में कि वे नाचते-गाते हुए सबको दुआएं देने का काम करते है। सबकी मंगलकामना करते हैं।

2.3.2 कोशगत अर्थ:-

किन्नर समुदाय को हिजड़ा, थर्डजेंडर, ट्रांसजेंडर आदि अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है, इसलिए इन शब्दों की अलग-अलग व्याख्या करना अनिवार्य हैं।

अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार:-

"either the male or female devision of a species, especially as differntiated by social and cultural roles and behavior ।"[68]

अर्थात किसी प्रजाति के नर या मादा का विभाजन, विशेष रूप से सामाजिक और सांस्कृतिक और व्यवहार से भिन्न हो।

ऑक्सफ़ोर्ड के सातवे संस्करण में इस प्रकार दिया गया हैं:-

---

[67] सेरेना नंदा, नाइदर मैंन नोर अ विमन: द हिजड़ाज ऑफ़ इंडिया p13.

[68] अंग्रेजी शब्दकोश, विकिपीडिया

"a person who feels emotionally that they went to live, dress etc. a member of the opposite sex।"[69]

अर्थात एक व्यक्ति जो भावनात्मक रूप से महसूस करता है कि वे लिंग के विपरीत सदस्यों के समान रहना, ड्रेस पहनना चाहते हैं।

कोलिन्स डिक्शनरी के अनुसार:- "a category of people who do not identify as male or female, but rather as neither, both, or a combination of male and female genders."[70]

अर्थात उन लोगों की एक श्रेणी जो पुरूष या महिला के रूप में पहचान नहीं करते हैं, बल्कि पुरूष और महिला लिंग के संयोजन के रूप में, दोनों में से कोई भी नहीं है।

अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश के अनुसार:-

"A category (a gender), present in societies which recognize three or more genders, which is neither male nor female, in some societies, the category may contain individuals who are intersex andorogynous, while other societies may categorize transgender people into it.।"[71]

अर्थात एक श्रेणी (एक लिंग), समाजों में मौजूद है जो तीन या अधिक लिंगों को पहचानती है, जो न तो पुरूष है और न ही महिला; कुछ समाजों, श्रेणी में ऐसे व्यक्ति शामिल हो सकते हैं जो इंटरसेक्स या androgynous (उभयलिंगी) हैं, जबकि अन्य समाज इसमें ट्रांसजेंडर लोगों को वर्गीकृत कर सकते हैं।

एक अन्य शब्दकोश के अनुसार:- "ऐसे मानव हिजड़ा कहलाते हैं जो लैंगिक रूप से न नर होते हैं न मादा। जन्म के समय लैंगिक विकृति के कारण ऐसा होता है।"[72]

रफ़्तार शब्दकोश के अनुसार हिजड़ा शब्द को चार प्रकार से परिभाषित किया गया है:-

---

69 'ऑक्सफोर्ड एडवांस लीनर्स डिक्शनरी', सेवेंथ एडिसन-

70 https://www.collinsdictionary.com/dictionary/english/hijra

71 Elglish-hindi dictinary वेब से-

72 https://educalingo.com/hi/dic-hi/hijara

an impotent men, A eunuch:- "1.वह व्यक्ति जिसमें पुरूष या स्त्री दोनों में से किसी के भी चिन्ह न हों

2. वह जिसमें स्त्री संभोग की शक्ति न हो या बहुत कम हो
3.ऐसा व्यक्ति जिसमें शारीरिक दृष्टि से और पुरूष दोनों के कुछ-कुछ चिह्न तथा लक्षण जन्मजात और प्राकृतिक रूप से हों।
4.ऐसा व्यक्ति न पूर्णतः पुरूष ही होता है और न स्त्री ही।"[73]

हिंदी खोजी शब्दकोश के अनुसार:-

"पुं. [सं. किम्-नर, कर्म. स.] [स्त्री० किन्नरी] १. पुराणानुसार देवलोक या स्वर्ग के एक प्रकार के गायक उपदेवता जिनका मुख घोड़े के समान कहा गया है। २. आज-कल गाने-बजाने का पेशा करनेवाली एक जाति।"[74]

maxgyan हिंदी-अंग्रेजी शब्दकोश के अनुसार:-

"जो न स्त्री हो, न पुरूष
ऐसा व्यक्ति जिसमें शारीरिक दृष्टि से स्त्री और पुरूष दोनों के कुछ-कुछ चिह्न तथा लक्षण जन्मजात और प्राकृतिक रूप से हों ऐसा व्यक्ति न पूर्णतः पुरूष ही होता है और न स्त्री ही।"[75]

2.3.3 मिथकीय आधार

भारतीय और विदेशी मिथकों में भी किन्नर समुदाय का उल्लेख मिलता हैं। मिथक सामान्यत: परंपरागत या अनुश्रुत कथा को कहा जाता है। इसका संबंध विश्व की उत्पति तथा विश्ववासों से है। यूनानी के 'माइथोस' लेटिन के 'मिथस' और जर्मनी के मिथस शब्द का ऋणी है। ऐसा माना जाता है कि मिथक का प्रयोग मनुष्य के जन्म से ही माना जाता है। मिथक के बारे में कहा जाता है कि ये टूटते विश्वासों, खंडित होते सामाजिक मूल्यों और मानवीयता के क्षरण को रोकने में सार्थक साबित हुए।

---

[73] https://shabdkosh.raftaar.in/Meaning-
[74] https://dict.hinkhoj.com/meaning-in-english.words
[75] http://www.maxgyan.com/hindi/

मिथक शब्द आज कल्पना का विषय बन चुका है इसके बारे में राम अवध द्विवेदी लिखतें हैं कि "पुरातत्व शब्द का प्रयोक्ता स्वयं कहता है:- हम नहीं कह सकतें हैं कि पुरावृत्त मूलतः सम्पूर्ण अर्थ का बोध कराने में सक्षम हैं, किंतु विषय निरूपण के लिए हम यह मान लेते हैं कि उसमें सभी अर्थो और संकेतों का संग्रह है जो आधुनिक काल में मिथ से सम्बद्ध माने जाते हैं।"[76] मिथक का कोई ऐतिहासिक, प्रामाणिक और वैज्ञानिक आधार नहीं होता है। प्राचीन पुराकथाओं में मिथ का प्रयोग किया जाता था। हिंदी में भी मिथक का प्रयोग होता आया है मुक्तिबोध, अज्ञेय आदि ऐसे लेखक हैं जिन्होंने अपने साहित्य में मिथकों का प्रयोग किया है। जिनका कोई प्रामाणिक आधार सिद्ध नहीं हो सकता। यह कथा को गतिशीलता या रोचक बनाने के उद्देश्य से प्रयोग में लाया जाता है।

मिथक को सामाजिकता के भीतर भी देखा जाता है तथा सामाजिक सरोकारों के पीछे भी देखा जाता है। इसी प्रकार से डॉ. बच्चन सिंह लिखते हैं:- "मिथक में तर्क की कोई संगति नहीं होती। इसमें व्यक्त भावनाओं, विचारों और घटनाओं के सम्बंध सूत्र अत्यधिक उलझे हुए, तर्केत्तर होते हैं और गड्ड-मड्ड होते हैं।"[77] कहीं कथाओं के पात्रों के रूप में मिलता है तो कहीं लिंग की अवधारणा के रूप में इनका उल्लेख किया जाता है। प्राचीन साहित्य में मिथकों, संस्कृत साहित्य में पाणिनि ने, सिद्धों ने, जैन-बौद्ध साहित्य में लिंग का उल्लेख किया है। वही यूनान की कथाओं में भी इनके बारे में जानकारी मिलती है जो इस प्रकार से है:-

एक स्थान पर राहुल सांकृत्यायन इन्हीं किन्नरों के विषय में कहते है कि:-"यदि किन्नर शब्द का अर्थ 'बुरा' शब्द से ले, तो शत्रु के लिए आज भी ऐसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। किसी ने अपने शत्रुओं को यह नाम दिया होगा, तो जरूर मालूम होता है कि ऐसा नाम आर्यों की भाषा में होने से यह अर्थाभाव आर्यों का ही हो सकता है, तो क्या किन्नर आर्यों से भिन्न थे? हां आदिम रूप में जरूर भिन्न मालूम होते हैं।"[78] लेकिन राहुल जी का यह मत किसी बात का प्रामाणिक दस्तावेज नहीं कहा जा सकता। जरूरी नहीं कि किन्नरों के लिए बुरा शब्द का ही प्रयोग किया जाए, यह मत

---

[76] राम अवध द्विवेदी, 'साहित्य-सिद्धांत', पृ.सं.12

[77] डॉ. बच्चन सिंह, 'आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज', टिप्पणी से-

[78] राहुल सांकृत्यायन, 'किन्नर देश में', पृ.सं.346

किसी भी सार्थक निष्कर्ष पर नहीं पहुँचता है। प्राचीन समय के ग्रंथों में तृतीय प्रकृति के मानव की उत्पति के संबंध में कई मिथक एवं अवधारणाएं मिलती है। सिद्धों ने भी अपने ग्रन्थ 'सिद्ध-सिद्धांत-पद्धति' में संतान उत्पति को इस प्रकार बताया है:-

"शुक्रधिकेषु पुरूष, रक्ताधिका कन्यका, समशुक्र-रक्ताभ्याम नपुंसक: ।"[79]

अर्थात संभोग के परिणामस्वरूप यदि गर्भाशय में पिता का वीर्य अधिक संचित हो जाता है, तो पुरूष शरीर उत्पन्न होता है, यदि माता का रज अधिक होता है तो कन्या का जन्म होता है और यदि रज और वीर्य की मात्रा समान होती है तो नपुंसक संतान उत्पन्न होती है। उत्पति के संबंध में यह सब मिथक है जिन्हें कुछ लोग स्वीकार करते हैं और कुछ नहीं। मिथ में एक और बात कही जाती है कि ब्रह्माजी की छाया से किन्नरों की उत्पति हुई है। किन्नर प्रकृति को क्वियरनेस के नाम से भी जाना जाता है। इनसे संबंधित मिथ कहानियाँ सिर्फ भारतीय पौराणिक कथाओं तक ही सीमित नहीं है अपितु विदेशी कथाओं में भी इनका उल्लेख है। उत्तरी ध्रुव के आर्कटिक क्षेत्रों की ऐस्किमों जाति में इस प्रकार की कथा प्रचलित है कि इस पृथ्वी पर सबसे पहला जोड़ा दो पुरूषों का था। उतरी अमेरिका के कबीलों में 'दो आत्माओं' का संदर्भ मिलता है। यानी ऐसे लोग जिनमें पुरूष और स्त्री दोनों की विशेषताएँ होती है।

मेक्सिको के एजटेक आदिवासियों की पौराणिक कथाओं में मादा गुणों वाले फूलों के राजकुमार सोचिपिली का जिक्र आता है जिसे नृत्य, गीत, कला, सौन्दर्य और कामुकता का संरक्षक माना जाता हैं। जापानी शिन्तों पुराणों में उभयलिंगी इनारी का उल्लेख मिलता है जो कभी पुरूष है तो कभी स्त्री। चीनी ताओवादी पुराणों के आठ व्यक्तियों में से एक 'लेन कईहे' का वर्णन हैं जिसकी लैंगिकता अस्पष्ट है, वह कभी पुरूष का वेश धारण करता है और कभी स्त्री का। यह किन्नरता को तृतीय प्रकृति के दायरे में रखने वाला उदाहरण है। इन सबका उदाहरण देवदत्त पट्टनायक ने 'शिखंडी' नामक पुस्तक के माध्यम से दिया है।

प्राचीन मेसोपोटामिया की पुराकथाओं में हमें एकी नामक एक देवता की कथा मिलती है। वह ऐसे लोगों को भूमिका देने का प्रयास करता है, जो अन्य देवताओं की दृष्टि में पूर्ण नहीं हैं। वह

---

[79] महायोगी श्रीगोरक्षनाथ, सिद्ध-सिद्धांत पद्दति, अनुवादक-स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, वाराणसी-2014

नेत्रहीन को संगीतकार बनाता है। बाँझ औरत को रखैल की भूमिका और पौरूषहीन आदमी को राजा के हरम में रखता है ताकि उसकी स्त्रियों को कोई गलत दृष्टि से ना देखे।

इसी प्रकार प्राचीन सुमेरियाई महाकाव्य में जंगली योद्धा, ऐनकिदू के साथ पुरूष प्रेम की कहानी है जिसकी मृत्यु पर वह फूट-फूटकर रोता है। इन सभी उदाहरणों की पड़ताल करते हुए देवदत्त इस धारणा को पितृसत्ता के द्वारा उत्पन्न मानते हैं। क्योंकि इन कथाओं में स्त्री से अधिक पुरूषों का उल्लेख है। नैतिकता से बने मैत्री संबंध या आनद के लिए। पुरूष की इन दो विचारधाराओं के आधार पर लेखक मानते हैं कि:- "इन दोनों ही मामलों में किन्नरता का या तो किसी ऊँची भावना के कारण या घटिया आनन्द की प्राप्ति के लिए प्रकृति(यौन संबंध) और संस्कृति (विवाह) दोनों की सीमाओं से व्यक्ति को दूर रखने के लिए किया गया है। यह बात कि किन्नरता की यह कहानियाँ पुरूषों तक ही सीमित हैं, पितृसत्ता के ढांचे की व्यापकता का सबूत माना जा सकता है।"[80] इसका तात्पर्य है कि किन्नरता को लेकर यह जो भी कहानियाँ है इनमें सबसे अधिक पुरूष प्रकृति का ही अधिक प्रयोग किया जाता है, जिससे पुरूष सत्तात्मक सोच प्रकट होती है, लेकिन इन मिथ कथाओं का कोई ठोस आधार नहीं प्रतीत होता है।

ईसा पूर्व 77 में किन्नरों को विदेश में इस प्रकार से परिभाषित किया जाता था:-

"Genucius, a Roman slave and eunuch, is denied inheritance on the grounds, according to art historian Lynn Roller, of being "neither a man nor a woman." He is "not even allowed to plead his own case, lest the court be polluted by his obscene presence and corrupt voice." Eunuchs, typically castrated men, often hold trusted positions such as servants or priests but they are also treated as abnormal।"[81]

[80] देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ पृ.सं.65

[81] एनसाइक्लोपीडिया, विकिपीडिया-

अर्थात जेनुइस, एक रोमन गुलाम और यूनुच, की कथा के आधार पर कला इतिहासकार लिन रोलर के अनुसार, न तो एक पुरूष और न ही एक महिला के आधार पर विरासत से इन्कार किया जाता है। उन्हें अपने मामले की पैरवी करने की भी अनुमति नहीं है क्योंकि ऐसा न हो कि अदालत उनकी अश्लील उपस्थिति और भ्रष्ट आवाज से प्रदूषित हो जाए। यूनुच, आमतौर पर जाति के पुरूष होते हैं जैसे कि नौकर या पुजारी के रूप में लेकिन उनके साथ असामान्य व्यवहार किया जाता है।

2.3.4 समूह और संगठन

थर्ड जेंडर उस तीसरे दर्जे को कहा गया है जिसकी आंगिक सरंचना में विकृति है, जो न तो स्त्री है और न पुरूष या फिर कह लीजिए कि दोनों का मिला जुला रूप हैं। पौराणिक युग में ये तृतीय पंथी नृत्य गान, संगीत का कौशल रखने वाले देवताओं के सेवकों के रूप में देखे जाते थे। किन्नरों की श्रेणियां देखी जाए तो इन्हें चार भागों में विभाजित करके देखा जाता है:-

बुचरा- बुचरा वास्तविक हिजड़े होते हैं, ये न जन्मजात स्त्री होते हैं और न पुरूष अर्थात जन्मजात अविकसित जननांगों के साथ पैदा होते हैं। माता की गर्भावस्था में कुछ जैविक गड़बड़ी के चलते इनका जन्म होता है। परिवार में जब इस प्रकार की संतान उत्पन्न होती है तो जल्द से जल्द उसे दूर करने का प्रयास किया जाता है।

नीलिमा- किसी कारणवश हिजड़ा बनते हैं, और स्वयं को किन्नर बनने के लिए सौंप देते हैं। यह धार्मिक, आर्थिक कारणों से भी ऐसा करते है।

मनसा- मानसिक रूप से अपने-आपको स्त्री या अपने विपरीत लिंग के अधिक निकट महसूस करते हैं। इन्हें किसी मनौवैज्ञानिक से सलाह लेकर अपने अनुकूल वास्तविक लिंग में बदला जा सकता है।

हंसा- शारीरिक कमी या न्यूनताओं के कारण इन्हें हिजड़ा कहा जाता है। इनको भी ऑपरेशन के द्वारा स्त्री या पुरूष बनाया जा सकता है। नकली हिजड़ों को 'अजुवा' कहा जाता है, तथा जिन्हें जबरदस्ती बनाया जाता है वह 'छिबस' कहलाते हैं। भारत में मुख्यतः हिजड़ों के सात घराने हैं।

मुंबई का घराना, हैदराबाद का घराना, पुणे का घराना आदि जो इनके समुदाय के क्रिया-कलापों पर दृष्टि रखते हैं। इन पर नियन्त्रण रखते है। हिजड़ों के सभी क्रियाकलापों का क्रियान्वयन इन घरानों से ही चलता है, जिनका मुखिया होता है। मुखिया ही तय करता है कि किसको किस स्थान पर भेजना है और क्या काम करना है। उसके निर्देश का पालन करना उनके लिए आवश्यक हो जाता है। अपने समुदाय में रहने के लिए उनको मुखिया की बात माननी पड़ती है। इन घरानों का अलग-अलग कार्य होता है। यह एक-दूसरे घराने के नियंत्रण से मुक्त रहते है। लेकिन सारे किन्नर इनके नियन्त्रण में नहीं रहते है कुछ स्वतंत्र रूप में वैश्यावृति, भिक्षाटन आदि में लिप्त रहते हैं जो बाद में कई सारी बिमारियों का शिकार होकर अपनी जीवनलीला समाप्त कर लेते हैं।

2014 में LGBT को मान्यता प्रदान की गई LG-समलैंगिक, B-उभयलिंगी, T-ट्रांसजेंडर। इनमें से समलैंगिक या उभयलिंगी यौन व्यवहार के अंतर्गत आते हैं लेकिन थर्डजेंडर आंगिक विकार के अंतर्गत आते हैं। इनकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि अपने-आप में अलग है। जो साधारणतया सामान्य मनुष्य के जीवन से एकदम अलग है और उसमें भी परिवर्तन होते रहते हैं साथ ही इनकी प्रवृति भी अलग-अलग होती है।

इस संदर्भ में अध्ययन को लेकर पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर लिखने वाले लेखक देवदत्त पट्टनायक कहते हैं कि:- "अमेरिका में जब दो वयस्क पुरूष सार्वजनिक रूप से एक-दूसरे का हाथ पकड़कर चलते हैं तो उन्हें समलैंगिक माना जाता है, लेकिन भारत में ऐसा नहीं है। किन्नर प्रवृति (क्वियरनेस) को गहराई से समझने के लिए सांस्कृतिक दृष्टि से जाँच-पड़ताल करना बहुत आवश्यक है। लेकिन इसके साथ-साथ हमें इस और से भी पूरी तरह सावधान रहना होगा कि इस जाँच-पड़ताल से कभी-कभी आवाजों का दम घुट सकता है।"[82] उनका यह कथन इस बात को इंगित करता है कि इनकी की गई जाँच-पड़ताल के दौरान इनकी भावनाओं को ठेस भी पहुँच सकती हैं। इनके अस्तित्व पर भी आवाज उठायी जा सकती है, इनकी भावनाएं आहत हो सकती है, जो कि नहीं होनी चाहिए। इनके सांस्कृतिक जीवन में इनकी परम्पराओं, व्यवस्थाओं, रहने का तरीका साथ ही समाज में इनके सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक महत्त्व की पड़ताल की जाती है। अगर

[82] देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, राजपाल एंड संस (2015) तृतीय सं. पृ.सं.17

सामान्य रूप में देखा जाये तो समाज की नजर में इनका कोई सांस्कृतिक महत्त्व नहीं होता। महत्त्व इस नजर में कि इनके सांस्कृतिक अस्तित्व को समाज स्वीकार नहीं कर पाता है, वह इन्हें अपने समाज से हीन मानता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि किन्नरों को मुख्यतया चार श्रेणियों बुचरा. नीलिमा, मनसा, और हंसा में विभक्त किया गया है। कई बार व्यक्ति इनमें भेद नहीं कर पाते किन्तु इनकी प्रकृति अलग-अलग होती है। 'बुचरा' को वास्तविक हिजड़ा माना जाता है। ये जन्मजात होते हैं जबकि नीलिमा कारणवश अपने-आपको हिजड़ा बना लेते है। मनसा की मानसिक स्थिति अलग होती है इस कारण वे अपने शरीर के विपरीत स्थिति के मनुष्य से अपनी निकटता महसूस करते हैं। 'हंसा' शारीरिक कमी के कारण उनकों हिजड़ा कहा जाता है। इस प्रकार से इनकों विभाजित किया गया है। इसी प्रकार से इनके भारत में अलग-अलग स्थानों पर संगठन भी है जिन्हें घराने कहा जाता है, इनके माध्यम से ही हिजड़ा समुदाय का कार्य संचालन किया जाता है।

2.4 लिंग सम्बंधी अवधारणा

हिजड़ा और किन्नर शब्द एकदम भिन्न है, वस्तुत: किन्नर शब्द का हिजड़ा शब्द से कोई लेना-देना ही नहीं है। किन्नर हिमाचल की एक जाति है जो किन्नौर प्रदेश में निवास करती है। लेकिन धीरे-धीरे यह शब्द हिजड़ा समुदाय के लिए प्रयुक्त होने लगा। क्यों इसका प्रचलन हुआ? इसकी जानकारी लिखित रूप में उपलब्ध नहीं है। लेकिन वर्तमान में सम्मानसूचक शब्द के रूप में इस शब्द का प्रयोग किन्नरों के लिए किया जाता है। अन्य शब्दों से इनकों ग्लानि का भाव महसूस होता है। इसलिए मैंने अपने शोध-कार्य में अधिकांशत: 'किन्नर' शब्द का प्रयोग किया है।

प्राय: जेंडर को एक सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ माना जाता है। इसके मूल में कारण छिपा हुआ है क्योंकि इस संदर्भ के बल पर यह अपनी पहचान तय करते हैं। यह स्त्रियोचित अथवा पुरुषोचित गुणों को प्रकट करता है। यह परिवर्तनशील है तथा मनुष्यों द्वारा निर्मित है। कई लोग जेंडर डिसऑर्डर के भी शिकार होते हैं। वे तय नहीं कर पाते कि उनका शरीर किस प्रकार की जरूरत रखता है। अपनी शारीरिक संरचना के प्रतिकूल व्यवहार करना वे पसंद करने लगते है। यदि वे स्त्री है तो उनका स्वभाव और कार्य-कलाप पुरूष जैसे होंगे और यदि वे पुरूष है तो उनकी भावनाएं स्त्रीगत

होती है, इस प्रकार अपने शरीर के विपरीत वे सोचते है और उसी प्रकार का व्यवहार करने की अपेक्षा भी रखते हैं। कोलिन्स डिक्शनरी में जेंडर डायस्फोरा को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:-

“a condition in which a person feels uncertanitiy or anxiety about the assumed gender assingned to them at birth.।”[83]

अर्थात ऐसी स्थिति जिसमें कोई व्यक्ति अनिश्चितता या चिंता को जन्म के समय उन्हें सौंपे गये जेंडर के बारे में महसूस करता है।

वह अपनी स्थिति को लेकर अनिश्चित बने रहते हैं। वे शारीरिक रूप से जो होते हैं मानसिक रूप से वैसे नहीं होते। विजेंद्र प्रताप इस संबंध में लिखते हैं कि “एक चिकित्सक से पूछे जाने पर उन्होंने बताया कि यदि कोई व्यक्ति जेंडर आइडेंटिटी डिसऑर्डर का शिकार होता है तो वह हिजड़ा ही बने ऐसा सोचना उचित नहीं है, ऐसा व्यक्ति अपना जेंडर बदलने के लिए सर्जरी करवा सकता है। बहुत सारे हिजड़े ‘जेंडर आइडेंटिटी डिसऑर्डर’ के शिकार है, उनकी इस मनोदशा को प्रारम्भिक अवस्था में ही उपचार के माध्यम से सुधारा जा सकता है।”[84] अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों में लिंगभाव का बदलना एक समय तक एक मानसिक विकार के रूप में समझा जाता था जिसे डायग्नोस्टिक्स एंड स्टेटिस्टिकल मैनुअल (diagnostics and statistical manual-DSM) में जेंडर डिसऑर्डर के रूप में पहचाना जाता है।

इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ शिला डांगा इस प्रकार बताती है:- “(क) भिन्न लिंगभाव का लगातार तीव्र अनुभव होना। बार-बार अपने बदले लिंग भाव को जताने की तीव्र इच्छा और वैसे ही रहने की जिद करना। (ख) अलग लिंगवाले पहनावे को प्रमुखता देना। (ग) अलग लैंगिकता जैसा व्यवहार करने की तीव्रता से और लगातार अलग लैंगिकता के खेलों, दोस्त या सहेली के साथ मनोरंजन की इच्छा या दिवास्वप्न में विशेष रुचि दिखाना इस प्रकार जेंडर को लेकर उनमें अनिश्चितता बनी रहती है। (ङ) स्वयं के लिंग में विशेष रुचि दिखाना एवं उसके जैसा आचरण करने

---

[83] www.collinsdictionary. com

[84] विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘भारतीय साहित्य और समाज में तृतीय लिंगी विमर्श’ पृ.सं.46-47

में आनाकानी। किशोरावस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तन को नापसंद करना तथा उसे बदलने की तीव्र इच्छा। ऐसी मनोदशा किसी भी लिंग-विषयक शारीरिक दोष के कारण न होना। इन दोषों के कारण मानसिक कष्ट होना और इस कारण सामाजिक, व्यावसायिक गतिविधियों में अरुचि होना और थकावट आना।"[85] लिंग सम्बंधी अवधारणा काफी पुरानी है भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने इस अवधारणा को लेकर काम किया है और अपनी लिंग सम्बंधी मान्यताओं को स्थापित करने का प्रयास किया।

भारतीय समाज को लिंगपूजक समाज माना गया है, इस बात को उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा' में जोर देकर उठाया गया है यथा:- " भारतीय समाज लिंगपूजक समाज रहा है। इस समाज में लिंग को लेकर धारणा है कि लिंग उर्जा का प्रतीक है। शक्ति का द्योतक है। पुरूष को समाज में इसलिए भी प्रमुख हैसियत प्राप्त है कि वह इस अंग से दमनकारी भूमिका में रहता आया है। लिंग को लेकर ऐसी धारणाओं ने समाज में दो ही तरह के लिंगधारियों को मान्यता प्रदान की है। ऐसे में जननांग में दोष एक बहुत बड़ा अभिशाप माना गया है।"[86] इनकी लिंग की पहचान को लेकर उपेक्षा का भाव बना हुआ रहता है। इनकी पहचान को स्वीकारने में हिचकिचाहट होती है यथा:- "वह इग्नू के फॉर्म और जनगणना वाले फॉर्म पर पुरूष विकल्प ही डालने पर जोर देता है। किंतु लेखिका यहाँ भूल गई है कि व्यक्ति की लैंगिक पहचान उसके समाज और संस्कृति से तय होती है अत: वैयक्तिक स्तर पर हिजड़ों की लैंगिक स्थिति के यथार्थ से मुँह मोड़ने से कुछ हासिल नहीं होने वाला और हिजड़ा समाज की तो पूरी लड़ाई ही इस बात को लेकर है कि वे जैसे है, उसी यथार्थ रूप में उन्हें समाज और कानून में पहचाना जाये।"[87] इस तरह से उनकों स्वीकारने से तो हर कोई डरता है। हर कोई चाहता तो है कि उनकों जेंडर के रूप में मान्यता मिले लेकिन अन्यों की श्रेणी में। इस प्रकार से लिंग की अवधारणा को समझना आवश्यक है।

[85] शीला डांगा, 'किन्नर गाथा', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2020) पृ.सं.73-74

[86] डॉ. रमाकांत राय, 'घर वापसी' का नया पोस्ट बॉक्स नं. 203', अनुसंधान अक्तू.-दिस. (2017) सं. शिगुप्ता नियाज, अलीगढ़

[87] प्रमोद मीना, 'किन्नर भी इंसान होता है', अनुसंधान-दिस.2017 सं.डॉ.शगुफ्ता नियाज पृ.सं.14

फ्रेंच भाषा विज्ञानी बजे के मतानुसार:- "लिंग का मूल मानव के मानस में व्युत्पन्न वर्गीकरण के उस प्रयास में निहित है, जो भाषा के साम्य के हेतु किया गया है।"[88] यहाँ विद्वानों का मंतव्य केवल भाषायी आधार पर लिंग के बारे में जानकारी देना है। 'मूलर' इसे व्याकरण का विभाजन मानते है तो 'बजे' नामक विद्वान इसे मानव मन में उत्पन्न वर्गीकरण को लिंग का आधार स्वीकारते है।

gender dysphoria:- "first lets look at the word 'dysphoria' according to Merriam Webster, dysphoria is a state of feeling very unhappy, uneasy, or dissatisfied', so, in the broadcast sense, gender dysphoria is when someone feels very unhappy, uneasy, or dissarisfied in relation to their gender. This is something many people experience including feeling a tension between how someone feels about their body compared to how society genders their body, or a conflict between how someone sees themselves in contrast with expacted gender roles or expectations।"[89]

अर्थात लिंग डायस्पोरा शब्द को देखे तो मरियम वेबस्टर के अनुसार बहुत दुखी, असहज या असंतुष्ट महसूस करने की स्थिति है। व्यापक अर्थों में लिंग डायस्पोरा तब होता है जब कोई अपने लिंग के सम्बन्ध में बहुत दुखी, असहज या असंतुष्ट महसूस करता है। यह कुछ लोगों का अनुभव है जिसमें किसी को अपने शरीर के बारे में कैसा महसूस होता है इसके मुकाबले तनाव महसूस करना शामिल है कि समाज उनके शरीर को कैसे सौंपता है या कोई व्यक्ति खुद को विपरीत लिंग भूमिकाओं या अपेक्षाओं के विपरीत कैसे देखता है। यही स्थिति किन्नर समुदाय के लोगों की भी देखी जा सकती है उन्हें अपनी identitiy को पहचानने में ही समय लग जाता है, वह शरीर यदि पुरूष धारण किये हुए होते हैं तो उनकी भावनाएँ स्त्री स्वभाव की और अधिक झुकती है।

भारतीय विद्वानों के अनुसार लिंग

---

[88] वही, पृ.सं.70

[89] https://www.genderspectrum.org/the-language-of-gender/

भारतीय विद्वानों ने भी लिंग व्यवस्था पर चिंतन किया। उनकी लिंग सम्बंधी कुछ परिभाषाएँ यहाँ प्रस्तुत की जा रही है। डॉ. जगदीश प्रसाद कौशिक कहते हैं कि:- "भाषाओं में लिंग से तात्पर्य शब्दों के पुरूषत्व, स्त्रीत्व आदि के निर्धारण से होता है। लिंग का शाब्दिक अर्थ चिह्न या लक्षण होता है, लिंग तीन प्रकार के होते हैं- पुर्लिंग, स्त्रीलिंग, नपुंसक लिंग। भारतीय आर्य परिवार की प्राचीन एवं मध्यकालीन भाषाओं में तीन लिंग प्रचलित है। किंतु आधुनिक भारतीय भाषाओं में मराठी और गुजराती को छोड़कर सभी में पुर्लिंग एवं स्त्रीलिंग इन दो ही लिंगों का विधान है।"[90] इस प्रकार स्पष्ट है कि यहाँ लिंग की अवधारणा को संक्षिप्त रूप में दिखाया गया है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों के मंतव्य को स्पष्ट किया गया है।

किन्नर समुदाय के लिंग निर्धारण को लेकर हमेशा असमंजस की स्थिति बनी रहती है। वे खुद तय नहीं कर पाते कि वे क्या है। इसलिए उनकों अदर्स की श्रेणी में रखा गया है। क्या? समाज में रहने के लिए, पहचान निर्धारण के लिए जेंडर निर्धारण होना आवश्यक है? अन्यथा पहचान नहीं मिल पाएगी। यही बात किन्नर समुदाय के लोगों पर भी लागू होती है। उनका जेंडर तय नहीं है कि वे स्त्री है अथवा पुरूष। इसी कारण भी उपेक्षा का शिकार बने रहते हैं। लेकिन अब माननीय न्यायालय द्वारा उन्हें थर्डजेंडर का दर्जा दे दिया गया है, इससे उनकों वैधानिक स्वीकृति तो मिल चुकी है बस अब सामाजिक स्वीकृति मिलना बाकी है।

2.5 धार्मिक आधार: प्राचीन साहित्य के आधार पर

(संस्कृत साहित्य-ऋग्वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, मनुस्मृति, अष्टाध्यायी, कामसूत्र, महाभारत, रामचरितमानस)

संस्कृत साहित्य में:-

हिंदी की भांति संस्कृत भाषा में दो लिंग नही अपितु तीन लिंग है स्त्रीलिंग, पुर्लिंग, नपुंसक लिंग। इस प्रकार इसमें तीसरे लिंग को भी मान्यता दी गई है। संस्कृत साहित्य में यहाँ किन्नर समुदाय

---

[90] डॉ.जगदीश प्रसाद कौशिक, 'व्यावहारिक हिंदी व्याकरण', पृ.सं.101

की स्थिति ठीक थी, उनकी अस्मिता और अस्तित्व को सामाजिक स्वीकार्य था। उनका यथा-कथा उल्लेख प्रसंगानुरूप किया जाता था जो समाज में उनकी उपस्थिति को प्रदर्शित करता था।

वैदिक साहित्य में लिंग की प्रकृति को तीन भागों में विभाजित किया गया है, प्रथम पुरूष, द्वितीय स्त्री तथा तीसरा तृतीय प्रकृति। तृतीय प्रकृति को नपुंसक कहा गया है।

ऋग्वेद में:-ऋग्वेद में थर्डजेंडर का उल्लेख मिलता है जब इंद्र अपने-आपको स्त्री के रूप में परिवर्तित कर लेते है। (ऋग्वेद 1.15.18)

दूसरी कथा में प्रयोगी के पुत्र ईश्वर द्वारा शापित होने के बाद स्त्री बन जाता है।

सूक्त 10 में भी नपुंसकतावश नियोग की अनुमति का उल्लेख मिलता है। यह सूक्त यम-यमी अर्थात पति-पत्नी का संवाद है। पति नपुंसक होने की स्थिति में अपनी पत्नी को नियोग की आज्ञा देता है। (ऋग्वेद सूक्त-10)

ब्राह्मण ग्रंथ:-

वेदों के बाद ब्राह्मण ग्रंथों का प्रचलन रहा। वेदों को आधार बनाकर इन ग्रंथों की रचना की गई। आर्यों के बढ़ते प्रभाव से यज्ञों और कर्मकांडों में वृद्धि होती गई और धर्म का स्वरूप अत्यंत जटिल हो गया। 'शतपथ ब्राह्मण' में अश्वमुखी मानव शरीर वाले, मानव सिर में गुरुड मुखी, मानव शरीरी और पशुपति, जबकि कुछेक ग्रन्थों में मत्स्य धड़ में महिलामुख का वर्णन है।

मत्स्य पुराण एवं वायु पुराण:-

पुराणों में किन्नर देवी को गायक कश्यप की संतान और हिमालयवासी बताया गया है। वे नृत्य-कला में प्रवीण थे गायन भी जानते थे। मत्स्य पुराण में इनका वास हिम्मवाण पर्वत बताया गया है तथा वायु पुराण के अनुसार किन्नर अश्वमुखों के पुत्र थे। उनके अनेक गण विद्यमान थे जो गायन और नृत्य में पारंगत थे। वायु पुराण में महानील पर्वत पर किन्नरों का निवास बताया गया है।

मनुस्मृति:-

मनुस्मृति के तृतीय अध्याय में भी किन्नरों के बारे में उल्लेख प्राप्त होता है।

"देन्यदानवयक्षाणा गन्धर्वोंगरक्षसाम। सुपर्ण किन्नराणाम च स्मृता बर्हिषदोत्रिजा: ।।"[91]

अर्थात अत्रि के पुत्र बर्हिषद दैत्य, दानव, यक्ष, गंदर्भ, नाग, राक्षस, सुपर्ण और किन्नरों के पितर है। अर्थात यहाँ पर किन्नर शब्द का उल्लेख हुआ है, इससे इस बात का पता चलता है कि उस समय पूर्व भी किन्नर शब्द प्रचलित था।

कामसूत्र-वात्सायन

कामसूत्र चौथी शताब्दी में लिखा गया जो जिसमें वात्सायन ने चार पुरूषार्थों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में 'काम' की महत्ता सिद्ध की है। 'कामसूत्र' पुस्तक को लेकर लोगों की गलत मानसिकता बनी हुई है, इसमें धर्म और अर्थ के साथ काम को भी मोक्ष प्राप्ति के प्रमुख साधन के रूप में बताया गया है। इस ग्रन्थ में किन्नरों के लिए 'तृतीय प्रकृति' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसमें एक स्थान पर इस प्रकार उल्लेख है:-

"भिन्नत्वातृतीया प्रकृति: पश्चिमित्येके।

तृतीया: प्रकृतिरनपुंसक: स्त्रीत्वपुनस्त्वाभावा भावादिभ्येते।।"[92]

अष्टाध्यायी-पाणिनि

प्राचीन भाषा विद्वान् पाणिनि ने अपनी पुस्तक 'अष्टाध्यायी' के 'खिल-भाग' में लिंगानुशासन के बारे में बताया, जिसमें स्त्री एवं किन्नर अथवा नपुंसक के भेद को इस प्रकार स्पष्ट किया है:-

"स्तनकेशवती स्त्री स्याल्लोमश: पुरूष: स्मृत:।

---

[91] मनुस्मृति, तृतीय अध्याय- 3.196

[92] वात्सायन, 'कामसूत्र', पंचम अध्याय, पृ.सं.173

उभयोरंतरं यच्च तदभावे नपुंसकम।।"[93]

अर्थात स्तन, केशवाली 'स्त्री' तथा रोएं वाला पुरूष कहा जाता है जिसमें इन दोनों के भेद का अभाव हो, वह नपुंसक अर्थात 'हिजड़ा' कहलाता है।

इसी प्रकार हमारे जैन और बौद्ध साहित्य में भी किन्नर अथवा नपुंसक का भेद किया गया है। जैन दर्शन में मनुष्य की आत्मा को बंधन में बांधने वाली नौ दुष्प्रवृतियों का उल्लेख किया गया है। जिसमें तीन वेदों का उल्लेख है अर्थात स्त्री वेद, पुरूष वेद तथा नपुंसक वेद। नपुंसक वेद उसे कहा गया है जिसमें स्त्री और पुरूष दोनों के साथ भोग की अभिलाषा उत्पन्न करने वाले मोहनीय कर्म को कहा जाता है। वही तीनों को लिंग के रूप में उल्लेखित किया गया है। अर्थात जिसमें गर्भ वृद्धिगत होता है, उसे स्त्री कहतें हैं। जो पुरु अर्थात श्रेष्ठजनों को जन्म देता है, उसे पुरूष कहा जाता है। तथा जिसका रूप न तो स्त्री हो और न ही पुरूष हो, उसे नपुंसक कहा जाता है। जैन धर्म में तृतीय भाव के रूप में नपुंसक का उल्लेख किया गया है।

बौद्ध साहित्य में सुत्तपिटक के अंतर्गत विमानवत्थु में किन्नर शब्द का प्रयोग हुआ है। जिसमें 'चंद्रभागानदीतीरे अहोसी किन्नरी तदा' जिसका तात्पर्य है कि चिनाब नदी के तट पर पर्वतीय भाग में उस समय किन्नर रहते थे।

इस प्रकार की कथाओं से पता चलता है कि भारत के साथ-साथ अन्य देशों की संस्कृति में इस प्रकार की अवधारणाएं व्याप्त थी। जिनका किन्नरों से किसी न किसी प्रकार से संबंध था। जब हिन्दू कथाओं में किन्नरता का उल्लेख किया जाता था तब केवल प्रसंगानुकूल यदा-कदा केवल कुछ उदाहरण देकर इनकी विवेचना की जाती थी और विस्तृत दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाता था लेकिन अन्य देशों की सभ्यताओं सुमेरियन, मेसापोटामिया आदि में इनका मिथ-कथाओं के रूप में विस्तृत उल्लेख मिलता हैं। प्राचीन साहित्य में इनका उल्लेख नृत्य-गायन, अभिनय, केश-सज्जा, गृह-सेवक आदि कार्यों में निपुण जाति के लिए किया जाता था।

[93] लिंगानुशासन, (शब्दों के लिंग ज्ञान करने का शास्त्र) संस्कृत भाषा...htm

धार्मिक ग्रंथों में भी किन्नरों का उल्लेख मिलता है। भारतीय संस्कृति और सभ्यता के वाहक दो महत्वपूर्ण ग्रंथ 'रामायण' और 'महाभारत' में भी इनका उल्लेख मिलता है। इस संदर्भ में देवदत्त पट्टनायक लिखते हैं कि:- "हिजड़े सिर्फ लिंग ही नहीं, बल्कि धर्म की सीमाओं को भी चुनौती देते हैं, क्योंकि इसमें कोई साधारण बात नहीं हैं कि कोई मुश्लिम नाम वाला हिजड़ा फ़ारसी (मुगल काल की दरबारी भाषा) के शब्द इस्तेमाल करते और सूफी पीरों के साथ-साथ हिंदू देवियों की पूजा करते हुए मिल जाए।"[94] इस तरह से धर्म का इन पर कोई बंधन नहीं है। जिस प्रकार से अन्य मनुष्य-जाति धर्म के आधार पर विभाजित रहती है। इनकी ऐसी कोई मानसिकता नहीं रहती। यह लोग धर्म के नाम पर स्वतंत्र रहते हैं। 'रामायण' और 'महाभारत' में इनकों सम्मानीय दृष्टि से देखा जाता था। हमारे धार्मिक ग्रंथों में इनका उल्लेख यथा-कथा मिलता है। जो आज की तरह उपहास के पात्र नहीं थे।

'रामचरितमानस' में श्रीराम के आशीर्वचन मात्र से ही उनकों युगों-युगों तक जग में दुआएं देने का वरदान मिला। महाभारत में अर्जुन ने वृहन्नला के रूप में अपने-आपको छद्म वेश में रखा। इस प्रकार इन धार्मिक ग्रंथों के आधार पर पता लगाया जा सकता है कि किन्नर तत्काल उत्पन्न होने वाला समुदाय नहीं है अपितु इनका अस्तित्व प्राचीन काल से ही चला आ रहा था। हो सकता है उस समय संख्या में यह कम हो लेकिन इनका अस्तित्व अवश्य था।

रामचरितमानस के आधार पर

किन्नरों के उद्भव और अतीत के संबंध में अनेक अंतर्कथाएँ प्रचलित है। इनमें सर्वाधिक प्रचलित कथा भगवान राम के वनगमन से सम्बंधित है। किन्नरों की प्रत्यक्ष उपस्थिति के प्रमाण वाल्मीकि की 'रामायण' और तुलसीदास जी की 'रामचरित मानस में भी मिलते हैं। जब श्रीराम अपने पिता की आज्ञानुसार चौदह वर्ष के वनवास हेतु वनागमन करते है तो सम्पूर्ण अयोध्यावासी उनके साथ सरयू नदी तक आये लेकिन राम ने सभी के साथ चलने की अनुनय-विनय अस्वीकार करते हुए सभी नर-नारियों को वापस जाने को कहा। लेकिन उन्होंने हिजड़ों के लिए विशेष रूप से नहीं कहा इसीलिए वे वहीं रूके रहे जब वनवास पूर्ण कर भगवान राम वापस अयोध्या जा रहे थे तो

[94] देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, पृ.सं.40

उन्होंने इन हिजड़ों को मार्ग में ही चित्रकूट में अपनी प्रतीक्षा करते हुए पाया। प्रभु द्वारा उनके यहाँ रूकने का कारण पूछा तो इन निर्मल किन्नरों ने बताया की जब हम भरत जी के साथ आपको मनाने आये थे तब आपने कहा था:-

"कथा जोगु करि विनय प्रनामा, बिदा किए सब सानुज रामा।

नारि पुरूष लघु मध्य बड़ेरे, सब सनमानी कृपानिधि फेरे।।"[95]

इसी प्रकार किन्नरों का नाचते-गाते हुए भी उल्लेख किया गया है

"नभ दुंदुभी बाजहि विपुल, गंधर्व किन्नर गावहिं

नचही अपछरा वृन्द परमानंद सुर मुनि पावहीं।।"[96]

अर्थात श्रीराम के चौदह वर्ष बाद अयोध्या आगमन पर आकाश में बहुत से नगाड़े बज रहे हैं गंधर्व और किन्नर गा रहे हैं। अप्सराओं के झुण्ड के झुण्ड नाच रहे है। इस चौपाई में किन्नर शब्द का प्रयोग किया गया है, जिससे यह पता चलता है कि उस समय भी ख़ुशी के मौके पर किन्नर नाच-गाने और बधाई देने के लिए उपस्थित होते थे, राम के वनवास से पुन: अयोध्या आगमन के अवसर पर वे अपना हर्ष प्रकट कर रहे हैं। कहते हैं कि प्रभु राम हिजड़ों की इस निश्छल और नि:स्वार्थ भावना से अत्यधिक प्रभावित हुए और उन्होंने प्रसन्न होकर स्त्रियों को वरदान दिया कि कलयुग में तुम लोग राज करोगे, कहते हैं कि भगवान राम ने इन्हें यह भी वरदान दिया कि तुम जिसे अपना आशीर्वाद दोगे, उसका कभी अनिष्ट नहीं होगा; इसीलिए शुभ अवसरों पर गृहस्थ इनका स्वागत करते है और इन्हें मुहमांगी रकम देकर विदा करते है।

अनेक ऐसे दृष्टान्त है जिनसे प्राचीन काल में हिजड़ों का अस्तित्व प्रमाणित होता है। इस प्रकार श्रीराम के द्वारा उन्हें आशीर्वाद दिया गया और कलयुग में इनकों पूजे जाने का आशीर्वाद मिला लेकिन कलयुग में इनकी स्थिति और भी बद्तर हो गई, समाज का दुराभाव इनकों सहन करना पड़ा।

---

[95] रामचरितमानस, 'अयोध्याकाण्ड' 398/4

[96] रामचरितमानस, 'उत्तरकांड', नह्वापरायण, आठवा विश्राम (सप्तसोपान)

महाभारत के आधार पर

महाभारत की एक अन्य कथा के अनुसार एक बार अर्जुन को द्रोपदी विवाह की एक शर्त के उल्लंघन के कारण इन्द्रप्रस्थ से निष्कासित करके एक साल की तीर्थयात्रा पर भेजा जाता है। तीर्थाटन करते हुए अर्जुन उतर-पूर्व भारत में जाते है जहाँ उनकी मुलाक़ात एक विधवा नाम राजकुमारी अलूपी से होती है। दोनों एक-दूसरे के प्यार में पड़कर विवाह कर लेते है। कुछ समय बाद अलूपी एक पुत्र को जन्म देती है जिसका नाम अरावन रखा जाता है। कुछ समय पश्चात अर्जुन उन दोनों को ही छोड़कर अपनी आगे की यात्रा पर निकल जाता है। फिर पांडवों को युद्ध में एक नर-बलि हेतु ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता होती है जो राजकुमार हो। तब बलिदान के लिए अरावन आगे आता है लेकिन अरावन ने यह शर्त रखी कि बलि देने से पहले वह एक सुंदर स्त्री से विवाह करने की इच्छा रखता है किंतु कोई भी कन्या एक रात के लिए सुहागिन बन विधवा होने का श्राप क्यों झेले? तब भगवान श्रीकृष्ण मोहिनी का रूप धारण करके अरावन से विवाह करते हैं और इस समस्या का समाधान करते है।

महाभारत में एक दूसरा प्रसंग शिखंडी का मिलता है। भीष्म को शिखंडी द्वारा ही मारा जाता है अंबा ने द्रुपद के राजा की पुत्री के रूप में जन्म लिया जो शिखंडी कहलायी। उसका जन्म एक कन्या के रूप में होता है। किंतु उसके जन्म के समय यह आकाशवाणी हुई कि उसका लालन-पालन एक पुत्री की तरह नहीं वरन एक पुत्र की भांति किया जाए। इसलिए यह शरीर से तो मुख्य रूप से पुरूष था लेकिन स्वभाव से स्त्री थी। इस कारण अर्जुन शिखंडी की सहायता और भीष्म द्वारा पूर्व में किये गये अपमान का बदला लेने हेतु अर्जुन शिखंडी की सहायता से भीष्म पितामह जो कोरवों की और से युद्ध कर रहे थे उनका वध किया और अर्जुन ने भीष्म के सामने शिखंडी को खड़ा किया। भीष्म एक स्त्री पर प्रहार नहीं कर सकते थे। इसलिए भीष्म मारे गये। अंबा ने ही शिखंडी के रूप में जन्म लिया था। शिखंडी शब्द का अर्थ है- जिसके मोर की तरह कलगीदार बाल हो। यह ईश्वर के कई नामों में से एक है। शिव और विष्णु के हजार नामों का एक हिस्सा है। महाभारत में पांडव भीष्म पितामह को पराजित नहीं कर पाते है तब वे उन्हीं से इसका उपाय पूछते है तो वे इस प्रकार कहते हैं-

"शिखंडी समरावर्षी सुरश्च स्त्रमितिंजय ऋषिकुमार,

यथा भवत्स्त्री पूर्व पश्चात पुनस्तं समागता।"[97]

अर्थात तुम्हारी सेना में जो महारथी द्रुपद पुत्र प्राय: शत्रुओं को जीता करता है वह पहले स्त्री था और पीछे से पुरूष हो गया है। शिखंडी जिसके कारण भीष्म का वध हुआ था। अर्जुन ने वृहन्नला नामक हिजड़े का वेष धरकर विराटनगर में अज्ञातवास का अंतिम वर्ष पूर्ण किया। गुजरात के किन्नर अर्जुन के वृहन्नला रूप की पूजा करते है और यहाँ के बहुचर देवी के मंदिर में किन्नर बनने के इच्छुक लोग आते रहते है। बहुचर देवी किन्नरों की इष्ट है जिसका वाहन मुर्गी है। ये लोग खप्पर धारी देवी और शिव के अर्धनारीश्वर रूप की भी उपासना करते है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि रामचरितमानस और महाभारत जैसे धार्मिक ग्रंथों में भी किन्नरों का उल्लेख मिलता है। इन ग्रन्थों में इनकी स्थिति ठीक थी, किसी प्रकार का दुराभाव इनके प्रति नहीं था, मध्यकाल तक भी इनकी स्थिति ठीक रही किंतु धीरे-धीरे आधुनिक काल तक आते आते इनकी स्थिति परिवर्तित होने लगी और संख्या में भी इजाफा होने लगा और इनकी अवहेलना की जाने लगी। इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाने लगा।

2.6 मध्यकालीन आधार

मध्यकालीन भारत में हरमों के साथ किन्नरों का संबंध देखने को मिलता है। मुस्लिम शासन से ही भारत में हरमों की व्यवस्था का सूत्रपात हुआ। 'हरम' अरबी भाषा से लिया गया शब्द है। हरमों में बहुत सारी स्त्रियों को रखा जाता था, जिनकी देखरेख और सुरक्षा के लिए किन्नरों को रखा जाता था। ताकि स्त्रियों पर कोई कुदृष्टि ना डाले। यदि पुरूषों को हरम में रखा जाता तो स्त्रियों के लिए खतरा था, ऐसा मुस्लिम शासकों का मानना था। खिलजी वंश के शासक अलाउद्दीन खिलजी के हरम में भी किन्नर होते थे, जिन्हें खोजासरा, खोजा, क्लीव आदि शब्दों से संबोधित किया जाता था। अधिकांशत: इतिहासकार अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति मालिक काफूर को किन्नर मानते है,

[97] महाभारत-भीष्मपर्व (79 वाँ सर्ग) पृ.सं.453 श्लोक-29

वह किन्नर था और अलाउद्दीन खिलजी पर पूर्णतया आसक्त था। कहते हैं कि उनके आपसी संबंध थे; नहीं तो वह उसको सेनापति के पद पर नहीं बिठाता।

गुजरात में सुल्तान मुज्जफर के समय मुमित-उल-मुल्क नामक किन्नर था जो कोतवाल का कार्य करता था। जहांगीर के समय भी किन्नरों का उल्लेख मिलता है इसके समय इफ्तिखार खान नामक किन्नर था। इतिहास में किन्नरों की भूमिका को देखते हुए हम यह पाते है कि वे रक्षक का कार्य करते थे यथा:- “इतिहास में दर्ज किन्नरों की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक स्थिति का मूल्यांकन करें तो हम पाते है कि इनकी सामाजिक उपयोगिता राजा-महाराजाओं व नवाबों के हरमों तक थी। मुगलकाल से पहले इनका अलग सामाजिक अस्तित्व दिखाई नहीं देता है। लेकिन मुख्यधारा के लोगों में व्याप्त परम्परागत नकारात्मक धारणाएँ, सामाजिक उपेक्षा आदि के कारण आज इक्कीसवी सदी में भी उनकी दशा ज्यों कि त्यों बनी हुई है।”[98] स्वयं किन्नर भी अपने-आपको न तो आदमी और न ही औरत के रूप में स्वीकारते हैं बल्कि आमतौर पर हिजड़ा एक पुरूष के शरीर में मानसिक रूप से एक महिला की अवस्थिति होता है। सामान्यत: हिजड़े पुरूष शरीर में क्रिया विज्ञान के साथ पैदा होते है, स्त्रीलिंग भूमिकाओं को अपनाते है और महिलाओं के वस्त्र पहनते है, साज श्रृंगार करते है और एक महिला की तरह ही अन्य कार्यों को भी करते है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि मध्यकाल जो विदेशी आक्रान्ताओं का काल रहा है उसमें किन्नरों की स्थिति रक्षक के रूप में मानी जाती थी। फिर चाहे वह अलाउद्दीन खिलजी का समय हो अथवा जहांगीर का समय हो कुछ प्रसंगों में किन्नरों का उल्लेख मिलता है। वे अपनी रानियों की सुरक्षा की दृष्टि से इनकी नियुक्ति करते थे ताकि कोई उन पर गलत दृष्टि ना डाल सकें। युद्ध अभियान में जाते समय हरम में रानियों को अकेले रहना पड़ता था इसलिए किन्नर को उनके पास रखा जाता था। मलिक काफूर भी एक हिजड़ा ही था, वह अलाउद्दीन का प्रिय सेनापति था।

---

[98] डॉ. शशिकांत, लैंगिक विकलांगता और भारतीय समाज, सं. विजेंद्र प्रताप सिंह- भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श, अमन प्रकाशन कानपुर (2016) पृ.सं.89

2.7 आधुनिक परिप्रेक्ष्य

लोक और शास्त्रों में हिजड़ों की उपस्थिति पर विचार करें और देखें तो यह कहना गलत न होगा कि लोक से लेकर शास्त्र तक तृतीय प्रकृति के लोगों की उपस्थिति तो है लेकिन हमारी संस्कृति की वर्चस्ववादी अवधारणा सभी अस्मिताओं- स्त्री, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक, से इतर और तृतीय प्रकृति का किसी न किसी रूप में दमन ही करती आ रही है और जिसका उनको बिलकुल भी एहसास नहीं होता है और होता भी तो वे अपने दंभ में मानना नहीं चाहते कि यह भी इंसान है। तृतीय प्रकृति के मनुष्य को कभी 'जैविक गड़बड़ी' के रूप में तो कभी सामाजिक बुराई के रूप में देखा जाता है। भारतीय समाज एवं सत्ता व्यवस्था की विशेषता यह है कि वह दलित, स्त्री, आदिवासी, अल्पसंख्यक, इतर सक्षम और तृतीय प्रकृति सभी की क्षमताओं का अवमूल्यन करके, उनको एक दूसरे से हींन दिखाकर सदियों से किए जा रहे सामाजिक व सत्ताजनित अन्याय को ढंकने में सफल होती रही है।

व्यक्तिगत एवं जातिवाचक अस्तित्ववादी संघर्षों के वर्तमान दौर में प्राचीन तंत्र एवं ढोंगी लोगों की समझ को विकसित करते हुए वस्तुस्थिति को स्वीकार कराने का समय आ गया है। आज जिस भारतीयता की बात चहुँ और हो रही है वह वंचित वर्गों की अस्मिताओं के मानवीय अधिकारों को सुनिश्चित किए बगैर पूरी हो ऐसा संभव नहीं हो सकता है। अस्मिताओं के विस्फोट के समय में जब हर समुदाय बौद्धिक स्तर पर विशेष रूप से सक्रिय होने लगा है, ऐसे में तमाम वंचितों की संवेदनाओं को उठाया जा रहा है, परन्तु कुछ हिजड़ा समुदाय की संवेदनाओं को उतनी तीव्रता के साथ उठाया नहीं जा रहा है।

प्रारम्भ में खुशवंत सिंह द्वारा उपन्यास 'दिल्ली' में भागमती के माध्यम से दिल्ली के राजनीतिक और तथा-कथित सांस्कृतिक गलियारों की झलक दिखलाई गई। अंग्रेजी लेखिका कमलादास ने अपने कथा-संग्रह 'हिजड़ा' में चांदनी के माध्यम से हिजड़ों की दुनिया से जनमानस को अवगत कराया। प्रसिद्ध नाटककार महेश दत्तानी द्वारा लिखित 'सेवेन स्टेप्स अराउंड द फायर' में हिजड़ों की संवेदना को बहुत ही सशक्त ढंग से प्रस्तुत किया गया। अंग्रेजी में और भी कई पुस्तकें इस संवेदना पर आई हैं।

समकालीन भारतीय साहित्य में विविध विधाओं में विमर्शमूलक चर्चाएँ होती रही। लेकिन थर्डजेंडर पर अब तक कम ही दृष्टि रही है। धीरे-धीरे साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन आ रहा है और इनसे जुड़े विषयों पर भी खुलकर चर्चाएँ की जा रही है। अंग्रेजी लेखिका कमलादास ने अपने कथा-संग्रह 'हिजड़ा' में दम तोड़ती हुई चांदनी को दिखाया है। महेश दत्तानी ने अपने नाटक 'सेवेन स्टेप्स अराउंड द फायर' से किन्नर विमर्श में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

किन्नर साहित्य को लेकर आधुनिक परिप्रेक्ष्य की बात की जाए तो यह अब काफी विकसित अवस्था में आ चुका है। पौराणिक काल में इनका यत्र-तत्र उल्लेख मिलता हैं लेकिन आधुनिक समय में समय और समाज अपने अधिकारों को लेकर जागरूक होने लग गया है। इसलिए वर्तमान समय में इस विषय पर लिखा जा रहा है और चर्चा-परिचर्चा का भी विषय बना हुआ है। आधुनिक समय में तमिल, मराठी, अंग्रेजी, हिंदी, आदि भाषाओं में साहित्य रचा जा रहा है। जिसका विवरण इस प्रकार है:-

2.7.1 तमिल साहित्य में किन्नर समुदाय

तमिल साहित्य में इसकी उपस्थिति सबसे पहले हम देख सकते है जब 1994 में सु- सामुथीराम द्वारा लिखित 'वादामल्ली' उपन्यास आया, जिसमें 'अरावाणी समुदाय' अर्थात हिजड़ों के समुदाय की समस्याओं को उठाया गया। इसी कड़ी में हिजड़ा कार्यकर्ता ए. रेवती ने हिजड़ों के मुद्दे एवं लैंगिक राजनीति पर तमिल भाषा में ' उनारवुम उरुवामुन' अर्थात समूचे देह का अनुभव' नाम से उपन्यास लिखा, जिसे प्राथमिक अध्ययन के रूप में जेंडर स्टडीज के रूप में आधार ग्रन्थ माना जाता है। रेवती ने क्रांतिकारी लेखन करते हुए स्वयं के जैसे हिजड़ों के प्रति सामाजिक और राजनीतिक बदलाव की बात की है।

इसी क्रम में उन्होंने तमिल और कन्नड़ भाषा में एक मंचनाट्य लिखा:- 'द ट्रूथ अबाउट मी: ए हिजड़ा लाइफ स्टोरी'। यह मंचनाट्य यथार्थवादी समझ के कारण इतना प्रसिद्ध और आवश्यक समझा जाने लगा कि इसे अमेरिकन कॉलेज, मदुरै के पाठ्यक्रम में आवश्यक विषय के रूप में शामिल कर लिया गया। प्रिया बाबू ने "नान सारवानाम अल्ला" (2007) में लिखा तो प्रथम

आत्मकथा लिखने का श्रेय विद्या को जाता है, जिन्होंने (2008) में 'आई.एम.विद्या' नाम से अपनी आत्मकथा लिखी।

लगभग तीस हजार हिजड़ों की जनसंख्याँ वाले तमिल समाज में लेखन की यह परम्परा हमें सोचने के लिए विवश करती है, क्योंकि इसका अभिप्राय वहाँ की मानसिकता में बदलाव की बयार है। हिजड़े अपनी शिक्षा और अधिकार के प्रति सजग है तभी तो पाठ्यक्रम से लेकर कोंफ्रेंस तक में अपनी जगह निश्चित कर चुके है। भोपाल में मेयर से लेकर पश्चिम बंगाल के स्कूल प्राचार्य तक की राह सुनिश्चित कर पाना एक दशक पहले तक सोच पाना कठिन था लेकिन फिल्मों की दुनिया, मीडिया, साहित्य के माध्यम से अब हमें सोचना होगा कि जब वृद्ध आश्रम, अनाथाश्रम, अंधविद्यालय के लिए सरकार और समाज सहयोग प्रदान कर रहे है तब ट्रांसजेंडर लोगों के लिए हम चिकित्सकीय सुविधा, आवास तथा उपजीविका के साधनों की व्यवस्था क्यों नहीं कर पा रहे है। रचनात्मकता और सृजनात्मकता से परे उन्हें दुष्कर जीवन जीने के लिए धकेल रहे है। तमिलनाडु के कुवागम मेले में अरावन से एक रात की शादी करते हैं। पूरे कुवागम में सत्रह दिनों तक उत्सव जैसा माहौल रहता है। देश के अलग-अलग जगहों से हिजड़े आते हैं। अरावन की कथा तमिल में मिलती है। कृष्ण को पूर्ण पुरूष के रूप में माना जाता है। प्रत्येक वर्ष पॉंडिचेरी के निकट कुवागम नामक गाँव में अरावन की कथा का मंचन किया जाता है। इसका संबंध वहाँ के ग्रामदेवता कूथनदावर के साथ लिया जाता हैं।

इस प्रकार से तमिल साहित्य में किन्नर समुदाय पर लेखन का कार्य सन् 1994 से माना जाता है। फिर रेवती, विद्या आदि ने स्वयं अपनी आत्मकथाएं लिखकर अपने वास्तविक जीवन का चित्र प्रस्तुत किया और अपने जीवन की विभीषिकाओं के माध्यम से अपने समुदाय को प्रस्तुत किया। तमिलनाडू के अरावन मंदिर को लेकर भी विशेष रूप से किन्नरों के लिए तमिलनाडू का महत्त्व है।

2.7.2 मराठी साहित्य में थर्ड जेंडर

अन्य भाषा साहित्य की भांति मराठी भाषा में भी किन्नर साहित्य की रचना हुई है। मराठी लेखक लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी स्वयं किन्नर है तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता है जो किन्नरों के उत्थान हेतु कार्य करती है। वह कथक नृत्यांगना भी है। 2012 में उनकी पुस्तक 'मी हिजड़ा मी लक्ष्मी'

प्रकाश में आई जो मूल मराठी भाषा में लिखी गई। जिसका अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। वह सयुंक्त राष्ट्र संघ में एशिया पैसिफिक का प्रतिनिधित्व करने वाली प्रथम ट्रांसपर्सन है। वह टोरेंटो आदि देशों में किन्नर समाज का प्रतिनिधित्त्व कर चुकी है। एक ऐसा नाम जो जीवन संघर्ष की गाथा कहता है स्वयं की और अपने माध्यम से अपने समुदाय की। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी टीवी शो बिगबॉस सीजन-5 की प्रतिभागी भी रह चुकी है, 'सच का सामना', 'दस का दम', राज पिछले जन्म का' आदि में भी आ चुकी है। अपने समुदाय के अधिकारों के लिए लड़ने वाली असाधारण व्यक्तित्व की धनी लक्ष्मी को अपने हिजड़ा होने पर गर्व है। वह एक सामाजिक कार्यकर्त्ता होने के साथ-साथ भरतनाट्यम लेखिका और नृत्यांगना भी है।

मराठी भाषा में किन्नर जीवन पर आधारित साहित्य नब्बे के दशक में मिलता है। मी राजन गवस कृत 'चौडक' (1985) 'भंडारभोग' (1988), चारूता सागर कृत 'दर्शन', साधना झाड़बुके कृत 'भाकरीसाठी चक्री' (2007) पारू मदन नाइक कृत 'मी का नाही' (2011) स्वाती चांदोरकर कृत 'हिजडे'(2017) विजय तेंदुलकर का एक नाटक 'एका मित्राची गोष्ट' आदि रचनाएँ लिखी गई। सिनेमा के क्षेत्र में भी मराठी में किन्नरों पर आधारित फिल्में बनी हैं जैसे- 'नटरंग', 'जोगवा', 'आम्ही का तीसरे', 'नटसम्राट' जैसी फ़िल्में बनी हैं।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि मराठी साहित्य में किन्नर समुदाय को अभिव्यक्ति देने का कार्य लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के द्वारा किया गया। अपनी आत्मकथा के माध्यम से उन्होंने हिजड़ा समुदाय में जागृति पैदा करने का कार्य किया। 'मी लक्ष्मी मी हिजड़ा' का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। इसके अलावा और भी कई रचनाएँ प्रकाश में आयी 'मी का नाही', 'एका मित्राची गोष्ट' आदि ने किन्नर जीवन को प्रकाश में लाने का कार्य किया।

2.7.3 अंग्रेजी साहित्य में थर्ड जेंडर

अंग्रेजी साहित्य को दुनिया में सबसे अधिक प्रबुद्धशील और समृद्ध साहित्य माना जाता है। अंग्रेजी साहित्यकार देश-विदेश में अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाते रहे हैं। अपने साहित्य के दम पर पूरी दुनिया में अंग्रेजी साहित्य का वर्चस्व स्थापित है इस बात को नकारा नहीं जा सकता। किन्नरों के सम्बंध में साहित्य की यदि बात की जाए तो अंग्रेजी सहित्य ही एक ऐसा साहित्य है जिसने

सर्वप्रथम इन पर लिखने का बीड़ा उठाया। अंग्रेजी में हिजड़ा समुदाय पर साहित्य लिखा गया जिसका अनेक भाषाओं में अनुवाद भी किया गया।

‘invisibles: a tale of eunuchs in india’- jia jafri

‘neither man, nor women: the hijras of india’- serena nanda

‘changing sex bending gender- elisan shaw

‘the female eunuch’- garmen greer

‘the autobiography of a sex worker’- nalini jamila

अमेरिकी रचनाकार डेजी ब्रोंन्क्स भी थर्ड जेंडर पर लिखतें हैं। उनकी कविता ‘फेमिलियर वेजल’ में वे किन्नर समुदाय की व्यथा-कथा इस प्रकार अभियक्त करते हैं:-

“मैं भूल गया यह मेरा शरीर है

मैं अपनी छाती और मुस्कान देखता हूँ

मेरी बाँह

ये मेरे ही हैं

कभी-कभी गिनने की कोशिश करता हूँ

मैं अपने पेट की तरफ देखता हूँ

और लंबे समय तक

सोचने का प्रयास नहीं करता

लेकिन आश्चर्यचकित हो जाता हूँ कि

मेरे पैर भूल गए हैं कि वे मेरे हैं

मैं भूल जाता हूँ कि मेरे हाथ कहाँ हैं।

सब कुछ भूलने पर भी

मुझे मिलता है अपने शरीर

मुझे दिखाई देती है अपने शरीर पर असमानता।''[99]

इस प्रकार से कवि किन्नरों की विवशता प्रकट करना चाहता है। जो असमानता उनको स्वयं में दिखाई पड़ती है वे अपने-आप से और दूसरों से प्रश्न करते हैं कि 'मैं कौन हूँ', मेरी पहचान क्या है? कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में पहली बार इस बात की पहल की गई कि स्त्री-पुरूष के शौचालय के साथ-साथ एक अलग से ट्रांसजेंडर शौचालय की भी व्यवस्था की जाए।

सन् 1996 में विसेंट पब्लिशर ने न्यूयार्क में जन्मी जिया जाफरी की किन्नर समुदाय पर लिखी गई पुस्तक 'द इनविजिबल: द टेल युनच ऑफ़ इंडिया' प्रकाशित हुई। इसमें इन्होंने अनिता नाम की एक थर्ड जेंडर के जीवन के बारे में बताया है जिसे उसके माता-पिता थर्ड जेंडर समुदाय को सौंप देते हैं, जहाँ से उसकी त्रासद कथा आरंभ होती है। अमेरिकी लेखक हिल्टन एल्स ने जिया जाफरी की इस पुस्तक के बारे में लिखा है कि ''दिलचस्प और इससे पहले कभी नहीं लिखी गई पुस्तक कहा' अमेरिका की ही लेखिका सिग्रिड नुनेज ने इसे 'इतिहास, एन्थ्रोपोलोजी, यात्राओं, संस्मरणों के एक गुलदस्तें जैसी दिलचस्प पुस्तक' कहा।''[100] इसमें भारत के उस समुदाय की कथा है जो समाज में रहते हुए भी समाज के परिदृश्य में समाहित नहीं हो पाता हैं। उसका होना या न होना कोई अर्थ नहीं रखता।

इस प्रकार से अंग्रेजी साहित्य के माध्यम से किन्नर समुदाय की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है, अंग्रेजी भाषा में इनसे संबंधित विषयों पर शोधकार्य हुए, कई आलेख प्रकाशित हुए जिसके माध्यम से जनमानस में चेतना प्रकट हुई। जिया जाफरी, सेरेना नंदा, जर्मन ग्रियर आदि ने किन्नरों पर

[99] डैंजी ब्रोंक्स, फेमिलियर वेजल, विकिपीडिया से-

[100] शरद सिंह, 'थर्ड जेंडर विमर्श और प्रमुख हिंदीयेत्तर कृतियां, पृ.स.113

लिखकर इस विषय के बारे में हमें अवगत कराने का प्रयास किया कि ऐसा भी एक समुदाय होता है, जो समाज में रहकर भी समाज से कटा-कटा अपने को महसूस करता है।

2.7.4 हिंदी साहित्य और किन्नर विमर्श

साहित्य मनुष्य मात्र के प्रति सामाजिक जीवन में घट रही घटनाओं या जो हाशिये का समाज है उसके प्रति भावना उत्पन्न करने का कार्य करता है; यदि साहित्य में इस प्रकार की क्षमता है तभी वह साहित्य कहा जायेगा। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की साहित्य की परिभाषा यहाँ सही प्रतीत होती है "जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गतिहीनता, परमुखोंपेक्षिता से न बचा सके, जो उसकी आत्मा को तेजोदिप्त न कर सके। उसे परदुःखकातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है...।"[101] साहित्य की सबसे पहली आवश्यक शर्त है संवेदनशील होना, वह संवेदनशील होगा तभी जनता की चित्तवृतियों को बखूबी समझ पायेगा। यहाँ किन्नरों की संवेदना इस प्रकार प्रकट की गई है:-

"कंगन है मेरे हाथों में, पर कलाई में ताकत है पुरूषों से अधिक।

आवाज है मेरी पुरुषों सी, पर मन मेरा कोमल है पुरुषों से अधिक।"[102]

साहित्यिक दृष्टिकोणों से आज अनेक विमर्शों की चर्चा की जा रही है और समाज के अनेक उपेक्षित वर्गों पर साहित्य में चिंतन हो रहा है किंतु लिंग निरपेक्ष समाज बहिष्कृत किन्नर समुदाय के विषय में कोई बड़ी चर्चा नहीं दिख रही है। साहित्य के अतीत पर नजर दौड़ाएं तो हम पाते है कि 'उग्र' की कुछ रचनाओं में लौंडेबाजों का जिक्र आता है, वे यही किन्नर है। इनसे लेकर अब तक इस विषय से जुड़े मुद्दों पर साहित्य में चुप्पी छाई रही। कई सारे विमर्श आये और गये। इस चुप्पी को नीरजा माधव ने तोड़ा है। अब तो इस विषय पर जोरों-सोरों से चर्चा होने लगी। लेकिन हिंदी साहित्य और समाज की मानसिकता में अभी भी किन्नर विमर्श बेहद अपरिपक्व तथा पूर्वाग्रह की अवस्था में है, समाज की प्रगतिशील वैचारिकी अभी इन्हें स्वीकारने में हिचक रही है और फिर भी यह तो मानना ही होगा कि दिन प्रतिदिन खुल रहे और विकसित हो रहे समाज ने अब इन्हें थोड़ा सा स्पेस

---

[101] हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली भाग-10, 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है', पृ.सं.24

[102] भगवती, 'किन्नर और हिंदी साहित्य', हस्ताक्षर, अंक-51 सं. के.पी.अनमोल सांचौर, पृ.सं. 34

देना शुरू कर दिया है। किन्नर विमर्श शुद्ध मानवतावादी विमर्श है जिनमें जाति-पाति, धर्म से इतर उन लोगों की चर्चा है जिनका न कोई धर्म है और न ही कोई जाति।

वे न स्त्री है और न पुरूष। जो अपने घर-परिवार, रिश्तेदारों, नातेदारी आदि से निकाल दिए गयें हैं फिर भी अपना घर-परिवार त्यागकर दूसरों को खुशियाँ बांटने में लगे हुए हैं। इस विषय पर कीर्ति मलिक अपने आलेख में लिखती हैं कि:- ‘‘स्त्रीकाल में प्रकाशित ‘डिसेंट साहू’ द्वारा लिए गये साक्षात्कार में छत्तीसगढ़ की रवीना बरिहा कहती है थर्डजेंडर के प्रति हम लोग समाज की मिली-जुली प्रतिक्रिया देखते हैं। समाज के जिन लोगों ने थर्डजेंडर किन्नरों के साथ पहले कभी अथवा लगातार मेलजोल रहा है, वे बहुत जल्दी हम लोगों को स्वीकार करते हैं। हमसे अच्छा व्यवहार करते हैं। कई बार हम लोगों को एक दैवीय रूप में देखा जाता है, लेकिन समाज का एक बड़ा तबका ऐसा है, जो अपने कुछ पूर्वाग्रहों के कारण हमसे दूर भागता है।’’[103] समाज में इनके प्रति किये गये व्यवहार के प्रति हमारी मानसिकता झलकती है जो कई बार हमें सामाजिक से असामाजिक बना देती है। शरीर के किसी भी अंग के भंग होने पर क्या हम उसे दूर कर देते हैं अथवा कोई भी विकार उत्पन्न होने पर हम उस अंग को काटकर फेंक देते हैं क्या? यही प्रश्न वह बार-बार करता है। अपने समुदाय से तथा स्वयं से।

उन्हें सामाजिक बन्धनों के कारण घर से निकाल दिया जाता है। इन्हें एक विशेष संबोधन देकर पुकारा जाता है ‘बीच के लोग’। थर्डजेंडर को सामाजिक समानता दिलाने में साहित्य की महती भूमिका हो सकती है। साहित्य के माध्यम से ये अपने अस्तित्व की लड़ाई जारी रखना चाहते हैं। साहित्य सामाजिक स्वीकार्यता को अनिवार्य बनाने का कार्य करता है, वह जन-मानस में उपेक्षित वर्ग के प्रति समानता का भाव भरने की चेष्टा करता है। साहित्य मनुष्य का मार्गदर्शन करने का कार्य करता है, उसकी सामाजिकता के मूल में समानता का तत्व छिपा हुआ रहता है।

विमर्श शब्द की भी अपनी एक अलग परिभाषा है, क्या कोई विमर्श चलाने मात्र से हम किसी समस्या का निदान ढूढ सकते है? क्या विमर्श के बगैर समस्या को सामने नहीं लाया जा सकता? इस प्रकार के तरह-तरह के सवाल मन में उठते हैं। किसी भी तथ्यों की खोज से संबंधित

---

[103] कीर्ति मलिक, साहित्य में किन्नर विमर्श की आवश्यकता, ‘सरस्वती’ पृ.सं.70

पूर्ण जानकारी के द्वारा निर्णय पर पहुँचने से पहले सावधानी, सतर्कता के साथ तथ्यों का विस्तृत अध्ययन कर विचार-विवेचन करना ही विमर्श कहलाता है। हिंदी साहित्य में जो समाज हाशिये पर था उसके लिए लेखन कार्य किया गया, उस लेखन में लेखकों की मूल दृष्टि उस समाज की पीड़ा को प्रकट करने की रही और उसे ही विमर्श का नाम दिया गया।

भारतीय समाज में तीसरा लिंग उपेक्षित ही रहा है, इसी कारण से साहित्य में भी यह वर्ग उपेक्षित ही रहा है, विमर्श में इसे बार-बार जटिल विषय करार दिया जाता है, ऐसा क्या कारण है कि यह विषय जटिल है? इन सब कारणों की पड़ताल किन्नर विमर्श के अंतर्गत की जाती है। हिंदी साहित्य में इस जटिल विषय पर लेखन की शुरुआत करने के लिए नीरजा माधव का नाम लिया जाता है, जिन्होंने सन् 2002 में पहली बार किन्नर समुदाय की पीड़ा को अपने उपन्यास 'यमदीप' के माध्यम से प्रकट किया। उसके बाद तो कई उपन्यास और कहानियाँ लिखी जाने लगी, पत्रिकाओं के अंक छपने लगे, उनमें आलोचनाएँ लिखी जाने लगी। जिससे साहित्य में यह विमर्श के रूप में उभरकर सामने आने लगा। जटिल इसलिए भी कहा जा सकता है क्योंकि इस समुदाय को मुख्यधारा के समुदाय से अलग रखा जाता है साथ ही सभ्य समाज लैंगिक दृष्टि से इनके प्रति अलग नजरिया रखकर इन्हें हेय दृष्टि से देखता है।

हिंदी साहित्य में यदि उपन्यासों की बात की जाये तो वर्तमान समय के थर्डजेंडर आधारित उपन्यासों की अब लंबी श्रृंखला बनती जा रही है जिसके माध्यम से किन्नर समुदाय को प्रकाश में लाने का कार्य किया जा रहा है साथ ही उनकी समस्याओं को भी प्रकट किया जा रहा है यथा 1.यमदीप-नीरजा माधव 2.किन्नर कथा - महेंद्र भीष्म 3. गुलाम मंडी - निर्मला भुराड़िया 4. तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ 5. पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा - चित्रा मुद्गल 6.जिंदगी 50-50 - भगवंत अनमोल 7. मैं पायल - महेंद्र भीष्म 8. मैं भी औरत हूँ - अनुसूया त्यागी 9.दरमियाना- सुभाष अखिल 10.अस्तित्व - गिरिजा कुमार 11.अस्तित्व की तलाश: सिमरन- मोनिका देवी 12. हाफमैंन (ए पेनफुल जर्नी) - भुवनेश्वर उपाध्याय 13 ऐ जिंदगी तुझे सलाम- हरभजन सिंह मेहरोत्रा 14.मेरे हिस्से की धूप- नीना शर्मा 'हरेश' 15. मंगलमुखी - डॉ. लता अग्रवाल आदि उपन्यास लिखे गए।

कहानियों में कई अनुदित और मौलिक कहानी संग्रह लिखे गए। मैंने अपने शोध कार्य में मौलिक चयनित कहानियों को ही शामिल किया है। जिनमें है:-'थर्ड जेंडर : चर्चित कहानियाँ'- सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी (कहानी संग्रह) 'जिंदगी के उस पार'- राकेश शंकर भारती 'कथा और किन्नर'- विजयेन्द्र प्रताप सिंह 'थर्ड जेंडर की कहानियाँ'- सं. विजेंद्र पताप सिंह, डॉ. रवि कुमार गौड़ 'कबीरन'- सूरज बड़त्या, 'किन्नर'- पूनम पाठक, आलोचना में कई पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित हुए यथा 'वांग्मय', 'सरस्वती', 'अनुसंधान', 'सब-लोग' आदि पत्रिकाओं में थर्डजेंडर से संबंधित विषय पर विशेषांक प्रकाशित हुए।

पुस्तकों के रूप में आलोचना साहित्य इस प्रकार है:-'थर्ड जेंडर के संघर्ष का यथार्थ'- डॉ. शिगुप्ता नियाज, 'थर्ड जेंडर पर केंद्रित हिंदी का प्रथम उपन्यास यमदीप'-फिरोज खान, 'सिनेमा की निगाह में थर्डजेंडर'-फिरोज खान, 'भारतीय समाज में किन्नरों का यथार्थ'- आशीष कुमार दीपांकर, 'भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श'-डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, थर्ड जेंडर कथा की हकीकत'-अकरम हुसैन, मनीष कुमार गुप्ता, 'हम भी इंसान है'- डॉ.एम फिरोज खान, 'किन्नर विमर्श साहित्य के आईने में'- डॉ. इकरार अहमद, 'थर्ड जेंडर:हिंदी कहानियाँ'-डॉ.एम.फिरोज खान, 'थर्ड जेंडर: कथा आलोचना'- डॉ. एम फिरोज खान, 'थर्ड जेंडर विमर्श'- शरद सिंह, 'हिंदी साहित्य में किन्नर जीवन'- डॉ.दिलीप मेहरा, 'किन्नर समाज संदर्भ तीसरी ताली'-पार्वती कुमारी, 'दरमियाना आधी हकीकत आधा फसाना'- डॉ.एम फिरोज खान, 'किन्नर कथा तीसरी दुनिया का सच'- डॉ.एम फिरोज खान, 'थर्ड जेंडर आत्मकथा और जीवन संघर्ष'- फिरोज खान, 'थर्ड जेंडर और जिंदगी 50-50'- फिरोज खान, 'थर्ड जेंडर:अतीत और वर्तमान'-फिरोज खान, 'किन्नर गाथा'- शीला डांगा, 'कुछ तथ्य-कुछ सत्य- नीरजा माधव आदि आलोचनात्मक पुस्तकें लिखी गई। इन पुस्तकों के माध्यम से किन्नर विमर्श को एक दिशा मिली और इस विषय को लेकर मुद्दा उठाया जाने लगा।

इस प्रकार से हम कह सकते है कि साहित्य में किन्नर विमर्श की स्थिति किस प्रकार की है, लेकिन कुछ पुस्तकों का अध्ययन करने के उपरांत लगता है कि मुख्य विषय तो इनमें गौण हो गया है बस लेखन के लिए इनकों लिखा जा रहा है। किन्नर समुदाय की मुख्य समस्याओं का उद्घाटन इनमें पूर्णतया नहीं हो पाता है। उनका उद्देश्य केवल कृति को प्रकाश में लाना है। लेकिन बहुत हद

तक साहित्य के माध्यम से किन्नर विमर्श की अभिव्यक्ति हुई है जिसमें इनकी पीड़ा और जीवन की विभीषिका को दर्शाया गया है। वर्तमान दौर उत्तर-आधुनिकता का दौर है जहाँ मनुष्य मानव संवेदनाओं को भुलाकर केवल अपने बारे में सोचता है। यह दौर नयेपन के साथ-साथ आधुनिक जीवन की त्रासदी की भी अभिव्यक्ति करता है कि वर्तमान समय किस और रुख कर रहा है? नयी पीढ़ी किस और अपने-आपको ले जा रही है? उत्थान की और या पतन की ओर। यह तो स्वयं उनकों तय करना होगा। उत्तर-आधुनिक समाज के बारे में यह मानसिकता है कि वह परम्पराओं से पूरी तरह कट चुका है, प्राचीन मान्यताएं और धारणाएं उसके जीवन में कोई महत्त्व नहीं रखती। वह नये ढंग से इनकों रखना चाहता है। लेकिन क्या इस नयेपन के बीच में आकर भी किन्नरों को स्वीकारने की हिम्मत रखता है इसकी जांच-पड़ताल के बाद ही पता चल सकता है।

उत्तर-आधुनिकता के बारे में जोक देरिदा अपनी पुस्तक 'दी एंड ऑफ़ मेन' में इस प्रकार लिखते हैं- "मृत्युपर्व का जो क्रम ईश्वर की मृत्यु से शुरू हुआ था उसने अंतत: मनुष्य की जान भी ले ली है।"[104] इसी क्रम में डॉ. अमरनाथ लिखते हैं:- "उत्तर-आधुनिकता मनुष्य के स्थानीय केंद्र को नकारती है। चूंकि सामाजिक स्थिति तथा सांस्कृतिक वातावरण रोज बदल रहा है, यथार्थ अतियथार्थ हो रहा है। मनुष्य की चेतना भी स्थिर और निश्चित नहीं हो सकती।"[105] इसी प्रकार वर्तमान समय में किन्नर समुदाय के लिए कोई भी स्थिति निश्चित नहीं है समाज उसे स्वीकारेगा या नहीं।

उत्तर-आधुनिक दौर में किन्नर समुदाय शोध विषयों का प्रमुख केंद्र बना हुआ है। चाहे वह नृविज्ञान हो अथवा हिंदी या अंग्रेजी साहित्य। कोई इसे जेंडर पर आधारित विषय बनाकर अध्ययन करता है तो कोई इनका सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन बनाकर। इनका अध्ययन तो किया जा रहा है किंतु विचारणीय यह है कि इस अध्ययन करने से इस समुदाय की स्थिति में परिवर्तन लाया जाये। उनकी सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक और धार्मिक स्थिति में परिवर्तन हो तभी यह समुदाय मुख्य धारा के समाज के समक्ष खड़ा हो सकता है।

---

[104] डॉ.अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ.सं.79

[105] वही, पृ.सं.79

5.8 किन्नर समुदाय: वैधानिक प्रावधान

समाज को अपराधों से बचाने और असामाजिक तत्वों से दूर रखने हेतु कुछ नियम बनाये जाते है, जिनसे उनकी रक्षा की जा सके। यदि कोई उनकों नुकसान पहुंचाने की कोशिश करता है तो कानून के माध्यम से उनको बचाया जा सके। इसी प्रकार किन्नर समुदाय के लिए भी सवैधानिक उपबंध निर्धारित किये गये है जिनसे इनके हितों की रक्षा की जा सके। यह उपबंध वैश्विक स्तर पर अलग है और भारत में अलग है। इनके माध्यम से इनको सुरक्षा प्रदान की जाती है।

वैश्विक स्तर पर वैधानिक प्रावधान

किन्नर जीवन के उत्थान हेतु वैश्विक स्तर पर कानूनों का निर्माण किया गया। ताकि इनकी जीवन शैली और स्थिति में कुछ सुधार लाया जाए। समय-समय पर अलग-अलग देशों में इनके उत्थान हेतु कानून बनाये गए जिनके माध्यम से इनकों पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की गई है। 1.ईरान के सर्वोच्च नेता अयातुल्ला रूहल्लाह खुमैनी ने आश्वासन दिया कि फिर से सर्जरी कराने पर कोई धार्मिक प्रतिबंध नहीं हैं। आज ईरान सर्जरी के लिए शीर्ष गंतव्य हैं, लेकिन इस प्रवृति में एक अँधेरा है। कोई समलैंगिक ईरानी समलैंगिकता उत्पीड़न से बचने के लिए सर्जरी का चयन करतें हैं लेकिन ईरान अभी तक वैकल्पिक लिंग को मान्यता नहीं देता है।

2. नेपाल का सर्वोच्च न्यायालय यह कहता है कि सरकार नागरिकता संबंधी दस्तावेजों पर एक तृतीय लिंग श्रेणी (अन्य) को स्थापित करती हैं।

3. 23 दिस. 2009 को पाकिस्तान हाई कोर्ट ने पहचान पत्र जारी किया जिससे किन्नरों को अलग लिंग के रूप में पहचान मिल सकें।

4. 15 दिसंबर 2011 आस्ट्रेलिया सरकार ने घोषणा की कि पासपोर्ट में तीसरे लिंग का विकल्प दिया जायेगा । इसके लिए मेडिकल रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि करनी पड़ेगी।

5. 1.नवंबर 2013 को जर्मनी सरकार ने इनके हितों के लिए कानून बनाए।

6. फेसबुक पर भी अन्य न्यूट्रोसिस का विकल्प दिया जाता है।

भारतीय सविधान और थर्ड जेंडर

सन् 1994 में ही इन्हें मताधिकार मिल गया था परंतु मतदाता पहचान-पत्र जारी करने का कार्य मेल अथवा फीमेल के प्रश्न पर उलझ गया। अप्रैल 2014 में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के.एस. राधाकृष्णन ने नाल्सा बनाम भारत सरकार पर निर्णय देते हुए कहा था कि अब मानसिकता बदलने की आवश्यकता है। सार्वजनिक स्थानों पर किन्नरों का अपमान किया जाना, उनके साथ गाली-गलौच करना गलत है। साथ ही उनके साथ प्रत्येक मानवीय अधिकारों का प्रयोग होना जरूरी है। "1.भारतीय सविधान के तीन भाग तथा भारतीय संसद तथा राज्यों की विधानसभाओं में पारित नियमों के तहत तृतीय लिंगियों की सुरक्षा के लिए उन्हें अधिकार दिए जाने जरूरी है। 2.तृतीय लिंगी लोगों को यह स्वतंत्रता दी जाए, तथा भारत सरकार तथा राज्य सरकार को निर्देशित किया जाता है कि वे उनके चयन को क़ानूनी मान्यता दें।"[106] लेकिन क्या इससे उनके जीवन स्तर में कोई बदलाव आ पाया है? उनकी स्थिति तो इसके उपरांत भी वही की वही स्थिर मालूम होती है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में केन्द्रीय कैबिनेट ने 19 जुलाई 2016 को ट्रांसजेंडर पर्सन्स (प्रोटेक्शन ऑफ़ राइट्स) बिल 2016 को मंजूरी दे दी। भारत सरकार की कोशिश इस बिल के जरिए एक व्यवस्था लागू करने की है, जिससे किन्नरों को भी सामाजिक जीवन, शिक्षा और आर्थिक क्षेत्र में आजादी से जीने के अधिकार मिल सके। यह उम्मीद की जा रही है कि यह विधेयक भारतीय किन्नरों के लिए मददगार साबित होगा। हमारे देश में ऐसे लोगों को सामाजिक कलंक के रूप में देखा जाता है। इनके लिए काफी कुछ किए जाने की आवश्यकता है। यह विधेयक भी इसी दिशा में एक प्रयास है। एक ऐतिहासिक कदम के तहत केंद्र सरकार ने लोकसभा में किन्नर (ट्रांसजेंडर) समुदाय के लिए अलग पहचान और इस समुदाय के साथ लगे सभी धब्बों को दूर करने के लिए एक विधेयक पेश किया। केन्द्रीय सामाजिक न्याय मंत्री थावरचंद गहलोत ने यह विधेयक पेश किया। इससे पहले लोकसभा अध्यक्ष सुमित्रा महाजन ने तथा रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य एन. के. प्रेमचंद्रन के इस विधेयक को पेश करने के विरोध को ख़ारिज कर दिया।

---

[106] सूरज पालीवाल, सघन अनुभूतियों में रचा-बसा सजग तृतीय लिंगी समाज पहल-107 पृ.सं.224

ट्रांसजेंडर पर्सन बिल 2016 में किन्नरों की शोषण से रक्षा करने के लिए तंत्र स्थापित करने और इस समुदाय के साथ भेदभाव दूर करने और इन्हें खुद अपनी लैंगिक पहचान का अधिकार देने की कोशिश है।

इस फैसले से किन्नर समुदाय को थोड़ी बहुत दिलासा मिली है। यथा:- "चलते-चलते उच्चतम न्यायालय का फैसला तृतीय लिंगी लोगों को दिलासा देने वाला है। उच्चतम न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसले में किन्नर समाज को नई पहचान दी है। कोर्ट ने आदेश दिया कि हर सरकारी दस्तावेज में महिला और पुरूष के साथ एक कॉलम थर्ड जेंडर या किन्नर का भी हो। किन्नर समाज इस फैसले से काफी उत्साहित है। इसलिए इन लोगों के लिए अच्छे दिन आ गए है।"[107] इस विधेयक को अब सरकार ने लोकसभा में पेश किया है। इस विधेयक का मकसद किन्नर समुदाय को सशक्त बनाना और भारत में किन्नरों के खिलाफ अपराध करने वाले को कड़ी सजा देने का प्रावधान है। साल 2011 की जनगणना के मुताबिक देश में लगभग पाँच लाख किन्नर है। प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में हुई केन्द्रीय मंत्रिमंडल की बैठक में इस विधेयक को 20 जुलाई को ही स्वीकृति दी जा चुकी थी। आधिकारिक सूत्रों का कहना है कि नए कानून से इस समुदाय को समाज की मुख्य धारा में लाने में मदद मिलेगी।

प्रमुख प्रावधान

ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2016 को नौ अध्याओं में विभक्त किया गया है-

प्रथम अध्याय- प्रारम्भिक

द्वितीय- कतिपय कृत्यों का प्रतिषेध

तृतीय- उभयलिंगी व्यक्तियों की पहचान को मान्यता

चतुर्थ-सरकार द्वारा कल्याणकारी उपाय

[107]डॉ. राधिका के.एन., तृतीय लिंगी की समस्याएं, युद्धरत आम आदमी, सं.सूरज बडत्या-53 (जन-2018) नई दिल्ली पृ.82

पंचम- स्थापनाओं और व्यक्ति की बाध्यता

षष्ठम-उभयलिंगी व्यक्ति की शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य

सप्तम-उभयलिंगी व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय परिषद

अष्टम- अपराध और शक्तियाँ

नवम-प्रकीर्ण

अप्रैल 2016 में राज्यसभा में इस बिल को पारित किया था। जिसे अकस्मात द्रविड़ मुनेत्र कड़गम के सदस्य तिरुची शिवा ने एक निजी सदस्य विधेयक के रूप में उच्च सदन में पेश किया।

ट्रांसजेंडर राइट्स बिल 2019

अगस्त 2019 को ट्रांसजेंडर पर्सन्स राइट्स बिल 2019 राज्य सभा में भी पारित हो गया। इसके तहत ट्रांसजेंडर्स के हितों को ध्यान में रखकर प्रावधान तय किये गये जिससे इनके उत्थान हेतु कार्य किये जा सके और किन्नर समुदाय का समुचित विकास हो सके। इसके तहत निम्नलिखित प्रावधान है:-

TRANSGENDER- वह व्यक्ति जो अपने जन्म से निर्धारित लिंग के विपरीत लिंगी की तरह जीवन बिताता है

जब किसी व्यक्ति के जननांगों और मस्तिष्क का विकास उसके जन्म से निर्धारित लिंग के अनुरूप नहीं होता है तब महिला यह महसूस करने लगती है कि वह पुरूष है और पुरूष यह महसूस करने लगता है कि वह महिला है।

- इस विधेयक में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक संरक्षण प्रदान करने के लिए एक कार्य प्रणाली उपलब्ध की जायेगी।
- इसके माध्यम से हाशिये पर खड़े इस समुदाय को सभी प्रकार के लांछन से बचाने के लिए प्रावधान किये गये।

- इस समुदाय को सामाजिक बहिष्कार से लेकर भेदभाव, बेरोजगारी, शिक्षा से वंचित, चिकित्सा सुविधाओं की कमी, जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यह एक प्रगतिशील विधेयक है जो सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक रूप से इस समुदाय को सशक्त बनायेगा।
- इस बिल में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को परिभाषित किया गया है।
- पहचान पत्र जारी करना।
- यह प्रबंध करना कि इन व्यक्तियों को किसी भी स्थापन में नियोजन, भर्ती, प्रोन्नति और अन्य सम्बंधित मुद्दों के विषय में विभेद का सामना न करना पड़े।
- प्रत्येक स्थापन में शिकायत निवारण तंत्र स्थापित करना और विधेयक के उपबन्धों का उल्लंघन करने के सम्बंध में दंड का प्रावधान सुनिश्चित करना।

अपराधिक प्रावधान-

सन् 1857 में अंग्रेजी राज के समय इनको अपराधिक श्रेणी में लाकर और इनके खिलाफ कानून बनाकर इन्हें अपराधी घोषित किया गया। समय और समाज से अलग करने की पूरी कोशिश की गई।

धारा 377- आईपीसी की धारा 377 के अनुसार यदि कोई भी व्यक्ति अप्राकृतिक रूप से किसी के साथ यौन संबंध बनाता है तो उसे उम्रकैद या जुर्माने के साथ दस साल तक कि कैद हो सकती है। यह कानून लगभग 150 वर्ष पुराना है। महारानी विक्टोरिया के काल में नैतिकता का हवाला देकर बनाया गया था। इस धारा पर लंबे समय से विवाद चल रहा था। 2009 में दिल्ली हाईकोर्ट ने इसे अपराध के दायरे से हटाया। 2013 में सुप्रीम कोर्ट ने इसे दोबारा अपराध घोषित किया। 2016 में धारा 377 के खिलाफ 30 से अधिक याचिकाएं दर्ज हो गई। 2018 में सुप्रीम कोर्ट ने नोटिस भेजकर जवाब माँगा।

सुप्रीम कोर्ट में इस मामले की सुनवाई तत्कालीन चीफ जस्टिस दीपक मिश्र, एवं अन्य न्यायाधीश रोहिंगटन नरीमन, जस्टिस ए.एम कंविलकर, डीवाय चंद्रचूड, और जस्टिस इंदु मल्होत्रा

की पीठ ने की। इस पीठ ने यह जाँच की कि क्या मौलिक अधिकार और जीवन जीने के अधिकार में यौन स्वतंत्रता भी शामिल है। तब सुनवाई के दौरान निम्न प्रकार से निष्कर्ष निकला:-

सुनवाई के दौरान

अंतिम तीन दिनों की सुनवाई में सुप्रीम कोर्ट ने माना कि इस धारा को असंवैधानिक करार देकर समलैंगिकों को आजादी के साथ जीने का अधिकार दिया जायेगा। कोर्ट ने इसके लिए तर्क दिया कि वह जीवनसाथी चुनने के अधिकार को पहले ही स्वीकृति दे चुका है इसलिए यह तर्क यहाँ प्रयोग में लाया जा सकता है। उनका कहना है कि:- ‘‘एलजीबीटी समुदाय इसे कलंक के रूप में देखती है और गे सेक्स की आपराधिकता खत्म होने के बाद वे आजादी से एक साथ रह सकते हैं। यह कलंक इसलिए है क्योंकि उनके साथ अलग तरह से व्यवहार किया जाता है। एक बार समलैंगिकों के बीच संबंध को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया गया तो फिर वे अपने-आपको सशक्त महसूस करेंगे।’’[108] इस बात पर कोर्ट के सामने कई याचिकाएं आयी जिनमें कहा गया कि इन पर फैसला लेने से पूर्व जनमत कराया जाए। लेकिन कोर्ट ने इस बात को मानने से इनकार कर दिया और कहा कि बहुसंख्यक नैतिकता की जगह संवैधानिक नैतिकता को तरजीह देगी और आईपीसी के सेक्शन 377 को सविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 के आधार पर देखेगी।

समलैंगिक होना कोई बीमारी नहीं है इसलिए इसका इलाज नहीं किया जा सकता। यह यौन रूझान व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करता है जो उसके जीन पर आधारित होता है। इस समुदाय की शिकायत रहती है कि उन्हें स्कूल से लेकर काम करने की हर जगह काफी भेदभाव का सामना करना पड़ता है। बाल अधिकार संरक्षण आयोग, अपोस्टोलिक चर्च संघ और दो अन्य ईसाई संस्थाओं ने समलैंगिकों के बीच सेक्स को कानूनी अधिकार दिए जाने का विरोध किया है। आल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ-बोर्ड ने इसका विरोध किया था। विश्व में लगभग 76 देश इसे अपराध की दृष्टि से देखते हैं। धार्मिक ग्रंथों कुरान, बाइबिल, अर्थशास्त्र और मनु स्मृति जैसे ग्रंथ भी समलैंगिकता की निंदा करते है। इसके लिए सामाजिक नैतिकता की स्वीकृति मिलना भी आवश्यक था। केंद्र सरकार ने इस प्रक्रिया की ख़ास जिम्मेदारी नहीं ली और कई बीमारियों का हवाला दिया गया यथा:- ‘‘अगर

---

[108] www.bbc.com

समलैंगिकता को इजाजत दी गई तो AIDS और HIV जैसी बीमारियां बढ़ने के साथ-साथ लोगों को मेंटल डिसऑर्डर का भी सामना करना पड़ेगा, समलैंगिकता समाज की नैतिकता को चोट पहुँचाएंगी और इससे बड़े स्तर पर स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएँ सामने आ सकती है। समलैंगिक संबंधों का जैविक उद्देश्य कुछ नहीं है क्योंकि वे बच्चे को जन्म नहीं दे सकते। अगर सभी समलैंगिक होते तो अब तक इंसानों की नस्ल खत्म हो गई होती। ये बहुत खतरनाक है और तमाम सामाजिक विकृतियों से जुड़ी हुई, यह एक भद्दी और पूरी तरह से गलत चीज है।"[109] इस प्रकार का सरकार का रवैया रहा लेकिन बाद में सरकार ने सब कुछ कोर्ट के फैसले पर छोड़ दिया। कोर्ट ने इस मसले पर 6 सितंबर 2018 को फैसला सुनाते हुए इसे अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया है। लेकिन कई बार किन्नर समुदाय अपने लिए बनाए गये नियमों का विरोध करते हैं क्योंकि उनके लिए कानूनों का निर्माण तो कर दिया गया है लेकिन उन कानूनों की अनुपालना उनके अनुसार उनके हितों में नहीं की जा रही है।

केरल में अधिकारिक रूप से सभी स्थानों पर इनके लिए other gender या third gender शब्द के स्थान पर transgender शब्द का प्रयोग किया जायेगा। एक साक्षात्कार में पूछे गए प्रश्न पर सलोनी नामक किन्नर की पीड़ा इस प्रकार झलकती है:- "किन्नर समाज के नियम-कानून और यहाँ का परिवेश हमें दुखी भी करता है। कई बार यहाँ से निकलने की बहुत इच्छा होती है, पर सवाल वही है कि हम यहाँ से निकलने के बाद जाएंगे कहाँ? रहेंगे कहाँ? इसलिए मन मारकर चाहे सुखी हो या दुखी, हम इस परिवेश में रहने के लिए मजबूर हैं।"[110] इस प्रकार से वे नियमों का विरोध करते हैं, जो उनकी दृष्टि में उनके लिए किसी काम में नहीं आते। इस प्रकार से न्यायालय के निर्णय को लेकर LGBT समुदाय में पूरी तरह से उत्साह भर गया है, उनको अब लगने लग गया कि उनके अधिकारों की रक्षा हो पायेगी, वो भी अपनी आजादी के साथ अपने जीवन साथी का चुनाव कर सकते हैं। कहीं भी रह सकते है। इन्हें भी निजता के अधिकार में शामिल कर लिया गया है।

[109] www.bbc.com

[110] मोहम्मद हुसैन डायर, 'किन्नरों का सामूहिक साक्षात्कार', सरस्वती, अप्रेल-सित. 2018 सं.महेश भारद्वाज, पृ.सं.23

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नरों हेतु विविध स्तरों पर कानूनों का निर्माण किया गया है। इन कानूनों के माध्यम से उनके जीवन स्तर में सुधार की आशा की गई है। यह वैधानिक प्रावधान भारतीय और अंतराष्ट्रीय स्तर पर बनाए गये। अलग-अलग देशों में अलग-अलग समय पर किन्नर समुदाय के हितों के लिए कानूनों का निर्माण किया गया। भारत, नेपाल, पाकिस्तान, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी आदि देशों में इनके उत्थान हेतु कानूनों का निर्माण किया गया।

2.9 **भारतीय सिनेमा और किन्नर समुदाय**

सिनेमा मनुष्य के भावों को तत्काल रूप से प्रभावित करने वाला माध्यम है। साहित्य और सिनेमा की हमेशा से कड़ी जुड़ी हुई रही है। यह समाज का आईना बनकर उसके जीवन मूल्यों को सार्वजनीन करता है। साहित्य को आधार बनाकर हिंदी सिनेमा कई फिल्मों का निर्माण कर चुका है। कई बार कृति सिनेमा के माध्यम से भी अधिक प्रसिद्ध हो जाती है। सिनेमा एक ऐसा माध्यम है जो तीव्रता से मानव-मन पर अपना प्रभाव डालता है। सिनेमा ने प्रत्येक वर्ग को अपने पर्दे पर उभारकर उसकी दशा और दिशा पर प्रकाश डालने का काम किया है।

ऐसे विषयों से आम जन को जोड़ना जो समाज की नजरों से दूर थे, यह काम सिनेमा ने किया। इस संदर्भ में डॉ. चन्देश्वर अपने आलेख में इस प्रकार लिखतें हैं:- "हिजड़ा जिन्हें भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तृतीय लिंग की संज्ञा से विभूषित किया जा चुका है, भले ही संख्या में सीमित है, लेकिन उनके बगैर समाज के होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। समाज में हिजड़ों के प्रति सकारात्मक स्थिति पैदा करने में साहित्य और सिनेमा हमेशा से प्रयासरत है।"[111] समय-समय पर इस विषय पर फिल्मों का निर्माण होता रहा है, जिनके माध्यम से इस विषय की पड़ताल की गई। आरंभ में इनकों छोटी-छोटी भूमिका में दिखाया जाता था लेकिन बाद में इनकी भूमिका में बदलाव किया गया। किन्नर समुदाय को भारतीय सिनेमा में व्यंग्यात्मक या हास्यास्पद अथवा आपराधिक प्रवृति के रूप में ही अधिकांशत: दिखाया जाता है। कुछ फिल्मों में जरूर इनके द्वारा किये गए साहसिक कार्यों को दर्शाया गया है।

---

[111] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौंड, 'विमर्श का तीसरा पक्ष', डॉ.चंदेश्वर, सिनेमा और साहित्य में हिजड़े: एक समीक्षा' अनंग प्रकाशन, दिल्ली (2016) पृ.सं. 251

दशकों तक थर्ड जेंडर के पात्र फिल्मों में भी हास्य का विषय बने रहे लेकिन धीरे-धीरे इनके प्रति मानसिकता में बदलाव आने लगा। सन् 2012 में बांग्लादेश में बनी फिल्म ‘कॉमन जेंडर’ में किन्नरों के संघर्ष को दिखाया गया है। गुरिंदर चड्डा द्वारा ‘ब्राइड एंड प्रिज्युडिश’ में भी किन्नरों की दासता पर प्रकाश डाला गया है। बॉलीवुड फिल्म ‘सड़क’ का ‘अप्पू’ नाम से रीमेक बनाया गया। 2009 में मराठी भाषा में ‘जोगवा’ भी हिजड़ों पर आधारित फिल्म है। चाहे वह ‘कुंवारा बाप’ (1974), ‘अमर अकबर एंथोनी’ (1977), ‘सूरमा भोपाली’ या ‘नायक’ फिल्म क्यों न हो। इनमें हिजड़ों को उपहास के रूप में चित्रित किया गया है। इसी प्रकार ‘तमन्ना’, ‘वाटर’, ‘दरमियान’ (1997), ‘शबनम मौसी’ और ‘वेलकम टू सज्जनपुर’ में भारतीय समाज में हिजड़ों की स्थिति की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। इसी क्रम में चित्रों के द्वारा भी हिजड़ों के जीवन से जुड़ी संवेदना को दिखाने की कोशिश की गई है। इनमें ‘जरीना: पोट्रेट ऑफ़ हिजड़ा’ (1990), ‘लेडीवायज’ (1992), ‘बोम्बे युनुच’ (2001), ‘द हिजड़ाज : इण्डिया थर्ड जेंडर’ (2001), ‘इण्डियाज लेडी बायज’ (2003), ‘बिटविन द लाइंस: इण्डियाज थर्ड जेंडर’ (2005), ‘मिडिल सेक्स’, ‘बीबीसी: किस द मून’, (2009) ‘कॉल मी सलमा’, ‘मोहम्मद टू माया’ आदि के माध्यम से हिजड़ों के प्रति अपने मनोभाव जागृत करने का प्रयास किया गया है।

किन्नरों पर बनी डॉक्यूमेंट्री फिल्म

प्रोट्रेट ऑफ़ ए हिजड़ा (1990)

लेडी ब्वायज (1992)

बोम्बे यूनक (2001)

दा हिजड़ाज थर्ड जेंडर (2001)

बिटविन द लाइंस: इण्डियाज थर्ड जेंडर(2005)

भारत के अलावा पाकिस्तान में भी डॉक्यूमेंट्री फिल्मों का निर्माण हुआ है। जमीन देहलवी ने 1992 में ‘इमालुकेट कोंसेप्सन’ नाम से फिल्म बनाई।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि सिनेमा ने भी इनकी जानकारी देने में अपनी महती भूमिका निभाई है। समय-समय पर फिल्मों के माध्यम से इनकी भूमिकाओं को अलग-अलग रूपों में दर्शाया गया। फिर चाहे वह अंग्रेजी सिनेमा हो या फिर भारतीय सिनेमा। दोनों में किन्नरों को पात्रों के रूप में स्थान दिया गया। आरंभिक रूप में इनकी भूमिका यदा-कदा संक्षिप्त रूप में दिखाई जाती थी लेकिन कई फिल्मों में इनकों मुख्य किरदार के रूप में भी शामिल किया गया। जिनमें 'शबनम मौसी', 'तमन्ना', 'वाटर' आदि फिल्मों का नाम लिया जा सकता है। फिल्मों के माध्यम से दर्शायी गई इनकी भूमिका से समाज को इस समुदाय के अस्तित्व की जानकारी प्राप्त हो पाई है ऐसी बात नहीं है कि इससे पूर्व इनके बारे में जानकारी नहीं थी लेकिन सिनेमा ने लोगों को इनसे जोड़ना प्रारंभ किया।

2.10 अश्लीलता और किन्नर साहित्य

अश्लीलता क्या है? अंग्रेजी में इसके लिए 'आब्सीन' शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ है अशुभ, गंदा, अनुचित, अशोभनीय, अनैतिक, जुगुप्सा जगाने वाला। साहित्य में भी इस प्रकार के भाव अश्लीलता की श्रेणी में आते हैं। कामोत्तेजना या जुगुप्सा भाव जागृत करने वाला साहित्य अश्लील साहित्य कहलाता है। साहित्य में शील, अश्लील का झगड़ा प्रारंभ से ही होता रहा है। जिस साहित्य में अश्लील भाव होंगे वह साहित्य अनैतिक और अग्रहणीय माना जायेगा। लेकिन जिस साहित्य में इस प्रकार के भाव नहीं होंगे वह ग्रहणीय माना जायेगा तथा उसे नैतिक कहकर पढ़ने के लिए प्रेरित किया जायेगा। अश्लीलता को भाव के अनुरूप या दृष्टि के अनुसार भी देखा जा सकता है। एक महान से महान रचनाकार और निम्न से निम्न रचनाकार भी अश्लील साहित्य का विवेचन कर सकता है। उपरी स्तर पर ही उन पर अश्लीलता का आरोप करना और कुछ लोगों द्वारा उनकी रचनाओं को निराधार साबित कर देना न्याय संगत नहीं होगा। किन्नर साहित्य पर भी अश्लीलता का आरोप लगाया जाता है। इसको कुछ लोग तो इसी दृष्टि से आंकते है। लेकिन यह गलत धारणा बन गई है कि यह साहित्य मात्र मनोरंजन के लिए गढ़ा जा रहा है।

किन्नर समुदाय अश्लीलता का आवरण ही ओढ़े रखता है; यह तर्क सही साबित नहीं होता है क्योंकि मुख्यधारा से कटे हुए समाज पर इस प्रकार के आरोप उसे मुख्य धारा में लाने के मार्ग में

रोड़े बनते हैं। अधिकांश पाठक वर्ग इसी बात से प्रेरित होकर इस साहित्य को पढ़ता है लेकिन इसमें ऐसा कुछ दिखाई नहीं पड़ता है, कुछ कृतियों में अवश्य इस प्रकार के बिंदु दिखाई पड़ सकतें हैं लेकिन अश्लील साहित्य के आधार पर इसका आंकलन नहीं किया जा सकता। इस संदर्भ में कवि डॉ. कर्मानंद आर्य का व्यक्तव्य दृष्टव्य है:- "थर्ड जेंडर का सम्बंध कुछ लोग अवैध यौन शोषण से जोड़ते रहते हैं। ब्रह्मचर्य और सेक्स को निषेधात्मक मानने वाले इस देश में सबसे ज्यादा अगर कोई चीज बिकती है तो वह है यौनिकता। यह यौनिकता अगर स्त्री के लिए हो तो पुरूष किसी भी हद तक जा सकता है। जैविक बनावट और संस्कृति के अंतरसंबंधों को समझकर अगर हम जेंडर पर लागू करें तो निष्कर्ष यही निकलता है कि महिलाओं के शरीर की बनावट भी सामाजिक बंधनों और सौंदर्य के मानकों द्वारा निर्धारित की गई है। शरीर का स्वरूप जितना प्रकृति से निर्धारित हुआ है उतना ही संस्कृति से भी। थर्ड जेंडर भी इसी सोच का शिकार है। इसी प्रकार उसी अधीनता, जैविक असमानता से नहीं पैदा होती है बल्कि यह ऐसे सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों और संस्थाओं की देन हैं। पुरूष थर्ड जेंडर में स्त्री के उन्हीं गुणों को खोजने का भरसक प्रयास करता है।"[112] इनकी यह बात उचित है किंतु थर्डजेंडर खुद नहीं चाहता कि वह इस दलदल में फसें किंतु मजबूरन उसे आजीविका हेतु यह सब करना पड़ता है, इस प्रकार के सुधार हेतु उनके लिए आवश्यक है शिक्षा। तभी वे जागरूक बन सकतें है तथा अपने और अपने समुदाय के लोगों के लिए कुछ कर सकते हैं।

इससे स्पष्ट होता है कि किन्नर साहित्य पर अश्लीलता का आरोप लगाया जाता है इस कारण कुछ आलोचक इसको पढ़ने से कतराते है, लेकिन ऐसा वास्तविक रूप से पूर्णतया सत्य प्रतीत नहीं होता है। उनका परिवेश ही ऐसा बन जाता है कि वह अश्लील है, एक मनोग्रंथि दिमाग में घर कर जाती है। हिंदी साहित्य में उग्र जैसे रचनाकार के साहित्य को अश्लील करार दिया गया उसी रचनाकार को पाठक वर्ग बड़े चस्के से पढ़ता है। यही स्थिति किन्नर साहित्य के साथ भी बन रही है। लेकिन एक सही दृष्टिकोण से विश्लेषणात्मक दृष्टि अपनाते हुए ही हम किन्नर विमर्श में अपनी भूमिका अदा कर सकतें हैं।

---

[112]विकिपीडिया से-

समय-समय पर फिल्मों के माध्यम से इनकी भूमिकाओं को अलग-अलग रूपों में दर्शाया गया। फिर चाहे वह अंग्रेजी सिनेमा हो या फिर भारतीय सिनेमा। दोनों में किन्नरों को पात्रों के रूप में स्थान दिया गया। आरंभिक रूप में इनकी भूमिका यदा-कदा संक्षिप्त रूप में दिखाई जाती थी लेकिन कई फिल्मों में इनकों मुख्य किरदार के रूप में भी शामिल किया गया। जिनमें 'शबनम मौसी', 'तमन्ना', 'वाटर' आदि फिल्मों का नाम लिया जा सकता है। फिल्मों के माध्यम से दर्शायी गई इनकी भूमिका से समाज को इस समुदाय के अस्तित्व की जानकारी प्राप्त हो पाई है ऐसी बात नहीं है कि इससे पूर्व इनके बारे में जानकारी नहीं थी लेकिन सिनेमा ने लोगों को इनसे जोड़ना प्रारंभ किया।

निष्कर्ष

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि विविध ग्रन्थों और कालों को आधार बनाकर किन्नर समुदाय के इतिहास की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। लेकिन इनका निश्चित समय निर्धारित नहीं किया जा सकता। क्योंकि कहीं पर भी निश्चित तिथि का उल्लेख नहीं हैं। 4000 ईस्वी पूर्व का समय बताया जाता है किंतु वह भी लगभग ही है। विविध ग्रंथो, पुराणों, मिथकीय साहित्य, मनुस्मृति आदि में इनका उल्लेख किया गया है जो तात्कालिक समय में इनकी स्थिति तथा समाज में उनकी उपस्थिति को दर्शाता है।

अत: स्पष्ट है कि किन्नर समुदाय को किस प्रकार पहचान मिल सकती है? उससे पहले उनके वजूद की तलाश करनी आवश्यक है। बगैर पहचान के उनकी स्थिति से हम अवगत नहीं हो सकते। प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में जो उल्लेखित है वह सबको स्वीकार्य है अत: यहाँ उन ग्रंथों का हवाला देना आवश्यक हो जाता है। रामायण, महाभारत, आदि में जो किन्नर समुदाय का उल्लेख हुआ है वह इस बात का द्योतक है कि जिस समय उनका उल्लेख हुआ उनके विविध नाम प्रचलित नहीं थे, इस कारण भी इनकी जानकारी विस्तृत नहीं हो पायी, वर्तमान में इनकों अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है जिनमें उपहास का पुट अधिक दिखाई पड़ता है।

उपेक्षित किन्नर समुदाय को अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया जा सकता है। कुछ इन्हें जैविक गड़बड़ी मानते हैं तो कुछ इन्हें प्रकृति की विकृति करार दे देते हैं। लेकिन यह समुदाय अभी-अभी ही अचानक से पैदा नहीं हुआ है इसका उल्लेख तो मिथकों, कोशों में भी किया गया है। इनकें नाम और इनकें प्रति धारणाओं में भी काफी अंतर दिखाई पड़ता है।

किन्नर समुदाय धीरे-धीरे कैसे अस्तित्व में आने लगा, अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग नामों से उच्चारण किया जाने लगा, साथ ही साहित्य के माध्यम से प्रकाश में आने लगा; परिणामस्वरूप इनकों जानने की जिज्ञासा होने लगी। इनकी प्रकृति को लेकर भी सवाल उठाया जाता है कि इनके निर्माण में सारा दोष प्रकृति का है और इसी आधार पर हम इन्हें अस्वीकारते भी हैं। किंतु इसमें प्रकृति को दोष न देकर इसे जैविक गड़बड़ी मानना चाहिए ताकि इनकी स्थिति में

परिवर्तन लाया जा सकें। बांग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान आदि अलग-अलग देशों में इनकें अधिकारों को लेकर कुछ नियम बनाये गये हैं।

इसी प्रकार से हिंदी शब्दकोश, अंग्रेजी शब्दकोश, ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी आदि में इनकों अलग-अलग रूपों में परिभाषित किया गया है। इन सबको यदि एक अर्थ में बताया जाए तो वह व्यक्ति जो अपनी पहचान निर्धारित नहीं कर पाता है कि वह नर है अथवा नारी। वह अपने शरीर के विपरीत भावनाएँ महसूस करता है।

इस प्रकार की कथाओं से पता चलता है कि भारत के साथ-साथ अन्य देशों की संस्कृति में इस प्रकार की अवधारणाएं व्याप्त थी। जिनका किन्नरों से किसी न किसी प्रकार से संबंध था। जब हिन्दू कथाओं में किन्नरता का उल्लेख किया जाता था तब केवल आध्यात्मिक दृष्टि से इनकी विवेचना की जाती थी विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाता था। लेकिन अन्य देशों की सभ्यताओं सुमेरियन, मेसापोटामिया आदि में इनका विस्तृत उल्लेख मिलता हैं।

अनेक ऐसे दृष्टान्त है जिनसे प्राचीन काल में हिजड़ों का अस्तित्व प्रमाणित होता है। इस प्रकार श्रीराम के द्वारा उन्हें आशीर्वाद दिया गया और कलयुग में इनकों पूजे जाने का आशीर्वाद मिला लेकिन कलयुग में इनकी स्थिति और भी बद्तर हो गई, समाज का दुराभाव इनकों सहन करना पड़ा।

‘बुचरा’ को वास्तविक हिजड़ा माना जाता है। यह जन्मजात होते हैं जबकि नीलिमा कारणवश अपने-आपको हिजड़ा बना लेते है। मनसा की मानसिक स्थिति अलग होती है इस कारण वे अपने शरीर के विपरीत स्थिति के मनुष्य से अपनी निकटता महसूस करते हैं। हंसा शारीरिक कमी के कारण उनकों हिजड़ा कहा जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ‘रामचरितमानस’ और ‘महाभारत’ जैसे धार्मिक ग्रंथों में भी किन्नरों का उल्लेख मिलता है। इन ग्रन्थों में इनकी स्थिति ठीक थी, किसी प्रकार का दुराभाव इनके प्रति नहीं था, मध्यकाल तक भी इनकी स्थिति ठीक रही किंतु धीरे-धीरे आधुनिक काल तक आते-आते इनकी स्थिति परिवर्तित होने लगी और संख्या में भी इजाफा होने लगा परिणामस्वरूप इनकी अवहेलना की जाने लगी।

मध्यकाल जो विदेशी आक्रान्ताओं का काल रहा है उसमें किन्नरों की स्थिति रक्षक के रूप में मानी जाती थी। फिर चाहे वह अलाउद्दीन खिलजी का समय हो अथवा जहांगीर का समय हो कुछ प्रसंगों में किन्नरों का उल्लेख मिलता है। वे अपनी रानियों की सुरक्षा की दृष्टि से इनकी नियुक्ति करते थे ताकि कोई उन पर गलत दृष्टि ना डाल सकें। युद्ध अभियान में जाते समय हरम में रानियों को अकेले रहना पड़ता था इसलिए किन्नर को उनके पास रखा जाता था। मलिक काफूर भी एक हिजड़ा ही था, वह अलाउद्दीन का प्रिय सेनापति था।

किन्नर साहित्य को लेकर आधुनिक परिप्रेक्ष्य की बात की जाए तो यह अब काफी विकसित अवस्था में आ चुका है। पौराणिक काल में इनका यत्र-तत्र उल्लेख मिलता हैं लेकिन आधुनिक समय में समय और समाज अपने अधिकारों को लेकर जागरूक होने लग गया है। इसलिए वर्तमान समय में इस विषय पर लिखा जा रहा है और चर्चा-परिचर्चा का भी विषय बना हुआ है। आधुनिक समय में तमिल, मराठी, अंग्रेजी, हिंदी, आदि भाषाओं में साहित्य रचा जा रहा है।

तमिल साहित्य में किन्नर समुदाय पर लेखन का कार्य सन् 1994 से माना जाता है। फिर रेवती, विद्या आदि ने स्वयं अपनी आत्मकथाएं लिखकर अपने वास्तविक जीवन का चित्र प्रस्तुत किया और अपने जीवन की विभीषिकाओं के माध्यम से अपने समुदाय को प्रस्तुत किया। तमिलनाडु के अरावन मंदिर को लेकर भी विशेष रूप से किन्नरों के लिए तमिलनाडु का महत्त्व है।

मराठी साहित्य में किन्नर समुदाय को अभिव्यक्ति देने का कार्य लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के द्वारा किया गया। अपनी आत्मकथा के माध्यम से उन्होंने हिजड़ा समुदाय में जागृति पैदा करने का कार्य किया। 'मी लक्ष्मी मी हिजड़ा' का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। इसके अलावा और भी कई रचनाएँ प्रकाश में आयी 'मी का नाही', एका मित्राची गोष्ट आदि ने किन्नर जीवन को प्रकाश में लाने का कार्य किया।

अंग्रजी साहित्य के माध्यम से किन्नर समुदाय की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है, अंग्रेजी भाषा में इनसे संबंधित विषयों पर शोध कार्य हुए, कई आलेख प्रकाशित हुए जिसके माध्यम से जनमानस में चेतना प्रकट हुई। जर्मन जाफरी, सेरेना नंदा, जर्मन ग्रियर आदि ने किन्नरों पर लिखकर इस विषय के

बारे में हमें अवगत कराने का प्रयास किया कि ऐसा भी एक समुदाय होता है, जो समाज में रहकर भी समाज से कटा-कटा अपने को महसूस करता है।

उत्तर-आधुनिक दौर में किन्नर समुदाय शोध विषयों का प्रमुख केंद्र बना हुआ है। चाहे वह नृविज्ञान हो अथवा हिंदी या अंग्रेजी साहित्य। कोई इसे जेंडर पर आधारित विषय बनाकर अध्ययन करता है तो कोई इनका सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन। इनका अध्ययन तो किया जा रहा है किंतु क्या इस अध्ययन करने से इनकी स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है? यही हमारे लिए विचारणीय प्रश्न हैं।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नरों हेतु विविध स्तरों पर कानूनों का निर्माण किया गया है। इन कानूनों के माध्यम से उनके जीवन स्तर में सुधार की आशा की गई है। यह वैधानिक प्रावधान भारतीय और अंतराष्ट्रीय स्तर पर बनाए गये। अलग-अलग देशों में अलग-अलग समय पर किन्नर समुदाय के हितों के लिए कानूनों का निर्माण किया गया। भारत, नेपाल, पाकिस्तान, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी आदि देशों में इनके उत्थान हेतु कानूनों का निर्माण किया गया।

समय-समय पर फिल्मों के माध्यम से इनकी भूमिकाओं को अलग-अलग रूपों में दर्शाया गया। फिर चाहे वह अंग्रेजी सिनेमा हो या फिर भारतीय सिनेमा। दोनों में किन्नरों को पात्रों के रूप में स्थान दिया गया। आरंभिक रूप में इनकी भूमिका यदा-कदा संक्षिप्त रूप में दिखाई जाती थी लेकिन कई फिल्मों में इनकों मुख्य किरदार के रूप में भी शामिल किया गया। जिनमें 'शबनम मौसी', 'तमन्ना', 'वाटर' आदि फिल्मों का नाम लिया जा सकता है। फिल्मों के माध्यम से दर्शायी गई इनकी भूमिका से समाज को इस समुदाय के अस्तित्व की जानकारी प्राप्त हो पाई है ऐसी बात नहीं है कि इससे पूर्व इनके बारे में जानकारी नहीं थी लेकिन सिनेमा ने लोगों को इनसे जोड़ना प्रारंभ किया।

किन्नर साहित्य पर अश्लीलता का आरोप लगाया जाता है इस कारण कुछ आलोचक इसको पढ़ने से कतराते है, लेकिन ऐसा वास्तविक रूप से पूर्णतया सत्य प्रतीत नहीं होता है। उनका परिवेश ही ऐसा बन जाता है कि वह अश्लील है, एक मनोग्रंथि दिमाग में घर कर जाती है। हिंदी साहित्य में उग्र जैसे रचनाकार के साहित्य को अश्लील करार दिया गया उसी रचनाकार को पाठक वर्ग बड़े चस्के से पढ़ता है। यही स्थिति किन्नर साहित्य के साथ भी बन रही है। लेकिन एक सही

दृष्टिकोण से विश्लेषणात्मक दृष्टि अपनाते हुए ही हम किन्नर विमर्श में अपनी भूमिका अदा कर सकतें हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. चैनसिंह मीना, थर्ड जेंडर अस्मिता संघर्ष और वर्तमान परिदृश्य, सरस्वती, सं.महेश भारद्वाज, अप्रेल-सित.(2018) .
2. देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, पृ.सं.21
3. डॉ. सुनील कुमार द्विवेदी, भारतीय वांग्मय और हिजड़ा समुदाय, सं. विजेंद्र प्रताप सिंह- भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श, अमन प्रकाशन कानपुर (2016) पृ.सं.80
4. चित्रा मुद्गल, 'सरस्वती' आरंभिक पृष्ठ से- अप्रेल-सित, 2018
5. सेरेना नंदा, 'नाइदर मैंन नोर अ विमन' पृ.सं.25
6. कृष्णमोहन झा, 'हिजड़ा-2' कविताकोश से-
7. शिला डांगा','किन्नर गाथा' पृ.सं.10
8. सेरेना नंदा, नाइदर मैंन नोर अ विमन: द हिजड़ाज ऑफ़ इंडिया p13.
9.अंग्रेजी शब्दकोश, विकिपीडिया
10. 'ऑक्सफोर्ड एडवांस लीनर्स डिक्शनरी', सेवेंथ एडिसन-वेब से
11. https://www.collinsdictionary.com/dictionary/english/hijra
12. Elglish-hindi dictinary वेब से-
13. https://educalingo.com/hi/dic-hi/hijara
14. https://shabdkosh.raftaar.in/Meaning-
15. https://dict.hinkhoj.com/meaning-in-english.words
16. http://www.maxgyan.com/hindi/
17. राम अवध द्विवेदी, 'साहित्य-सिद्धांत', पृ.सं.12
18. डॉ. बच्चन सिंह, 'आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज', टिप्पणी से-
19. राहुल सांकृत्यायन, 'किन्नर देश में', पृ.सं.346
20. महायोगी श्रीगोरक्षनाथ, सिद्ध-सिद्धांत पद्दति, अनुवादक-स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, वाराणसी-2014
21. देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ पृ.सं. 54
22. एनसाइक्लोपीडिया, विकिपीडिया-
23. देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, राजपाल एंड संस (2015) तृतीय सं. पृ.सं.17
24. www.collinsdictionary. com
25. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'भारतीय साहित्य और समाज में तृतीय लिंगी विमर्श' पृ.सं.46-47
26. शीला डांगा, 'किन्नर गाथा', वाणी प्रकाशन नई दिल्ली (2020) पृ.सं.73-74
27. डॉ. रमाकांत राय, 'घर वापसी' का नया पोस्ट बॉक्स नं. 203', अनुसंधान अक्तू.-दिस. (2017)सं. शिगुप्ता नियाज, अलीगढ़
28. प्रमोद मीना, 'किन्नर भी इंसान होता है', अनुसंधान-दिस.2017 सं.डॉ.शगुफ्ता नियाज पृ.सं.14
29. वही, पृ.सं.70
30. https://www.genderspectrum.org/the-language-of-gender/
31. डॉ.जगदीश प्रसाद कौशिक, 'व्यावहारिक हिंदी व्याकरण', पृ.सं.101
32. मनुस्मृति, तृतीय अध्याय- 3.196
33. वात्सायन, 'कामसूत्र', पंचम अध्याय, पृ.सं.173
34. लिंगानुशासन, (शब्दों के लिंग ज्ञान करने का शास्त्र) संस्कृत भाषा...htm
35. देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, पृ.सं.40
36. रामचरितमानस, 'अयोध्याकाण्ड' 398/4

37. रामचरितमानस, 'उत्तरकांड', नह्वापरायण, आठवा विश्राम (सप्तसोपान)
38. महाभारत-भीष्मपर्व (79 वाँ सर्ग) पृ.सं.453 श्लोक-29
39. महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.28
40. डॉ. शशिकांत, लैंगिक विकलांगता और भारतीय समाज, सं. विजेंद्र प्रताप सिंह- भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श, अमन प्रकाशन कानपुर (2016) पृ.सं.89

41. डैंजी ब्रोंक्स, फेमिलियर वेजल, विकिपीडिया से-
42. शरद सिंह, 'थर्ड जेंडर विमर्श और प्रमुख हिंदीयेत्तर कृतियां, पृ.स.113
43. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली भाग-10, 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है', पृ.सं.24
44. भगवती, 'किन्नर और हिंदी साहित्य', हस्ताक्षर, अंक-51 सं. के.पी.अनमोल सांचौर, पृ.सं. 34
45. कीर्ति मलिक, साहित्य में किन्नर विमर्श की आवश्यकता, 'सरस्वती' पृ.सं.70
46. डॉ.अमरनाथ, हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृ.सं.79
47. वही, पृ.सं.79
48. सूरज पालीवाल, सघन अनुभूतियों में रचा-बसा सजग तृतीय लिंगी समाज पहल-107 पृ.सं.224
49. डॉ. राधिका के.एन., तृतीय लिंगी की समस्याएं, युद्धरत आम आदमी, सं.सूरज बडत्या-53 (जन-2018) नई दिल्ली पृ.82
50. www.bbc.com
51. www.bbc.com
52. मोहम्मद हुसैन डायर, 'किन्नरों का सामूहिक साक्षात्कार', सरस्वती, अप्रेल-सित. 2018 सं.महेश भारद्वाज, पृ.सं.23
53. सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौंड, 'विमर्श का तीसरा पक्ष', डॉ.चंदेश्वर, सिनेमा और साहित्य में हिजड़े: एक समीक्षा' अनंग प्रकाशन, दिल्ली (2016) पृ.सं. 251
54. विकिपीडिया से-

तृतीय अध्याय:- किन्नर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का समग्र विश्लेषण

3.1 उपन्यासों के विश्लेषण का प्रमुख उद्देश्य

3.2 समकालीन भारतीय उपन्यास (किन्नर केन्द्रित)

3.3 प्रमुख हिंदी उपन्यास

3.3.1 यमदीप - नीरजा माधव (2002)

3.3.2 मैं भी औरत हूँ - अनुसूया त्यागी (2008)

3.3.3 किन्नर कथा - महेंद्र भीष्म (2011)

3.3.4 तीसरी ताली - प्रदीप सौरभ (2011)

3.3.5 गुलाम मंडी - निर्मला भुराड़िया (2014)

3.3.6 पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा - चित्रा मुद्गल (2016)

3.3.7 मैं पायल - महेंद्र भीष्म (2016)

3.3.8 जिंदगी 50-50 - भगवंत अनमोल (2018)

3.3.9 दरमियाना - सुभाष अखिल (2018)

3.3.10 अस्तित्व - गिरिजा भारती (2018)

3.3.11 अस्तित्व की तलाश में: सिमरन- मोनिका देवी (2019)

3.3.12 हाफमैंन (ए पेनफुल जर्नी) - भुवनेश्वर उपाध्याय (2020)

3.3.13 ऐ जिंदगी तुझे सलाम- हरभजन सिंह मेहरोत्रा (2020)

3.3.14 मेरे हिस्से की धूप- नीना शर्मा 'हरेश' (2020)

3.3.15 मंगलमुखी - डॉ. लता अग्रवाल (2020)

किन्नर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों का समग्र विश्लेषण

जिस समुदाय का नाम लेने में भी अभिशाप या शर्म का भाव महसूस किया जाता है ऐसे समुदाय अथवा वर्ग को यदि साहित्य में स्थान दिया जाए तो इससे साहित्य की महत्ता सिद्ध होगी। जो साहित्य अपने आवरण में समाज और व्यक्ति के महीन रूपों की पड़ताल करता है और उसका अतिसूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करता है; उस साहित्य में इस वर्ग को भी उचित स्थान मिल जाए तो इसके उत्थान में साहित्य का सहयोग समायोजित हो जायेगा। इस समुदाय को लेकर वेद प्रकाश बटुक इस प्रकार से कुछ पंक्तियाँ लिखतें हैं:-

"आज मैंने अपना इतिहास दफनते देखा है

और उसकी मजार पर नाचते हुए देखा है

पचपन करोड़ हिजड़े।"[113]

किन्नर समुदाय अपने अस्तित्व को लेकर बड़ी जद्दोजहद में लगा हुआ है। अपने जन्म से लेकर मरण और फिर पतनशीलता के भीतर घुटता हुआ उनका जीवन और इस दरमियाँ उनके द्वारा किये गए संघर्षों की दास्तां शायद आज तक हमने अधिक मात्रा में नहीं सुनी होगी और सुनी भी होगी तो उपरी तौर पर। लेकिन जब से इस समुदाय के जीवन संघर्षों को लेकर विविध भाषाओं में लेखन कार्य की शुरुआत हुई है; तब से यह भी विमर्श की श्रेणी में आकर खड़ा हो गया है। जिससे विभिन्न क्षेत्रों में निवासित और निर्वासित किन्नर समुदाय और उनके सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक पक्षों को लेकर मुद्दों और आपसी विचार-विमर्श का दौर चल पड़ा है।

साहित्य में दलित, आदिवासी, स्त्री विमर्श आदि विमर्शों का दौर चला जिसके माध्यम से समाज की मुख्यधारा से कटे वर्गों को समाज के साथ जोड़ने का उचित प्रयास किया गया। साहित्य समाज की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है जो व्यक्ति को समाज से जोड़े रखता है। ऐसा ही एक विमर्श 'किन्नर विमर्श' भी उभर कर आया और इसने किन्नरों के अधिकारों की मांग की। उन्हें समाज की मुख्यधारा में लाने का मुद्दा उठाया और इस हेतु प्रयास किया। लेकिन केवल विमर्शों के

[113] विजेंद्र प्रताप सिंह, 'विमर्श का तीसरा पक्ष', पृ.सं.17

सहारे ही कोई भी समाज जो पिछड़ा हुआ है और अपना वजूद चाहता है; नहीं प्राप्त कर सकता। अपनी उन्नति में उसे सब तरह की कठिनाइयों से, रूढ़िवादी समाज से और अपने-आप से लड़ना होगा जो उनकी ख़राब स्थिति को बेहतर बना सकें। इस प्रकार से किन्नर समाज की मुक्ति में बाधक तत्वों को इस प्रकार से प्रकट किया जा सकता हैं:-

1.सामाजिक और रूढ़िवादी समाज।

2.शारीरिक बनावट।

3.इस वर्ग के प्रति हमारी मानसिकता।

4.उचित अधिकारों और अवसरों से वंचित।

5.समाज में समानता हेतु संघर्ष करना।

हिंदी भाषा में किन्नरों को लेकर लेखन कार्य की शुरुआत काफी बाद में हुई, इस मामले में अंग्रेजी और मराठी साहित्य आगे रहा। लेकिन अब हिंदी लेखकों ने भी इस विषय पर लेखन कार्य की शुरुआत कर दी है जो हिंदी पाठक वर्ग के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। मैंने अपने शोध कार्य के तृतीय अध्याय में सभी चयनित उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है जो मेरी शोध विषय से संबंधित विश्लेषणात्मक दृष्टि को प्रस्तुत करेगा और हिंदी उपन्यास सहित्य के माध्यम से किन्नर समुदाय के विभिन्न पक्षों, उनकी स्थिति और समाज का रवैया प्रस्तुत किया जायेगा।

यह विषय एक प्रकार की विचारणीय दृष्टि विकसित करता है साथ ही हमारे मन और मस्तिष्क में एक प्रकार से कौतुहल भी उत्पन्न करता है। हिंदी में कुछ उपन्यास ऐसे भी है जिनकों नाम तो किन्नर आधारित उपन्यास दिया गया है लेकिन उनमें उनके जीवन सम्बंधी नगण्य भूमिका होती है और इधर-उधर की विषय-वस्तु से उसे उपन्यास का रूप दे देते हैं इसलिए मैंने अपने शोध कार्य में उन्हीं उपन्यासों का चयन किया है जो किन्नर समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हैं।

कोई भी कार्य निरूद्धेश्य नहीं होता है, प्रत्येक कार्य किसी न किसी उद्धेश्य की पूर्ति हेतु किया जाता है। बिना किसी सार्थक प्रयोजन के कोई भी कार्य हो; चाहे वह कितना ही महत्वपूर्ण क्यों न हो

व्यर्थ ही है। अत: इन चयनित पुस्तकों की समीक्षा के भी दूरगामी उद्देश्य है जिसके माध्यम से हिंदी भाषा में लिखित किन्नर केंद्रित उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा।

- प्रत्येक कृति का सूक्ष्म और सांगोपांग विश्लेषण करना।

- उनके जीवन से जुड़े प्रत्येक पहलू को उजागर करना।

- सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक यथार्थ के उनके विविध पक्षों पर प्रकाश डालना।

मानवीय मूल्यों और सामाजिक जीवन के उत्थान के व्यापक प्रयास करना और समाज के विविध क्षेत्रों में छिपे हुए यथार्थ की अभिव्यक्ति करना इस समीक्षा का मुख्य ध्येय रहेगा। तथा इस समुदाय से जुड़ी समस्याओं और किन्नर पात्रों की मनोदशा का चित्रण करना साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में इनकी भागीदारी पर दृष्टिपात किया गया है। जरूरी नहीं की हम इन्हें केवल नेग मांगने, भीख मांगने, बधाई गाने आदि के रूप में ही जाने, इनके प्रति यदि नजरिया बदल गया तो यह वैसे ही सामान्य दृष्टि के हकदार है जैसी अन्य सामान्य जनसमूह के लिए होती है। हम क्यों इनको केवल एक नजरिये से देख पाते हैं? इनको हम एक नृत्य, कलाकार, गायक, ऑफिसर, या फिर किसी अन्य क्षेत्र में कार्य करते हुए भी देख सकतें है यदि इन्हें समुचित अवसर प्रदान किया जाये।

किसी भी माँ के गर्भ से कोई भी संतान किन्नर पैदा हो सकती है। ऐसी स्थिति में हमें अपनी जेंडर की जड़ हो चुकी परिभाषाओं को बदलना होगा। हर इन्सान जो स्त्री या पुरूष की तरह नहीं है उसे उसकी पहचान को खुद परिभाषित करने की स्वतंत्रता देनी होगी और साथ ही उस माध्यम के साथ जीने का हौसला और हिम्मत भी।

3.2 समकालीन भारतीय उपन्यास (किन्नर केंद्रित)

प्राचीन काल के ग्रंथों में 'जेंडर' को 'प्रकृति' के रूप में उल्लेखित किया गया है। कामसूत्र में भी इसकी व्याख्या की गई है। वात्सायन ने पुरूष प्रकृति, स्त्री प्रकृति और तृतीय प्रकृति का उल्लेख किया है। मनु ने 'मनुस्मृति' में इसे जैविक रूप से व्याख्यायित करते हुए कहा है कि उच्चकोटि के पुरूष से लड़के का जन्म होता है स्त्री के प्रभावी होने पर बच्ची का जन्म होता है और यदि दोनों प्रकार समान है तो तीसरे प्रकार के बच्चे का जन्म होता है अथवा बेटा-बेटी जुड़वा होते है यदि दोनों

कमजोर होते है तो वे कमजोर अथवा परिमाण में विफल होते है तो तृतीय प्रकृति के मनुष्यों की उत्पति होती है। मनुस्मृतिकार के अनुसार तृतीय प्रकृति के मनुष्यों की उत्पति जीव वैज्ञानिक कमी के कारण होती है; इसीलिए भी इन्हें हींनत्तर माना गया है। पाणिनि के संस्कृत व्याकरण में भी तीन प्रकार के लिंग का उल्लेख है। तमिल व्याकरण की पुस्तक 'तोल्काप्पियम' में भी 'नपुंसकलिंग' का उल्लेख है।

इसी प्रकार समकालीन भारतीय साहित्य अपनी विभिन्न विधाओं के मध्य विमर्शमूलक हस्तक्षेप करता रहा है लेकिन थर्ड जेंडर को लेकर अब भी उहापोह की स्थिति रही है। तेलगु, मराठी, अंग्रेजी, तमिल आदि अन्य भाषाओं में किन्नर जीवन पर आधारित उपन्यास लिखे गए। शुरूआती दौर में खुशवंत सिंह ने अपने उपन्यास 'दिल्ली' में भागमती के माध्यम से दिल्ली के राजनीतिक और तथाकथित सांस्कृतिक गलियारों को परखा और इस चकाचौंध के मध्य गुम होती 'भागमती' दिखाई देती है। तमिल साहित्य में इसकी उपस्थिति सबसे पहले हम देख सकते है जब सन् 1994 में सु-सामुथीराम द्वारा लिखित 'वादामल्ली' उपन्यास आया, जिसमें 'अरावाणी समुदाय' अर्थात हिजड़ों के समुदाय की समस्याओं को उठाया गया।

इसी कड़ी में हिजड़ा कार्यकर्ता ए. रेवती ने हिजड़ों के मुद्दे एवं लैंगिक राजनीति पर तमिल भाषा में 'उनारवुम उरुवामुन' अर्थात 'समूचे देह का अनुभव' नाम से उपन्यास लिखा, जिसे प्राथमिक अध्ययन के रूप में जेंडर स्टडीज का आधार ग्रन्थ माना जाता है। रेवती ने क्रांतिकारी लेखन करते हुए स्वयं के जैसे हिजड़ों के प्रति सामाजिक और राजनीतिक बदलाव की बात की है। इसी क्रम में उन्होंने तमिल और कन्नड़ भाषा में एक मंचनाट्य लिखा 'द ट्रुथ अबाउट मी: ए हिजड़ा लाइफ स्टोरी'। यह मंचनाट्य यथार्थवादी समझ के कारण इतना प्रसिद्ध और आवश्यक समझा जाने लगा कि इसे अमेरिकन कॉलेज, मदुरै के पाठ्यक्रम में आवश्यक विषय के रूप में शामिल कर लिया गया। प्रिया बाबू ने "नान सारवानाम अल्ला" (2007) में लिखा तो प्रथम आत्मकथा लिखने का श्रेय विद्या को जाता है, जिन्होंने(2008) में'आई. एम.विद्या' लिखा। तीस हजार हिजड़ों की जनसंख्याँ वाले तमिल समाज में लेखन की यह परम्परा हमें सोचने के लिए विवश करती है क्योंकि इसका अभिप्राय वहाँ की मानसिकता में बदलाव की बयार है। हिजड़े अपनी शिक्षा और अधिकार के प्रति सजग है तभी तो पाठ्यक्रम से लेकर कॉन्फ्रेंस तक अपनी जगह निश्चित कर चुके है। भोपाल

में मेयर से लेकर पश्चिम बंगाल के स्कूल प्राचार्य तक की राह सुनिश्चित कर पाना एक दशक पहले तक सोच पाना कठिन था।

अप्रैल 2014 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीश श्री के.एस. राधाकृष्णन ने नालसा (national legal authority) बनाम भारत सरकार पर अपना स्पष्ट निर्णय देते हुए कहा कि सार्वजनिक स्थलों पर हिजड़ों को जिस तरह से अछूत माना जाता है, उन्हें अपमानित किया जाता है, गालिया दी जाती है, वह गलत है। अब इस मानसिकता को बदलने की जरूरत है। उन्होंने आगे कहा 'तृतीय लिंगी लोगों की संख्या को देखते हुए उन्हें उनके प्रत्येक मानवीय अधिकारों (human rights) का प्रयोग करने की आजादी है। इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय भी उनके प्रति चिंतित हैं।

इनकी स्थिति पर कविता की कुछ पंक्तियां इस प्रकार उल्लेखित है:-

"वही चेहरा, वही चाल-ढाल

वही रूप रंग वही वाणी में राग।

इंसान ही है हम दीखते भी इंसान,

फिर क्यों हमारे संग ये परायेपन का स्वांग ?

ना समाज बेटी मानता हमें,

न ईश्वर ने माँ बनने का हक़ दिया।

नर-नारी की इस दुनिया ने,

हमेशा इस किन्नर का तिरस्कार किया।"[114]

---

[114] नितिन कलाल, 'किन्नर' वेब से-

हिंदी साहित्य में समाज से प्रेरित साहित्य लिखा गया। समाज जिस चेतना से अनभिज्ञ था, साहित्य के माध्यम से उस चेतना को जगाया गया। साहित्य ने सामाजिक जीवन पर आधारित लगभग सभी पहलुओं को उजागर करने का प्रयास किया; जिससे जनमानस को समाज में घटित घटनाओं का पता चल सकें और वह अपने आस-पास के वातावरण को जान सकें। हिंदी साहित्य में किन्नर जीवन को आधार बनाकर उपन्यास और कहानियाँ लिखी जा रही है जिससे हम समाज के एक उखड़े हुए हिस्से के बारे में जान सकें। 'यमदीप', 'किन्नरकथा', 'तीसरी ताली', 'मैं भी औरत हूँ', 'गुलाम मंडी', 'नाला सोपारा', 'जिंदगी 50-50', 'अस्तित्व', 'दरमियाना', 'मैं पायल' 'अस्तित्व की तलाश में:सिमरन', आदि उपन्यासों के माध्यम से हिंदी-साहित्य जगत में एक नये विषय पर लेखन कार्य शुरू किया जाने लगा है। इस लेखन कार्य को लेकर अलग-अलग प्रकार के दृष्टिकोण है। कुछ लेखकों को इस विषय से जुड़े मुद्दे पसंद आते है और कुछ को नहीं। चयनित कृतियों का विस्तृत विश्लेषण मैं यहाँ प्रस्तुत करुँगी जिसके माध्यम से आगे के अध्यायों पर अच्छी तरह से कार्य किया जा सकें।

3.3 प्रमुख हिंदी उपन्यास (किन्नर केन्द्रित)

3.3.1यमदीप

लेखिका नीरजा माधव का जन्म ग्राम-कोतवालपुर (सरेमू), जि. जौनपुर (उ.प्र.) में 15 मार्च 1962 को हुआ। पिताजी शिक्षित और माँ धर्मनिष्ठ थी। इनकी शिक्षा प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक काशी हिंदू विश्वविद्यालय से सम्पन्न हुई। आपने अंग्रेजी विषय में एम.ए. और पीएच.डी. की। उत्तरप्रदेश लोक सेवा आयोग में शैक्षिक सेवा के रूप में चयनित हुई और बाद में आकाशवाणी/दूरदर्शन के लिए राजपत्रित अधिकारी के रूप में चयनित हुई और उसी सेवा में रहने का निर्णय लिया। इनकी साहित्य के साथ-साथ शास्त्रीय संगीत में भी रुचि रही। कई पत्र-पत्रिकाओं में इनके लेख प्रकाशित हैं।

कहानी संग्रह:- 'चिटके आकाश का सूरज', 'अभी ठहरो अंधी सदी', 'आदिमगंध तथा अन्य कहानियाँ, 'पथदंश','चुपचाप तारा रोना नहीं', 'वाया पांडेपुर चौराहा'।

उपन्यास:-‘तेभ्य: स्वधा’, ‘गेशे चम्पा’, ‘यमदीप’, ‘अनुपमेय शंकर’, ‘अवर्ण महिला कांस्टेबल की डायरी’, ‘मृगदाय के अहेरी’

ललित निबंध:- ‘चैत चित्त मन महुआ’

कविता संग्रह:- ‘प्रस्थानत्रयी’

पत्रकारिता:- ‘रेडियो का कलापक्ष’

सम्मान:- ‘सर्जना पुरस्कार’, ‘यशपाल पुरस्कार’, ‘मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी अवार्ड’, ‘शंकराचार्य पुरस्कार’

नीरजा माधव ने किन्नर जीवन का यथार्थ ‘यमदीप’ उपन्यास में खोला है। हिंदी साहित्य में यह प्रथम उपन्यास है जिसमें पहली बार किन्नर जीवन से संबंधित विषय को आधार बनाया गया। इससे पूर्व यत्र-तत्र कहानियों में अल्प भूमिका के रूप में किन्नरों को पात्र बनाया गया लेकिन उपन्यास के माध्यम से पहली अभिव्यक्ति हिंदी-साहित्य में ‘यमदीप’ के माध्यम से ही हुई जिसमें लेखिका ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि किन्नर समुदाय के बच्चों को सामान्य बच्चों की तरह जीवन यापन करने का अधिकार मिलना चाहिए। ‘यमदीप’ के माध्यम से लेखिका ने सर्वप्रथम हिंदी साहित्य में उनकी स्थिति का आकलन करने की कोशिश की है। यमदीप का लेखन उनका स्वयं का अनुभव है, सुना हुआ नहीं अपितु देखा हुआ। इन्होंने किन्नर बस्तियों में जा-जाकर इनके जीवन की पड़ताल करने की कोशिश की। अब प्रश्न यह है कि लेखिका ने इस विषय पर लिखने हेतु शीर्षक का चुनाव कैसे किया? इस उपन्यास का नाम यमदीप ही कैसे रखा? यह भी विचारणीय प्रश्न है।

एक इन्टरव्यू में पूछे जाने पर लेखिका बताती है कि थर्डजेंडर लोग उस दीपक की तरह है जो दीपावली से एक दिन पूर्व यमराज के नाम से निकालकर कूड़े-करकट या घूरे पर रख देते हैं और उसको पीछे पलटकर देखना मना होता है। इससे यही अर्थ प्रकट होता है कि जिस प्रकार यम को बुरा प्रतीक बताया गया है उसी आधार पर किन्नर को भी बुरा माना जाता है। इसी आधार पर लेखिका ने इस उपन्यास के शीर्षक का चयन किया। उन्होंने उनके पास बैठकर, उनकी बस्तियों में जाकर, उनके जीवन की पूरी पड़ताल करने के बाद ही इस उपन्यास को लिखा। चाहरदीवारी में

कथानक बुनकर नहीं लिखा। इस उपन्यास के आने के बाद किन्नरों के प्रति पूर्व दृष्टिकोण में भी थोड़ा बहुत परिवर्तन आने लगा। लेखिका से जब पूछा गया कि किन्नरों के प्रति समाज का नजरिया कैसा होना चाहिए? तो लेखिका बताती हैं कि “हमारा नजरिया बेहद सहानुभूतिपूर्ण और संवेदनापूर्ण होना चाहिए। वे भी हमारी, आपकी तरह मनुष्य हैं। हमारे घरों में ही वे पैदा हुए है, अलग से उनकी कोई जाति, धर्म या संप्रदाय नहीं हैं। प्रकृति के क्रूर मजाक को, पूरे समाज को उसी प्रकार स्वीकार करना चाहिए जैसे परिवार में किसी दिव्यांग बच्चे को हम संभालकर रखतें हैं।”[115] लेखिका इसमें किन्नर समुदाय के हितों के लिए विभिन्न उद्देश्यों को साथ लेकर चलती है। विभिन्न मुद्दों को ध्यान में रखकर उपन्यास की रचना की गई है ताकि किन्नरों की स्थिति को धरातल से ऊपर उठाया जा सके।

उपन्यासकार कथानक की शुरुआत किन्नरों की मानवतावादी दृष्टि से करती है। बीच रास्ते में सड़क पर मानसिक विमंदित महिला दर्द से कराह रही थी। उसकी आवाज सुनकर नाजबीबी, चमेली और शबनम दौड़कर उसकी सहायता करने के लिए उसके पास चले आते हैं। वह महिला किसी भेड़िये की हवस का शिकार होकर गर्भवती हो गई थी। वह दर्द से चीख रही थी। वे सब उसको देखकर द्रवित हो जाते है और आसपास खड़े लोगों को डॉक्टर बुलाने को कहते हैं लेकिन उनकी कोई नहीं सुनता है और वे गुस्से में भर जाते है यथा:- “चुप, बिलकुल अंधे हो गए हो क्या छिबरी के औलाद? और देख नहीं रहे हो बेचारी दर्द से कैसे छटपटा रही है, और तुमकों गाना बजाना सूझ रहा है...। अरे ओ भइया...जरा अपनी अम्मा और चाची को भेजो। बेचारी की मदद कर दे। नाजबीबी ने दूर खड़े लड़कों को देखकर विनती की थी। लड़के खिस्स से हँस पड़े।”[116] इस प्रकार से उनका विद्रोही स्वरूप उपन्यास में कई स्थानों पर देखने को मिलता है। कथानक में आगे उस पगली के द्वारा जन्म दी गई बच्ची को किसी के द्वारा नहीं लेने पर वे उसे अपनी बस्ती में ले आते हैं लेकिन उन्हें अपनी बस्ती के लोगों और पुलिस का डर लगा रहता है।

किन्नर समुदाय अपने गुरू को ही सर्वोपरि मानता है। उसकी आज्ञा के बगैर कोई भी काम करना वे उचित नहीं समझते। यहाँ तक कि अपनी कमाई का हिस्सा भी अपने गुरू को सौंपते हैं।

---

[115] नीरजा माधव, डॉ. एम. फिरोज खान से बातचीत -साहित्यपीडिया हिंदी-

[116] नीरजा माधव, 'यमदीप', सामयिक प्रकाशन, (2001) नई दिल्ली पृ.सं.10

उपन्यास में भी लेखिका ने किन्नरों के गुरू के महत्त्व को दर्शाया है। माहताब हिजड़ों के गुरू हैं, उनके निर्देश के बिना समुदाय का कोई भी निर्णय नहीं लिया जा सकता:- “उनका अनुशासन और आदेश सर्वमान्य था। परंतु अपना कोई आदेश सुनाते समय वे अपने समुदाय के लोगों की भावनाओं का बहुत ख्याल रखते थे। उनके पिछले जीवन के बारे में किसी को बहुत कुछ मालूम नहीं था। उन्होंने कभी बताया भी नहीं, किसी ने पूछा भी नहीं।”[117] इस प्रकार से उनके गुरू की आज्ञा उनके लिए सर्वोपरि है, वे कभी भी अपने गुरू के साथ अन्याय नहीं कर सकते और न ही कभी उन्हें धोखा दे सकते है।

उपन्यास में लेखिका ने उनकों हमेशा अपने-आपको कोसते हुए दिखाया है। वे अपनी जिंदगी नरक से भी बद्तर मानते है। जब नाजबीबी सोना को पालने के बारे में सोचती है तो वह विचार करती है कि वह उसका ध्यान कैसे रख पायेगी लेकिन दूसरे ही पल उसके मन में दया का भाव उमड़ जाता है। वह अपने-आप को कोसती हुई कहती है कि:- “अपने लिए तो जानवर भी जी लेते हैं। हमें भी तो भगवान ने जानवर से भी बद्तर बनाए रखने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी थी। हो सकता है इस बच्ची के रूप में इन्सान की सेवा से अगला जनम सुधर जाए। शायद इसीलिए भगवान ने उसके पास इस रूप में सोना को भेज दिया हैं।”[118] इस प्रकार से उनकी दया भावना और सहृदयता को प्रकट किया गया हैं।

नीरजा माधव नारी-मुक्ति आंदोलन से अपने कथानक एवं पात्रों को हमेशा दूर रखती है। उपन्यास में दैहिक निजता को वे अकेले महसूस करते और झेलते रहने के लिए मजबूर है, लेकिन उस जीवन को भी उत्सव के रूप में बनाकर जीने वाले लोगों का एक वर्ग मौजूद हैं। किसी के प्रति पाप करना उनकों स्वीकार्य नहीं है। उपन्यास के बीच-बीच में कुछ अन्य प्रसंग भी आकर जुड़ जाते है जिनका उपन्यास की मूल कथा-वस्तु से कोई लेना-देना नहीं हैं:- जैसे राजनीतिक जीवन से संबंधित कुछ मुद्दे, ‘आकाश की चाहत’, में स्त्री संबंधी प्रश्न आदि जिनकों लेखिका ने मूल कथानक से हटकर अन्य के रूप से शामिल किया है।

[117] वही, पृ.सं.20

[118] वही, पृ.सं.25

किन्नर जो कि जनन प्रक्रिया में समर्थ नहीं है फिर भी उनके मन में एक ममतामयी भाव उपस्थित रहता हैं। उपन्यास में नाजबीबी का सोना से कोई रिश्ता न होने पर भी उसके साथ एक अटूट ममत्त्व भाव जुड़ जाता है, वह सोना के जीवन के लिए उससे दूर होना चाहती है लेकिन चाहकर भी उसकी ममता उससे दूर नहीं हो पाती है। सोना को भी यही लगता है कि नाजबीबी ही उसकी माता है। लेकिन नाजबीबी उसके भविष्य को लेकर चिंतित रहती है। कि यह समाज उसे एक हिजड़ा की बेटी के रूप में देखेगा, उसका उपहास उड़ाएगा। इस कारण वह सोना से दूर होना चाहती है यथा:- "नाजबीबी का मन स्नेह से उमड़ आया था। सोना के इसी स्नेह बंधन में तो वह कब से जकड़ती चली जा रही थी, जिसे अब छुड़ा पाना असंभव सा लग रहा था। उसने प्यार से सोना का गाल थपथपाया और पुचकारते हुए बोली- "जा थोड़ी देर घूम आ। मैं डरूंगी नहीं। गुरूजी हैं न।"[119] लेखिका ने हिजड़ों के प्रति जन-मानस में भरे हुए विद्वेष को भी उपन्यास में प्रकट किया है। उसका चित्रण उपन्यास में कई बार हुआ है। ऐसा विद्वेष जो इन्हें हिकारत की नजर से देखता है। कुछ लोग इनका शोषण करना चाहते हैं तो कुछ इनसे दूर रहना चाहते हैं।

एक बार जब नाजबीबी सोना को स्कूल में प्रवेश दिलाने के लिए लेकर गई तो बड़े तो बड़े वहाँ बच्चों ने भी उन पर टिप्पणियाँ करना प्रारंभ कर दिया, उसका चित्रण एक बालमन में इस प्रकार दिखाई देता हैं। एक लड़का अपने दोस्त को कहता है कि "ऐ नितिन, उधर मत जाओ। वो देखो हिजड़ा। मेरी मम्मी कहती है कि इनके पास मत जाना, नहीं तो पकड़ ले जाएंगे।"[120] इस तरह से वे लोगों से परेशान हो उठते हैं। उपन्यास में कहीं-कहीं अन्यत्र प्रसंग भी आ गए है जैसे राजनीतिक पार्टियों, 'आकाश की चाहत' में स्त्री संबंधी प्रश्न आदि जिनकों लेखिका ने बेवजह शामिल किया है। उन्होंने मानवी और आनंद कुमार के माध्यम से ऐतिहासिक संदर्भो को रखने की कोशिश की है। साथ ही उनकी मानसिक यातनाओं और समस्याओं को भी उजागर किया गया हैं।

नीरजा माधव कहती है कि यदि किन्नरों को बकाया धन की वसूली का काम सौंपा जाए तो वे चुटकी बजाकर वसूल कर लेंगे। उनका मानना हैं कि किन्नरों की अवहेलना करने के बजाये यदि उन्हें रोजगार मुहैया कराया जाये तो वे अपनी छवि से बाहर आ सकतें हैं। उपन्यास में आगे चलकर

[119] वही, पृ.सं. 45
[120] वही, पृ.सं.49

नंदरानी से नाजबीबी का किरदार निभाती हैं लेकिन वह दुनिया की नजर में नाजबीबी बन गई हैं। वह भेदभाव से दूर रहने का दुःख इस प्रकार प्रकट करती हैं। जब उसके भाई नंदन द्वारा उसके प्रति दुर्व्यवहार किया जाता है तो उसे बहुत दुःख होता हैं:- “देखो, तुम्हारा बार-बार टेलीफोन करना या इस परिवार से संबंध रखना, हमारी इज्जत तो बढ़ाता नहीं, उलटे तुम्हें भी दुःख होता है और मम्मी-पापा को भी। तुम परिवार में रह नहीं सकतीं, हम रख भी नहीं सकते। इसीलिए यह समझ लो कि तुम अनाथ हो। कोई नहीं तुम्हारा दुनिया में।”[121] माँ-बाप द्वारा त्याग देने पर या मज़बूरी वश समाज के डर से दूर रहने पर उनके पास रहने की लालसा आजीवन बनी रहती हैं। उनकी महत्वाकांक्षा रहती है कि अन्य लोगों की तरह वह भी माता-पिता के पास रहकर उनका प्यार पा सकें।

नाजबीबी के साथ भी ऐसी ही स्थिति थी। उसे अपने माँ-बाप की याद आते ही एक प्रकार की बैचेनी होने लगती थी। “ऐसी बैचेनी उसे कभी-कभी होती थी, और जब असहनीय हो जाती थी तभी वह उन्हें टेलीफोन करती थी। सोना के बाहर जाते ही वह अपने मम्मी-पापा के लिए तड़फ उठी। इधर छ: सात महीने हो गए थे। न तो उसने मम्मी-पापा को फोन किया और न पापा ने ही।”[122] उनकी स्वाभाविक आदते उनमें अपने-आप आ जाती हैं जैसे किसी भी बात पर ताली ठोकना, हाव-भाव करना आदि। जब नाजबीबी के माता-पिता उससे मिलने आये तब वह इस प्रकार की हरकतें करने से अपने-आप को रोक नहीं सकी। वह हर जगह पर दुत्कार दी जाती है। जब अपनी बीमार माँ से मिलने की उसकी उत्कट इच्छा हो जाती है तब वह अपने-आप को रोक नही पाती, कानपुर अपने घर मिलने चली जाती है लेकिन उसको वहाँ केवल उसकी भाभी मिलती है उसकी मम्मी गुजर चुकी थी। वह उसकी भाभी द्वारा भी दुत्कार दी जाती है।

उपन्यास में किन्नरों के गुरू माहताब भी हिजड़ों के जीवन पर रोष प्रकट करते हैं। नंदरानी (नाजबीबी) के माता-पिता से इस बात की शिकायत करते हैं:- “किसी स्कूल में आज तक किसी हिजड़ा को पढ़ते-लिखते देखा है? किसी कुर्सी पर हिजड़ा बैठा है? पुलिस में, मास्टरी में, कलक्टरी में...किसी में भी? अरे इसकी दुनिया यही है, माताजी...कोई आगे नहीं आयेगा कि हिजड़ों को

[121] वही, पृ.सं.82
[122] वही, पृ.सं.80

पढ़ाओ, लिखाओ, नौकरी दो, जैसे कुछ जातियों के लिए सरकार कर रही है।"[123] इस उपन्यास में नाजबीबी हिजड़ों के लिए शरीर की आग से ज्यादा पेट की आग को महत्त्व देती हैं। लेखिका ने उपन्यास में मानवी का प्रसंग गढ़ा है जो कही न कही उससे जुड़ी हुई जिंदगी को अभिव्यक्त करता है क्योंकि वह स्वयं भी पत्रकारिता से जुड़ी हुई थी।

इसमें मानवी एक ऐसा पात्र है जो उपन्यास के अंत में आकर कथा में परिवर्तन ला देता है और ऐसा लगने लग जाता है की यही अब किन्नरों को समस्याओं से बाहर निकाल लाएगी, लेकिन ऐसा होता नहीं है। यद्यपि वह अपनी तरफ से प्रयास अवश्य करती है लेकिन प्रयास करके ही रह जाती है। वह हिजड़ा बस्ती में जाकर उनकी पड़ताल करती है, उनके जीवन को जानने की कोशिश करती है। नाजबीबी और माहताब गुरू पहले तो उसे बताने से हिचकिचाते है लेकिन उसकी आत्मीयता देखकर वह बताने हेतु तैयार हो जाते हैं।

एक प्रसंग में महताब गुरू से पूछने पर कि हिंदु हिजड़ा और मुसलमान हिजड़ा में धर्म को लेकर कोई भेद है क्या? इस बात को लेकर वह उत्तेजित हो जाते है और अपने विचार इस प्रकार प्रकट करते हैं:- "राम भी वही, रहीम भी वही। जाना भी एक बात है, आना भी एक। कोई जनेऊ पहनकर हिंदू बच्चा तो पैदा नहीं होता। न कोई मुसलमान बच्चा खतना करवाकर। यह तो हम लोगों की भावना है कि यह मेरा अल्ला है, यह मेरा गॉड है। सभी लोगों के धर्मों का खून थोड़ा-थोड़ा इक्कट्ठा करिए उसे देखकर कोई डॉक्टर या साइंस बता दे कि यह हिंदू का खून हैं, यह मुसलमान का, तो अपना नामै बदल दे।"[124] जिस प्रकार समाज में हिंदू-मुस्लिम को लेकर अनेक भ्रांतियाँ फैली हुई है, वैसी भ्रांतियाँ किन्नर समुदाय में देखने को नहीं मिलती। इसमें किन्नरों पर किसी भी व्यक्ति को जबरदस्ती हिजड़ा बना देने का आरोप लगाया गया है। इस आरोप को सुनकर माहताब गुरू और नाजबीबी दोनों उत्तेजित हो उठते हैं। जब मानवी उनसे यह प्रश्न पूछती है कि ऐसा सुना जाता है कि आप लोग युवकों को बहला-फुसलाकर ऑपरेशन करके जबरन हिजड़ा बना देते हैं, तब माहताब गुरू आवेश में आकर इस प्रकार उत्तर देते हैं:- "देखो बेटी, अफवाह उड़ाने वाले को तो हम मना नहीं कर सकतें। अगर ऐसा किसी भी के साथ हुआ हो, तो हम अपनी कोठरी में बंद तो नहीं रखेंगे

[123] वही, पृ.सं.94
[124] वही, पृ.सं.165-166

न? बाहर नाचने-गाने जाते ही हैं हमारी बिरादरी के लोग। क्यों नहीं थाना-पुलिस में रपट करके हमको धरवा देते।"[125] इस प्रकार की अफवाहें उनके वजूद पर संकट के बादल ला देती है। इस बात से वो लोग बहुत आहत होते हैं।

उपन्यास के अंतिम प्रसंगों में सोना को लेकर नया मोड़ आता है जो कहानी में परिवर्तन ला देता हैं। हिजड़ों के डेरे पर पुलिस वालों का छापा पड़ जाता है। उनको कहीं से खबर मिलती है कि यहाँ लड़कियों का अवैध व्यापार किया जा रहा हैं। इसके अंतर्गत नाजबीबी की विवशता झलकती है। वह सोना को अपने से दूर नहीं करना चाहती थी। एक प्रकार का ममत्त्व उससे जुड़ गया था। उसको यही डर था कि कहीं पुलिस वाले उसको उससे दूर देंगे। भावनाएं किसी में भी हो सकती है फिर चाहे वह सामान्य मनुष्य हो अथवा किन्नर की। पुलिसवालों के आदेश कि सोना को नारी सुधार गृह में छोड़कर आना हैं, नाजबीबी इस बात को स्वीकार करने को तैयार नहीं होती है।

वह सोचती है कि सोना मेरे बिना नहीं रह पायेगी। इस बात पर चमेली उसे समझाती है कि तुझे किसी भी हालत में सोना का मोह छोड़ना ही पड़ेगा यथा:-"जी कड़ा कर नाज उसे समझना होगा सब कुछ। वह समझ जाएगी। हमारी भी मजबूरी और अपनी भी। नहीं रख सकते हम उसे अपने साथ। भगवान ने ही नहीं बनाया हमें इस लायक, नाज। चमेली की आँखे भी नम थी।"[126] नाजबीबी की स्थिति तो और भी कठिन थी, सोना से अब उसकी आत्मीयता गहरी जुड़ गई थी, वह उसको छोड़ नहीं पा रही थी। नाजबीबी कैसे भी करके उसे भेजना चाहती है, लेकिन उसको यही डर रहता है कि उसका बालमन दुखी हो जायेगा। उपन्यास में परेशानियाँ सोना का पीछा नहीं छोड़ती है। जब उसे नारी सुधारगृह भेजा जाता है तो वहाँ भी उसे असहनीय पीड़ा का सामना करना पड़ता है। स्त्री व्यापार को लेकर खुलासा होता है। सुधारगृह में आयी बड़ी लड़कियों से यह काम करवाया जाता है।

इसमें हिजड़े अपने आस-पास के परिवेश को देखकर औरत की जिंदगी को अपनी जिंदगी से भी बद्तर मानते हैं। मानवी की गंभीर स्थिति को देखकर नाजबीबी विचार करने लगती है "सोच रही

[125] वही, पृ.सं.167

[126] वही, पृ.सं.246

हूँ मेम साहब कि भगवान ने मुझे हिजड़ा बनाकर ठीक ही किया। अगर यह न बनाता तो मुझे जरूर औरत बनाता और तब ये सारे अत्याचार मुझे भी झेलने पड़ते।"[127] इस प्रकार औरत की पीड़ा और उसकी दशा को भी उपन्यास में प्रकट किया गया है, साथ ही राजनेताओं और प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार और छलावे की प्रवृत्ति को बखूबी दर्शाया गया है।

उपन्यास का संपूर्ण कथानक रोचक बन पड़ा है। इसमें किन्नर समुदाय के साथ-साथ लेखिका ने मानवी का प्रसंग भी उपन्यास में जोड़ दिया है जो अंत में किन्नरों के साथ खड़ा हुआ दिखाई देता है। लेकिन उपन्यास को पढ़ने के दौरान कुछ-कुछ स्थानों पर लगता है कि कुछ प्रसंग अनावश्यक रूप में आ गए हैं। जैसे डी.एम. साहब, मानवी नामक पात्र को हावी बनाना जो कभी-कभी नाजबीबी के प्रसंग को कमजोर कर देता है। राजनेताओं से संबंधित कथानक, मूल कथानक पर भारी पड़ता हुआ दिखाई पड़ता है फिर भी उपन्यास में लेखिका का सारगर्भित उद्देश्य प्रकट हुआ है।

3.3.2 मैं भी औरत हूँ-अनुसूया त्यागी

लेखिका स्वयं डॉक्टर है। जन्म कोटा (राजस्थान) में हुआ है। इन्होंने कोटा से ही एम.बी.बी.एस. किया। लेखन के अतिरिक्त इनकी पाक-कला और चित्रकला में भी रूचि रही है, साथ ही सामाजिक कार्यों में भी बराबर हिस्सा लेती रही है।

प्रकाशित कृतियाँ-

'रिश्तों का बोझ', 'उम्मीदों का कलश', 'किसके लिए' (कहानी-संग्रह)

'लेबर रूम' (संस्मरण)

उपन्यास में वह अपने पेशे से जुड़े जन्मजात विकृतियों से युक्त 'रोशनी और मंजुला' को आधार बनाकर कथानक का निर्माण करती है। उनका वर्तमान उनकी सच्चाई है और उनका भविष्य लेखिका की कल्पना। रोशनी सुबह-सुबह शोच हेतु बाहर जाती है। उसकी माँ द्वारा मना करने के बावजूद भी उसे बाहर जाना अच्छा लगता है, पक्षियों से बातें करना, हवा के साथ बहना आदि।

[127] वही, पृ.सं.287

लेकिन एक दिन उसके साथ अनहोनी हो जाती है। कुछ लड़के उसको पकड़कर उसके साथ जबरदस्ती करने का प्रयास करते हैं लेकिन उनकों खुद को भी पता नहीं होता कि वह हिजड़ा है और रोशनी को भी नहीं पता था। जब वह उनके मुँह से यह बात सुनती है तो सोच में पड़ जाती है। उन लड़कों द्वारा उसके साथ किये गये व्यवहार से वह व्यथित हो जाती है। वह यह बात किसी को बता भी नहीं सकती, अंदर ही अंदर घुटती रहती है।

वह अपने देश में स्त्रियों के प्रति वहशी भेड़ियों की दृष्टि से घृणा करने लगती है। वह बाल सुलभ मनोभाव प्रकट करते हुए कहती है कि:- "रोशनी की इच्छा हो रही थी वह जोर-जोर से चिल्लाए, रोए, इस समाज को धिक्कारे, भगवान को कोसे कि उन्होंने क्यों उसे लड़की बनाया और भारत में पैदा किया। इससे तो कहीं किसी विदेश में या शहर में पैदा हुई होती, पर भारत के शहर भी कहाँ सुरक्षित रह गए हैं महिलाओं के लिए?"[128] उसकी माँ और बहिन के पूछने पर भी इस डर से नहीं बताती है कि कहीं इनकों पता चल गया तो मेरा आना-जाना बंद कर देंगे। उसके माता-पिता को कुछ भी पता नहीं चल पाया जो घटना उसके साथ हुई थी।

कुछ समय उपरांत उसकी माँ को चिंता होने लगी कि इनकी आयु बढ़ती जा रही है फिर भी इनकों माहवारी नहीं आयी। वह उनकों डॉक्टर के पास ले जाती है तब डॉक्टर सोच में पड़ जाती है कि दो बहनों को एक साथ ऐसी विकृति पहली बार देखने को मिल रही है। फिर भी इसका हल निकाला जायेगा। मंजुला का तो इलाज हो जायेगा, वह पूरी तरह ठीक हो जाएगी और माँ भी बन सकती है लेकिन रोशनी माँ नहीं बन सकती। वह शादी कर सकती है। डॉक्टर ने इलाज में आने वाला खर्चा भी बता दिया। दोनों के माता-पिता सुधा और तुलसीराम इलाज के लिए तैयार हो गये और दोनों का गुप्त तरीके से सफल ऑपरेशन भी हो जाता है। उनके माता-पिता को यह चिंता लगी रहती है कि इस बात की गाँव में कानो-कान खबर नहीं होनी चाहिए वरना इनकी शादी में बाधा उत्पन्न हो सकती है।

मंजुला का विवाह एक डॉक्टर से कर दिया जाता है जो बहुत ही व्यवहार कुशल होता है, और सेवा भावी भी है। उपन्यास में एक तरफ मंजुल और विपिन के जीवन की कथा चलती रहती है

---

[128] अनुसूया त्यागी, 'मैं भी औरत हूँ', (2011) परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली पृ.सं.56

जिसमें सेवा और समर्पण का भाव है। वह गाँव के लोगों के लिए मेडिकल खुलवाता है और मरीजों की देखभाल करता है। इस कार्य के लिए उसे सरपंच जी से शाबाशी मिलती रहती है। सरपंच रामसिंह गांववालों के सामने उसकी तारीफ़ करते हुए नहीं थकता है। इसके उपरांत वह गाँव की लड़कियों के लिए अलग से विद्यालय भी खुलवाता है जिसमें पूरा गाँव उसका सहयोग करता है। मंजुला विपिन के समझाने पर उन लड़कियों को पढ़ाने के लिए भी तैयार हो जाती है।

उधर रोशनी बी.टेक करके एम.बी.ए. कर चुकी थी और पुणे में अपना शानदार जीवन गुजार रही थी। वह लगातार ऊँचाई पर चढ़ रही थी। जितनी दृढ़ता से उसने सपने देखे थे उसी दृढ़ता से उसने अपने सपनों को साकार भी किया और ग्लेनमार्क कंपनी की सी.ई.ओ. बन गई। इन्टरव्यू के दौरान उसकी इस तरह से तारीफ़ की गई यथा:- "तब वह स्वयं कह उठा था, यंग लेडी यू आर डिजर्व दिस पोस्ट, आई विल बी वेरी हैप्पी, इफ यू विल ज्वाइन आवर कंपनी।"[129] लेकिन इन सबको पाकर भी वह पारिवारिक जीवन का सुख नहीं भोग पाती है। यह प्रश्न लेखिका उपन्यास में करती है। वह इतने बड़े पद पर प्रतिष्ठित है जिसकी लालसा लोगों को आजीवन रहती है फिर भी उसके जीवन में सुकून कहाँ था। उसकी आयु 36 साल हो चुकी थी। "पर वह क्या सब कुछ मिला है रोशनी को, जो एक औरत को चाहिए? क्या उसे एक पति मिला, बच्चे मिले, एक घर मिला, जो महिला को चाहिए? आज देखा जाए तो दुनिया की नजरों में रोशनी के पास सब-कुछ है।"[130] वह कभी-कभी अपनी जिंदगी से तंग आकर अपने-आप से प्रश्न करती कि आखिर भगवान ने मुझे ऐसा क्यों बनाया? वह खुद को हेय दृष्टि से देखने लगती है। वह भी चाहती है कि उसका संसार बसे, परिवार हो जैसे मंजुला दीदी का है। कोई उसकी भी देखभाल करें।

कथानक में आगे ओंकार पटेल नाम का व्यक्ति ही उससे नजदीकियाँ बढ़ाना प्रारंभ कर देता है, वह उससे दूर रहना चाहती है लेकिन उसका मिलना-जुलना लगा ही रहता है और एक दिन उसका वह प्रेम शारीरिक संबंध में परिवर्तित हो जाता है तब उसे एहसास होता है कि वह भी शादी कर सकती है, वह अपूर्ण नहीं है। रोशनी जब कम्पनी के काम के लिए स्विट्जरलैंड चली गई तो ओंकार उससे बार-बार पूछता है कि तुम्हारा जवाब क्या है? लेकिन रोशनी को तो इसी बात की

---

[129] वही, पृ.सं.56
[130] वही, पृ.सं.56

चिंता लगी रहती कि कहीं ओंकार ने उसका सच जानकार उसे अस्वीकार कर दिया तो इसी डर के कारण वह उसे जवाब नहीं दे पा रही थी क्योंकि पहले भी उसके साथ ऐसी घटना घट चुकी थी। उसके ही साथी नकुल से उसे लगाव हो गया था लेकिन उसकी सच्चाई जानकर वह उसे छोड़कर चला जाता है तब रोशनी निश्चय करती है कि वह किसी भी पुरूष से कभी मित्रता नही करेगी। जब से उसकी जिंदगी में ओंकार प्रवेश करता है, उसकी जिंदगी पूरी तरह से बदल जाती है। वह उससे शादी करता है तथा बच्चे न होने की बात जानकर भी उसे स्वीकार कर लेता है और रोशनी अपने सपनों को पूरा करने लगती है फिर भी अतीत की स्मृतियाँ उसका पीछा नहीं छोड़ती है। वह भी चाहती है कि उसकी भी कोई संतान हो।

वह बार-बार पटेल से भी पूछती है लेकिन पटेल मस्त-मौला व्यक्ति है उसको इन सब बातों से कोई लेना-देना नहीं है, वह सिर्फ अपनी पत्नी की ख़ुशी चाहता है और कुछ नहीं यथा:- “मुझे अपनी रोशनी पर पूरा विश्वास जो है, इतनी बड़ी कंपनी की सी.ई.ओ. जो है, उसे अच्छा मैनेज कर सकती है तो वह बच्चे जैसी छोटी बात का इंतजाम नहीं कर सकती।”[131] लेखिका उपन्यास में कथानक का विस्तार करती हुई चलती है। इस बीच रोशनी और उसके परिवार की जिंदगी में कई मोड़ आ जाते हैं। रोशनी संपूर्ण उपन्यास में अलग-अलग किरदार निभाते हुए दिखाई पड़ती है। वह इला सावंत नाम की महिला को कुछ राशि के बदले सेरोगेट मदर के रूप में चुनती है लेकिन वह महिला उसको धोखा देकर चली जाती है। हालांकि रोशनी उसका बहुत ध्यान रखती है । लेकिन वह बच्चा उसे नहीं देना चाहती फिर ओंकार और रोशनी आपस में निर्णय करते है कि कोई बच्चा गोद ले लिया जाए और ऊटी में एक बच्ची गोद ले ली जाती है जिसका नाम तेजस्वी रखा जाता है।

ओंकार और रोशनी नोएडा में स्वयं की सॉफ्टवेयर कंपनी खोल लेते है और तेज भी वही से आई.आई.टी. दिल्ली में पढ़ने लग जाती है वहीं उसकी मयंक सावंत नामक लड़के से मुलाक़ात होती है जो आई.आई.टी. टॉपर रहा है। वह उसके व्यवहार और सादगी से हतप्रभ रह जाती है और उसके निजी जीवन के बारे में जानने की कोशिश करती है। इस प्रकार कथानक आगे से आगे चलता रहता है। रोशनी को जब इला द्वारा दिये गये पत्र से उसे सारी सच्चाई का पता चल जाता है कि

[131] वही, पृ.सं.85

मयंक उसका ही पुत्र है। इसके बाद रोशनी निर्णय लेती है तेज और मयंक की शादी करवाने का और उनकी शादी हो जाती है।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जिन परिस्थितियों में उपन्यास की भूमिका तैयार की गई थी अंत तक आते-आते वे सारी परिस्थितियाँ ही परिवर्तित हो जाती है लेकिन सभी पात्र एक-दूसरे से किसी न किसी रूप में जुड़े हुए रहते हैं। उपन्यास जिस मूल उद्देश्य किन्नर समाज को लेकर लिखा गया है, वह अंत तक आते-आते गौण हो जाता है। रोशनी एक पूर्ण औरत का दर्जा पा जाती है और वह चिल्ला-चिल्लाकर सबको यह बताना चाहती है कि 'मैं भी औरत हूँ'। सर्जरी से वह औरत बनती है और डॉक्टर को वह भगवान का दर्जा दे डालती है। उपन्यास का कथानक कहीं-कहीं भटक जाता है, लेकिन लेखिका ने रोशनी से जुड़े प्रसंगों को विस्तार से बताकर उपन्यास को रोचक बनाने का प्रयास किया है जिसमें किन्नर जीवन पर प्रकाश डालने वाले अंश कम ही दिखाई देते हैं।

उपन्यास अपने मुख्य उद्देश्य से विलग होकर कथानक आगे बढ़ाता रहता है जिससे कथानक गतिशील बना रह सकें और पाठक को अपनी और आकर्षित कर पाए। उपन्यास की शुरूआती योजना किन्नर समुदाय की समस्याओं और किन्नर से लिंग परिवर्तित करवाकर स्त्री अथवा पुरूष बनने का विकल्प भी यहाँ प्रस्तुत है ताकि इनके जीवन में बदलाव आ सके और जिस शरीर में यह अपने-आपको सहज महसूस करते हो, उसमें रह सके। यही उपन्यास का उद्देश्य भी है।

3.3.3 किन्नर कथा-महेंद्र भीष्म

महेंद्र भीष्म के उपन्यास 'किन्नरकथा' में एक ऐसे कथानक की और दृष्टिपात किया गया है जिसमें किन्नर समाज और उनके द्वारा किये गए जीवन संघर्षों का कच्चा चिट्ठा खोला गया है। घर-परिवार, समाज से विस्थापन का दर्द किस प्रकार झेलते हुए भी वह जीवन जीते हैं उसका चित्रण किया गया है। यह कृति पाठकों की संवेदना को झंकझोर कर रख देती है। इस उपन्यास को पढ़ने के बाद इसकी विषयवस्तु बड़ी गहराई से हृदय में उतर जाती है। इसके बाद ऐसा लगता है कि लेखक ने किन्नरों के विभिन्न दुखों को बड़ी निकटता से अनुभव किया है।

स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि ने अपनी मान्यताओं के अनुसार विमर्श चलाकर अपनी स्थिति में सुधार करने का प्रयास किया। स्त्री विमर्श स्त्रियों के उत्थान और उनके अधिकारों की बात करता है तो दलित विमर्श दलित समाज के विकास की, और आदिवासी विमर्श आदिवासियों के हितों के लिए प्रयासरत है। समाज के इन सभी उपेक्षित, पीड़ित और अग्रहित वर्गों के समर्थन में यह विमर्श चलाये गए ताकि इनकी दशा और दिशा दोनों में ही परिवर्तन लाया जा सके। इन सबके अलावा समाज का एक और उपेक्षित, उपहासित और त्याज्य वर्ग है जिस पर हमारा ध्यानाकर्षण कम ही हुआ है, वह है किन्नर समाज। इस वर्ग के नाम से आंतरिक रूप से तो शायद आप सभी परिचित होंगे लेकिन इनकी वेदना का शायद किसी को अंदाजा भी नहीं हो सकता। यह हमारे सामाजिक सन्दर्भों से मीलों दूर रखा जाने वाला वह वर्ग है जिसे सामाजिक मान्यताएँ नहीं दी जाती है। इस पीड़ित, शोषित, अपमानित वर्ग की कारूणिक व्यथा को शायद ही कोई इतनी गहनता से अभिव्यक्त कर पाएं जो इनके दर्दनाक जीवन की समस्त अभिव्यक्ति करने में सहायक हो सके।

साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है, समाज के सभी क्रिया-कलापों, राग-विराग, सुख-दुःख को अभिव्यक्ति प्रदान करने की क्षमता साहित्य में निहित होती है। इसी परंपरा के तहत स्त्री पीड़ा की मुक्ति की कामना करने के लिए जो साहित्य लिखा गया उसने स्त्री विमर्श से अपने-आप को जोड़ लिया। जो साहित्य दलितों की पीड़ा के उद्घाटन में सहयोगी रहा उस साहित्य को दलित विमर्श में सहयोगी कहा गया। आदिवासी विमर्श ने भी आदिवासियों की पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की। इस प्रकार से एक और तो स्त्री विमर्श और दूसरा दलित और आदिवासी विमर्श। इन दोनों (दलित और आदिवासी) को एक घेरे में रखा गया और स्त्री विमर्श को अलग रखा गया क्योंकि इसके प्रतिनिधित्व में महिला लेखिकाएँ अधिक आगे आयी। विभिन्न विमर्शों के दौरान उपरोक्त दोनों स्त्री और दलित, आदिवासी विमर्श पर तो खूब लिखा गया, वाद-विवाद, संगोष्ठियाँ, चर्चाएँ, परिचर्चाएँ होती रही लेकिन हमारे परम्परागत सभ्य भारतीय समाज में एक और वर्ग ऐसा भी है जिसकी तरफ हमारी दृष्टि कम ही गई है या यों कहे कि न के बराबर गई है। वह वर्ग 'किन्नर' समुदाय या उनकी दृष्टि में गाली की भाषा में कहे तो हिजड़ा समुदाय है। उनके लिए 'हिजड़ा' शब्द प्रयुक्त

करना अपमान की बात होगी इसीलिए उन्हें किन्नर शब्द से अभिहित किया जाये तो अधिक उचित रहेगा।

यह समाज का ऐसा तीसरा वर्ग है जिसे जन्म से लेकर मृत्युपरांत आजीवन अभिशप्त जीवन निर्वहन करने पर मजबूर होना पड़ता है। अपमान और धिक्कार की जिन्दगी जीते इस वर्ग का ऐसे जन्म लेना पाप समझा जाता है। नियति क्यों इन पर इतनी क्रूर हो जाती है कि इन्हें न स्त्री न पुरूष 'बीच' का समझा जाता है? अब इस 'बीच' के होने का दर्द क्या हो सकता है। यह तो इनसे बेहतर कोई नहीं जान सकता। इनके जन्म लेने में आखिर किसका दोष माना जाए? ईश्वर या स्वयं का, जिन्होंने ऐसा शरीर धारण किया; जिसके कारण उन्हें सबकी घृणित दृष्टि का शिकार होना पड़ता है। इनसे आखिर ऐसी क्या भूल हो गई कि यह सामान्य मनुष्य की भांति अपना जीवन निर्वहन नहीं कर सकते? इस संदर्भ में हमें सोचने, समझने की आवश्यकता जान पड़ती है।

यह ऐसी दुनिया का कटु यथार्थ है जो हाशिये के समाज पर है। सामाजिक, सांस्कृतिक अस्वीकार से पीड़ित इस समुदाय को बहु-सांस्कृतिक और विकसित बनाने की हमसे दरकार है। ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की पीड़ा को उपन्यास साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्ति महेंद्र भीष्म के बहुचर्चित उपन्यास 'किन्नर कथा' के माध्यम से मिली। अत्यंत गंभीरता से किन्नरों के साथ होने वाले अन्याय को उपन्यास में कुरेदा गया है। राज-परिवार में जन्म लेने वाले किन्नर का जन्म किस प्रकार उसके परिवार और समाज के लिए दुःखदायी होता है, इस त्रासद और भयानक जीवन में नाना प्रकार के दुखों से उसे गुजरना पड़ता है, इस विभीषिका का चित्रण इसमें किया गया है। लेखक ने अत्यंत सरल भाषा शैली और कथानक में रोचक उप-कथाओं को जोड़ते हुए उपन्यास की महत्ता में अभिवृद्धि की है। लेखक इसमें किन्नर समुदाय के हितो के लिए विभिन्न उद्देश्यों को साथ लेकर चलता है। यथा-

1.किन्नरों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास करना।

2.समाज में किन्नरों की हिस्सेदारी सुनिश्चित करना।

3.उनका योगदान स्वीकार्य करना और बराबर का दर्जा देना।

4.किन्नरों की विविध समस्याओं को समझते हुए उनके समुचित विकास हेतु प्रयास करना।

5.समाज की किन्नर जाति के प्रति संकीर्ण मानसिकता को दूर करना और उनके आत्मसम्मान में वृद्धि करना।

6.उनके दर्द की पक्की अभिव्यक्ति से जनता को रू-ब-रू करवाना और उनके जीवन के कटु यथार्थ को सबके सामने लाना।

7.किन्नरों के अधिकारों की बात करना और सबके समक्ष उनकी समानता स्थापित करना ताकि उन्हें लोगों की छोटी मानसिकता से दूर रखा जा सके।

उपर्युक्त सभी मुद्दों को ध्यान में रखकर उपन्यास की रचना की गई ताकि किन्नरों की स्थिति को धरातल से ऊपर उठाया जा सके।

'किन्नर कथा' किन्नर समाज की पीड़ा की पैरवी में लिखा गया यह उपन्यास प्रबुद्ध पाठक वर्ग का ध्यान आकर्षित करता है और किन्नरों को अपने सम्मान और अधिकारों के प्रति जागरूक करता है। इसमें समाज, परम्परा और खोखले मूल्यों पर एक साथ चोट करते हुए नवीन जीवन मूल्यों को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। 'किन्नर कथा' के माध्यम से किन्नरों की आह और वेदना की उपस्थिति दर्ज की गई है जो अपने ही परिवार और समाज से निरंतर दुखों की पीड़ा झेलते रहते है। मानव समाज अपने चरम विकास के युग में प्रवेश करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा है किंतु समाज का यह वर्ग अभी भी इस मुख्य धारा से जुड़ नहीं पा रहा है इसके मूल में अनेक कारण विद्यमान है किंतु मूल कारण है जन सामान्य की इस वर्ग के प्रति हेय मानसिक अवधारणा।

इस उपन्यास में राजघराने में जन्मी चंदा (परिवर्तित नाम) की कहानी है जिसके किन्नर होने का पता चलने पर अपने ही पिता के द्वारा मरवाने का प्रयास किया जाता है:- "उसके खानदान की साख को बट्टा न लगे, वंश में हिजड़ा बच्चा पैदा होने के कलंक से बच जाए। कुल की मर्यादा सुरक्षित रहे, वह सौंप दे अपनी बेटी को मृत्यु का ग्रास बनने के लिए।"[132] उपन्यास के कथानक में अधूरी देह की पीड़ा, सामाजिक उपेक्षा, पारम्परिक एवं पारस्परिक संघर्ष, अवसाद एवं विद्वेष जैसे

[132] महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.33

नकारात्मक भावों को दर्शाते हुए लेखक ने किन्नर समाज की कारूणिक कथा को अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। शारीरिक रूप से यदि कोई विकलांग हो तो उसको इतना दंश नहीं झेलना पड़ता जितना यौनिक रूप से विकलांग व्यक्ति को। इससे वह मानसिक और शारीरिक दोनों ही रूपों में हीन ग्रंथि का शिकार हो जाता है। इसमें किन्नरों की अनदेखी, अनसुनी पीड़ा की खुलकर अभिव्यक्ति हो पायी है।

उपन्यास का आरम्भ होता है दो बेटियों के जन्म, रूपा और सोना से। जिसमें से एक को अपना पूर्ण जीवन मिला हुआ है और एक को आधा। सोना का जन्म एक हिजड़ा के रूप में हुआ है उसके जन्म से लेकर अंतिम पड़ाव तक उसे क्या-क्या यातनाएँ सहनी पड़ती है उसका कड़वा सच हमारे सम्मुख उपस्थित हुआ है । किन्नरों की संवेदना और पीड़ा का सच उपन्यास में मुख्य रूप से मुखरित हुआ है। वे हमेशा अपने जन्म को धिक्कारते रहते है की पिछले जन्म में आखिर उनसे क्या पाप हो गए है जो उन्हें इस नारकीय जीवन का वरन करना पड़ा। वीर बुंदेला वंश में हिजड़े का जन्म कितनी शर्म की बात है इसकी अभिव्यक्ति उपन्यास में खुलकर हुई है। जगतराज इस बात से परेशान होकर कह उठते हैं कि- "वीर बुंदेला खानदान में हिजड़े बच्चे का जन्म, गाली एक बहुत बड़ी गाली, सरेआम करारा तमाचा।"[133] 'हिजड़े' को गाली माना जाना उसके लिए कितनी दुःख की बात है, जबकि वह भी एक मनुष्य है, मानव प्रजाति का एक हिस्सा है, फिर भी उसके साथ ऐसा व्यवहार क्यों किया जाता है।

इन्हें जन्म लेते ही घर-परिवार से दूर होना पड़ता है परिवार से बिछड़ने का दंश, समाज से अलग रहने की पीड़ा उनसे अच्छी तरह से कौन जान सकता है? "ईश्वर क्यों करता है ऐसा अन्याय? भला ! इस नन्हीं हँसती-खेलती बच्ची का क्या दोष है, जो उसे ईश्वर ने अपूर्ण बनाकर संसार में भेजा, जिसे अपने माता-पिता से दूर होना पड़ रहा है। जिसे घर से बेघर किया जा रहा है। परिवार से बिछुड़ने का दंश कितना सलता है, कष्ट देता है यह उससे अच्छा, भला कौन जान सकता था।"[134] इस प्रकार की पीड़ा से उन्हें गुजरना पड़ता है। सोना का जीवन भी कुछ इसी तरह का था। उसके

[133] महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.33
[134] महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.41

किन्नर होने का पता जब पिता जगतराज को चलता है तो वह उसे मारने की योजना बनाने लग जाता है और पंचम सिंह को उसे मारने का आदेश देता है।

इसमें सोना के साथ-साथ समस्त किन्नर समुदाय हमारे सम्मुख उपस्थित होता है जिसमें तारा, सानिया, आदि पात्रों के संघर्षरत जीवन को दर्शाया गया है। यहाँ नकली किन्नरों की समस्या को भी उठाया गया है जो किन्नरों का वेश धारण कर उनकी रोजी-रोटी में बाधक बनते है साथ ही उनके बारे में गलत भ्रांतियां भी फैलाते है। उनके कारण ही किन्नरों का अस्तित्व भी संकट में पड़ता हुआ दिखाई पड़ता है। किन्नर सामान्य मनुष्य कि भांति प्रेम की आकांक्षा भी रखते है, उनकी भी इच्छा होती है कि कोई उनसे प्रेम के दो शब्द बोले लेकिन समाज उनका निरादर करता है। सोना को जिसका नाम बाद में चंदा रखा जाता है मनीष नामक व्यक्ति से उसे प्रेम हो जाता है लेकिन मनीष का भाई उसका विरोध करता है।

किन्नरों को लेकर जो बात फैलाई जाती है कि सारे किन्नर यौनकर्मी होते है, यह सरासर गलत है जिसके कारण उन्हें सामजिक मान-सम्मान नहीं मिल पाता, इसका जिक्र भी लेखक ने किया है। "लोगों की सोच में यही रचा-बसा है कि सारे हिजड़े यौनकर्मी है, जो गलत है इसी कारण हमें सामाजिक सम्मान नहीं मिल पा रहा है। हमें समाज में अवांछित माना जाता है। हमारा सामाजिक बहिष्कार किया जाता है।"[135] उनकी हमेशा यही दरकार रहती है कि लोग उन्हें किन्नर नहीं इंसान समझे। ईश्वर ने ऐसे अपूर्ण मनुष्यों को रचकर मनुष्य सर्जना के साथ मजाक बना दिया है। ऐसे अभिशप्त जीवन में उन्हें आजीवन शापित होना पड़ता है। यहाँ किन्नरों के संस्कारों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं आदि की भी जानकारी दी गई है। साथ ही उनको, जो अधिकार आम नागरिकों को प्राप्त है वे सब प्राप्त हो, दिलवाने का प्रयास किया गया है। उन्हें मतदाता पहचान पत्र, आधार कार्ड, सरकारी नौकरियों में स्थान, बराबर का सामाजिक दर्जा, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में उनका स्थान सुनिश्चित करने का प्रयास लेखक ने किया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि किन्नरों की पीड़ा की अभिव्यक्ति की कड़ी में यदि किसी उपन्यास का नाम लिया जाये तो वह है 'किन्नर कथा'। जो पाठक की मानसिक स्थिति को इस कदर

[135] महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.91

झकझोंर कर रख देता है कि वह भी उनके सम्बन्ध में विचार करने पर मजबूर हो जाता है और आंकलन करता है कि इस प्रकार के शरीर को धारण कर उसे किस प्रकार की दर्दनाक पीड़ा से गुजरना पड़ता है। हम सोचने और समझने को मजबूर हो जाते है कि आखिर इन्होंने ऐसा कौन सा पाप कर दिया जिसका प्रायश्चित उन्हें आजीवन तरह-तरह की यातनाएँ सहकर करना पड़ता है। यह उपन्यास इस कारण भी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें ऐसे विषय को स्थान दिया गया जिसका नाम लेने मात्र से ही सब लोग कतराते है। उनके साथ खड़ा होने उठने-बैठने में शर्म का भाव महसूस करते है। हमें किन्नर समाज के साथ सद्भाव रखना चाहिए और उनको भी समाज की मुख्य धारा से जोड़कर मुख्य समाज में लाने का प्रयास करना चाहिए।

आजकल विमर्श के नाम पर जो भी लेखन कार्य किया जा रहा है। वह व्यावसायिकता की ओर अधिक बढ़ रहा है क्योंकि लेखक मूल विषय-वस्तु के स्थान पर कुछ भी लिखने को तैयार हो जाते है। प्रकाशक अपने प्रकाशन की किताबों की बिक्री हेतु बिना किसी प्रामाणिकता के भी किताबों को छाप देते है। यही बात किन्नर विमर्श पर भी लागू होती है। हिजड़ा समुदाय से सम्बंधित साहित्य एक ओर पूर्वाग्रह से भी ग्रसित है वह है 'अश्लीलता का प्रश्न'। जबरदस्ती ही इसे अश्लीलता का जामा पहनाकर खड़ा कर दिया जाता और परोस दिया जाता है, पढ़ने के लिए जिससे कृति का मुख्य उद्देश्य समाप्त हो जाता है। इसलिए किन्नर समुदाय पर लिखी गई सामग्री का मुख्य भाव समस्या और निदान आधारित हो तो इस समुदाय के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने में आसानी रहेगी। इसीलिए इस आधार पर कह सकते हैं कि हिंदी में किन्नर केन्द्रित विषय पर प्रामाणिक पाठ्य सामग्री का अभाव ही महसूस होता है बजाए अंग्रेजी साहित्य के।

3.3.4 तीसरी ताली-प्रदीप सौरभ

प्रदीप सौरभ अपने कम लेखन से ही चर्चा में आ गए। उनके दो उपन्यास 'मुन्नी मोबाईल' और 'तीसरी ताली' ने हिंदी जगत में तहलका मचा दिया। अपने पहले उपन्यास से ही इन्होंने अपनी पहचान बना ली थी। उभयलिंगी सामाजिक दुनिया के बीच एक ऐसी दुनिया का सच जो प्रत्येक शहर में मौजूद है और समाज के हाशिए पर जिंदगी जीता रहता है। अलीगढ़ से लेकर आरा, बलिया, छपरा, देवरिया यानी 'एबीसीडी' तक दिल्ली से लेकर पूरे भारत में फैली यह दुनिया समानांतर जीवन जीती है। तीसरी ताली...यानी ऐसी ताली जिसे कभी सामाजिक मान्यता नहीं

मिली। जिनकी दुआएं पाने के लिए लोगों में इच्छा जरूर है, लेकिन उन्हें देखकर दूर हट जाने वाले लोगों की लंबी जमात भी हमारे समाज में मौजूद है।

यह किताब उभयलिंगी, हिजड़ों और लेस्बियन की हाशिये पर बसर हो रही जिंदगी की कहानी बयां करती है। इसमें अस्मिता और पहचान के संकट से जूझते वर्ग का संघर्ष बयां किया गया है। न केवल इसमें हमें किन्नरों के इलाके में ले जाया जाता है बल्कि उसके दारूण दुखों और आत्महत्या करने की भयानक विभीषिका का चित्रण भी किया गया है। पात्रों के अंत:करण की पड़ताल यहाँ की गई है। यह अपनी तरह का पहला उपन्यास है जो लैंगिक असमानता के साथ-साथ भेदभाव, परिवार से परित्यक्त होने के दर्द को रेखांकित करता है। उपन्यास की भाषा इतनी सरलता लिए हुए है कि पाठक अंत तक इसको छोड़ना नहीं चाहता है।

'तीसरी ताली' हिजड़ों पर केन्द्रित उपन्यास है जिसमें इनकों हाशिए पर से केंद्र में लाने की कवायद की गई है। आजीविका चलाना इनकी सबसे बड़ी समस्या है। यह उपन्यास हिजड़ों का जीवन और समाज से अलगाव की कहानी बयाँ करता है। किस तरह से यह यौनवादी, लिंगवादी समाज इनकों तिरस्कृत करता है। लेखक ने बनी बनाई लीक से एकदम परे हटकर विषय चुना लिहाजा यह विषय सभ्य समाज की बेड़ियों को तोड़ना चाहेगा। जिसमें सभ्य और सुसंस्कृत लोगों को सड़ांध का अनुभव हो। यहाँ अंधेरों की दुनिया के कड़वे सच की परत दर परत उघड़ती दिखाई देती है। कहानी की शुरुआत गौतम साहब के चरित्र से होती है, जिनके घर बेटा हुआ लेकिन वे हिजड़ों के लाख ताली बजाने-गाने के बाद भी दरवाजा नहीं खोलते हैं। क्योंकि गौतम साहब, आनंदी आंटी के किरदारों ने उन मां-बाप का दर्द भी बयां किया है, जिन्हें बच्चा होने पर खुशी मनाने का हक बच्चे के लिंग पर निर्भर करता है। बच्चा उभयलिंगी है तो यह एक महापाप है। जिसे दुनिया से बचाते-छिपाते गौतम साहब, आनंदी आंटी, अपनी जिंदगी के कई साल तो काटते हैं लेकिन समाज उनके दर्द को समय के साथ नासूर बना देता है, जिसका अंत आत्महत्या जैसे कृत्य से होता है। दर्द को बहुत ही मार्मिकता के साथ उभारा गया है।

प्रदीप सौरभ उस तीसरी ताली की बात करते है जिसे समाज में मान्यता नहीं मिली है। इस समाज में जिसे हम समाज का हिस्सा नहीं मानते, उनकी अपनी समस्याएँ है। जेंडर के अकेलेपन

और जेंडर के अलगाव के बावजूद समाज में जीने की ललक से भरपूर दुनिया का परिचय करवाता है यह उपन्यास। इसमें ऐसे तमाम सच उभरकर सामने आये हैं, जीवन के ऐसे महत्त्वपूर्ण सच जिन्हें हम माने या न माने लेकिन उनका अपना वजूद है। यह उपन्यास प्रदीप सौरभ के साहसी लेखन की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है। यह कहानी है गौतम साहब और आनंदी आंटी की। जिनके बच्चा होने पर आये किन्नरों को दरवाजा नहीं खोलते है इस डर से कि कहीं वे उनके बच्चे को उठाकर न ले जाएँ। बच्चा होने पर ख़ुशी के स्थान पर शोक मनाया जाता है। ऐसे बच्चे के पैदा होने का केवल अंत आत्महत्या के रूप में एक और सच उपन्यास के माध्यम से हमारे सामने आता है।

आर्थिक विषमता के चलते किन्नरों के कार्य कलापों पर भी लेखक ने प्रकाश डाला है जिसमें उनको भीख तक मांगनी पड़ती है यथा- “मैं मर्द रहूँ, औरत रहूँ या फिर हिजड़ा बन जाऊं, इससे किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता, पेट की आग तो न जाने बड़े बड़ों को क्या-क्या बना देती है।”[136] यहाँ किन्नर समाज की उस सच्चाई को सामने रखने का प्रयास किया गया है जिसे दुनिया से छिपाकर रखा जाता है। उभयलिंगी वर्जित समाज के तहखाने में झाँकने का लेखक ने भरपूर प्रयास किया है। यह उस दुनिया की कहानी है जिसे न तो जीने का अधिकार न और न ही सभ्य समाज में रहने का। इसमें समाज की तीसरी योनि यानी हिजड़ों का जो अकेलापन और अलगाव है वह क्यों है? इनके प्रति समाज इतना क्रूर क्यों हैं? हम इक्कीसवी सदी के दूसरे दौर में पहुँच गए है लेकिन इसके बावजूद इन्हें ठीक से जीने का हक़ नहीं मिल पाया है। चाहे वह शिक्षा हो, आजीविका हो, राजनीति हो चाहे जो कुछ भी हो समाज में इन्हें हेय की दृष्टि से देखा जाता है।

इसके अलावा उपन्यास में कई ऐसी कहानियों को जोड़ा गया है जो समाज की एक नई हकीकत को हमारे सामने लाती है। यहाँ समाज की हिजड़ों के प्रति मनोभावना प्रकट हुई है:- “एक न एक दिन बेटा हिजड़ों को सोंपना ही पड़ेगा, ये दुनिया ऐसे बच्चों को तो समाज बर्दास्त कर लेता है, लेकिन हिजड़ों को नहीं।”[137] वरिष्ठ कथाकार प्रदीप सौरभ ने जितना भी लिखा उसको सुगढ़ता प्रदान की और नए कलेवर में लपेटकर हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है। एक ऐसे विषय को जो परंपरा

136.प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली', वाणी प्रकाशन, (2011) नई दिल्ली पृ. 34

137वही, पृ.सं.79

से एकदम हटकर है। औधोगिकीकरण के इस परिवेश में पहली और तीसरी दुनिया के राष्ट्र ही शक्तिशाली माने जाते रहे हैं। उपनिवेशी देश जिन्हें निर्बल या दुर्बल करार दिया गया। उसी प्रकार लगभग विश्व के सभी देशों में दो ही लिंगों को मान्यता दी गई है, स्त्री और पुरूष। तृतीय लिंगी हाशिए का समाज है जो उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है।

आजादी के नाम पर जहाँ हमने आधुनिकता और विकास के नाम पर अनेक कार्यों को अंजाम दिया है। देश विकासशील राष्ट्र बनने की ओर उन्मुख हो रहा है। तब भी क्या सभी वर्गों, समुदायों को समानता प्राप्त है? किसी भी देश की उन्नति तब तक नहीं हो सकती जब तक उसके सभी वर्गों और समुदायों को समानता न हो। हमारे देश में आजादी से पूर्व स्त्री शिक्षा का स्तर काफी पिछड़ा हुआ था। स्त्रियों को वह सभी अधिकार प्राप्त नहीं थे जिनसे उनकी स्थिति में सुधार हो सके। लेकिन जैसे-जैसे महिला शिक्षा हेतु कार्य किये गए वैसे ही उनकी स्थिति में सुधार होता गया। आज भी हमारे भारतीय समाज में ऐसे पीड़ित, शोषित और दमित वर्ग है जिनकों शोषण का शिकार होना पड़ता है। एक ऐसा ही वर्ग किन्नर समुदाय है जिन्हें अपनी जिंदगी में अपने लिए तालियाँ नहीं मिली। वे ताउम्र जीवन तन्हाई में काटने के बावजूद अपनी अधूरी ख्वाहिशों को पूरा करने की कोशिश करते है।

'तीसरी ताली' उपन्यास में इस वर्जित और बहिष्कृत समाज की फुर्तीली कहानी है जिसमें ऐसे-ऐसे शब्दों की जानकारी मिली है जिनसे आज तक हम अनभिज्ञ थे। कथा का ऐसा प्रवाह जो अंत तक पाठक को बांधे रखता है। कहीं-कहीं अश्लील प्रसंगों का ताना-बाना बुना गया जो लगता है कि कथानक और रचनाकार की दृष्टि से शायद उचित ही होगा। कथा के साथ कई छोटी-छोटी उपकथाएं भी साथ-साथ चलती रहती है। इस दुनिया को पढ़कर ही समझा जा सकता है कि बाकी समाज इस समाज के साथ कैसे 'डील' करता है। उपन्यास के संदर्भ में अनुज शुक्ला लिखतें है- "शायद भारतीय भाषाओं में बनी कुछ फिल्मों को छोड़कर किसी कविता, कहानी, उपन्यास के केंद्रीय कथानक किन्नर नहीं रहे। इस लिहाज से हिंदी साहित्य में प्रदीप सौरभ का उपन्यास 'तीसरी ताली' नये बदलाव का संकेत है।"[138] उपन्यास के कथानक की शुरुआत दिल्ली के सिद्धार्थ इन्क्लेव

[138] अनुज शुक्ल, 'वर्जनाओं के टूटते दस्तावेज', दैनिक भास्कर, 20 मार्च 2011

हाउसिंग सोसायटी से लेकर हिजड़ों के पवित्र तीर्थ स्थल कुवागम के मेले में जाकर पूर्णता को पहुँचती है। भले ही हमारा सभ्य समाज इस मुद्दे पर बात करना पसंद न करता हो, यहाँ तक कि वह नाम लेना भी नहीं चाहता फिर भी लेखक ने बड़े साहस के साथ लिखने में सफलता प्राप्त की। रेखा, चितकबरी, मंजू, सुनयना, डिम्पल, ज्योति, आदि के माध्यम से कथा को विस्तार प्रदान किया गया है।

प्रसिद्ध लेखक डोमनिक लेपियर ने अपनी कृति 'द सिटी ऑफ़ जॉय' में हिजड़ों के बारे में लिखा है लेकिन वे उतनी गहराई तक नहीं पहुँच पाए है। मूल कथा में डिम्पल जो की किन्नरों की मुखिया है उससे जुड़े पात्रों का जिक्र किया गया है। हिजड़ा समुदाय में डेरे, गद्दी आदि का चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। राजा और मंजू की कहानी जो दिल दहला देने वाली है। राजा और मंजू द्वारा आपस में प्रेम करने पर डिम्पल राजा के साथ क्रूरता का व्यवहार करती है। जिसका उसे आजीवन पछतावा होता है जो किन्नर समाज की मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति भी करता है:- "दूसरी मंडलियों के लोग जेल से छूटने पर डिम्पल को बधाई देने आ रहे थे, लेकिन डिम्पल अंदर-ही-अंदर अपने किये पर दुखी रहती। उसके चेहरे की रौनक उड़ चुकी थी। उसके अंदर एक अचीन्हा अपराध-बोध घर कर चुका था। वह सोचती कि जिसे उसने अपनी बेटी की तरह पाला है, उसे ही इतनी बड़ी सजा दी। राजा के साथ शादी कर देती तो वह छोटी न हो जाती।"[139] इस प्रकार से वे भी मानवीय रिश्तों से सरोबार रहते है, उनकों भी वही अनुभव, सुख-दुःख महसूस होते है जो अन्य सामान्य व्यक्तियों को। एक ओर उनमें गद्दियों को लेकर घमासान होता रहता है तो दूसरी ओर किन्नर समुदाय की विकृतियों को भी दर्शाया गया है। आपसी गुटबाजी, फर्जी किन्नरों की समस्या, आदि का बखूबी चित्रण इसमें किया गया है।

जितना इस उपन्यास का पाठक वर्ग इससे जुड़ा हुआ है यह उतनी ही सच्चाई पर यह लिखा गया है। वर्तमान दौर में प्राय:सभी क्षेत्रों में बदलाव आये हैं। बदलाव की इस बहार से किन्नर समाज भी अछूता नहीं रहा है। "समकालीन बहु-सांस्कृतिक दौर के 'गे', 'लेस्बियन', 'ट्रांसजेंडर',

---

[139].प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली' वाणी प्रकाशन, (2011) नई दिल्ली पृ.सं. 76

‘अप्राकृतिक-यौनात्मक जीवन शैलियों के सीमित सांस्कृतिक स्वीकार में भी यह दुनिया अप्रिय, अवांछित और वर्जित दुनिया है।”[140] दिलचस्प है कि 'तीसरी ताली' में वर्जित हिजड़ों-लौंडों की दुनिया सिर्फ विचित्रताओं और असामान्य प्रसंगों से ही भरी हुई नहीं है। यह तो है ही, लेकिन अनेकानेक अप्रत्याशित और अविश्वसनीय से लगने वाले प्रसंगों; जिनमें कई क्रूर भी हेय दृश्यों के बावजूद हमें जहाँ-तहाँ उनके कोमल मानवीय पक्षों के दर्शन भी होते हैं। जैसे-पूर्ववर्णित शवयात्रा का ही प्रसंग लें, तो पता चलता है कि हिजडों की शव यात्रा आधी रात के एकांत में इसलिए निकलती है ताकि किसी स्त्री या पुरूष पर इस अधम 'तीसरी योनि' की छाया न पड़े। कोई सामान्य स्त्री या पुरूष इस अशुभ को न देखे।

यहाँ समाज की क्रूरता का भी भयावह चेहरा दिखाई देता है। अपने समय के अवांछित यथार्थ को प्रस्तुत करता यह उपन्यास विकृत यौनिकता वाले समाज के वांछित, अवांछित तत्वों की ओर इशारा करता है कि इसमें कौन-कौन से तत्व समाहित है और इस समाज के आयामों तक इसकी कितनी पहुँच है। इसमें जहाँ सामाजिक अलगाव की समस्या की ओर इशारा किया गया है वही आर्थिक विषमता को भी प्रमुखता से उद्घाटित किया गया है। सामाजिक बहिष्कार के कारण चाहे वह किसी भी वर्ग का हो उसे वंचना का शिकार होना पड़ता है। किन्नरों के साथ भी यही समस्या है। उनके मान-अपमान से किसी को कोई वास्ता नहीं है। परिवार से त्याग, सामाजिक असमानता, उनकों भयानक बना देती है। आर्थिक उपार्जन भी उनकी प्रगति में सबसे बड़ा बाधक है। कहीं पर काम न मिलने के कारण उनकों नाचने-गाने, भीख मांगने जाना पड़ता है और सेक्स रैकेट से भी वे जुड़ जाते है, जिसका परिणाम उन्हें यातना सहकर चुकाना पड़ता है। ‘चितकबरी’ का प्रसंग इस दृष्टि से उचित है। उपन्यास का एक राजनीतिक आयाम भी है। इसी का एक रूप बांध की ऊँचाई बढ़ाने वाली नीतियों के विरूद्ध जनांदोलन के रूप में नजर आता है।

उपन्यास का एक और आयाम शैक्षिक भी है। कुछ हिजड़े जो पढ़-लिखकर समाज में अपनी पहचान बनाना चाहते है। उपन्यास की केंद्रीय पात्र मंजू, विजय नामक युवक से प्रेम करती है जो पढ़ा-लिखा है। यह उपन्यास का बड़ा स्पेस है। उपन्यास के सांस्कृतिक पक्ष को लेकर इस प्रकार

---

[140] डॉ. महात्मा पांडेय, किन्नरों की हृदय विदारक गाथा: तीसरी ताली का मूल्यांकन’, सं. विजेंद्र प्रताप (विमर्श का तीसरा पक्ष) पृ.154

के विचार है:- ''उपन्यास के सांस्कृतिक पक्ष धनुर्धर अर्जुन के पुत्र अरवाण और उसकी कहानी के जरिये उभरते हैं। विल्लुपुरम के मेले का संदर्भ हो, मंगलसूत्र कटवाने की बात हो, या फिर चुनरी रस्म का जिक्र हो, उपन्यास मामले के सांस्कृतिक पक्ष को कुशलता से उभारता है।''[141] इसमें न केवल हिजड़ों, समलैंगिकों के समाज की आलोचना की गई है बल्कि उसके सुधार और सामाजिक परिवर्तन को अपना ध्येय बनाया गया है।

सभी पक्ष इस उपन्यास की अंतर्वस्तु का मुख्य आधार नहीं हो सकते। यदि इस दृष्टि से उपन्यास को देखे तो इसका वैज्ञानिक अध्ययन ही हमारे सम्मुख उपस्थित होगा। कोई भी एक पक्ष इस उपन्यास का निर्णायक नही हो सकता। क्योंकि लेखक ने सभी पक्षों को ध्यान में रखकर इसकी आधार भूमि तैयार की है ताकि पाठक वर्ग इससे ऊबाऊ महसूस ना करें। इसकी रचनाशीलता के आधार पर जयपाल सिंह अपनी पुस्तक समीक्षा में लिखतें है:- ''समग्रत: प्रदीप सौरभ का यह दूसरा उपन्यास अंतर्वस्तु ही नहीं, रूपगत एकाग्रता को लेकर भी पाठक का ध्यान खींचता है। यह निरूद्धेश्य उपन्यास नहीं बल्कि उपन्यासकार की सक्रियता का प्रमाण है। यह उपन्यासकार की मानसिक विकास यात्रा के साथ-साथ रचना यात्रा कर्म को समझने के लिए भी उपयोगी है।''[142] इस प्रकार उपन्यास की रचनात्मकता के साथ-साथ उपन्यासकार के रचना कौशल का भी पता चलता है कि उसमें पाठक वर्ग को बांधे रखने की सामर्थ्य है।

प्रकृति की छलनाओं के शिकार इन हिजड़ों के प्रति हमारा समाज कितना संवेदनहीन है, तिरस्कार, वर्जनाएं, अपमान उनकी नियति में है। लेकिन इनके जीवन की सबसे बड़ी समस्या आजीविका की है। यहाँ भी सामान्य लोगों की तरह छल, प्रपंच, षड्यंत्र, शोषण, दमन, महत्त्वाकांक्षाएँ और जीविका के लिए जद्दोजहद है। यहाँ अर्थ का महत्त्व और दबंग और संपन्न लोगों का वर्चस्व है। यहाँ भी ममता और संवेदनाएँ है तो इज्जत और प्रतिष्ठा के नाम पर अन्याय और शोषण की प्रवृति है। यह उपन्यास मस्तिष्क में बात कुरेदता है कि हिजड़ों को सामान्य मनुष्य की तरह जीने का अधिकार हमारा समाज क्यों नहीं देता? उसे हिजड़ा के नाम से बहिष्कृत करने वाली नपुंसक मानसिकता का तिरस्कार समाज क्यों नहीं करता?

---

[141] प्रांजल धार, 'तीसरी ताली वर्जित दुनिया के तीखे रंग', लमही, अप्रैल-जून (2011) पृ. 41-42

[142] जयपाल सिंह, 'उपन्यास के नए प्रस्थानों में उत्तर समय', इण्डिया टुडे, (पुस्तक समीक्षा) फरवरी-2011 पृ.69

‘तीसरी ताली’ में बताया गया है कि किन्नरों की स्थिति के लिए समाज को दोषी मानते हुए मानवीय आधार पर मूल्यांकन करें तो रोज़ तिलतिल कर मरने वालों का नाम है:- किन्नर। हिन्दी साहित्य में किन्नर विमर्श अभी अपरिपक्व अवस्था में है, समाज की वैचारिकी इन्हें स्वीकारने में हिचक रही है। आशा है कि किन्नर भी समाज में सामान्य लोगों की भांति मानवाधिकारों के साथ जीवन यापन कर पायेंगें। फिर उनके लिए इस प्रकार के शब्द शायद प्रयोग में न लाए जाए:- अवहेलना, अपरिपक्व, अलगाव, अभिशप्त आदि का प्रयोग करने पर इनमें स्वयं के प्रति हीनता का भाव उत्पन्न होता है।

पौराणिक काल से लेकर मुगलकाल तक इनकी आवश्यकता और व्यवस्था को जाति से बाहर नहीं समझा जाता था। किसी न किसी रूप में उनकी स्वीकारोक्ति ‘पॉजिटिव सेंस’ में देखने को मिलती है। लेकिन अंग्रेजो के आगमन के बाद 1857 में कानून बनाकर इन्हें अपराधी घोषित किया गया है और इन्हें समय और समाज से अलगाने की कोशिश जारी है। इससे इनकी स्थिति में और भी अधिक गिरावट आ गई। भारत में दलित, आदिवासी और स्त्रियों के साथ सालो-साल अत्याचार किया जाता रहा है। इन सबकी वजह हमारे समाज की रूढ़िवादी सोच और मानसिकता है जिससे हमारा समाज अभी तक भी आक्रान्त है। जिस घर में ऐसे बच्चे पैदा हो जाते है उनका लालन-पालन न कर, शिक्षा, स्वास्थ्य की सुविधा न देकर लोकलाज के कारण उन्हें धकेल दिया जाता है। अपमान के बोध से परिवार अपने बच्चे को त्यागने को मजबूर हो जाते है। आवश्यकता है समाज और परिवार द्वारा सशक्त पहल की। उपन्यास में आनंदी आंटी और गौतम साहब के बेटे के साथ भी यही होता है। वह उसको दुनिया से बचाकर रखना चाहते है लेकिन लाख कोशिशों के बाद भी वे उसे नहीं रख पाते।

आज किन्नर समुदाय अपनी पहचान के संकट से जूझ रहा है। क्या किन्नरों की कोई ऐतिहासिक या पौराणिक पृष्ठभूमि नहीं है? यही प्रश्न लेखक के मन में भी बार-बार उठते है। पारू मदन नायक ने हिजड़ों को लेकर एक कविता के माध्यम से उनका दर्द प्रकट करने का प्रयास किया है:-

“कंगन है मेरे हाथों में

पर कलाई में ताकत है

पुरुषों से अधिक।

आवाज है मेरी पुरुषों - सी,

पर, मन मेरा कोमल है

पुरुषों से अधिक

पूछता अस्तित्व मेरा

'तू कौन है ? "[143]

उनका अपने ऐसे जन्म लेना अभिशाप के समान प्रतीत होता है। इसके लिए वे अपने-आप को कोसते रहते है। परिवार में बच्चे का जन्म हर्षोल्लास का कारण बनता है लेकिन यदि घर में हिजड़े बच्चे का जन्म हो जाये तो सारी खुशियाँ मातम में बदल जाती है।

इस प्रकार से निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि प्रदीप सौरभ ने 'तीसरी ताली' उपन्यास के माध्यम से हिजड़ा जीवन और संघर्षों की गहरी पड़ताल की है। न केवल हिजड़ा समुदाय बल्कि उनसे जुड़े अन्य समुदायों पर भी लेखक की गहरी दृष्टि गई है। आनंदी आंटी और गौतम साहब के लिए संतान का दुःख, मंजू और राजा के प्रेम की पीड़ा, डिंपल का अपने किये पर पश्चाताप, शक्तिशाली राजनेताओं द्वारा जनता का शोषण, पुलिस का अमानवीय व्यवहार सम्बन्धी आदि गहन मानवीय मूल्यों की पड़ताल की गई है। लेखक का उद्धेश्य केवल समस्या पर प्रकाश डालना ही नहीं है अपितु वह इस समस्या का समाधान भी चाह रहे है। उपन्यास किन्नरों के अधिकारों की बात भी करता है। कई प्रसंग ऐसे है जिनमें किन्नर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होते दिखाई दे रहे है। यहाँ हिजड़ा समुदाय के समर्थन में नारे लगाना ही लेखक का उद्देश्य नहीं है, बल्कि उनकी वास्तविक स्थिति से हमें अवगत किया गया है। यह नहीं है कि हमारा समाज इनकी स्थिति से

[143] पारू मदननाईक, 'मैं क्यों नहीं', पृ.सं.165

अवगत नहीं है फिर भी सामाजिक मान्यताओं के दंभ में इनकों स्वीकार नहीं किया जाता। इस अस्वीकार्य की स्थिति ने इनके जीवन को और भी अधिक दुर्दम्य बना दिया है। लेखक केवल अपनी संवेदनाएँ प्रकट करके ही चलता नहीं बना है बल्कि संवेदनाओं के साथ-साथ उनकी जीवन शैली में बदलाव लाने की बात भी करता है और यह बदलाव किसी एक व्यक्ति या संस्था से नहीं हो सकता, समग्रता से ही हो सकता है। इसीलिए आवश्यकता इस बात की है कि लेखनी समाज में जागरूकता ला सकती है लेकिन परिवर्तन तो मानसिकता बदलने से ही हो सकता है। हिजड़ा समुदाय की स्थिति में भी परिवर्तन उनके प्रति मानसिकता में सुधार लाने से हो सकता है और यही लेखक और कृति दोनों का उद्देश्य भी है।

3.3.5 गुलाम मंडी-निर्मला भुराड़िया

अपने अनोखे और परम्परा से हटकर लेखन हेतु प्रसिद्ध लेखिका निर्मला भुराड़िया ने इस उपन्यास को एक प्रकार से नवीनता प्रदान की है। इस उपन्यास का कथानक किसी एक विषय पर ही आधारित नहीं है अपितु मानवीयता को शर्मसार करने वाले कई विषयों को इसमें आधार बनाया गया है। देश-दुनिया की वास्तविक जिंदगी को बेपर्द करने वाला यह उपन्यास अंत तक पाठक को बांधे रखता है। लेखिका अपने बचपन से देखती आई है, उन लोगों के जीवन को जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। जिसका जीवंत चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। लेखिका ने उनके जीवन को बड़ी बारीकी से देखा है, इसीलिए वे उनका चित्रण करने का प्रयास उपन्यास में करती है। वैश्विक स्तर पर विशालतम मानव समूह का यह समुदाय भी एक हिस्सा है। घोर उपेक्षा का शिकार यह वर्ग अपने सम्मान को लेकर लालायित रहता है और कोशिश करता है कि अन्य मनुष्यों की तरह यह भी जिंदगी जिये। क्योंकि इसे कभी भी समाज में बराबर का दर्जा नहीं मिला। यह वर्ग अपनी बराबरी लेने हेतु प्रयासरत रहता है।

लेखिका ने एक जटिल विषय को अपने लेखन का आधार बनाया है जो गहनतम संवेदना के स्तर पर गुलामी के दंश की अभिव्यक्ति भी करता है। साथ ही लगभग उन सभी समस्याओं पर से पर्दा हटाने की कोशिश की गई है जो मानवीयता हेतु घातक सिद्ध हो रही है। उपन्यास में मात्र देह समझी जाने वाली स्त्री की पीड़ा और किन्नर होने का वीभत्स दंश के सच से हमें रू-ब-रू करवाया गया है। लेखिका सोचती है कि यदि देवी समझी जाने वाली स्त्री का दर्द कोई नहीं समझ सकता तो

किन्नरों के दर्द को समझने का कलेजा कहाँ से आयेगा। निर्मला भुराड़िया स्वयं अपने एक आलेख में लिखती है कि- "जी हाँ, ये वे इंसान है, जो न पूरी तरह स्त्री न पुरूष में विकसित हो पाए लेकिन प्रकृति के दोष की सजा समाज से इन्हें निष्काषित करके दी।"[144]

आज दुनिया भर में इंसान द्वारा दूसरे को खरीदना, फंसाना और गुलाम बना लेना नाजायज घोषित हो चुका है। अनेकों देशों में इसके खिलाफ कानून बन चुके है। मगर मनुष्य के भीतर जो शैतान होता है वह कभी नहीं सोता है। उपन्यास का प्रारम्भ सर्पदंश करवाते ग्राहकों से आरंभ होता है। जहाँ सभी लोग जीभ पर दंश नहीं लेते। लेकिन कल्याणी तो जीभ पर दंश लेना चाहती है ताकि उसके जीवन में यह दंश दोबारा कभी ना आए। उपन्यास में कल्याणी, गौतम, जानकी मुख्य पात्र है। लक्ष्मी, घुंघरू, ताईजी, लंतरानी बुआ, सऊ, तायाजी, मिलरेपा, अंगूरी, हमीदा आदि गौण पात्रों में आते है। किन्नरों की पीड़ा की कुशल अभिव्यक्ति की अगली कड़ी में 'गुलाम मंडी' आता है। निर्मला भुराड़िया का यह बहुचर्चित उपन्यास किन्नर विमर्श में अपनी महती भूमिका अदा करता है। जटिल विषय को अपने लेखन का केंद्र बनाने वाली निर्मला जी गहनतम संवेदना के स्तर पर गुलामी के दंश को कुशलता से अभिव्यक्त कर पायी है।

आज के तिरस्कृत वर्ग किन्नरों की समस्या और मानव तस्करी का भयावह चेहरा उपन्यास में दिखाया गया है। एक ज्वलंत समस्या पर लेखन का प्रयास गुलाम मंडी में किया गया है, इस सच को बड़ी बारीकी से उघाड़ने का प्रयास किया गया है, जिसे बार-बार दबाने की कोशिश की जाती है। लेखिका अपने अनुभवों को उपन्यास में अभिव्यक्त करती है। "प्रोजेक्ट आधारित उपन्यासों से एकदम अलग यह उपन्यास रचनाकार के मूल सरोकारों से सीधा जुड़ा हुआ है, जो पूरी संजीदगी से एक इंसान को इंसान मानने की वकालत करता है...फिर चाहे वह एक मजदूर स्त्री हो या समाज का तिरस्कार झेलने को मजबूर किन्नर।"[145] उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया, उन्हें हिजड़ा, किन्नर, वृहनला आदि कई नामों से पुकारा जाता है, मगर अपमान के साथ।

---

[144] निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', फ्लेप पेज से-

लेखिका एक स्थान पर उल्लेख करती है कि "बचपन से देखती आयी हूँ उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को, जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। इसमें इनका क्या दोष? ये क्यों हमेशा त्यागे गए, दुरदुराए गए, सताए गए और अपमान के भागी बने इन्हें कई नामों से पुकारा गया मगर तिरस्कार के साथ ही क्यों? आखिर ये बाकि इंसानों की तरह मानवीय गरिमा के हकदार क्यों नहीं?"[146] इसमें किन्नरों के जीवन की त्रासदी और सामाजिक उपेक्षा के दर्द को बहुत ही मार्मिकता के साथ उभारा गया है। इस उपन्यास के अनावरण के अवसर पर लेखिका अल्पना मिश्रा कहती है:- "गुलाम मंडी हिंदी साहित्य का पहला ऐसा उपन्यास है, जिसमें मानव तस्करी और किन्नरों के जीवन को केंद्र में लाया गया है। उन्होंने इसके कैनवास को बहुत बड़ा बताया। इसका कथ्य बहुत ही बेजोड़ है और यह हिंदी साहित्य का एक बहुत ही अलग ढंग का उपन्यास है।"[147]

इसके संदर्भ में पूर्व लोकसभा स्पीकर सुमित्रा महाजन कहती है कि "मैं जहाँ रहती थी वहाँ किन्नरों का जीवन मुझे समझने का मौका मिला। वे सालों से मेरे पास आते रहे। मैं उनकी सामाजिक उपेक्षा के दर्द को समझती हूँ। वे जब भी मुझसे मिलते थे कहते थे, हमें काम दो हम भीख नहीं मांगेगे।"[148] इस प्रकार से वह भी किन्नरों की दशा से परिचित है। उनको भी उसके दुःख की अनुभूति है। निश्चित रूप से यह उपन्यास बहुत ही संवेदनशील उपन्यास है। लेखिका अपने अमेरिका प्रवास के दौरान अनुभूत अनुभवों को इस उपन्यास में उकेरती है। कथा विदेशी धरती से शुरू होकर किन्नर समुदाय की पीड़ा की अभिव्यक्ति अंत तक करती है। यहाँ अलग-अलग किन्नरों की कथा को आधार बनाया गया है।

कथा का आरंभ अमावस की काली रात से होता है, जिनमें सभी काली साड़ियां पहने हुए है, सभी के लंबे बाल खुले थे। किसी के पावों में चप्पल नहीं थी, वे लोग लाश को कंधे पर नहीं बल्कि कब्रगाह तक चलाकर ले जाया करते हैं। ताकि इनकी शवयात्रा का पता किसी को न चले। ये शव को पीठ के बल न लेटाकर पेट के बल रखते है और पीटना शुरू कर देते है। इस कथन के साथ कि अगले जन्म में हिजड़ा न बने। शव को जलाकर घेरा बनाकर बैठ जाते है नया गुरू चुनने के लिए,

---

[146] निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं.7

[147] https://hindi.news18.com/news/nation/nirmala-bhuradia-book-release-369871.html

[148] https://hindi.news18.com/news/nation/nirmala-bhuradia-book-release-369871.html

क्योंकि बिना गुरू के वे दिशाहीन हो जाते है। इस उपन्यास की एक पात्र कहती है:- "सचमुच देश की कितनी बड़ी विडंबना है कि जहाँ लूले, अंधे, काने बहरों को आरक्षण मिलता है वहाँ यह हिजड़ा समुदाय दुरदुराये जाते है ।"[149] इसमें कहीं अंगूरी की कथा है तो कहीं रानी, कल्याणी आदि पात्रों की संवेदना प्रकट की गई है।

गुलाम मंडी में कई गुलाम लड़कियों की वीभत्स पीड़ा का वर्णन हैं, जैसे बांग्लादेशी , मैक्सिकन, अफ्रीकन-अमेरिकन, एशियन, गोरी आदि लड़कियों की कथा है। यह पूर्णत:ट्रेजडी उपन्यास है किन्तु कथ्य की दृष्टि से इसमे एकतानता का अभाव है। सामाजिक समस्याओं का चित्रण बखूबी किया गया है लेकिन देश-विदेश की यात्राओं का चित्रण अधिक किया गया है। उपन्यास का कथानक किस्सागोई के माध्यम से समाज का चित्र सामने लाता है जिसे देखकर भी हम अनजान बने रहते है। इस चकाचौंध भरी दुनिया में कुछ वर्ग ऐसे है जिनकों शोषण का शिकार बनाया जाता है। दास, किन्नर, स्त्रियों आदि को मनुष्य अपने चंगुल में फंसाकर पीड़ा पहुँचाते है। "हिंदी में लिखे जा रहे प्रोजेक्ट आधारित उपन्यासों से एकदम अलग यह उपन्यास रचनाकार के मूल सरोकारों से पूरी तरह से जुड़ा हुआ है, जो पूरी संजीदगी से एक इंसान को इंसान मानने की वकालत करता है...फिर चाहे वह एक मजबूर स्त्री हो या समाज का तिरस्कार झेलने को मजबूर किन्नर।"[150] इसके कथानक में समाज का वह भयावह चेहरा दिखाई पड़ता है जिसको पढ़कर हमारा ह्रदय सिंहर उठता है। ह्यूमन ट्रेफिकिंग जैसी भीषण समस्यां जो एक अन्तरराष्ट्रीय संगठित अपराधकर्म है जिसकी जड़े दुनिया भर में फैली है; का विरोध भी लेखिका उपन्यास में करती है।

उपन्यास में मानव तस्करी, स्त्रियों का शोषण, और तीसरी समस्या है हिजड़ा समुदाय, जो मेरे शोध-विषय का मुख्य आधार है। ट्रांसजेंडर और ट्रांससेक्सुअल हिजड़ा समुदाय से जुड़े शब्द है जो समाज के तयशुदा खाँचों में नहीं आ सकता। इसी कारण समाज द्वारा यह लंबे समय से उपेक्षित और बहिष्कृत रहे। लैंगिक भेदभाव से पीड़ित हमारा पुरूष सत्तात्मक समाज हमेशा से ही लैंगिक श्रेष्ठता में पुरुषों की वकालत करता है। वह स्त्री को भी अपने समक्ष खड़ा रहना सहन नहीं कर सकता किन्नरों को सहन करना तो दूर की बात है। यह वर्ग भी समाज की मुख्यधारा में आना चाहता है,

---

[149] डॉ.सौ. गीता यादव, 'गुलाम मंडी', विमर्श का तीसरा पक्ष (विजेंद्र प्रताप सिंह)

[150] गुलाम मंडी फ्लैप पेज से-

सम्मान से जीने हेतु लालायित है किन्तु हमारा तथाकथित सभ्य समाज उन्हें चैन से जीने नहीं देता है। समाज की उपेक्षा और आर्थिक बेरोजगारी के परिणामस्वरूप यह समुदाय यौनकर्मी के रूप में काम करने को मजबूर हो जाता है।

3.3.6 पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा-चित्रा मुद्गल

नए कलेवर में अपने लेखन को पहचान दिलाने वाली चित्रा मुद्गल हमेशा से अलग विषयों पर लेखन को लेकर चर्चा में रही है। वे हमेशा नई कथा-भूमि और विशिष्ट भूगोल की तलाश करती रहती है, इसीलिए उनका लेखन नया बन पड़ता है। यह उपन्यास पत्रात्मक शैली में लिखा गया है। जो इस समाज की तीसरी सत्ता को उपेक्षा और तिरस्कार के अंधेरे से बाहर निकालकर उसकी मानवीय पहचान करता है। अपने इस उपन्यास में वह समाज के उस पिछड़े हिस्से को लेकर उपस्थित हुई है जिसकी स्थिति अन्य पिछड़े तबकों से भी अधिक ख़राब है। या यो कहे कि सोचनीय है। जिसे आमतौर पर हिजड़ा कहकर पुकारा जाता है। इसके संदर्भ में मधुरेश लिखते है कि- "जैसे कभी महात्मा गाँधी ने अछूतों के लिए एक सम्मान सूचक शब्द 'हरिजन' का उपयोग किया था, इसी सम्मान की चाशनी में लपेटकर इन्हें किन्नर कहा जाने लगा है ।"[151] अपने जीवन में विविध संघर्षों से जुझते हुए कुछ किन्नरों ने अपनी पहचान जरूर बनायीं हैं लेकिन वे भी गुमनामी के अंधेरे में धीरे-धीरे लुप्त हो जाते है। सामाजिक और सवैधानिक संस्थाओं द्वारा उनके अधिकारों पर सवाल उठा है जिनसे उनको वंचित रखा गया और इसी कारण वे वंचना के पात्र बने। पारिवारिक उत्सवों में इनकी उपस्थिति को संदिग्ध दृष्टि से देखा जाता है।

चित्रा मुद्गल ने इस उपन्यास की कथावस्तु स्वयं के अनुभव को आधार बनाकर तैयार की है। एक समाचार पत्र के साक्षात्कार में जब उनसे पूछा गया कि क्या सोचकर आपने इस विषय पर लिखना तय किया? तो वे कहती हैं कि:- "मुझे इसे लिखते हुए यह लगा कि समंदर के तलछट को जैसे किसी 'मैग्नीफाइंग ग्लास' के सहारे देख पा रही हूँ। मैंने उस तलछट को, उस एक अजीबो-गरीब और निराली दुनिया को उस 'वो' के सहारे देखा है। मेरा उससे और उसके परिवार के साथ

[151] मधुरेश, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा अर्थात् तीसरी सत्ता की व्यथा-कथा', सं. डॉ.शगुप्ता नियाज, 'अनुसन्धान' अक्तूबर-दिसम्बर (2017) अलीगढ़

एक रिश्ता रहा है। मुझे उन्हें (किन्नरों को) आम लोगों के बीच रखकर देखना था। उन लोगों के बीच रखकर जिनके दैनंदिन जीवन का वे हिस्सा तो है लेकिन जिनके लिए वे दूसरे या अजनबी हैं।"[152] पूरा उपन्यास संवेदना से भरा हुआ है। एक मानवतावादी दृष्टिकोण हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। बिन्नी की माँ वंदना बेन अपने बेटे को लेकर काफी चिंतित रहती है। वह पहले से 'सैकेटिया' नामक बीमारी से ग्रसित है और ऊपर से उसे बेटे के इस प्रकार के जीवन से और भी अधिक मानसिक अवसाद का शिकार होना पड़ता है। वह एक संपन्न परिवार की महिला है किन्तु वह अपने बेटे से मिल नहीं सकती यहाँ तक कि खुलकर सबके सामने पत्राचार भी नहीं कर सकती। पत्र लेने के लिए उसे पास के पोस्ट ऑफिस पर जाना पड़ता है, इसी आधार पर उपन्यास का शीर्षक भी यही है।

ममता कालिया ने भी नवभारत टाइम्स में नाला सोपारा पर अपने विचार प्रस्तुत किये है। यथा:-"नाला सोपारा नितांत नई कथावस्तु प्रस्तुत करता नए शिल्प का उपन्यास है। हम लेखकों ने हिजड़ा समुदाय पर यदा-कदा लिखा है। इन पर फिल्में भी कभी-कभार बनी हैं, किंतु उनकी पीड़ा, परेशानी और प्रत्याशाओं को उठाने का तार्किक प्रयत्न नहीं किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में लिंगदोषी समाज की समस्या को अत्यंत मानवीय दृष्टि से उठाया गया है।"[153] इस प्रकार का मुश्किल कथानक किन्नर समाज पर गहरी नजर डालने पर मजबूर करता है साथ ही हमें सोचने और समझने पर भी विवश करता है कि कैसे इस समाज का विकास किया जाये।

चित्रा मुद्गल का यह उपन्यास मुंबई के एक संपन्न परिवार के लड़के विनोद उर्फ़ बिन्नी उर्फ़ बिमली की कहानी कहता है जो जन्म से जननांग की विकृति का शिकार है। उसकी शारीरिक संरचना ही उसकी भयावहता का कारण बनती है। बिन्नी एक मेधावी छात्र है, पढ़ने में वह अच्छा है लेकिन जैसे-जैसे वह बड़ा होता है वैसे-वैसे सभी लक्षण उसमें दिखाई देने लग जाते है जो उसे सामान्य व्यक्ति से अलग करते है। माँ-बाप ने उसे अनेक विशेषज्ञ डॉक्टरों को दिखाया पर कोई लाभ नहीं हुआ। हिजड़ा समुदाय की नायिका एक दिन उनके घर आकर हंगामा कर देती है और बिन्नी पर अपना हक जताती है उस दिन तो उसकी माँ उसे ले जाने से बचा लेती है लेकिन वे उसे वापस ले

[152] चित्रा मुद्गल, 'सत्याग्रह समाचार-पत्र साक्षात्कार', (31जनवरी 2016)
[153] ममता कालिया, 'नवभारत टाइम्स' (सित. 2016)

जाने की धमकी देते है, यह बात उसके परिवार के लिए काफी दुःख की बात होती है कि उनका बेटा उनकी नजरों से दूर चला जायेगा।

बिन्नी के चौदह साल का होते-होते उसमें हिजड़ा होने के लक्षण दिखाई पड़ने लग जाते है। उसका व्यवहार लड़की की तरह हो जाता है, उसे लड़कियों की तरह रहना, कपड़े पहनना सजना-सवरना अच्छा लगता है। इस बात को लेकर उसके परिवार वाले काफी चिंतित रहते है किन्नरों को इसकी भनक भी लगी तो वे उसको उठाकर ले जायेंगे। बदनामी के डर से उसे गुमनाम जिंदगी जीनी पड़ती है। यहाँ तक कि उसके परिवार वाले उसको मृत घोषित कर देते है। विनोद उस घर से कहीं चला जाता है। उसके अपने जीवन से सम्बंधित अनुभव व्यापक है। इस दौरान उसे जो भी संघर्ष करना पड़ा; उसे वह अपनी माँ को प्रेषित की गई चिट्ठियों में बयाँ करता है। उसके विस्थापन के साथ-साथ उसकी पीड़ा का दंश मानसिक और भावात्मक रूप से उसके परिवार को भी झेलना पड़ा। अन्य व्यक्तियों द्वारा उसके बारे में पूछने पर कहीं उसे सड़क दुर्घटना में शिकार हुआ बता दिया जाता है तो कहीं उसके कहीं चले जाने का तर्क दिया जाता है ताकि असुविधाजनक सवालों से पीछा छुड़ाया जा सके। उसके माता-पिता यह निर्णय भी कर लेते है कि घर बदला जाए जिससे मोहल्ले वालो के रोज-रोज के प्रश्नों से छुटकारा मिल सके।

विनोद उर्फ़ बिन्नी प्रगतिशील विचारधारा से भी प्रेरित है। वह इस जननांग दोषी समाज की विकृतियों को जानता है फिर भी वह सब-कुछ बदलना चाहता है। वह उन स्थितियों में परिवर्तन लाना चाहता जिसके परिणामस्वरूप उसके समाज की यह दुर्दशा है। उसकी इच्छा है कि अन्य व्यक्तियों की तरह हमारा समाज भी पढ़े-लिखे जिससे वह भी समाज की मुख्य धारा में शामिल किया जा सके। वह कहता है:- "पढ़ाई ही हमारी मुक्ति का रास्ता है कोई रास्ता ही नहीं छोड़ा गया है हमारे लिए।"[154] वह आत्मनिर्भर होना चाहता है। विधायक जी उसे इस्तेमाल करना चाहते है लेकिन वह उनका विरोध करता है और उनके द्वारा दिए जाने वाले दिशा-निर्देशों से पूर्णतया सहमत नहीं हो पाता है। विधायक बस उसका फायेदा उठाना चाहते है अपने वोट बैंक की खातिर।

[154] चित्रा मुद्गल, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृ. 9

वह अपने इस जीवन को लेकर बहुत दुखी रहता है। वह मानता है कि उसकी वजह से परिवार में कभी ख़ुशी का माहौल नहीं रहा। उसके मोटा भाई (गुजराती में बड़ा भाई को) सिद्धार्थ के भी जब बच्चा हुआ तो उसकी वजह से उनके घर पर नहीं हुआ। अपने हिजड़ा होने को लेकर उसके मन में गहरा अपराध बोध है। यह संपूर्ण उपन्यास माँ-बेटे के पत्र व्यवहार के माध्यम से जीते जी परिवार के लिए मर चुके बिन्नी उर्फ़ बिमली की त्रासद स्थिति हमारे सम्मुख रखता है। वह अपने-आप को बदलना चाहता है। किन्नर समुदाय कि जो भी गलत परम्पराएँ है, उनकों तोड़ना चाहता है। वह ताली बजाना, साड़ी पहनकर नाचना, इन सबसे विद्रोह करना चाहता है। इसके कारण चाहे उसे प्रताड़ित ही क्यों न होना पड़े। यथा:-"उनके लात घूंसे, थप्पड़ और कानों में गर्म तेल सी टपकती किसी भी संबंध को न बक्शने वाली अश्लील गलियों के बावजूद न मैं मटक-मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ न सलमें-सितारे वाली साड़ियाँ लपेट लिपस्टिक लगा कानों में बूंदे लटकाने का।"[155] बार-बार बिन्नी अपने-आप से प्रश्न करता है कि मैं वह क्यों नहीं हूँ जो मेरे अन्य दोस्त है, हमारे समाज को शायद ऐसे लोगों की आदत नहीं। पर यह तो जरूरी नहीं कि समाज की आदत न होना किसी के लिये अभिशप्त जीवन का हिस्सा बन जाये।

वह कभी-कभी बहुत क्रोधित हो जाता है और कह उठता है:- "जिस नरक में तूने और पापा ने धकेला है मुझे वह एक अँधा कुआ है जिसमें सिर्फ सांप-बिच्छु रहते है। साँप बिच्छु बनकर वह पैदा नहीं हुए होंगे। बस, इस कुंए ने उन्हें रहने नहीं दिया गया।"[156] हर नई रचना समाज में एक नई मानवीय वैचारिकी उत्पन्न करती है। चित्रा जी का यह उपन्यास वास्तव में एक नई बहस चलाता है, अंदर से कुरेदता है अपने मनुष्य होने पर प्रश्नचिह्न लगाता है। हमारे आस-पास के वे लोग जो सड़कों पर, व्यस्त चौराहों पर, बच्चे होने पर या घर में कोई अन्य उत्सव होने पर नाचने-गाने, आशीषने चले जाते है तब क्या हम उनके साथ वैसा ही व्यवहार करते है जैसा व्यवहार एक इंसान दूसरे इंसान के साथ करता है? नहीं करते तो इस उपन्यास के बिन्नी की आवाज ध्यान से सुनना चाहिए।

[155] वही, पृ.9
[156] वही, पृ.11

नाला सोपारा नामक स्थान मुंबई का वह भाग है, जहाँ मध्यवर्ग के अधिकांशत लोग रहते है। यहाँ दिल्ली की उस संस्कृति की ओर भी इशारा किया गया है जहाँ पश्चिमी संस्कारों का घोलमेल है। जो नौकरशाहों, मंत्रियों के पुत्रों और पैसे के बल पर शोषण करने वाली प्रवृति, भाई-भतीजेवादी बल पर जोर दिखाना आदि की ओर इशारा करती है। इस उपन्यास के संदर्भ में डॉ. वीणा शर्मा लिखती हैं- "यह रचना मानवीय समाज के उस पक्ष को छूती है जिसने भारतीय समाज के ताने-बाने को कमजोर साबित किया है। सदियों से उच्च वर्णो द्वारा दबाए जाते रहे अन्य वर्ग भी अपनी सामूहिक शक्ति के सहारे ही सही एक नई पहचान बनाने के प्रयास में तो है। लेकिन इसी मानवीय समाज का एक और घिनोना रूप है जहाँ मात्र एक शारीरिक अंग के विकसित न होने से उसे समाज की मुख्यधारा से काट कर परें फैंक दिया गया है।"[157] आजादी से पहले देश की विभिन्न रूढ़ियों और प्रथाओं को तोड़ने का प्रयास किया गया जैसे सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह, दलित, आदिवासी आदि के जीवन से सम्बंधित भेदभाव का विरोध किया गया लेकिन किन्नरों की जिंदगी में कोई परिवर्तन नहीं आया है। लेखिका किन्नर समाज की इस स्थिति का वास्तविक जिम्मेदार हमारे लिंगपूजक समाज को मानती है। उपन्यास हिजड़ा समुदाय के जीवन पर लिखे अन्य उपन्यासों से कई मायनों में अलग है।

इसमें केवल किन्नरों के जीवन-संघर्षो का विवरण न देकर एक प्रकार से मानवतावादी दृष्टिकोण भी प्रकट हुआ है। इसमें नायक बिन्नी केवल हिजड़ा होने की पीड़ा का होकर समाज से दया-अनुकम्पा की याचना नहीं करता है अपितु वह अपने दम पर संघर्ष करता हुआ दिखाई पड़ता है। गलियों में घूमते हिजड़ा दिन-प्रतिदिन हमारी गलियों और प्रताड़ना का शिकार होते रहते है। उनके लिए इस कदर अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिन्हें सुनकर हमारा मन-मस्तिष्क सिंहर उठे।

समाज चाहे कोई भी हो यदि उसकी संरचना को देखे तो उसमें कहीं न कहीं विषमता नजर आ ही जायेगी। कमजोर वर्ग पर शक्तिशाली वर्ग हमेशा से ही शासन करता आया है। शोषण स्वरूप

---

[157] डॉ. वीणा शर्मा, 'बहिष्कृत दुनिया', सं. डॉ.शगुफ्ता नियाज, 'अनुसन्धान' अक्तूबर-दिसम्बर (2017) अलीगढ़

किसी भी प्रकार का हो सकता है:-आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, शारीरिक अथवा मानसिक। अब तक स्त्री के यौन शोषण के मामले आए है लेकिन हिजड़ा समुदाय न केवल पूर्व में अपितु पश्चिम में भी पीड़ा का शिकार है। इनकी स्थिति और भी दयनीय है। ये लोग अधिकतर गरीबी और हिंसा के शिकार होते रहते है। लेखिका का इस उपन्यास को लेकर सीधा संदेश है कि मस्तिष्क में यह बिल्कुल हमारे जैसे हैं, जैसे दूसरे लोगों को हक है अपना काम चुनने का वैसे ही इन्हें भी। ताली बजाना और बच्चा पैदा होने या शादी समारोह में नेग मांगना, ट्रेनों, बसों में भीख मांगने तक यह सीमित नहीं हैं।

इस तरह से इन्हें मौका मुहैया करवाने की कोशिश सरकार को करनी चाहिए। समाज, कानून का इनको अगर हौसला मिल जाएगा तो इन्हें मुख्यधारा में आने से कोई नहीं रोक सकता। इन्हें भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने की आवश्यकता है। उपन्यास ‘नाला सोपारा’ के माध्यम से लेखिका का यही मंतव्य है।

3.3.7 मैं पायल-महेंद्र भीष्म

लेखक उत्तर प्रदेश में गाँव खरेला (महोबा) में जन्में तथा बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी से राज. विज्ञान में परास्नातक एवं लखनऊ विश्वविद्यालय से विधि स्नातक किया। महेंद्र भीष्म सुपरिचित कथाकार हैं। आपके अब-तक पाँच कहानी संग्रह, दो उपन्यास, एक नाट्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इनकी कृतियों पर लघु फिल्मों का निर्माण हो चुका हैं। इनके उपन्यास ‘किन्नरकथा’ पर फीचर फिल्म का निर्माण हो रहा है। इन्हें कई पुरस्कारों से भी सम्मानित किया जा चुका है।

अपनी दूसरी कृति में महेंद्र भीष्म किन्नरों से जुड़े मुद्दों को और अधिक व्यापकतम स्तर पर उतारते हैं। इसमें संघर्ष की अपराजेय गाथा है। विस्थापित बालक अपने जीवन की हर प्रकार की दुश्वारियों को झेलता रहता है। यह एक जीवनीपरक उपन्यास है जो लेखक ने किन्नर गुरू पायल सिंह के जीवन को आधार बनाकर लिखा है। इसमें किन्नर गुरू पायल सिंह को जिंदगी के हर मोड़ पर संघर्ष करना पड़ता है। घटनाक्रम का आरंभ उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले से होता है। उपन्यास में यह अपने माता-पिता की चौथी लड़की के रूप में जन्म लेती है। अपने जन्म से लेकर अंत तक उसे हर

प्रकार की प्रताड़ना सहन करनी पड़ती थी। एक तो चौथी लड़की ऊपर से हिजड़ा दोहरी मार उस पर पड़ती है। लेकिन कभी-कभी वह अपने मन में ही विद्रोही बन जाती है। वह मुख्य पात्र के रूप में सामाजिक बुराइयों को भी दूर करने की पहल करती है। एक स्थान पर वह शराबियों के कारण समाज में फैली बुराइयों को दूर करने के संबंध में कहती है कि:- "इन सामाजिक बुराइयों को दूर कराने में हम किन्नर भी लोगों की, सरकार की मदद कर सकतें हैं। सरकार हम पर भरोसा करके तो देखे। हमें आजमाएँ तो, हम लोग भी अपने लोगों के लिए, कुछ कर गुजरने का जज्बा रखतें हैं।"[158] इस प्रकार से एक प्रकार का जोश उनमें दिखाई देता है लेकिन यह जोश किसी काम का नहीं रह जाता है। पायल का बचपन का नाम जुगनी होता है।

परिवार में सब उसे जुगनी कहकर ही बुलाते है। वह अपनी सभी बहनों की लाड़ली बनकर रहती है लेकिन अपने पिता को किसी भी तरह से पसंद नहीं होती है। उसके पिता के सामने अगर वह आ जाती है तो पिताजी का गुस्सा किसी न किसी तरह उस पर उतर जाता है। इसको हमेशा से ही पिताजी की मार और बड़े भैया का नियन्त्रण सहना पड़ता है। बचपन से ही इसने अपने पिताजी के हाथों की खूब मार खाई है। पिताजी जब नशे में धुत होते तब उन्हें यह पता नहीं होता कि हाथ में क्या है जो मन में आये उसी से मार देते यथा:- "जब कभी पिताजी दारू के नशे में कोसते, गाली देते, 'ये जुगनी, हम क्षत्रिय वंश में कलंक पैदा हुई है, साली हिजड़ा है...आदि जाने क्या-क्या बकते रहते थे। 'हिजड़ा' यह शब्द सबसे पहले मैंने उन्हीं के मुख से सुना था।"[159] उसे करमजली, नासपीटी, हरामजादी नामों से गाली देते थे। बचपन में उसे कुछ पता नही था, वह अपनी मस्ती में रहती, खेलती कूदती रहती। बचपन में खेल-खेल में माया जो उसकी सहेली थी, उसके साथ कुछ ऐसी-वैसी हरकते करती रहती थी।

जब जुगनी पहली क्लास से दूसरी क्लास में पढ़ने गई तब उसे लड़के वाली ड्रेस में जुगनी से जुगनू बनाकर भेजा गया। जब उसनें तीसरी कक्षा में प्रवेश किया तब उसका नाम पायल सिंह रख दिया गया। उसे पिताजी से पूरी तरह छिपाकर रखा जाता था, उनके सामने लड़का बनकर रहना पड़ता था। पायल सिंह के लिए ये दिन सबसे ज्यादा असहनीय और दर्द भरे होते थे। पूरी तरह से

---

[158] महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', अमन प्रकाशन, कानपुर (2016) पृ.सं.23

[159] वही, पृ.सं.26

उनके सामने उसे लड़का बनाकर रखना पड़ता था। यथा:- “पिताजी को कहीं से भी लड़की न दिखूँ इसकी एहतियात रखी जाती थी। मैं लड़कों के कपड़ों में स्वयं को बहुत ही असहज महसूस करती थी। इस समय तक मुझे पूरी तरह से एहसास हो चला था कि मैं वही हूँ जो पिताजी गुस्से में मारते समय चिल्लाते-चीखते है। ‘मैं एक हिजड़ा बच्चा हूँ...। यह आभास पिताजी के बारंबार कहने-कोसने से मुझे हो चुका था।”[160] उसे इस उम्र तक अपने हिजड़ा होने का एहसास हो चुका था। धीरे-धीरे पिताजी के साथ-साथ उसका भाई राकेश भी उससे उसी तरह का व्यवहार करने लगा जैसा पिताजी करते थे। अब तो उसकी पढाई पर भी रोक लग गई थी। उसका स्कूल जाना उसके पिताजी की हिदायत पर बंद कर दिया गया।

उसका मानना था कि अगर यह स्कूल जायेगी तो समाज में हमारी नाक कट जायेगी। उसके पिताजी उसकी माँ को इस प्रकार समझाते हैं:- “कान खोलकर सुन ले कमलेश की अम्मा। अगली बार जब मैं आऊँ तो यह साला हिजड़ा लड़की के कपड़े पहने मिला और घर से बाहर निकला, तो मैं अपने ही हाथों से इस साले का खून कर दूँगा।”[161] इस प्रकार की भावना रखते थे उसके पिताजी उसके प्रति। वे उसका मुँह तक देखना पसंद नहीं करते थे। क्या कोई पिता इतना क्रूर हो सकता है उसकी क्रूरता का उदाहरण यहाँ देखा जा सकता है। इतनी वीभत्स प्रताड़ना ईश्वर शायद ही किसी को दे जितनी पायल सिंह ने झेली है। यहाँ तक कि उसके पिता उसको फांसी पर लटका देते है।

वह रात के अँधेरे में कराहती हुई अपने-आपको दोष देती रहती है। इन यातनाओं से दुखी होकर वह अपने-आपको खत्म कर देना चाहती है, इसी आशा से वह घर से निकल पड़ती है। वह ट्रेन के आगे कूदना चाहती है लेकिन कूद नहीं पाती है। रेलवे स्टेशन पर उसे पुलिस वाले की गंदी हरकतों का सामना करना पड़ा। वह बार-बार अपनी जीवन लीला समाप्त करने के बारे में सोच रही थी। ताकि बार-बार उसे इस तरह के कष्टों का सामना ना करना पड़े यथा:- “मन में इच्छा जागृत हुई कि गंगा में कूद जाऊं और आगे आने वाली अनिश्चितता भरी यातनाओं से मुक्ति पा लूँ पर मैं भयवश या कोई शक्ति जो समानांतर विचार बन चल रही थी, जो भी कारण हो मैं गंगा मैया की गोद

[160] वही, पृ.सं.33-34

[161] वही, पृ.सं.36

में नहीं समायी और गंगा पुल पार हो गया।"[162] इस प्रकार की ऊहापोह उसके मन में चलती रहती है। वह इस नारकीय जीवन से छुटकारा पाना चाहती है लेकिन अपने प्राण नहीं त्याग पाती। नियति को यह मंजूर ही नहीं था कि वह समाप्त हो जाये, अभी तो उसे अपने जीवन में और भी दुखों का सामना करना शेष था।

उसके मन में अपने परिवार से बिछुड़ने का दुःख बड़ा भयंकर था। उसे अपने परिवार की याद सताती रहती थी। कोई भी व्यक्ति नहीं चाहता कि वह अपने परिवार से दूर रहे पर मजबूरन उसे रहना पड़ता है यही स्थिति पायल सिंह की भी रहती है। "जब परिवार से बिछोह होता है, मिट्टी से विस्थापन होता है। यह दारूण दुःख पृथ्वी से मानव मात्र के लिए ही नहीं सारे जीवधारियों के लिए सबसे बड़ा संताप होता है। एक माँ ही वह धागा होती जो परिवार के सदस्यों को जोड़े रखती हैं और जोड़े रखती है संवेदना को, प्रेम को, लगाव को, चाहत को फिर से एक हो जाने की आस को।"[163] पायल सिंह को अपनी माँ से बहुत ज्यादा लगाव था और माँ को भी उससे। वह किसी भी तरह उसे बचाकर रखना चाहती थी। समाज से, पिता से सबसे। वह उसके कलेजे की कोर थी। वह उससे दूर नहीं होना चाहती थी लेकिन नियति को शायद यह मंजूर नहीं था। पायल को घर छोड़कर जाना पड़ा। पायल विस्थापन के दौरान अपने साथ हुई ज्यादतियों को स्त्रियों के साथ जोड़कर देखना चाहती है।

वह सोचती है कि इस समाज में अकेले स्त्री बनकर रहना कितना मुश्किल काम है। वह यहाँ सब तरह से असुरक्षित हैं। चारों तरफ हवस के भेड़िये घूम रहे हैं जो कभी भी शिकार कर सकते हैं। इस कारण से वह लड़का बनकर रहने का विचार करती हैं। इसमें उसकी स्त्रियोजनित सोच भी उजागर होती हैं:- "देह के नरभक्षी भेड़ियों की चुभती नजरों को बड़ी सिद्द्त से महसूस किया होगा, जो मादा गंध के उठते ही खुंखार हो उठते हैं और मौका मिलते ही दबोच लेने के लिए उतावले बने रहते हैं। सारी जोश आजमाइश के बाद क्रूरता, नग्नता पर उतर आते हैं और मसल देना चाहते हैं

[162] वही, पृ.सं.55
[163] वही, पृ.सं.55

नारी देह को।"[164] इस तरह से हमारे समाज में स्त्रियों को कुदृष्टि से देखा जाता है केवल शारीरिक संरचना के कारण ही उसे अलग-थलग कर दिया जाता है।

रेलवे स्टेशन पर एक समय पायल सिंह की ऐसी स्थिति हो जाती है कि उसे भीख मांगनी पड़ती है। उसे दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती है। कोई भी उसे काम देने को तैयार नहीं होता है। वह भूखी रहती है और मजबूरन भीख मांगनी पड़ती है। जब वह स्टेशन पर बैठे दो लोगों से खाना मांगती है तो उसे इस प्रकार दुत्कार दिया जाता है:- "चल भाग साले, पता नहीं कहाँ-कहाँ से चले आते है...? बड़ा आया भूखा हूँ साहब कहने वाला।' पहला सहयात्री मुझे डांटते हुए बोला। 'पता नहीं इन सालों को इनके माँ-बाप पैदाकर भीख मांगने क्यों छोड़ देते हैं?'

'एक रोटी...'

भागता है यहाँ से साले या लगाऊँ दो हाथ।' पहला सहयात्री मुझे मारने के लिए उठा मैं डरकर दूर हट गई। और उन दोनों को टुकर-टुकर देखने लगी।"[165] इस तरह से उसे भीख मांगने पर भी नहीं मिल पाती है और जब वे लोग ख़राब हुए खाने को फेंक देते है तो वह उसे दौड़कर उठा लेती है। इस स्थिति से भी उसे गुजरना पड़ता है। इसी बीच भिखारियों से उसका अपनत्व का भाव जुड़ गया। वह उनके साथ-साथ भीख मांगने लगी, उनके साथ ही सो जाती, दिनभर उनके साथ इधर-उधर घुमना लगा रहता। उनसे उसका एक ममत्व का भाव जुड़ गया था। वह कहती है कि:- "एक बात मैं यहाँ स्पष्ट कर दू उन भिखारियों के बीच में जितने भी दिन रही कभी भूखी नहीं सोई। वे भिखारी जरूर थे पर उनके अंदर मानवता थी, दूसरों के लिए दुःख-दर्द था।"[166] रेलवे स्टेशन पर अनवर की मौत हो जाने के बाद पायल ने चाय वाली दुकान पर काम किया। उसके बाद अप्सरा टॉकीज में काम किया। वह स्वयं कहती है कि अगर मैं बेहतरीन डांसर बन पायी हूँ तो अप्सरा टॉकीज की वजह से। लेकिन उसकी जिंदगी में तो परेशानियों का सामना करना लिखा था।

[164]वही, पृ.सं.59

[165] वही, पृ.सं.61-63

[166] वही, पृ.सं.64

उसने यहाँ चौकीदार से परेशान होकर नौकरी छोड़ दी और वापस रेलवे स्टेशन पर कुछ काम न सूझा तो मजबूरन भीख मांगना शुरू कर दिया। उस समय पायल सिंह की उम्र तकरीबन तेरह-चौदह वर्ष थी, बाद में वह भीख मंगवाने वाले गिरोह की गिरफ्त में आ जाती है। अपने जीवन में हमेशा रहे संघर्ष से अपनी स्थिति को वह बद् से बद्तर मानती है। वह कहती है कि:- "घर से भागने की उन सभी के पास अपनी-अपनी वजहें थी। पर उनमें से मेरी तरह एक भी न था, जो हिजड़ा होने के कारण अपने पिता की नफरत और मार से बचने के लिए घर से भागा हो। भागी तो थी मरने के लिए पर मुझे क्या पता था कि मैं इस नरक में आकर बद् से बद्तर स्थिति को प्राप्त होऊँगी। वहाँ से निकलने के बाद उससे सुधार गृह में भेज दिया गया। एक समय तो उसे अपना जीवन ही अभिशाप लगने लगा।

उसके भैया राकेश और मम्मी उसे लेने आये और अपनी मौसी के घर चले गये। जब मौसी ने उसके हिजड़ा होने का सच जाना तब उसका व्यवहार एकदम से परिवर्तित हो गया। तब पायल सिंह अपने मन में विचार करने लगी, लेकिन बार-बार विस्थापित जीवन का दर्द उसको सालता रहता। अप्सरा टॉकीज में भी उसके किन्नर होने का पता सबको चल गया था। वह वहाँ से परेशान होकर निकल गई। उसके बाद संतोष दादा की अनुकंपा से उसे पूनम टॉकीज में नौकरी मिल गई । जैसे-जैसे उसकी उम्र बढ़ती गई वैसे-वैसे उसे अपनी असलियत पहचानने का डर सताने लगा। इस डर से वह लड़की बनकर लखनऊ में रहना चाहती थी ताकि वहाँ उसे कोई पहचान न सकें। लेकिन लखनऊ में कुछ हिजड़ा व्यक्ति उसे पहचान जाते हैं और अपनी वैन में बैठाकर जबरदस्ती ले जाते हैं, वे उसे समझाते हैं:- "घर-परिवार में रहने से हमें क्या मिला, अपने ही सगो के जुल्मों के शिकार हुए जब हमारा खुद का बाप, भाई ही हमारी जान का दुश्मन बन बैठा तो ऐसे घर-परिवार से गुरुमाई का डेरा हमारे लिए स्वर्ग से कम नहीं हैं। रिया वैन चलाते हुए गंभीर होकर बोली ।"[167]

वह किन्नरों के डेरे से जाने की जिद करती हैं लेकिन गुरूमाई बार-बार उसको समझाती है। उसे जब किन्नरों की टोली में शामिल करने का प्रयास किया गया इसी बीच वह भूखी प्यासी भी रही, लेकिन हार मानकर उसे उनमें शामिल होना ही पड़ा। उसको बधाई टोली के साथ जाना अच्छा

[167] वही, पृ.सं.94

नहीं लगता था। जिनके घर बधाई लेने जाते थे, उनके घर मिले अपमान, घृणा आदि से वह व्यथित हो जाती थी। उपन्यास के अंत में दिखाया गया है कि आजीवन उसे संघर्ष करना पड़ता है गुरूमाई के मरने के बाद डेरे में गद्दी को लेकर लड़ाई शुरू हो गई। अशोक नाम का व्यक्ति जिससे वह प्रेम करने लगी थी, उससे लड़ाई होने पर वह भी धीरे-धीरे पुन: किन्नरों के साथ रहने लगी और गद्दी का सारा काम संभालने लगी।

व्यक्ति अपनी आदतों को नही छोड़ सकता जिस प्रकार पायल नहीं छोड़ पायी। मजबूरन उसे अंत में किन्नरों की टोली में शामिल होना ही पड़ा। लेखक ने एक किन्नर के माध्यम से समस्त किन्नर समाज की स्थितियों की ओर संकेत करने का प्रयत्न किया है। पायल सिंह को जीवन पर्यन्त संघर्ष करना पड़ा। उसे कहीं पर भी चैन नहीं मिला। वह हमेशा खुद की तलाश करती रही लेकिन कभी अपने-आपको नहीं खोज पायी।

लेखक महेंद्र भीष्म ने पात्र पायल सिंह के चरित्र को बखूबी उभारा है। उसका पूरा चित्रण उपन्यास में प्रस्तुत किया है। लेकिन अन्य किन्नरों की स्थिति का ब्यौरेवार वर्णन इसमें दिखाई नहीं पड़ता है। एक-दो स्थानों पर उनका उल्लेख मात्र हुआ है। लेकिन महेंद्र भीष्म उपन्यास के मुख्य पात्र के प्रति पूरा न्याय कर पाए हैं। यही उपन्यास का उद्देश्य भी हैं।

3.3.8 जिन्दगी 50-50-भगवंत अनमोल

भगवंत अनमोल उभरते युवा रचनाकार है; जिन्होंने अपनी पहली पुस्तक से ही युवा पाठक वर्ग को अपनी ओर आकर्षित किया। एक मध्यमवर्गीय परिवार की कहानी कहता यह उपन्यास 21वीं सदी में आधुनिकीकरण के कारण हो रहे बदलाव के परिदृश्य को देखते हुए अपने भाई और पुत्र को अपने जीवन में मिली पीड़ा का आँखों देखा हाल लिखा है। मध्यमवर्गीय परिवार के सपनों की उड़ान उड़ता यह उपन्यास लेखक के जीवन में आए पग-पग पर बदलाव और उनसे लड़ने का हौसला रखने की जीजिविषा की अभिव्यक्ति करता है। इससे पूर्व लिखे गए उपन्यास किन्नर समाज के दुःख-दर्दों से हमें परिचय करवाते है, लेकिन यह उपन्यास उन्हें सब कष्टों को सहने का संबल प्रदान करता है। यह क्षमता लेखक स्वयं उत्पन्न करता है। साथ ही उपन्यास में शायरियों का प्रयोग भी किया गया है।

कहानी दो स्तरों पर साथ-साथ चलती है। एक तरफ लेखक और उसका परिवार है, जिसमे माँ, पत्नी अशिका, और बेटा सूर्या है। दूसरी तरफ अनाया और उसका पूर्व का जीवन उसे याद आता रहता है। वह गाड़ी चलाने के साथ ही पूर्व की स्मृतियों में खोता चला जाता है। वह किन्नर के रूप में अपने भाई का अंत आत्महत्या के रूप में देख चुका था। फिर भी उसे अपने बेटे के रूप में उस दंश को झेलना पड़ा। वह खुश था कि उसके यहाँ बच्चा होने वाला है लेकिन जैसे ही उसने डॉक्टर से सुना कि आपका बेटा कभी बाप नहीं बन पाएगा, उसके पैरों तले से जमीन खिसक गई। "भगवान ने ऐसा क्यों किया? मेरे यहाँ पर किन्नर क्यों पैदा किया? अब वह इस दुनिया से कैसे लड़ेगा? मैं उसे कहाँ-कहाँ बचाऊंगा। उस अँधेरे में मेरे सामने बस कुछ ही दृश्य घूम रहे थे- ट्रेन के शादी वाले मंडप के और ऐसे दृश्य...जिनकी कल्पना से ही मैं सिहर उठा। हे भगवान, क्या वह भी सिर्फ एक सेक्स वर्कर बनकर रह जायेगा?"[168] इस प्रकार से दर्दनाक पीड़ा की कल्पना मात्र से ही लेखक का हृदय काँप उठता है क्योंकि वह सब चीजे उसने देख रखी है। अनमोल को नायक कहे या खलनायक? कुछ भी न कहे तो बेहतर होगा। अनमोल ठीक अपने जैसा ही व्यक्ति है। वह आम आदमी की तरह गलतिया भी करता है और उनमें सुधार भी करता है।

पूर्वदीप्ती शैली में लिखा गया यह उपन्यास उत्तरप्रदेश, बेंगलुरु और मुंबई की यात्रा कराता किन्नरों के जीवन से भी मिलवाता चलता है। एक ऐसे व्यक्ति की कहानी जो गाँव से निकलकर शहर में अपना करियर बनाने के लिए जाता है। यह उपन्यास किन्नरों के प्रति हमारी सोच में परिवर्तन लाने पर जोर देता है। इसकी कथावस्तु अंत तक पाठक को बांधे रखती है और आगे क्या होगा? का भाव मन के भीतर चलता रहता है।

उपन्यास में एक मध्यम वर्गीय परिवार की कहानी है, जिसके छोटे-छोटे सपने होते हैं और इन सपनों के पीछे वह समाज है, जो इन सपनों को लोगों के मन में गढ़ता है और इस तरह एक मध्यम वर्गीय परिवार का जीवन पीढ़ी दर पीढ़ी गुजरता जाता है। यह किसी फिल्म की कहानी की तरह बीच-बीच में बीते समय में चला जाता है, और फिर एक कड़ी शुरू होती है।

[168] भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', राजपाल एंड संस, (2017) नई दिल्ली, पृ. 25

बीच-बीच में कई हिंदी फिल्मों के किस्से भी है, जिससे पाठक को उपन्यास रोचक और समझने में आसान लगता है और यही उपन्यास की मजबूती है। लेखक स्वयं अनुभव करता है अपने बेटे के दुःख को जिसने इस काया में जन्म लिया। ऐसी जिन्दगी को वह एक समझौते के अतिरिक्त कुछ नहीं मानता। इस जीवन से अच्छा वह मरने को मानता है। इस दर्द को वे इस प्रकार प्रकट करते है: -"इतना दर्द कि मेरा बेटा अगर मर भी जाता तो शायद इतना दुःख नहीं होता। ऐसे तो सिर्फ मैं ही दुःख झेल रहा होता पर अब वह दुःख झेलेगा और उसका गवाह मैं खुद बनूँगा। शिक्षा से लेकर, खेलकूद, नौकरी और सेक्स सभी जगह उससे दोगला व्यवहार होगा। एक बाप अपने बेटे से यह दोगला व्यवहार होते हुए कैसे देख पायेगा ?"[169] भावनाएँ, जरूरते, महत्वाकांक्षाएं- ये सब एक स्त्री की- लेकिन शरीर पुरूष का! एक बेहद दर्दनाक परिस्थिति जिसमें ज़िन्दगी, ज़िन्दगी नहीं, समझौता बनकर रह जाती है। जिन्दगी में समझौते के अलावा और कुछ शेष नहीं रह जाता। ऐसे इंसान और उसके घरवालो को हर मकाम पर समाज के दुर्व्यवहार और जिल्लत का सामना करना पड़ता है। अनमोल इस बात को अच्छी तरह समझता है क्योंकि उसकी अपनी एकमात्र संतान और छोटा भाई, दोनों की यही वास्तविकता है, दोनों किन्नर है। लेकिन वह उसको इस चीज का आभास नहीं होने देता है और निर्णय करता है उसे भी वह अन्य व्यक्तियों की तरह सामान्य जिंदगी देने की कोशिश करेगा। भाई को पल-पल पिसते, घर और बाहर प्रताड़ित और अपमानित होते हुए देख अनमोल यह दृढ निश्चय करता है कि वह अपने बेटे को अधूरी ज़िन्दगी नहीं, बल्कि भरपूर ज़िन्दगी जीने के लिए हर तरह से सक्षम बनाएगा!

उसे अपने साथ-साथ अपनी पत्नी का भी दुःख होता है। वह सोचता है कि आशिका जब इस कटु सत्य को सुनेगी तो क्या सोचेगी। "उसने ऐसे बच्चे को जन्म दिया जो अपना वंश आगे नहीं बढ़ा सकता। उसे समाज के इस हाशिए पर जीना पड़ेगा। मेरी आँखों से आँसुओं की धाराएँ बहने लगी थी। मैं मन से काफ़ी कठोर था फिर भी मुझे बच्चे का भविष्य दिख रहा था, वह किस तरह से अपने दोस्तों के मजाक का शिकार बनेगा।"[170] इस प्रकार इस समुदाय के बच्चों के जीवन का लेखक को पहले से ही अनुमान था इसीलिए वह दुखी हो जाता था।

---

[169] वही, पृ.29
[170] वही, पृ.28

दूसरी कहानी अनाया और उसके प्रेम-प्रसंग की चलती है। जो कि एक तमिलियन लड़की है। उसकी शारीरिक संरचना के आधार पर वह सुगठित एवं सुन्दर है लेकिन उसके दाएँ गाल पर बर्थ मार्क है जिसने उसे प्यार से दूर कर दिया है। अनमोल, सूर्या, हर्षा, अनाया जैसे ही हम सभी के जीवन में कोई न कोई कमी अवश्य रहती है। कोई भी परफेक्ट नहीं हो सकता।

"दर्द उसका था घना,

जितना सोचा उससे अधिक ही मिला"[171]

भगवंत अनमोल मुंबई से उपन्यास की शुरुआत करते है। अपनी माँ, और पत्नी आशिका के साथ। लेखक को अपने गाँव की याद आती है और अपने बचपन की बातें याद करने लग जाता है। हर माता-पिता की ख्वाहिश होती है कि उसका बेटा बड़ा आदमी बने वैसे ही लेखक से पिता की भी दिली तमन्ना थी कि उनका बेटा भी इंजीनियर बने। लेखक इंजीनियर बनने को एक नाली समझता था। ऊपर से पश्चिमी संस्कृति की हवा। इन सबको वह पैसे कमाने का जरिया समझता है इसके अलावा और कुछ नहीं।

इसके उपरांत लेखक अपने आज में लौट आता है। जितनी तेजी से वह गाड़ी ड्राइव कर रहा है, उतनी ही तेजी से उसके मन में विचार चल रहे है। अशिका जो उसकी बीवी है; की तबियत खराब होने पर उसकी चिंता अत्यधिक बढ़ जाती है। वह शीघ्रता से अस्पताल पहुँचना चाहता है। इस दौरान उसे अपनी जवानी के दिन याद आ जाते है, उसकी और अनाया की कहानी जो बरसों पहले उसकी यादों का अभिन्न हिस्सा थी। वह मुंबई से बंगलुरु की यादों में खो जाता है। वहाँ ऑफिस में उसका सामना एक ऐसी लड़की से होता है जो नख से लेकर शिख तक सौंदर्य से भरपूर है लेकिन उस चाँद को उसके चेहरे के बर्थ मार्क ने मानों धुंधला कर दिया हो। और यहाँ से शुरू होता है अनाया और उसकी बातचीत का सिलसिला, यह बातचीत कब प्रेम में तब्दील हो जाती है उन्हें पता ही नहीं चलता। इसी बीच लेखक अपने आस-पास की दुनिया को लेकर विरोधी भाव से

---

[171] वही, पृ.65

भर उठता है। वह इस तकनीकीकरण और आधुनिकता से भरे जीवन में मानवीय मूल्यों के ह्रास पर विचार करता है। सामाजिक मीडिया, कम्प्यूटर, लेपटॉप, आदि के युग से उसे चिढ़ सी महसूस होती है। यथा:- “वैसे भी इस पंद्रह इंच की स्क्रीन की अपनी अलग दुनिया है, इसमें नौकरी भी है, छोकरी भी है यहाँ तक कि फ़ेसबुक, ट्विटर नामक कई समाज भी, जिन्होंने देश, जाति, संप्रदाय के बंधन तोड़कर अपनी अलग दुनिया बनाई है। इसमें स्कूल भी है जहाँ ज्ञान मिलता है और लूटपाट भी होती है, पूरी तरह से यह तीसरी दुनिया।”[172] इस प्रकार लेखक इन सब से अलगाव महसूस करता है क्योंकि यह सभी उपकरण मानवीय संवेदना को शून्य बना देते है।

उपन्यास के बीच-बीच में लेखक हीरो बनने की कोशिश करता है और अपने पसंदीदा अभिनेता शाहरूख़ खान से संवाद भी बोलता है। अनाया का चेहरा देखकर मानों वह उसके सब दुखों को दूर करना चाहता है, वह सोचता है कि बेचारी के जीवन में कितने दुःख होंगे क्या मैं इसके दुखों को थोड़ा सा भी कम नहीं कर सकता? अपने शायराना अंदाज में लेखक कह उठता है:-

“किसी उदास चेहरे पर खुशियाँ लाने का मूल्य

किसी खुश चेहरे की तारीफों से कई गुना अधिक होता है।”[173]

इस प्रकार से लेखक अनाया के जीवन को खुशियों से भरना चाहता है। वह नहीं चाहता कि उदास रहे। अब वापस वह खयालों से लौटकर साहिल नर्सिंग होम पहुँच जाता है। जहाँ उसकी पत्नी आशिका की डिलीवरी होने वाली है। वह एकदम से काँप उठता है, उसकी धड़कने तेज हो जाती है लेकिन जब उसने माँ से सुना कि तुम पापा बनने वाले हो तब जान में जान आयी। वह पिता बनने के एहसास से मन ही मन खुश होने लगता है। शायद एक पिता के लिए पापा बनने से अच्छा एहसास और कोई नहीं हो सकता। लेखक के मन में बैचेनी बढ़ रही थी। एक तरफ उत्सुकता भी थी। वह डॉक्टर से सुनने के लिए बेताब हो रहा था। लेकिन जितनी ज्यादा उसे उत्सुकता थी उतनी ही अधिक निराशा का सामना उसे करना पड़ा। वह हाथ पकड़कर उसे अपने केबिन में ले गया। लेखक कुछ अनर्थ के डर से घबरा गया। यथा:- “वे थोड़ा अटक-अटक कर बोले, मुझे लगता है आपका

---

[172] वही, पृ. 11

[173] वही, पृ.21

बेटा कभी बाप नहीं बन पायेगा।"[174] यह बात सुनकर लेखक के पैरों तले से जमीन खिसकने लगी। मानों उसकी पूरी दुनिया ही उजड़ गई हो। उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया और उसे 28 साल पुरानी अपने भाई हर्षा की स्मृति हो आयी। उसे लगने लगा कि जो पीड़ा हर्षा ने इस योनि में जन्म लेकर सही है। परिवार, समाज, की हेय भावना अब वही मेरे बेटे को भी सहनी पड़ेगी।

कानपुर में अपने परिवार में लेखक, हर्षा (भाई) उसके पिता और माँ चार सदस्य थे। परंपरा से बंधा उनका गाँव सामान्य लोग जो खेती, मजदूरी करके अपना पेट पालते थे। एक वर्ग जमींदार वर्ग भी था जो निम्न वर्ग पर अपनी धौस जमाता था। इनके पिता भी कुछ ऐसे ही मिजाज के व्यक्ति थे। लेकिन बाबूजी का मिजाज जब बिगड़ गया जब इनके हर्षा पैदा हुआ किन्नर के रूप में। वे इस सत्य को स्वीकार नहीं रहे थे या हो सकता है कि करना नहीं चाह रहे थे। वे दिन-रात इस पर अपना गुस्सा निकालते रहते थे।

स्वयं लेखक के शब्दों में:- "सच को झूठ समझकर जीने का भ्रम काफ़ी हद तक इंसान को उस सच से उत्पन्न पीड़ा से दूर कर देता है। इंसान भी भ्रम में थोड़ा सुकून ढूंढ लेता है। जबकि उस भ्रम के परदे के पीछे सत्य खड़ा रहता है टस से मस हुए बिना। जरा सा पर्दा हिला नहीं कि भय से आँख मूंद लेता है इंसान। बाबूजी के साथ भी यही हो रहा था। भ्रम की आड़ में छिपे सत्य को जानते हुए भी उसे स्वीकार नहीं करना चाहते थे।"[175] लेखक का यही मंतव्य प्रकट होता है कि सच को इतनी जल्दी स्वीकार करना इतना आसान नहीं होता। हर्षा का सच स्वीकारना उसके पिता के लिए इतना आसान नहीं था। वे उसे दुनिया से छिपाना चाहते थे, पर नहीं छिपा सके।

आस-पास के लोग उन्हें पूछने लगे कि सुना है तुम्हारा लड़का सबसे अलग है इस बात से उन्हें सबसे अधिक गुस्सा आता। एक बार लेखक के घर पर मेहमान आने पर हर्षा को उनसे नहीं मिलवाया गया, तब उसके मन के भीतर बार-बार एक ही प्रश्न उठता कि आखिर ऐसा क्या है मुझमें जिसकी वजह से मेरे साथ इस तरह का बर्ताव किया जाता है? "भैया जैसे ही पैर छूकर खड़ा हुआ,

---

[174] वही, पृ.28

[175] वही, पृ.32

मैं भी उनके पैर छुने लगी। लगभग झुक ही गई थी कि बाबूजी ने मेरा हाथ पकड़कर पीछे की तरफ घसीट लिया और दहाड़ने लगे 'चल तू अंदर जा।' उस समय मैं बिना कुछ बोले खिन्न मन से बैग टांगकर वापस आने लगी। मुझे बड़ा दुःख हुआ, ऐसा क्या है मेरे अंदर कि बाबूजी न ही किसी से मुझे मिलवाते है और न ही कहीं घुमाने ले जाते है।"[176]

लेखक की अपनी और दूसरों की जिन्दगी के कुछ अनमोल पहलू जिनकों पढ़कर लगता है कि यदि व्यक्ति को अपनी काबिलियत पर पूरा भरोसा है और कुछ कर गुजरने का साहस रखता है तो वह अपने समाज से लड़कर भी उसमें परिवर्तन ला सकता है। भगवंत अनमोल ने अपने उपन्यास में एक ऐसी कथावस्तु को आधार बनाया है जिसे लिखना तो दूर लोग उसके बारे में पढ़ने में भी शर्म महसूस करते है। एक सशक्त पात्र के रूप में लेखक नहीं चाहता कि जो दर्द किन्नर के रूप में उनके भाई हर्षा को मिला वह सूर्या को ना मिले।

भगवंत अनमोल ने ख़ुद अपनी ज़िंदगी को ही इस उपन्यास में एक किरदार के रूप में पेश करके बड़ा ही पुण्य का काम किया है। समाज के उस उपेक्षित वर्ग के दुःख-दर्द और मानवीय संवेदना को अपने उपन्यास में उकेरने का काम किया है, जिसके बारे में इक्कीसवीं सदी में भी लोग सोचना तक नहीं चाहते हैं। अपने धार्मिक ग्रंथों, भगवद् गीता, रामायण में भी किन्नरों की चर्चा है और किन्नरों को समाज उन्हें वह इज़्ज़त नहीं दे सका, जिसके वे हक़दार हैं। आज भी किन्नरों को अमानवीय बर्ताव और सामाजिक अवहेलना का सामना करना पड़ता है। भले ही हमारे देश के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने किन्नरों को तीसरे लिंग या थर्ड जेंडर की श्रेणी में डाल दिया है, अलबत्ता उन्हें अभी भी इस समाज में समान अधिकार और सम्मान पाने के लिए बहुत बड़ा संघर्ष करना है। किन्नरों की दुर्दशा के लिए हमारे समाज के दकियानूसी खयालात और मानसिक संकीर्णता ज़िम्मेदार हैं। ऐसे समय में 'ज़िंदगी 50-50' जैसे उपन्यास का जन्म लेना किन्नर समाज में बहुत परिवर्तन ला सकता है, जिससे कि वे इस समाज की मुख्यधारा और अपने परिवार और अपनी मान-मर्यादा के साथ जी सके।

[176] वही, पृ.135

3.3.9 दरमियाना- सुभाष अखिल

सुभाष अखिल द्वारा रचित यह उपन्यास किसी विशेष कथानक पर आधारित नहीं है अपितु उनके जीवन की निजी अनुभूतियाँ हैं जो बचपन में उन्होंने देखा, किन्नरों के साथ रहने का उसे मौका मिला; उन्हीं अनुभूतियों को उन्होंने उपन्यास का नाम दिया है। लेखक बचपन में किन्नरों के क्रिया-कलापों को दूर से देखता था। उनका बात-बात पर ताली पीटना, मेक-अप करना, नेग माँगना और नही देने पर गालियां निकालना। ऐसी कि उसके पूरे वंश का नाश हो जाएँ। लेखक का बाल-मन उनके पास रहना चाहता है। वह चाहता है कि वह उनका नाचना-गाना और अधिक करीब से देखे।

उपन्यास के केंद्र में लेखक और तारा एवं रेशमा नाम की किन्नर है जो उसके मोहल्ले में सगुन लेती है। अब-तक लेखक उनकों दूसरों के घरों से नेग लेते हुए ही देखता आया है। इस कारण अपने घर छोटा भाई जन्मते ही वह उन्हें बुलाकर लाता है। लेखक के बाल-सुलभ मन पर वे दोनों ही मोहित हो जाती है और बड़े प्रेम से उसके घर जाती है। लेकिन उसके घर की हालत देखकर नेग का वह एकमात्र रूपया लेती है और खूब सारा आशीर्वाद दे देती है। लेखक ने उपन्यास में 'दरमियाने' का अर्थ भी समझाया है यानी सबके सब दरमियाने। न तो वे जनाने थे और न ही मर्दाने यही दरमियाने का अर्थ है इसलिए उपन्यास का शीर्षक भी यही रखा गया है।

लेखक सोचता है कि बधाई के पैसे लेते समय कहीं-कहीं इन्हें कितने अपमान और जिल्लत का सामना करना पड़ता है यथा:- "भाई, हम जो भी दे रहे हैं, अपनी ख़ुशी से दे रहें हैं। इससे ज्यादा हम नहीं दे सकते।"[177] तब तक लेखक उनसे और उनकी सब बातों से अनजान था क्योंकि उस समय उसकी आयु ग्यारह वर्ष की थी। उपन्यास में उनके दया-भाव को भी दर्शाया गया है। वे जितने अधिक किसी के लिए क्रूर हो सकतें है उतना अधिक दयाभाव उनमें रहता है। जब लेखक के घर वे सगुन लेने गये तो उनकी स्थिति देखकर तारा कह उठती है कि- "सगन तो सगन होता है बहना। फिर एक क्या इक्यावन क्या। जल्दी से बड़ा आदमी बन जाए मेरा राजा बेटा, पढ़े-लिखे कमाए, फिर चाँद

[177] सुभाष अखिल,' दरमियाना', पृ.सं.23

सी दुल्हनियाँ लाए, मेरी बहना के लिए।"[178] इस प्रकार कैसी नि:स्वार्थ भावना होती है उनके मन में दूसरों के प्रति।

वे सबके लिए दुआएं करते है लेकिन उनके लिए कोई दुआ नहीं करता। इसके बाद से लेखक उनके समीप जाता गया और इसका उसे पता भी नहीं चला। उनके साथ उठता-बैठता। लेकिन दूसरी और वह कुसंगति में पड़ गया। जुआरियों से उसकी दोस्ती हो गई। वह चोरी भी करने लग गया। इस बात का पता तारा को चल गया तो वह बहुत क्रोधित हो गई। वह उसे समझाती है कि तू अपना नहीं तो कम से कम अपनी माँ का तो ख्याल कर।

लेकिन लेखक उसकी बात नहीं मानता है और वह संगी साथियों के साथ बिगड़ता चला जाता है और तारा से भी दूर हो जाता है। उपन्यास के अंत तक तारा उसके मिलने का इन्तजार करती है, वह उसे अपने बेटे की तरह मानती थी इसलिए मरने से पहले एक बार उसका मुँह देखना चाहती थी। लेकिन लेखक का कोई अता-पता नहीं रहता है। उसकी शादी भी हो जाती है। एक दिन अचानक बाजार में रेशमा से मुलाकात हो जाती है तब वह उससे तारा से मिल आने की भीख मांगती है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपन्यास में किन्नरों के ममत्त्व भाव को दर्शाया गया है। उनमें भी भावना होती है, ममता, स्नेह, दया होती है। जैसे आम मनुष्य में होती है। वे नि:स्वार्थ किसी काम को करते है। उपन्यास में लेखक के स्वयं के जीवन अनुभव है किन्नरों के साथ। इसलिए वह इतनी करीबी से उन्हें जान पाया है।

3.3.10 अस्तित्व-गिरिजा भारती

गिरिजा भारती द्वारा सन् 2019 में यह उपन्यास आया। यह भी किन्नर समुदाय की संकल्पनाओं, कुंठित जीवन को आधार बनाकर लिखा गया। यह इतना प्रकाश में नहीं आ पाया फिर भी इसने किन्नर जीवन का प्रतिनिधित्व किया, तात्पर्य यह है कि किन्नर पात्र को आधार बनाकर वेदनामय जीवन को साहित्य के माध्यम से प्रकट करने की कोशिश की गई। इसमें कहानी है

[178] [178] सुभाष अखिल,' दरमियाना', पृ.सं.67

सुधा, वर्मा और प्रीत की। सुधा प्रीत को सबसे छिपाकर रखना चाहती है, और वही भय वाली बात उनके मस्तिष्क पर हमेशा मंडराती रहती है कि कहीं इसके किन्नर होने का पता न चल जाये। उसने उसे अपने परिवार और समाज से छिपाने की कोशिश की। यह एक ऐसा कटु सत्य था जिसे लंबे समय तक दुनिया से छिपाया नहीं जा सकता था। जिसे यौनिक विकलांगता करार दिया जाता है, उसका कड़वा सच था, जिसे एक न एक दिन दुनिया के सामने आना ही था। इस विकलांगता पर समाज को दोष देने से पहले एक तथ्य यह उभरकर आता है कि व्यक्ति स्वयं भी इस सच्चाई को स्वीकार नहीं कर पाता। वह इसे या तो हास्यास्पद मानता है अथवा नारकीय। ऐसी भावना हमेशा मनुष्य के मन में रहती है।

सुधा के घर खुशियाँ आयी लेकिन पल भर में ही वह मातम में बदल गई। उसको हमेशा यही डर लगा रहा कि एक दिन किन्नर आयेंगे और उसकी बेटी को उठाकर ले जायेंगे। वह उसे पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाना चाहती थी, लेकिन यह पल भर में ठीक होने वाली प्रक्रिया नहीं थी इसके लिए तो उसे अपने-आप से परिवार से, समाज से लड़ना था। बचपन तक तो ठीक है लेकिन जैसे-जैसे वह वयस्क होने लगती है उसमें बदलाव आने प्रारंभ हो जाते है। जब शादी की बात आती है तो उसकी छोटी बहिन के लिए लड़का देखा जाता है तब लोगों के मन में कौतुहल रहता है कि पहले बड़ी बेटी की न कर छोटी की शादी पहले क्यों, इस प्रकार की आकांक्षाएँ प्रीत को लेकर होने लगती है।

यह उपन्यास मध्यमवर्गीय परिवार को आधार बनाकर लिखा गया है। प्रीत को माता-पिता ने अपना तो लिया लेकिन यह परिवार, समाज उसे कहाँ जीने दे रहा था। समाज में रहकर ही तो मनुष्य बड़ा होता है, सीखता है लेकिन वही समाज शोषण का विषय बन जाये तो व्यक्ति कहीं का नहीं रहता। यही स्थितियाँ प्रीत के साथ भी थी। वह धीरे-धीरे बड़ी होती जा रही थी तो समाज की आँखों का काटा भी बनने लगी थी। उसके विषय में कई प्रश्न बनकर उठ रहे थे, क्यों इसकी शादी पहले नहीं हो रही? इसे ज्यादा लोगों से मिलने क्यों नहीं दिया जाता आदि कई तरह की उत्सुकता लोगों के मन में रहती। जो प्रीत के लिए परेशानी का कारण थी।

3.3.11 अस्तित्व की तलाश में सिमरन- मोनिका देवी

मोनिका देवी ने अपने उपन्यास में सिमरन नामक किन्नर को अपने कथानक का मुख्य आधार बनाया है जो आजीवन अपने अस्तित्व को तलाशती रहती है लेकिन उसे उसकी पहचान नहीं मिलती है, घर-परिवार, नाते-रिश्तेदार सबके बीच अपने-आपको ढूंढती है लेकिन इन सबके बीच अपने-आपको अकेला पाती है। आरंभ में तो वह इसी जद्दोजहद में रहती है उसका शरीर लड़के का किंतु व्यवहार लड़की जैसा क्यों है? जब वह पैदा हुई थी तब और बच्चों की तरह उसके जन्म पर भी ढोल-नगाड़े बजे थे। बाद में वही नफरत का कारण बन गई सबके लिए।

वह अपने परिवार के पालन-पोषण का एक जरिया थी। जब उसके परिवार वालों को उसकी जरूरत पड़ती थी तब वे उसके पास चले जाते थे और पैसे मांगते थे, वह अपना समझकर सब-कुछ दे भी देती थी लेकिन जब उसे जरूरत पड़ती या उसके पास पैसे नहीं होते तो सब उसे दुत्कारते। उसकी माँ सबसे ज्यादा लालची थी। उसे अपने बेटे से प्यार नहीं था बल्कि उसके पैसों से प्यार था। सिमरन को अपने परिवार की जरूरतों का ख्याल था इस कारण वह दिन-रात मेहनत करती थी। वह छोटी से छोटी नोकरी करने के लिए भी तैयार थी। उन सबमें उसका शोषण होता था लेकिन वह क्या करती चुप-चाप अपने पिता के डर के मारे सहन करती जा रही थी। वह इसी कारण बार-बार अपने-आपको कोसती लेकिन मेहनत करने से अपने आपको पीछे नहीं करती थी। हिजड़ा होने पर वह इस प्रकार अपना दुःख प्रकट करती:- "किन्नर का जीवन भी सरल नहीं होता जीते हैं तो भी रो-रोकर। आंसू ही सहारा बन जाते है लेकिन कोई अपना कहने के लिए हाथ नहीं बढ़ाता। हिजड़ा एक भावना है। अंतरात्मा की एक पुकार है जो एक शरीर से आती है, पर दुःख की बात यह है कि आम जन मानस इसे दो जांघो के बीच खोजते है। यही सबसे बड़ा दुर्भाग्य है।"[179] इस प्रकार वह दुःख प्रकट करती है कि किन्नरों में मनुष्यता कोई नहीं खोज पाता सब हैवान बने रहते है।

सिमरन का कहाँ शोषण नहीं हुआ। परिवार वालों ने, कामकारों ने, मालिकों ने यहाँ तक कि किन्नरों ने भी उसका शोषण किया। उसने बेला नामक गुरू बनाया था जिसने उसका साथ देने के बजाए बहुत अधिक शोषण किया। सिमरन की बड़ी उठापटक वाली जिंदगी थी। रिश्तों का बोझ

---

[179] मोनिका देवी, 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन', पृ.सं.23

ढ़ोना और उन्हें निभाना दोनों ही अलग-अलग चीजे है। ऐसे ही सिमरन की माँ का रिश्ता स्वार्थी था। परिवारवाले भी साथ नहीं देते थे जबकि उनका गुजारा वह स्वयं चलाती थी। यथा:- "मैं रो रही थी, अब तो मेरा हृदय भी रोने लगा। जिन्होंने मेरा बचपन व पढ़ाई छीनी, उन्हें माफ़ करने का मेरा मन नहीं करता। ऐसी जिंदगी जिसमें तकलीफ के सिवा कुछ भी नहीं था। मुझे मेरे पिता से कष्ट, दुःख, अपमान और गाली-गलौच के सिवा कुछ नहीं मिला। पिता का स्नेह क्या होता है, वह मुझे नहीं पता। मैं पिता प्रेम को तरसती थी।"[180] इस प्रकार वह प्रेम चाहती थी इसके बदले में कुछ भी करने को तैयार थी लेकिन वही उसे नहीं मिला।

इन सबके उपरांत भी सिमरन में गजब की जिजीविषा थी। उसे दर-दर की ठोकरे खानी पड़ी फिर भी वह उठकर फिर खड़ी हो जाती थी। उसे भीख भी मांगनी पड़ी, मजदूरी करनी पड़ी। रहने के लिए जगह नहीं थी और अंत में वह बीमार हो गई उस समय उसे किसी का सहारा नहीं मिला जिससे वह बहुत अधिक हताश हो जाती है, उसकी आँखों के आंसू सूख जाते है। फिर भी वह अड़ी रहती है और अंत में समाज सेविका बनकर अपने समाज के लिए कुछ करना चाहती है जिससे उसके अस्तित्व को प्राप्त किया जा सके यही उपन्यास का उद्देश्य भी है।

3.3.12 हॉफमैन(ए पेनफुल जर्नी)- भुवनेश्वर उपाध्याय

इस उपन्यास की ख़ास विशेषता यह है कि एक मनुष्य के जीवन को समग्रता में यह समेटता है। एक व्यक्ति के तिरस्कृत जीवन को घटते-बढ़ते दिखाता है। उसकी जिंदगी में कभी हंसी के रंग से ज्यादा दुःख के रंग है। उसके जीवन की अनेकों विडम्बनाएँ उसके साथ-साथ उसके माता-पिता को भी झेलनी पड़ती है। इस उपन्यास में साहित्यिक चेतना के साथ-साथ मानवीय मूल्यों का भी भावात्मक लेखन है। जीवन का कठोर लेकिन यथार्थ भरा जीवन इसमें पात्रों का दिखाई देता हैं। उसके जीवन में सकारात्मकता, प्रेम, आदर्श सब-कुछ है यह उपन्यास केवल समस्या ही प्रकट नहीं करता अपितु निदान भी प्रस्तुत करता है। मेहनत, संघर्ष और प्रेम की वह हरसंम्भव तलाश जारी रखता है। उपन्यास की शुरुआत जिस सकारात्मकता से करता है अंत भी उसी प्रकार एक बच्चे को गोद लेकर करता है।

[180] वही, पृ.सं.42

जीवन हमेशा चलता रहता है, कभी ठहरता नहीं है। उसमें आशा-निराशा, सुख-दुःख, राग-विराग आदि का भाव समाहित रहता है। मुख्य पात्र नीरव और अर्जुन की दोस्ती वास्तविक प्रेम को दर्शाती है जो सच्चा है जिसमें लेश-मात्र भी आडम्बर नहीं है। उपन्यास में पांच मुख्य पात्र है, अर्जुन, नीरव, सुबोध दीपा, कनुप्रिया। कथानक की शुरुआत अर्जुन के आई.ए.एस. बनने के उपरांत की स्थिति से शुरू होती है जो उसके जन्म लेने से लेकर उसके बनने तक पीछे छिपे दंश, संघर्ष, आत्मविश्वास और कुछ कर गुजरने के जज्बे को प्रकट करती है। उसके साथ समाज की लैंगिक अस्वीकार्यता छिपी हुई थी फिर भी उसके मन में अपने-आपको साबित करने का साहस बना रहा और उसके मित्रों ने विशेषकर नीरव ने उसका भरपूर साथ दिया उसे कभी भी महसूस नहीं होने दिया की वह हमसे अलग है, लेकिन उपन्यास में उसके भीतर चलने वाले युद्ध हो दर्शाया गया है फिर भी उसमें अपने-आपको सम्भालने का गजब का साहस है। उपन्यास का अंत दुखांत नहीं है, अंत में अर्जुन द्वारा एक बच्चे को गोद लेने से होता है जिससे वह उसका बेहतर भविष्य बना सकें।

इसमें समाज का नजरिया, व्यक्ति का नजरिया और सही नजरिया अपनाने को बया किया गया है। यदि अर्जुन के माता-पिता चाहते तो उसकी लैंगिक पहचान होने पर उसके जन्म से पहले ही उसे मार सकते थे लेकिन उनके द्वारा सकारात्मक नजरिया अपनाकर उसे जन्म देने का निर्णय लिया गया यह जानकर भी कि उनका बच्चा लैंगिक रूप से अपूर्ण होगा। और उसे इस काबिल बनाना की वह सबके समक्ष एक उदाहरण बने यही उपन्यास की उपलब्धि है। लेखक ने अपने उपन्यास के आरंभ में लिखा है की:- “अपनों का सहयोग, तमाम विषमताओं में भी संबल देकर जीवन की प्रतिकूलताओं से लड़ने की हिम्मत तो देता है, किंतु बाहरी और भीतरी द्वंद्वो से जूझना तो स्वयं ही होता है और जो इस लड़ाई में जीत जाता है सफलता उसके कदम चूमती है। तब उसकी कमियों को भूलकर दुनिया के पास उसे ससम्मान स्वीकारने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं होता है।”[181] अर्जुन ने भी अपनी जिंदगी की लड़ाई ऐसे ही लड़ी और अंत में जीता भी इस लड़ाई में उसके माता-पिता सजल और पारस ने उसका साथ दिया और उसे इस काबिल बनाया कि वह दकियानूसी समाज से लड़ सके।

[181] भुवनेश्वर उपाध्याय, 'हॉफमैन' भूमिका से-

अर्जुन की शुरुआत की पढाई तो वहीं हो गई लेकिन आगे की पढ़ाई के लिए वह दिल्ली जाना चाहता था लेकिन सजल व पारस को यह डर था कि वह समाज का सामना कैसे करेगा इस कारण उसे समझाया लेकिन अर्जुन और नीरव को वहाँ जाना था। नीरव ने दिल्ली में हर कदम पर उसका साथ दिया उसे कभी भी महसूस होने नहीं दिया कि वह हमसे अलग है। कुछ दिन उनके दिल्ली घूमने और मौज-मस्ती में निकल गये। लेकिन वे जिस उद्देश्य को पूरा करने आये थे अब उसको पूरा करने की बारी थी। उन्होंने हिन्दू कॉलेज में दाखिला ले लिया और पढ़ने में लग गये लेकिन कभी-कभी अर्जुन की वास्तविकता उसका पीछा नहीं छोड़ती थी उसके भूतकाल के कड़वे अनुभव और भविष्य में आने वाली चुनौतियां उनका पीछा नहीं छोड़ रही थी:- ''कभी-कभी भूतकाल के कड़वे अनुभव, वर्तमान को भी नहीं छोड़ते उसे भी अपनी ही तरह बेस्वाद बनाने पर तुले रहते हैं। और अगर व्यक्ति हिम्मत हार दे तो इन एहसासों में इतनी सामर्थ्य होती है कि ये भविष्य को भी खराब कर दे।''[182] अर्जुन ने हिम्मत नहीं हारी। और उसके दोस्तों ने उसे हारने नहीं दी उसका हर कदम पर साथ दिया। कॉलेज में उसको डॉक्यूमेंट वेरिफिकेशन करवाने थे तब उसके सामने जेंडर का सवाल था कि कौनसा डालू लेकिन उसके इस संकोच को नीरव ने समाप्त किया, वह हमेशा उसको लक्ष्य की सार्थकता साधने की बात कहता जिससे उसका ध्यान दूसरी चीजों से हट जाता। नीरव कहता की समय बदलने पर लोगों की धारणाएं बदल जायेगी।

अर्जुन और नीरव को कॉलेज में कनुप्रिया और दीपा भी मिली, नीरव का कनुप्रिया के प्रति आकर्षण था और दीपा का अर्जुन के प्रति। लेकिन अर्जुन को अपनी सच्चाई पता थी वह किसी को धोखे में नहीं रखना चाहता था, इसलिए उसने दीपा के दोस्ती के प्रस्ताव को भी ठुकरा दिया, उसे पता था कि कुछ हो नहीं पायेगा यदि वह सच जानेगी तो इस सच को स्वीकार नहीं कर पायेगी कि वह किन्नर है।

सब लोग आपस में प्रेम से रहते घूमते खाते, बाते करते और साथ में तैयारी भी करने लग गये थे। अर्जुन की माँ सजल को बीच-बीच में उसकी चिंता सताती रहती। एक स्थान पर वह कहती है:- ''संघर्ष तो अर्जुन ने भी बहुत किया है, मैंने उसकी आँखों में द्वंद्व की गहरी परछाईंयां देखी है,

[182] भुवनेश्वर उपाध्याय, 'हॉफमैन' पृ.सं.38

अपूर्णता के एहसास से उभरकर, स्वयं को एक लक्ष्य के साथ खड़ा करना बहुत बड़ी बात है।"[183] इस प्रकार से उसके दर्द को उसकी माँ बखूबी समझती थी। अंत में उसने अपने लक्ष्य को पूरा किया और आई.ए.एस. बनकर दिखा दिया कि अगर जज्बा हो तो कुछ भी किया जा सकता है। वह अंत में एक बच्चे को गोद लेकर अपने अपूर्ण जीवन को पूरा करता है इस तरह उपन्यास का अंत हो जाता है।

उपन्यास में लेखक की दृष्टि सार्थक है, वह इधर-उधर भटका नहीं है उसने किन्नर जीवन के दर्द को समेटकर रखा। और अर्जुन के माध्यम से ऐसा उदाहरण पेश किया जिससे अन्य लोगों को भी प्रेरणा मिले वे समाज के सामने अपने बल पर कुछ कर सके और लिंग आधारित मानसिकता से अपने-आपको दूर कर सके, यही उपन्यास और लेखक का उद्देश्य भी है।

3.3.13 ऐ जिंदगी तुझे सलाम- हरभजन सिंह मेहरोत्रा

लेखक ने उपन्यास के शीर्षक के अनुसार ही एक किन्नर के संघर्ष की दांस्ता लिखी है जिसका सफ़र कठिनाइयों से गुजरता है और अंत में डी.एम. के पद पर जाकर वह प्रतिस्थापित होती है, लेकिन संघर्ष उसके जीवन में हमेशा बना रहता है। उपन्यास का कथानक सीधा-सीधा नहीं है, रोशनी के बचपन से शुरू होकर सीधा वयस्क आयु में पहुँच जाती है जहाँ वह पहले वाले माँ-बाप रूपा और कलुआ के पास न होकर किन्नर कुनबे में रज्जो और निर्मला के पास होती है, पहले उसका नाम मधु होता है लेकिन बाद में किन्नर समुदाय द्वारा उसका नाम रोशनी रखा जाता है। उपन्यास में बार-बार बड़े मार्मिक प्रसंग आये है जैसे रज्जो की दुर्घटना में मृत्यु, अंत में उसके माँ-बाप का पता लगने के बावजूद वह उसे मिल नहीं पाते है।

उपन्यास की शुरुआत एक निम्नमध्यम वर्गीय परिवार की स्त्री के संतान नहीं होने पर एक बच्ची उसे रेलवे स्टेशन पर मिली जिसे वह अपने घर ले आयी लेकिन उसे पता नहीं था कि यह 'हिजड़ा' है, इसका पता उसे बाद में चलता है फिर भी वह उसे अपने पास रखती है। सब मोहल्ले वाले उसको मना करते है कि कलुआ जो उसका पति है उसे स्वीकार नहीं करेगा लेकिन वह इस बच्ची के लिए पूरी दुनिया से लड़ने के लिए तैयार हो जाती है। उसे तरह-तरह की बाते सुनने को

---

[183] भुवनेश्वर उपाध्याय, 'हॉफमैन' पृ.सं.63

मिलती है यथा:- “कोई जनी कह रही थी, हाय...राम कित्तो बुरा भओ...पीछे लड़कवा हुआ रहै वो मरि गवा। अब पगलिया का बच्चा गोद लिया तो हिजड़ा निकर गवा...।”[184] रूपा को इस बात से बहुत बुरा लगा जैसे कहने वाली उसके जले पर नमक छिड़क रही थी। सुभद्रा उसे समझा रही थी कि इस बच्चे के खातिर अपना घर-बार खराब मत कर लेकिन रूपा समझने को तैयार नहीं थी। आरती उससे कह रही थी कि भाभी इसका नाम मधु ठीक रहेगा तो सुभद्रा कहती है कि “देख रूपा इस बच्चे के खातिर अपन घर-बार और समाज न खराब कर लेना। कौन अपना खून है। अपना पेटजाई हो तो बात दूसर है। दस लोग साथ भी दे देंगे। किसी और की औलाद...जिसके बाप का पता नहीं...नाजायज। अभी तो लिखत-पढ़त भी नहीं हुई। हिजड़ा देख कोई बीच में नहीं आयेगा।”[185] इस तरह से सब उसको समझाते है लेकिन वह समझने के लिए तैयार नहीं होती है। अंत में वह उसे अपने पास रखने का निर्णय लेती है। वह उसके लिए सुंदरकांड के पाठ भी करवाती है, हिजड़े उसे लेने आते है लेकिन वह उससे लड़ाई कर लेती है और अपने बच्चे को नहीं देती है। एक दिन मेले में गए कलुआ और रूपा से बच्ची को धक्का-मुक्की में कोई उठाकर ले गया, रूपा विलाप करती रही लेकिन बच्ची का कहीं पता नहीं चला

इसके बाद उपन्यास का दूसरा पार्ट शुरू होता है जिसमें रोशनी नामक बालिका पूरे प्रदेश में दसवीं में प्रथम स्थान प्राप्त करती है। रज्जो ने इसे पाल-पोषकर बड़ा किया और पढ़ने के लिए स्कूल भेजा। वह विद्यालय की सबसे होनहार छात्रा थी। रोशनी को हमेशा रज्जो ने अपने समुदाय की बंदिशों से दूर रखा था, इसलिए वह पढ़ सकी। लेकिन कभी-कभी स्कूल में उसे दूसरों से अलग होने का एहसास होता। बच्चे उसे अपने साथ नहीं खिलाते थे, वह हमेशा अपने को अकेला पाती थी फिर अपने-आपको कोसने लगती थी:- “न वह लड़का है, न लड़की। बस आधी-अधूरी इंसान सी है। जिसका इस समाज में कोई अस्तित्व नहीं है। बस गाली की तरह एक शब्द है हिजड़ा जो उसके शरीर में रसौली बनकर चिपक गया है।”[186] इस प्रकार वह अपने-आपको इस शब्द से अलग नहीं कर पा रही थी यदि वह भूल भी जाती तो दुनिया वाले उसे याद दिला देते कि वह सामान्य मनुष्य नहीं है। इस तरह से वह अपने आपको हमेशा कोसती रहती। वह रज्जो को ही अपनी माँ समझती

---

184 ‘हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.27

185 हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.29

186 हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.84

थी, उसके पूछने पर रज्जो बात को टाल देती। रज्जो का रोशनी से बहुत लगाव हो गया था, वह एक पल भी रोशनी को अपने से दूर नहीं करना चाहती थी।

रोशनी दसवीं के बाद जब नये सत्र में प्रवेश लेने गई तो उसे कई तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ा, उसे जिल्लत भरी निगाहों से गुजरना पड़ा। उसकी स्थिति त्रिशंकु के जैसे थी न इधर की न उधर की, वह अपने जीवन के लिए ईश्वर को कोसती रहती है:- "हे प्रभु जिस अभिशप्त जीवन को जीने के लिए बाध्य है। ऐसा शरीर दोबारा मत देना।' कलपने के अलावा और कोई रास्ता भी तो नहीं है। इससे अच्छा है कि सब कुछ भूलकर खुश रहा जाये। सहज स्वीकारोक्ति जो जीने की नई राहें खोलती है।"[187] वह सोचती है कि जो जीवन मिला है उसको सही तरीके से जिया जाये।

लेकिन रोशनी को तो अभी और भी संघर्षों का मुकाबला करना बाकी था। उसको रज्जो और निर्मला की एक रेल दुर्घटना में मरने की खबर आयी तो उसके होश उड़ गये। उसका तो जैसे संसार ही उजड़ गया। उसके सिर से छत मानो टूट गई हो। उसके बाद रोशनी पर दुखों का पहाड़ टूट गया। उसके विद्रोही आ खड़े हुए। अब तलवार उसकी पढ़ाई पर लटकनी थी। सुल्ताना जो रज्जो की गद्दी छीनना चाहती थी इसलिए वह रोशनी को सताने लगी। लेकिन वह उनकी मानसिकता का प्रतिवाद करती है:- "यह तो सच है कि हमारी ऐसी मानसिकता ने ही हमें आगे नहीं बढ़ने दिया। कूप मंडूक बन कर रह गये ...हम लोग...।"[188] इस प्रकार से इनके समुदाय की नकारात्मकता को भी वह कोसती है। जो उसे आगे नहीं बढ़ने नहीं देती। इनकी मानसिकता से वह पीछे रह जाते है, उससे बाहर नहीं निकलना चाहते लेकिन यह उनकी मज़बूरी बन जाती है।

रोशनी को भी मज़बूरी वश इस काम में लगना पड़ता है सुल्ताना के डर से। उसे नेग मांगने की बिल्कुल भी जानकारी नहीं है, रज्जो ने उसे इन सब से दूर रखा था, लेकिन सुल्ताना उसे डरा-धमकाकर यह काम करवाना चाहती है। रोशनी को इन सबके बारे में नहीं पता वह कुछ भी नहीं जानती फिर भी उसे करना पड़ा। "मुझसे नहीं होगा...। दीन-हीन हो आयी थी। वैसे भी लक्ष्मी के व्यवहार से अपमानित और क्षुब्ध महसूस करने लगी थी। चलती गाड़ी से कूद जाने का रह-रह कर

---

[187] हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.87

[188] हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.123

ख्याल आते उसे उद्धेलित करने लगा था। एक तो अधूरे शरीर के एहसास से मन में उपजी हीनता ऊपर से यह जलालत...। उसे लगा वह अब और नहीं रूक पायेगी। निसहाय सा पाया अपने आपको, कहाँ चली गई छोड़ कर...मुझे बचा लो मौसी।"[189] इस प्रकार से रज्जो के मरने के बाद उसकी मज़बूरी बन जाती है कि वह काम उसको करना पड़ता है। सुल्ताना उसकी पढ़ाई के भी खिलाफ होती है। लेकिन वह कैसे भी करके आगे पढ़ती है और प्रशासनिक सेवा में जाती है।

डी.एम. के पद पर, जहाँ उसे देखकर सब आश्चर्यचकित हो जाते हैं। चुनौतियाँ तो उसके सामने यहाँ भी है लेकिन वह उनका डटकर मुकाबला करती है और अपने काम का लोहा मनवाती है। उसे कहीं न कहीं फिर भी अपने हिजड़ा होने का दंश खलता था। वह अपने-आप से प्रश्न करती है कि आखिर क्यों उसे भी इंसानों की तरह नहीं समझा जाता यथा:- "ऐसे तृतीय लिंगी बच्चे को उनके माँ-बाप क्यों त्याग देते हैं। समाज के डर से...। समाज को क्या भय है हम लोगों से। क्यों नफ़रत करता है समाज अपने ही लोगों से? क्या हम उनके ही जैसे इन्सान नहीं है? क्या दोष है हमारा?"[190] इस प्रकार वह अपने-आप से, समाज से प्रश्न पूछती है कि उनको स्वीकार क्यों नहीं किया जाता। अंत में वह अपने माता-पिता का पता लगाती है लेकिन जिस उम्मीद से वह प्रयास करती है उसको असफलता हाथ लगती है। उसकी माँ रूपा तो बावली हो गई थी और पिता कलुआ मर गया था। उसे इस बात का दुःख होता है कि उसको जिन्होंने पाला था उनके लिए वह कुछ नहीं कर सकी।

उपन्यास की रोचकता अंत तक बनी रहती है और शैली वर्णनात्मक है जो पाठक को ऊबने नहीं देती है। किन्नर विमर्श की अभिव्यक्ति की कड़ी में यह उपन्यास महत्वपूर्ण साबित होता है, साथ ही इसमें विषय से भटकाव की गुंजाइश भी कम है। रोशनी नामक किन्नर के संपूर्ण जीवन पर यह प्रकाश डालता है तथा उसके दुःख-दर्द और साहस की कुशल अभिव्यक्ति लेखक ने यहाँ की है।

---

[189] हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.133

[190] हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.150

3.3.14 मेरे हिस्से की धूप- नीना शर्मा

नीना शर्मा द्वारा लिखा गया यह उपन्यास एक अलग प्रकार के कथानक के साथ लिखा गया है। किन्नर जीवन की पीड़ा तो इसमें है ही लेकिन उस विभीषिका से लड़ना और बाहर निकलना मुख्य पात्र का साहस और अदम्य जिजीविषा प्रकट करता है। यहाँ अन्य माता-पिता से एकदम विपरीत मोनी के माता-पिता उसे त्यागते नहीं है अपितु समाज से, परिवार से सबसे लड़कर उसे अपने पास रखते है। मोनी नामक किन्नर उपन्यास की मुख्य पात्र है उसके हर्षिता और नवीन भाई-बहन है जो उससे नफ़रत करते हैं। उनका मानना है कि इसके घर में रहने से हमारा कुछ नहीं हो पा रहा है। हर्षिता की शादी नहीं हो पा रही है और नवीन भी काव्या से शादी करना चाहता है लेकिन काव्या मोनी के साथ उस घर में नहीं रहना चाहती है। इससे मोतीलाल जी का सारा परिवार बिखर जाता है। फिर भी माता-पिता अपने फैसले पर अडिग रहते है और नवीन को कहते है कि तू इस घर से जा सकता है लेकिन मोनी इसी घर में रहेगी।

एक बार मोनी सबकी परेशानी को दूर करने के लिए घर से निकल भी जाती है और किन्नरों के पास भी चली जाती है लेकिन उनके द्वारा दी गई यातनाओं के कारण उससे रहा नहीं गया और वह बबली नामक किन्नर की सहायता से भाग जाती है। बबली उससे कहती है:- ‘‘रोज रात के अँधेरे में हजारो सपने तैरते है लेकिन सुबह की रौशनी के साथ आईने में अपने शरीर पर नजर जाती है तो सारे सपने बिखर कर चूर-चूर हो जाते है। तब याद आता है कि हम हिजड़ों को सपने देखने का भी अधिकार नहीं हैं।’’[191] इस कारण वह मोनी को यहाँ से चले जाने को कहती है, वह इस दुनिया को नरक मानती और कहती है कि तू इस नरक में रहकर क्या करेगी। मोनी वहाँ से चली आती है लेकिन वहाँ की स्मृतियाँ उसका पीछा नहीं छोड़ती है। किन्नरों के द्वारा उसके साथ किये गये व्यवहार को वह कई दिनों तक भुला नहीं पाती है।

इधर हर्षिता अपनी शादी को लेकर परेशान है इसका कारण मोनी अपने-आपको मानती है, इसी कारण हर्षिता उसके साथ दुर्व्यवहार भी करती है लेकिन उसकी माँ पुष्पा उसे इस प्रकार से समझाती है:- ‘‘देख हर्षि तू कुछ नहीं जानती उसकी ख़ुशी, उसका दुःख, दर्द, कुछ भी नहीं जानती

[191] नीना शर्मा, ‘मेरे हिस्से की धूप’, पृ.सं.29

हजार ताने सहन किये है उसने। लोगों की हंसी, अपमान सब-कुछ लेकिन कभी शिकायत नहीं की।"[192] इस प्रकार सबकी और से उसको ताने सुनने पड़ते है लेकिन उसके माता-पिता हमेशा ढाल बनकर उसके साथ खड़े रहते है। नवीन भी अपनी पत्नी के कारण विदेश में रहने लग जाता है। मोतीलाल जी इस दुःख को लंबे समय तक सहन नहीं कर पाते है और एक दिन चल बसते है। अब सारा भार मोनी पर आ जाता है। मोनी कई दिनों तक तो ऐसे ही रहती है बाद में साजिद के समझाने पर अपने पिता के व्यापार को आगे बढ़ाने का फैसला लेती है। इस काम में भी उसका व्यापक विरोध होता है। सभी उसको कौतुहल की नजर से देखते है लेकिन धीरे-धीरे अरिहंत ज्वैलर्स का बड़ा नाम हो जाता है और सभी मोनी को पहचानने लगते है।

मोनी को बार-बार अपने हरे रंग पर, आवाज पर नफरत होती थी। वह सोचती कि क्यों ईश्वर ने मुझे अधूरा बनाया है। एक दिन वह अपनी बहन हर्षिता के साथ बाजार में थी तब हिजड़ों की टोली ने उस पर आक्रमण कर दिया और उसको लहुलुहान कर दिया पुलिस वालों के कारण वह बच पायी थी। इस प्रकार से उनके जीवन की यादे उसे रह रहकर याद आती थी। और वह अधिक बैचेन हो जाती थी। उसे उसके हिस्से की धूप चाहिए थी जो उसे अपने पिता का व्यापार आगे बढ़ाने पर मिली।

इस तरह से उपन्यास का शीर्षक भी यही है जो यह कहता है मोनी को उसके हिस्से की धूप लेनी है उसे भी यही अधिकार है, सम्मान से जीने का हक है जो उसे सर्राफा बाजार में काम करके मिल जाता है। उसका व्यापार अपने पिता की तरह चलने लग जाता है सब उसके काम की तारीफ करते हैं। उसे अब अलग नहीं देखा जाता बल्कि सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। पहले-पहल सभी व्यापारियों ने इसका विरोध किया कि एक 'किन्नर' के सर्राफा व्यापार में आने से हमारे व्यापार को नुकसान पहुँचेगा लेकिन देखते-देखते वे सभी व्यापारी उसके काम को देखकर उससे सलाह-मशविरा करते हैं।

[192] नीना शर्मा, 'मेरे हिस्से की धूप', पृ.सं.27

3.3.15 मंगलमुखी- डॉ. लता अग्रवाल

डॉ. लता अग्रवाल का यह उपन्यास किन्नर समुदाय के सकारात्मक पहलू की और हमारा ध्यान केन्द्रित करता है समाज से कटा हुआ यह वर्ग उन लोगों के लिए जो उनके जैसे नहीं है अथवा उनके प्रति सही नजरिया नहीं रखते उनके लिए कुछ अच्छा करने को तत्पर है इसी और हमारा ध्यान आकर्षित करता है, इसी कारण इनका मंगलमुखी होना सार्थक हुआ है। किन्नर समुदाय की गुरू उपन्यास में शगुन नामक लड़की को आत्महत्या करने से जान बचाती है और उसके गर्भवती होने का पता चलने पर उसे अपने पास रखने का निर्णय लेती है क्योंकि उसका प्रेमी उसे छोड़कर भाग गया था। समाज के डर से वह अपने को खत्म करना चाहती है लेकिन किन्नर समुदाय की टोली उसे बचा लेती है फिर भी वह मरने की जिद करती है लेकिन गुरू उसे अपने पास रखने का फैसला लेती है। यहाँ अमानवीयता पर किन्नर समुदाय की मानवीयता प्रकट होती है जिसे इसी समाज से दुत्कार मिलती है।

उपन्यास में हर किन्नर की अपनी एक कथा है जिसमें हर एक का दर्द छिपा हुआ है। और वह भी भयानक। महेंद्री, सिमरन, ममता सभी की अपनी एक कहानी है जिसे शगुन सुनती है और यह तसल्ली करती है कि इनके दर्द के आगे मेरा दर्द तो कुछ भी नहीं। उपन्यास के प्रत्येक पात्र के जीवन की विभीषिका साथ में शगुन की विभीषिका से उपन्यास का नया कलेवर तैयार होता है। जिस समुदाय से इनको दुत्कार मिली उसी समाज की लड़की को रखने का बीड़ा इन्होंने उठाया और उसे बच्चे के जन्म लेने तक उनके पास रखने का निश्चय किया। उपन्यास में बार-बार किन्नर अपनी वेदना प्रकट करते है यथा:- "और जो पूरी औरत और पूरा मरद होके भी कोख न फूले तो...?वाह रे छदमी समाज तू और तेरे नियम...आज अगर हमारा भी घर-बार होता...कोई हमारी सुंदरता को निहारने वाला...हमें प्यार से सीने से लगा हमारा सुख-दुःख पूछने वाला होता। कहने को अपनी छत होती...माँ-माँ लिपटते बच्चे होते, मगर सब प्लान फ़ैल कर दिया उस मालिक के बच्चे ने।"[193] इस तरह से वे अपनी वेदना प्रकट करते है समाज के प्रति और स्वयं के प्रति भी।

---

[193] डॉ. लता अग्रवाल, 'मंगलमुखी', पृ.सं.41

शगुन को शिल्पा गुरू ने रखा और उनके मरने के बाद महेंद्री ने जो शगुन के समाज से चिढ़ती थी उसने गुरू को वचन दिया कि बच्चे के जन्म लेने तक मैं इसका पालन-पोषण करूंगी। और सब लोग सहमत भी रहते है और शगुन के आने से डेरे में पूरी रौनक रहती है। सब आने वाले बच्चे का खूब ध्यान रखते है। किन्नर में धर्म के संबंध में कोई भेदभाव नहीं रहता इसका पता उपन्यास में इस बात से चलता है:- "हम धरम ईमान को चोट नहीं पहुंचाते हमारे पास बाइबिल भी है और गुरू बानी भी, सबको जिंदा रखते है...तू देखी भगवान कने गीता भी रखी है, कुरान भी रखी है...हम किसी के धर्म का अपमान नहीं करते...तीरथ भी करते है, हज भी जाते है।"[194] इस प्रकार उनमें किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं रहता। वे सभी धर्मों को सम दृष्टि से देखते है। उपन्यास में हर एक पात्र का अपना एक दर्द है। शिल्पा गुरू इस प्रकार शगुन के पूछने पर कहती है:- "छोकरी। मैंने कही थी न यहाँ सभी के साथ ऐसी एक-एक कहानी जुड़ी है। हम सभी अपने दर्द को पीकर बैठे हैं, किसे दिखाए अपने जख्म...कौन समझेगा...सब हमें हिजड़ा। किन्नर।"[195] उनका दर्द कोई नहीं समझता सब उन्हें अपमान का घूंट देते है।

उपन्यास के अंत में शगुन की बेटी अनुपमा अफसर बनकर उनका मान बढ़ाती है और सबके सामने एक मिसाल कायम करती है। सबको वह यह बताती है की यह मेरे माँ-बाप नहीं है फिर भी इन्होंने उनका फर्ज अदा किया। वह पत्रकारों से महेंद्री और उनके समुदाय के लोगों के बारे में बताती है कि इनके उपकार के कारण ही मैं आज इस स्थिति में हूँ जिससे महेंद्री का सिर गर्व से ऊँचा हो जाता है। और उसकी अश्रुधारा बहने लगती है। इस प्रकार शारीरिक बनावट वाली मानसिकता के स्थान पर इंसानियत यहाँ बयाँ होती है जो मनुष्यता बनाये रखने में महती भूमिका निभाती है और यही उपन्यास की सार्थकता सिद्ध होती है।

---

[194] वही, पृ.सं.57

[195] वहीं, पृ.सं.57

निष्कर्ष

'यमदीप' उपन्यास का संपूर्ण कथानक रोचक बन पड़ा है। इसमें किन्नर समुदाय के साथ-साथ लेखिका ने मानवी का प्रसंग भी उपन्यास में जोड़ दिया है जो अंत में किन्नरों के साथ खड़ा हुआ दिखाई देता है। लेकिन उपन्यास को पढ़ने के दौरान कुछ-कुछ स्थानों पर लगता है कि कुछ प्रसंग अनावश्यक रूप में आ गए हैं। जैसे डी.एम. साहब, मानवी नामक पात्र को हावी बनाना जो कभी-कभी नाजबीबी के प्रसंग को कमजोर कर देता है। राजनेताओं से संबंधित कथानक, मूल कथानक पर भारी पड़ता हुआ दिखाई पड़ता है फिर भी उपन्यास में लेखिका का सारगर्भित उद्देश्य प्रकट हुआ है।

'मैं भी औरत हूँ' उपन्यास अपने मुख्य उद्देश्य से विलग होकर कथानक आगे बढ़ाता है जिससे कथानक गतिशील बना रह सकें और पाठक को अपनी और आकर्षित कर पाए। उपन्यास की शुरुआती योजना किन्नर समुदाय की समस्याओं और किन्नर से लिंग परिवर्तित करवाकर स्त्री अथवा पुरूष बनने का विकल्प भी यहाँ प्रस्तुत है ताकि इनके जीवन में बदलाव आ सके और जिस शरीर में यह अपने-आपको सहज महसूस करते हो, उसमें रह सके। यही उपन्यास का उद्देश्य भी है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि किन्नरों की पीड़ा की अभिव्यक्ति की कड़ी में यदि किसी उपन्यास का नाम लिया जाये तो वह है 'किन्नर कथा'। जो पाठक की मानसिक स्थिति को इस कदर झकझोंर कर रख देता है कि वह भी उनके सम्बन्ध में विचार करने पर मजबूर हो जाता है और आंकलन करता है कि इस प्रकार के शरीर को धारण कर उसे किस प्रकार की दर्दनाक पीड़ा से गुजरना पड़ता है। हम सोचने और समझने को मजबूर हो जाते है कि आखिर इन्होंने ऐसा कौन सा पाप कर दिया जिसका प्रायश्चित उन्हें आजीवन तरह-तरह की यातनाएँ सहकर करना पड़ता है।

'गुलाम मंडी' उपन्यास में मानव तस्करी, स्त्रियों का शोषण, और तीसरी समस्या है हिजड़ा समुदाय, जो मेरे शोध-विषय का मुख्य आधार है। ट्रांसजेंडर और ट्रांससेक्सुअल, हिजड़ा समुदाय से जुड़ी हुई समस्या है जो समुदाय समाज के तयशुदा खाँचों में नहीं आ सकता। इसी कारण समाज द्वारा यह लंबे समय से उपेक्षित और बहिष्कृत रहे। लैंगिक भेदभाव से पीड़ित हमारा पुरूष सत्तात्मक समाज हमेशा से ही लैंगिक श्रेष्ठता में पुरूषों की वकालत करता है।

इस तरह से इन्हें मौका मुहैया करवाने की कोशिश सरकार को करनी चाहिए। समाज, कानून का इनको अगर हौसला मिल जाएगा तो इन्हें मुख्यधारा में आने से कोई नहीं रोक सकता। इन्हें भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने की आवश्यकता है। उपन्यास 'नाला सोपारा' के माध्यम से लेखिका का यही मंतव्य है।

लेखक महेंद्र भीष्म ने पात्र पायल सिंह के चरित्र को बखूबी उभारा है। उसका पूरा चित्रण उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। लेकिन अन्य किन्नरों की स्थिति का ब्यौरेवार वर्णन इसमें दिखाई नहीं पड़ता है। एक-दो स्थानों पर उनका उल्लेख मात्र हुआ है। लेकिन महेंद्र भीष्म उपन्यास के मुख्य पात्र के प्रति पूरा न्याय कर पाए हैं। यही उपन्यास का उद्देश्य भी हैं।

भगवंत अनमोल ने ख़ुद अपनी ज़िंदगी को ही इस उपन्यास में एक किरदार के रूप में पेश करके बड़ा ही पुण्य का काम किया है। समाज के उस उपेक्षित वर्ग के दुःख-दर्द और मानवीय संवेदना को अपने उपन्यास में उकेरने का काम किया है, जिसके बारे में इक्कीसवीं सदी में भी लोग सोचना तक नहीं चाहते हैं। अपने धार्मिक ग्रंथों, भगवद् गीता, रामायण में भी किन्नरों की चर्चा है और किन्नरों को समाज वह इज़्ज़त नहीं दे सका, जिसके वे हक़दार हैं। आज भी किन्नरों को अमानवीय बर्ताव और सामाजिक अवहेलना का सामना करना पड़ता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'दरमियाना' उपन्यास में किन्नरों के ममत्व भाव को दर्शाया गया है। उनमें भी भावना होती है, ममता, स्नेह, दया होती है। जैसे आम मनुष्य में होती है। वे नि:स्वार्थ किसी काम को करते है। उपन्यास में लेखक के स्वयं के जीवन अनुभव है किन्नरों के साथ। इसलिए वह इतनी करीबी से उन्हें जान पाया है।

'अस्तित्व' उपन्यास मध्यमवर्गीय परिवार को आधार बनाकर लिखा गया है। प्रीत को माता-पिता ने अपना तो लिया लेकिन यह परिवार, समाज उसे कहाँ जीने दे रहा था। समाज में रहकर ही तो मनुष्य बड़ा होता है, सीखता है लेकिन वही समाज शोषण का विषय बन जाये तो व्यक्ति कहीं का नहीं रहता। यही स्थितियाँ प्रीत के साथ भी थी। वह धीरे-धीरे बड़ी होती जा रही थी तो समाज की आँखों का काटा भी बनने लगी थी। उसके विषय में कई प्रश्न बनकर उठ रहे थे, क्यों इसकी

शादी पहले नहीं हो रही? इसे ज्यादा लोगों से मिलने क्यों नहीं दिया जाता आदि कई तरह की उत्सुकता लोगों के मन में रहती। जो प्रीत के लिए परेशानी का कारण थी।

'हॉफमेन ए पेनफुल जर्नी' उपन्यास में लेखक भुवनेश्वर उपाध्याय की दृष्टि सार्थक है, वह इधर-उधर भटका नहीं है उसने किन्नर जीवन के दर्द को समेटकर रखा और अर्जुन के माध्यम से ऐसा उदाहरण पेश किया जिससे अन्य लोगों को भी प्रेरणा मिले वे समाज के सामने अपने बल पर कुछ कर सके और लिंग आधारित मानसिकता से अपने-आपको दूर कर सके, यही उपन्यास और लेखक का उद्देश्य भी है।

इन सबके उपरांत भी सिमरन में गजब की जिजीविषा थी। उसे दर-दर की ठोकरे खानी पड़ी फिर भी वह उठकर फिर खड़ी हो जाती थी। उसे भीख भी मांगनी पड़ी, मजदूरी करनी पड़ी। रहने के लिए जगह नहीं थी और अंत में वह बीमार हो गई उस समय उसे किसी का सहारा नहीं मिला जिससे वह बहुत अधिक हताश हो जाती है, उसकी आँखों के आंसू सूख जाते है। फिर भी वह अड़ी रहती है और अंत में समाज सेविका बनकर अपने समाज के लिए कुछ करना चाहती है जिससे उसके अस्तित्व को प्राप्त किया जा सके यही उपन्यास का उद्देश्य भी है।

इस प्रकार 'ऐ जिन्दगी तुझे सलाम' उपन्यास की रोचकता अंत तक बनी रहती है और शैली वर्णनात्मक है जो पाठक को ऊबने नहीं देती है। किन्नर विमर्श की अभिव्यक्ति की कड़ी में यह उपन्यास महत्त्व पूर्ण साबित होता है, साथ ही इसमें विषय से भटकाव की गुंजाइश भी कम है। रोशनी नामक किन्नर के संपूर्ण जीवन पर यह प्रकाश डालता है तथा उसके दुःख-दर्द और साहस की कुशल अभिव्यक्ति लेखक ने यहाँ की है।

इस तरह से उपन्यास 'मेरे हिस्से की धूप' का शीर्षक भी यही है जो यह कहता है कि मोनी को उसके हिस्से की धूप लेनी है उसे भी यही अधिकार है, सम्मान से जीने का हक है जो उसे सर्राफा बाजार में काम करके मिल जाता है। उसका व्यापार अपने पिता की तरह चलने लग जाता है सब उसके काम की तारीफ करते हैं। उसे अब अलग नहीं देखा जाता बल्कि सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। पहले-पहल सभी व्यपारियों ने इसका विरोध किया कि एक 'किन्नर' के सर्राफा व्यापार में

आने से हमारे व्यापार को नुकसान पहुँचेगा लेकिन देखते-देखते वे सभी व्यापारी उसके काम को देखकर उससे सलाह-मशविरा करते हैं।

इस प्रकार 'मंगलमुखी' उपन्यास के अंत में शगुन की बेटी अनुपमा अफसर बनकर उनका मान बढ़ाती है और सबके सामने एक मिसाल कायम करती है। सबको वह यह बताती है की यह मेरे माँ-बाप नहीं है फिर भी इन्होंने उनका फर्ज अदा किया। वह पत्रकारों से महेंद्री और उनके समुदाय के लोगों के बारे में बताती है कि इनके उपकार के कारण ही मैं आज इस स्थिति में हूँ जिससे महेंद्री का सिर गर्व से ऊँचा हो जाता है। और उसकी अश्रुधारा बहने लगती है। इस प्रकार शारीरिक बनावट वाली मानसिकता के स्थान पर इंसानियत यहाँ बयाँ होती है जो मनुष्यता बनाये रखने में महती भूमिका निभाती है और यही उपन्यास की सार्थकता सिद्ध होती है।

संदर्भ

1.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'विमर्श का तीसरा पक्ष', पृ.सं.17
2.नितिन कलाल, 'किन्नर' वेब से-
3.नीरजा माधव, डॉ. एम. फिरोज खान से बातचीत, साहित्यपीडिया हिंदी-
4.नीरजा माधव, 'यमदीप', सामयिक प्रकाशन, (2001) नई दिल्ली पृ.सं.10
5.वही, पृ.सं.20
6.वही, पृ.सं.25
7.वही, पृ.सं. 45
8.वही, पृ.सं.49
9.वही, पृ.सं.82
10.वही, पृ.सं.80
11.वही, पृ.सं.94
12.वही, पृ.सं.165-166
13.वही, पृ.सं.167
14.वही, पृ.सं.246
15.वही, पृ.सं.287
16.अनुसूया त्यागी, 'मैं भी औरत हूँ', (2011) परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली
17.वही, पृ.सं.56
18.वही, पृ.सं.56
19.वही, पृ.सं.85
20.महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.33
21.महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.33
22.महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.41
23.महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', पृ.सं.91
24.प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली' वाणी प्रकाशन, (2011) नई दिल्ली पृ. 34

25.वही, पृ.सं.79

26.अनुज शुक्ल, 'वर्जनाओं के टूटते दस्तावेज', दैनिक भास्कर, 20 मार्च 2011
27.प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली' वाणी प्रकाशन, (2011) नई दिल्ली पृ.सं. 76

28.डॉ. महात्मा पांडेय, किन्नरों की ह्रदय विदारक गाथा: तीसरी ताली का मूल्यांकन', सं. विजेंद्र प्रताप (विमर्श का तीसरा पक्ष) पृ.154

29.प्रांजल धार, 'तीसरी ताली वर्जित दुनिया के तीखे रंग', लमही, अप्रैल-जून (2011) पृ. 41-42
30.जयपाल सिंह, 'उपन्यास के नए प्रस्थानों में उत्तर समय', इण्डिया टुडे, (पुस्तक समीक्षा) फरवरी-2011 पृ.69
31.पारू मदननाईक, 'मैं क्यों नहीं', पृ॰सं.165

32.निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', फ्लेप पेज से-

33. निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं.7

34. https://hindi.news18.com/news/nation/nirmala-bhuradia-book-release-369871.html

35. https://hindi.news18.com/news/nation/nirmala-bhuradia-book-release-369871.html
36.डॉ. सौ. गीता यादव, 'गुलाम मंडी', विमर्श का तीसरा पक्ष (विजेंद्र प्रताप सिंह)
37.गुलाम मंडी फ्लैप पेज से-
38.मधुरेश, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा अर्थात् तीसरी सत्ता की व्यथा-कथा', सं. डॉ.शिगुप्ता नियाज, 39.'अनुसन्धान' अक्तूबर-दिसम्बर (2017) अलीगढ़

40.चित्रा मुद्गल, 'सत्याग्रह समाचार-पत्र साक्षात्कार', (31जनवरी 2016)

41.ममता कालिया, 'नवभारत टाइम्स' (सित. 2016)
42.चित्रा मुद्गल, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृ. 9
43.वही, पृ.9
44.वही, पृ.11
45.डॉ. वीणा शर्मा, 'बहिष्कृत दुनिया', सं. डॉ.शगुप्ता नियाज, 'अनुसन्धान' अक्तूबर-दिसम्बर (2017) अलीगढ़

46.महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', अमन प्रकाशन, कानपुर (2016) पृ.सं.23

47.वही, पृ.सं.26

48.वही, पृ.सं.33-34

49.वही, पृ.सं.36

50.वही, पृ.सं.55

51.वही, पृ.सं.55
52.वही, पृ.सं.59
53.वही, पृ.सं.61-63
54.वही, पृ.सं.64
55.वही, पृ.सं.94
56.भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', राजपाल एंड संस, (2017) नई दिल्ली, पृ. 25
57.वही, पृ.29
58.वही, पृ.28
59.वही, पृ.65
60.वही, पृ. 11
61.वही, पृ.21
62.वही, पृ.28
63.वही, पृ.32
64.वही, पृ.135
65.सुभाष अखिल,' दरमियाना', पृ.सं.23
66.सुभाष अखिल,' दरमियाना', पृ.सं.67
67.भुवनेश्वर उपाध्याय, 'हाफमैन' भूमिका से-

68.भुवनेश्वर उपाध्याय, ‘हाफमैन’ पृ.सं.38
69.भुवनेश्वर उपाध्याय, ‘हाफमैन’ पृ.सं.63
70.मोनिका देवी, ‘अस्तित्व की तलाश में सिमरन’, पृ.सं.23
71.वही, पृ.सं.42
72.‘हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.27
73.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.29
74.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.84
75.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.87
76.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.123
77.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.133
78.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, ‘ऐ जिंदगी तुझे सलाम’, पृ.सं.150
79.नीना शर्मा, ‘मेरे हिस्से की धूप’, पृ.सं.29
80.नीना शर्मा, ‘मेरे हिस्से की धूप’, पृ.सं.27
81.डॉ. लता अग्रवाल, ‘मंगलमुखी’, पृ.सं.41
82.वही, पृ.सं.57
82.वहीं, पृ.सं.57

चतुर्थ अध्याय- किन्नर केंद्रित चयनित हिंदी कहानियाँ

4.1 थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ- सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी

4.2 कथा और किन्नर- विजेन्द्र प्रताप सिंह

4.3 इस जिंदगी के उस पार- राकेश शंकर भारती

4.4 थर्ड जेंडर की कहानियाँ- सं. विजेंद्र पताप सिंह, डॉ. रवि कुमार गौड़

4.5 कबीरन- सूरज बड़त्या

4.6 किन्नर- पूनम पाठक

किन्नर केंद्रित चयनित हिंदी कहानियाँ

हिंदी साहित्य में हिंदी कहानी का क्षेत्र काफ़ी विस्तृत है, केवल उपन्यास की नहीं अपितु कहानी लेखन भी पाठकों और लेखकों की लोकप्रिय विधा रही है। किन्नर जीवन से सम्बंधित विषय भी इन कहानियों से अछुता नहीं है। मैंने कुछ चुनिंदा कहानी संग्रह और वे कहानियाँ जो शोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण थी और संग्रहों में संकलित नहीं की गई उन चयनित कहानियों को भी लिया है जिनकी समीक्षा मैं इस अध्याय में प्रस्तुत करूंगी। हिंदी में इस विषय पर लिखी गई कुछ कहानियाँ ऐसी भी है जो पूर्णतया किन्नर केन्द्रित विषय का प्रतिनिधित्व नहीं करती उनकों मैंने शोध कार्य करने हेतु नहीं लिया है।

इस क्षेत्र में कई कहानियाँ लिखी गई। कई कहानियाँ अनुदित है। मैंने केवल हिंदी भाषा में लिखी गई कहानियों को अपने शोध कार्य का आधार बनाया है क्योंकि अन्य भाषा में लिखी गई कहानियों का अनुवाद उतना अच्छा नहीं प्रतीत होता है। अभी तक किन्नरों के उत्थान के लिए कोई ठोस प्रयास क्यों नहीं किए गए? यह बिंदु सोचने-समझने और अवलोकन करने का है। आज हमारा समाज प्रगति के पथ पर अग्रसर हो रहा है लेकिन सभ्य समाज में भी निम्न मानसिकता होना कोई नई बात नहीं है। किन्नरों को हिजड़ा कहते हुए कई बार सुना है। कई बार किन्नरों को हम शुभकार्यों में आने पर अशुभ भी मानते हैं कि यह कहाँ से आ गये लेकिन किसी भी माँ के गर्भ से कोई भी संतान किन्नर पैदा हो सकती है। ऐसे में हमें ऐसी मानसिकता को बदलना होगा ऐसी स्थिति में हमें अपनी जेंडर की जड़ हो चुकी परिभाषाओं को बदलना होगा। हर इन्सान जो स्त्री या पुरूष की तरह नहीं है उसे उसकी पहचान को खुद परिभाषित करने की स्वतंत्रता देनी होगी और साथ ही उस माध्यम के साथ जीने का हौसला और हिम्मत भी।

4.1 थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ- सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी

इस कहानी संग्रह में लेखिका ने किन्नर जीवन से जुड़ी हुई ग्यारह कहानियों को समाहित किया है जो मानव समुदाय का ही तथा-कथित हिस्सा हिजड़ा समुदाय के जीवन पर प्रकाश डालती है। मैंने अपने शोध शीर्षक के अनुसार ही चयनित कहानियों की समीक्षा प्रस्तुत की है। इस कहानी संग्रह में से मैंने दस कहानियों का चयन किया है, और उनकी समीक्षा की है जो किन्नर समुदाय के जीवन

और संघर्ष पर आधारित है। 'बिंदा महाराज', 'खलीक अहमद बुआ', 'संझा', 'इज्जत के रहबर', 'कौन तार से बिनी चदरिया', 'त्रासदी', 'पन्ना बा', 'संकल्प', 'बद्दुआ' कहानियों का विश्लेषण किया है। कहानी संग्रह के अलावा अन्य महत्वपूर्ण कहानियों को भी इस अध्याय में शामिल किया गया है जो शोध की दृष्टि से अपेक्षित है, जिनमें प्रथम कहानी इस प्रकार है:-

बिंदा महाराज-शिवप्रसाद गुप्त

शिवप्रसाद गुप्त द्वारा रचित इस कहानी में बिंदा महाराज नाम का मुख्य पात्र है; जो हिजड़ा है और स्त्री के वेश में रहता है। बिंदा के आरंभिक जीवन और उसके अंत को अपने कलेवर में समेटे हुए यह कहानी पाठकों के भीतर हिजड़ों की दोषहीनता के प्रति एक संदेश छोड़ जाती है। बिंदा महाराज सीधे-सरल स्वभाव वाला हिजड़ा है जो उत्सवों में जाकर ढोलक की थाप देकर कुछ पैसा कमाता है और उसी से उसका घर चलता है। कहानी में घुरविनवा नामक एक पात्र है जो उससे हंसी-ठिठोल करता रहता है। दीपू मिसिर नाम का एक और व्यक्ति जो लोगों के लंघी फंसाकर उनका रास्ता रोकता है। बिंदा के साथ भी वह ऐसा ही करता है, बिंदा को उसकी यह मजाक बिल्कुल भी पसंद नहीं होती है लेकिन बिंदा को उसके दो वर्षीय पुत्र से अत्यधिक प्रेम हो जाता है। वह बालक बिंदा की ऊँगली पकड़कर चलता है और उसका बिंदा को अंत में इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है और वह बच्चा किसी कारण से मर जाता है उससे सबकी बाते सुननी पड़ती है कि इस डायन ने बच्चे को छाती से चिपकाया था इसलिए मर गया। यह कलंक उसके सिर पर लग जाता है।

कहानी में हिजड़ों की महता के बारे में दीपू मिसिर बिंदा के रूठने पर वाजिदअली का किस्सा सुनाता है कि "एक बार वाजिद अली शाह के मंत्री ने सलाह दी हुजूर, एक हिजड़ों की पलटन तैयार की जाए और फिरंगी से भिड़ा दिया जाए। मजा आ जाये। कितने मजबूत होते होंगे ये लोग, न औरत और न मर्द, लड़का पैदा करना होता नहीं, देह कसी-की-कसी रह जाती है- नवाब मान गये।"[196] उसके बेटे की मौत से वह एकदम टूट जाती है और आत्मग्लानि का भाव उत्पन्न हो जाता है और वह सोचने लगती है कि उसके पास रहने से कोई सुखी नहीं रह सकता, उसका जीवन ही बेकार है। "बिंदा महाराज कलेजे के दर्द को मुट्ठियों में पकड़ने की कोशिश कर रहा था। घर के

[196] सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी, 'थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ', (2018) रोशनी पब्लिकेशन्स, कानपुर पृ.सं.13

अँधेरे कोने में 'बुआ' की प्रतिध्वनियाँ उठती, उसके हृदय के भीतर बर्फ का ढोका कसकने लगता, वह विषतप्त बाण से बिंधे आहत पक्षी की तरह तड़पता रहा। उसे लगता की सचमुच वह डायन है, आत्मभक्षी। उसके संसर्ग में आकर कोई सुखी नहीं रह सकता, कोई नहीं।"[197] उसे इस तरह महसूस करा दिया जाता है जिससे वह अपने-आपको ही गलत समझ बैठता है।

इस प्रकार संक्षिप्त कथा-वस्तु लिए कहानी बिंदा नामक हिजड़े की व्यथा प्रकट करती है। वह छोटा सा आवरण लिए हुए जीता है लेकिन यह समाज उसको जीने नहीं देता है और बच्चे की मौत के लिए उसे जिम्मेदार ठहराया जाता है। वह अपने जीवन में बैचेनी का भाव महसूस करता है और आजीवन उससे बाहर निकलने की कोशिश करता है। अत: स्पष्ट है कि कहानी एक साधारण किन्नर की मनोव्यथा प्रकट करती है जो परिस्थिति से बाहर तो निकलना चाहता है किंतु निकल नहीं पाता है।

खलीक अहमद बूआ-राही मासूम रजा

हिंदी के जाने-माने लेखक राही मासूम रजा द्वारा लिखी गई यह कहानी खलीक अहमद बूआ नामक किन्नर और रूस्तम खां नाम के व्यक्ति के मध्य प्रेम और उसके अंत को दर्शाती है। खलीक अहमद रूस्तम से बहुत प्रेम करता था। वह उसकी हर एक जरूरत का ख्याल रखता था, उसके लिए खाना बनाना, खिलाना, पैर दबाना आदि कार्य करता था। शुरुआत में तो रूस्तम भी उसका ख्याल रखता था लेकिन धीरे-धीरे वह उससे दूर रहने लग गया और एक वैश्या के कोठे पर जाने लग गया। इस बात का पता खलीक अहमद को चल गया और इसी बात पर वह रूस्तम से झगड़ा कर बैठा। झगड़ा इतना अधिक बढ़ गया कि दोनों की राहें अलग-अलग हो गई। खलीक अहमद कहने लग गया यथा:- "हम येके मारे दूनों बखत घी न चटाते कि सारी तेरी पुखर-जिया पर खरिच हो जाए। अरे बेवफा, ई भी नहीं सोचा कि रंडी आज तक के की भई है...।"[198] इस घटना के उपरांत दोनों अलग-अलग रहने लग गये। एक दिन बूआ ने रूस्तम को पुखराज के कोठे पर पीछे के

---

[197] वही, पृ.सं.16

[198] वही, पृ.सं.21

दरवाजे से जाते हुए देख लिया और वहीं पहुँच गया। चाकू निकालकर उसे क्रोध वश मार दिया। "खलीक अहमद बूआ रूस्तम पर टूट पड़े। चाकू वाला हाथ ऊपर-नीचे चलने लगा, हम का अपनी जवानी तोरे पीछे यह मारे गँवाया है कि तू हमार कमाई का पईसा ई किराए की बच्चेदानी के गुल्लक में फेकों।"[199] इस प्रकार से वह अपना आक्रोश प्रकट करता है और इसी कारण से उसे फांसी की सजा मिलती है। उसे फांसी पर लटकना मंजूर था पर उसकी बेवफाई वह सहन नही कर पाया और अपना अंत कर लिया।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि लघु कथानक के आधार पर लेखक ने प्रेम और उसकी असफलता में लिए गये प्रतिशोध का वीभत्स दृश्य प्रस्तुत किया है। प्रेमी अपने प्रेम में असफल होने पर या धोखा मिलने पर किस प्रकार से आक्रोशित हो जाता है फिर चाहे वह किन्नर हो अथवा आम व्यक्ति। कहानी में यह उदाहरण स्पष्ट देखने को मिलता है।

संझा- किरण सिंह

किरण सिंह द्वारा लिखी गई यह कहानी संझा नामक किन्नर की जिन्दादिली की कहानी है। कहानी की शुरुआत होती है बैदाइन के संतान उत्पन्न होने से। बच्चा होने से पूर्व उसका बहुत ध्यान रखा जाता है लेकिन उसने एक ऐसी संतान को जन्म दिया जिससे कभी सामाजिक स्वीकृति नहीं मिल सकती थी, उसका नाम रखा गया- संझा। बैदाइन बेटी के जन्म के दूसरे-तीसरे वर्ष ही चल बसी। तब वैद जी बहुत फूट-फूट कर रोने लगे। संझा को दुनिया से छिपाना भी उनके लिए किसी चुनौती से कम नहीं था। वह बाहर जाने की जिद करती और वैद जी उसे छिपाने का प्रयास करते। उनकों पता था कि इसके हिजड़ा होने का पता चल गया तो यह मुझसे दूर हो जायेगी। वह उसे इस प्रकार समझाते- "नहीं नहीं बाहर निकलते ही तुम्हें छूत लग जायेगी। एकदम भयंकर, लाइलाज बीमारी। मैंने कितनी बार तुम्हें समझाया है।"[200] वह अपने पिता से छिप-छिपकर किताबें पढ़ती कि

---

[199]वही, पृ.सं.22

[200] वही, पृ.सं.26

ऐसा कौनसा सत्य है जो मुझसे छिपाया जा रहा है? कहानी के बीच-बीच में उत्साहवर्धक पंक्तियाँ भी लिखी गई है।

वह अपना जीवन समाप्त करना चाहती है। एक दिन यह करने की कोशिश भी करती है, तब वैद जी उसे समझाते हैं- "जीवन के लिए सबसे जरूरी तो आँख है। जोगी चाचा अंधे पैदा हुए थे। जरूरी तो हाथ है। बिंदा बुआ का दाहिना हाथ कोहनी से कटा हुआ है। रामधा भैया तो शुरू से ही खटिया पर पड़े हुए है, रीढ़ की हड्डी बेकार है। बिसंभर तो पागल है, जन्म से बिना दिमाग का...क्या वो आँख, नाक, कान, हाथ, पाँव से भी बढ़ कर हो सकता है क्या?"[201] इस प्रकार से उसे समझाया जाता है लेकिन फिर भी वह अपने बारे में जान नहीं पाती है। कहानी विस्तृत कथानक लिए हुए है। वैदजी संझा की शादी करवाना चाहते है। शादी एक ऐसे व्यक्ति से जो संझा की तरह नहीं लेकिन बना दिया गया है, कनई नाम है उस व्यक्ति का। जब तक संझा का विवाह नहीं हो जाता लोग वैद जी के बारे में तरह-तरह की बाते बनाते है कि इसका बाप ही इसका विवाह नहीं करना चाहता।

फिर भी संझा की शादी कर दी जाती है उस व्यक्ति से जो खुद नपुंसक हो। लेकिन दोनों अपनी सच्चाई एक-दूसरे को बताकर साथ रहने का विचार करते हैं। बहुत वर्षों तक संझा के ऐसे ही रहने पर किसी को पता नहीं चलता है लेकिन एक दिन ऐसा आता है कि उसकी सच्चाई सबके सामने आ जाती है कि वह हिजड़ा है। संझा गाँव वालों को औषधि देकर उनका दुःख-दर्द दूर करने का प्रयास करती है लेकिन गाँव वालों को उसकी सच्चाई का पता चलने पर उसी के ऊपर आरोप लगाते हैं कि यह हमें भी अपने जैसा ही बनाना चाहती है। अंत में गाँववालों से खुद का सामना होने पर वह उनका मुँह तोड़ जवाब देती है:- "मुझे मारना तो दूर तुम मुझे छू भी नहीं सकते क्योंकि मैं एक जरूरत बन चुकी हूँ। सारे चौगांव ही नहीं, आस-पास के कस्बे शहर तक मैं ही हूँ जो तुम्हारी जिंदगी बचा सकती हूँ। अपनी औषधियों में अमृत का सिफत मैंने तप करके हासिल किया है। मैं जहाँ जाउंगी मेरी इज्जत होगी तुम लोग अपनी सोचो।"[202] इस प्रकार कहा जा सकता है कि कहानी में संझा और उसके पिता की जिंदादिली ही उसको जिंदा रख पाती है। वह अपने पिता से जड़ी-बूटियाँ

---

[201] वही, पृ.सं.30

[202]ही, पृ.सं.45

बनाने का काम धीरे-धीरे सीख लेती है जिससे अपनी ससुराल में उसे अलग से काम करने के लिए मिल जाता है वह कभी-कभी अपने भविष्य को लेकर चिंतित हो जाती है लेकिन दूसरे ही पल अपने-आपको संभाल लेती है।

इज्जत के रहबर-डॉ. पद्मा शर्मा

डॉ.पद्मा शर्मा द्वारा लिखित यह कहानी है हिजड़ा समाज की उत्सवों, ख़ुशी के माहौल में सगुन मांगने जाते है और वहाँ हुई सारी गतिविधियों का हिस्सा बनते हैं। बड़ी मान-मनुहार के बाद उन्हें सगुन दिया जाता है, नहीं देने पर ये गाली-गलौच पर भी उतर आते हैं और नंगा नाच दिखाकर श्राप देने को तत्पर हो उठते हैं। टोले की प्रमुख सोफिया है जो श्रीलाल के छोटे भाई विश्म्भर की शादी होने पर उसके घर सगुन लेने जाती है। वहाँ उनके बीच बहस हो जाती है। सोफिया हमेशा सच्चाई का पक्ष लेती है। एक बार छंगा नामक व्यक्ति श्रीलाल की बेटी की इज्जत लूट लेता है। सोफिया को जब इस बात का पता चलता है तो वह उसे थाने में रिपोर्ट लिखवाने के लिए कहती है लेकिन वह समाज के डर से रिपोर्ट लिखवाने नहीं जाता। सोफिया को वह बात मन में खलती रहती है और एक दिन वह छंगा से बदला लेने हेतु उसका गुप्तांग काट देती है जिससे कोई दूसरा व्यक्ति ऐसी घटना को अंजाम ना दे सकें।

बल्लू नामक व्यक्ति जो हिजड़ा नहीं है और उनके साथ रहता है, उसको इन सब बातों का पता रहता है पहले उसके मन में किन्नरों के प्रति गलत विचार थे लेकिन सोफिया के इस काम के उपरांत उसके मन में किन्नरों के प्रति संवेदना जाग उठी, वह कहता है- “सोफिया की बात सुनकर बल्लू के मन में कभी-कभी उन लोगों के प्रति आ जाने वाले क्रोध, नफरत, उपेक्षा, के भाव समाप्त हो गये। उसे लग रहा था कि संवेदना और विरोध करने की हिम्मत तो इन लोगों में हैं जो अधूरे कहे जाते है और दूसरों पर आश्रित रहतें हैं।”[203] इस प्रकार कहा जा सकता है कि ‘इज्जत के रहबर’ कहानी संक्षिप्त कलेवर के माध्यम से यह संदेश छोड़ती है कि आम आदमियों की भांति हिजड़ों में

[203]वही, पृ.सं.54-55

भी संवेदना रहती है और कहानी में सोफिया के माध्यम से वह संवेदना प्रकट होती हैं। यह अपने नियमों के भी पक्के होते हैं। नेक में किससे कितना लेना है यह खुद तय करते हैं।

कौन तार से बीनी चदरिया-अंजना वर्मा

अंजना वर्मा की इस कहानी में किन्नरों के आपसी वार्तालाप को दर्शाया गया है। किन्नरों की स्थिति, जीवन शैली, आय के साधन आदि पर प्रकाश डाला गया है। कुसुम नामक किन्नर है जो उगाही के लिए अपनी टोली के साथ जाता है, उसे बहुत मिन्नत करने के उपरांत सगुन के पैसे दिये जाते है। सुंदरी और कुसुम दोनों अपनी जिंदगी को लेकर आपस में बात करती है कि कैसे उनका जीवन शुरू हुआ, कुसुम को तो यह भी नहीं पता होता कि उसका जन्म कहाँ हुआ, उसके माता-पिता कौन हैं। वह सब ईश्वर पर छोड़ती हुई कहती है कि "जाने दे सुंदरकी हम सबको उ सब नहीं सोचना चाहिए। हमकों भी तो उसी ने बनाया जिसने मरद-मानुस बनाया, जनी-जात बनाया। काहे सोच करे हम? पेड़ में भी तो देख तो सब पेड़ों में फूल बीज कहाँ होता है? हम भी उसी तरह है। लेकिन है तो उसी के हाथ के बनाय।"[204] सुंदरी का अपना घर-परिवार है लेकिन उससे मिलने से उनकों हिकारत मालूम होती है। वह उनसे मिलना चाहती है। एक दिन ऐसे ही कुसुम को सुंदरी अपने परिवार वालों से मिलाने के लिए ले जाती है लेकिन सिर्फ उसकी माँ उसे पहचानती है बाकि कोई भी नहीं पहचानता। वह उसकी माँ से शिव मंदिर में मिलती हैं वह अपनी इस योनि के संबंध में माँ से बार-बार सवाल करती है तब वह वृद्धा कहती है कि "तुम्हें इतना रूप दिया भगवान ने, पर उसका माथा खराब हो गया था कि तुझे ऐसा बना दिया। फिर भी जैसी भी थी...रहती मेरे आंगन में। पर सब उठा ले गये मुझसे छल करके।"[205] इस प्रकार से कहानी केवल आपसी वार्तालाप पर ही टिकी है। कुसुम, सुंदरी और वृद्धा बातचीत के माध्यम से ही कथानक को आगे बढ़ाते हैं। तीनों एक-दूसरे को स्नेह भरी दृष्टि से देखते हैं और एक-दूसरे के दुःख-दर्द को समझते हैं लेकिन उस दर्द को कोई बाँट नहीं सकता जो दंश उन्होंने इस योनि में रहकर झेला है उसको वही लोग समझ सकतें है और कोई दूसरा नहीं। यही इस कहानी का भी उद्देश्य हैं।

[204]वही, पृ.सं.60

[205]वही, पृ.सं.65

त्रासदी-महेंद्र भीष्म

चर्चित उपन्यासकार और लेखक महेंद्र भीष्म द्वारा लिखी गई इस कहानी में कथानक उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ के चारबाग रेलवे स्टेशन को आधार बनाकर लिखा गया है। बिलकुल अलग ढंग की कहानी है एक हिजड़ा और साधारण मनुष्य के अशरीरी प्रेम (प्लेटोनिक लव) को दर्शाती है। रति और सुंदरी नामक हिजड़ा के रूप में। रति अत्यधिक सुंदर थी। अपने पति की दुर्घटना में मृत्यु होने पर उसके स्थान पर उसकी नौकरी लग गई लेकिन कामुक सहकर्मियों की कुदृष्टि उस पर पड़ गई और एक दिन वे उसे दबोचकर रेल के खाली डिब्बे में ले जाकर उसका बलात्कार करने पर उतारू हो गए लेकिन उसी समय सुंदरी नामक हिजड़ा ने देख लिया और उसे बचा लिया। सुंदरी को इस घटना से काफी चोटें भी आई। बाद में वह रति के घर जाकर रहने लगी। उनका आपस में प्रगाढ़ संबंध बन गया। रति का बेटा दीपक जैसे-जैसे बड़ा होता है सुंदरी उसको फूटी आँख भी नहीं सुहाती है। वह समाज से उसकी माँ और सुंदरी के बारे में अनर्गल बाते सुनकर क्रोधित हो जाता है और उससे लड़ने पर उतारू हो जाता है। जैसा कि कहानी का नाम है त्रासदी। शीर्षक के अनुकूल ही उन सबके जीवन में त्रासदी छाई रहती है।

एक स्थान पर लेखक कहता हैं कि "मनुष्य का जीवन त्रासदी भरा रहता है। जब तक वह जीवित है, त्रासदियाँ उसके इर्द-गिर्द बनी रहती है।"[206] दीपक कुसंगति में पड़ जाता है, रति और सुंदरी अलग-अलग हो जाते है। अंत में दीपक सुंदरी को अपनी माँ से बातें करते हुए देख लेता है तब वह गुस्सा होकर प्लेटफार्म पर इंजन के आगे उसे धक्का दे देता है; जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है और यही कहानी का अंत भी हो जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि लेखक ने पात्रों के जीवन की त्रासदी का उल्लेख किया है। त्रासदियाँ सबके जीवन में होती है बस परिस्थितियाँ ही विपरीत होती है। सुंदरी, रति और दीपक के जीवन में भी त्रासदी थी जिसको लेखक ने भलिभांति प्रकट किया है।

---

[206]वही, पृ.सं.70

पन्ना बा-गरिमा संजय दूबे

गरिमा संजय दूबे की यह कहानी एक किन्नर जिसका नाम 'पन्ना बा' है, जो उनके जीवन पर आधारित है। लेखिका की आरंभ से यह जानने की इच्छा होती है की किन्नर कौन होते है? वह अपनी सहेलियों से भी यह जानने की इच्छुक रहती है। वह आस-पास के लोगों से यह सुनती हैं कि पन्ना बा मर गया। तब उसे पता चलता है कि आखिर पन्ना बा कौन था। सब लोग उसे पन्ना बा के नाम से ही पुकारते थे। जब लेखिका बचपन में खेला करती थी तब एक बार गेंद की पन्ना बा के लगने पर वह उसके पीछे आता था और घर तक उसकी शिकायत लेकर आ गया था। लेखिका के ससुराल जाने के बाद वह उससे मिला तो उसके बेटे को दस रूपये का नोट थमा दिया आशीर्वाद के नाम पर और उसकी आँखों में आंसू आ गये। आसुओं की वजह पूछने पर वह वहाँ से चला गया।

तब लेखिका इस प्रकार से संवेदना प्रकट करती हैं- "कैसा जीवन प्रभु, कितनी यातना, अपने ही शरीर से घिन की हद तक बेगानापन। कैसे किसी इंसान का मन स्वीकारे मरदाना आवाज, लेकिन कपड़े और श्रृंगार करने का मन औरतों की तरह, दाढ़ी मूंछों का उगना पुरूष की तरह और शरीर का विकास स्त्री की तरह। कोई काम पर रखें नहीं इस अभिशाप को साथ रखने को राजी नहीं।"[207] इस कहानी में किन्नरों द्वारा दी गई दुआ और बद्दुआ के बारे में भी बताया गया है। पन्ना बा भी इसी तरह से अपना गुजारा करती हैं।

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि यह कहानी किन्नर के उस पक्ष को दिखाती है कि जन्म से लेकर मृत्यु उपरांत उसे यातनाएं सहनी पड़ती है। उसके शव को दफ़नाने पर उसके ऊपर जूते मारे जाते है ताकि वह दोबारा इस योनि में जन्म न ले। इस प्रकार की संवेदना दृष्टि लेखिका कहानी में प्रकट करती है।

संकल्प-विजेंद्र प्रताप सिंह

विजेंद्र प्रताप सिंह की यह कहानी 'माधुरी' नामक हिजड़ा के जन्म से लेकर औरत बनने तक की कहानी है। वह एक ऐसे गरीब परिवार में जन्म लेती है जिसको पिता के अलावा कोई देखने

---

[207]वही, पृ.सं.74

वाला नहीं था। वह दिन-रात मेहनत करती है लेकिन किसी के सामने हाथ नहीं फैलाती है। मोहल्ले में यद्यपि उसका सम्मान नहीं होता है लेकिन कोई उसे हिकारत की नजर से भी नहीं देखता है।

प्रारंभ में उसका नाम मधुर रहता है जो बाद में माधुरी बन जाता है। उसमें स्त्री स्वभाव अधिक रहता है, वह स्त्रियों के साथ अधिक रहना चाहती है लेकिन लड़कियाँ उससे दूर भागती है। कई बार उसके साथ ज्यादतियाँ भी की जाती है। एक पुलिस वाला उसके साथ बलात्कार करता है तब उसकी दशा खराब हो जाती है। वह अपने गुरू के पास जाती है। सब थाने में रिपोर्ट लिखवाने के लिए कहते हैं लेकिन क्या फायेदा इंसानों की नहीं सुनी जाती तो हिजड़ों की कौन सुनता। तब मधुर की सहेली पायल अपना आक्रोश इस प्रकार व्यक्त करती है- "हाय ये देश और उसके लोग। पूरी औरत को तो अपनी हवस का शिकार बनाने से छोड़ते नहीं, अब हिजड़े भी नहीं छोड़े जाते। ईश्वर ने क्या कम जुल्म ढाया है हम हिजड़ों पर जो, किसी नासपीटे ने मेरी सहेली के साथ ऐसा बुरा काम करने से पहले बिलकुल भी नहीं सोचा।"[208] जब मधुर को डॉक्टर से यह पता चलता है कि उसमें स्त्रैण स्वभाव अधिक है और वह स्त्री बन सकता है तब डॉक्टर उसे ऑपरेशन के लिए एक लाख रूपये फीस के लिए बोलता है। तब वह संकल्प करती है कि कैसे भी करके जैसे-तैसे वह औरत बनेगी। वह दिन-रात मेहनत करती है और पूरी तरह स्त्री बन जाती है।

इस प्रकार से कहानी का यही उद्देश्य है कि यदि ठान लिया जाए तो कुछ भी असंभव नहीं है। इंसान कुछ भी कर सकता है। यह मधुर ने भी कर दिखाया और मधुर से माधुरी बन गई और अपनी जिम्मेदारियों को निभाते हुए अपनी बहिन का विवाह भी किया।

बद्दुआ

कहतें हैं कि किन्नर यदि कोई बद्दुआ दे दे तो वह सच हो जाती है इसीलिए किन्नरों से कोई बद्दुआ नहीं लेनी चाहिए। रामलली और उसके परिवार के साथ भी यही हुआ। रामलली ने जब वधु के रूप में घर में कदम रखा तब हिजड़ों को नेक नहीं देने से वे उन्हें श्राप दे गये। तभी से रामलली का परिवार पूरी तरह से उजड़ गया। एक के बाद एक सभी परलोक सिधार गये। बची रामलली और

---

[208]वही, पृ.सं.80

उसका पुत्र मुरली। लेकिन जैसे-जैसे मुरली बड़ा होता गया वह भी पुरूष होते हुए स्त्रियों की तरह व्यवहार करने लग गया। उनकी तरह रहना, कपड़े पहनना, श्रृंगार करना आदि उसको पसंद था। उसकी इन हरकतों की वजह से उसकी माँ बहुत परेशान रहती थी।

रामलली के बार-बार मना करने के बावजूद वह नहीं मानता था। तब रामलली को हिजड़ों द्वारा दिए गये श्राप का स्मरण हो आता है। कि कहीं वह सच तो नहीं हो रहा? कहानी के अंत में वह हिजड़ा समुदाय में शामिल हो जाता है। रामलली को यह बात सलती रहती है। हिजड़े उसे ले जाने के लिए रामलली को समझाते है- "हमें यह भी पता है की तुम्हारा यह बेटा ढोलक अच्छी बजाता है और नाचने-गाने में बहुत होशियार है, हमारे साथ रहेगा तो चार पैसे कमाएगा...। वरना तुम तो जानती ही हो कि यह तुम्हारें मुहल्ले वाले तुम्हें और तुम्हारे बेटे को चैन से जीने नहीं देंगे।"[209] इस प्रकार ना चाहते हुए भी हिजड़ा बन जाना, इस बात को रेखांकित करना; यही इस कहानी का उद्देश्य भी है।

मन मरीचिका-डॉ.विमलेश शर्मा

डॉ. विमलेश शर्मा द्वारा लिखित यह कहानी प्रेमी युगल की एक ऐसी कहानी है जो एक दूसरे के प्रति प्रेम को दर्शाती है। केवल शारीरिक प्रेम ही नहीं अपितु भावनात्मक प्रेम। सुलोचना और मानव की कहानी। जिनके कई दिन साथ रहने पर भी सुलोचना को पता नहीं चलता है कि मानव सामान्य पुरूष नही है। आधुनिक ढंग के कथानक पर बुनी गई यह कहानी प्रेम के उदात्त पक्ष को हमारे सम्मुख रखती है। सुलोचना को जब यह पता चलता है कि मानव उसे वैवाहिक सुख प्रदान नहीं कर सकता है, तब वह निर्णय करती है कि वह उसका इलाज करवाएगी। वह अधिक भावुक हो जाती है और उसके मन में मानव के प्रति और अधिक प्रेम उमड़ पड़ता है। उसका स्त्री मन कराह उठता है और वह मानव से प्रश्न करती है-"मानव तुमने अकेले इतना दर्द सहा, मैं और कोई नहीं तो तुम्हारी मित्र तो थी। तुमने वो अधिकार भी मुझसे छीन लिया। मुझे सब समझ आ रहा है, वो सिगरेट

[209]वही, पृ.सं.86

के टुकड़ों से भरी ऐश ट्रे, वो खीज और तुम्हारा घंटों अंधेरों में बतियाना। मानव तुम नहीं समझे स्त्री मन को। स्त्री को देह की जरूरत नहीं होती मन की होती है। काश तुम इतना भर समझ पाते।"[210]

वह उसको ठीक करने का बीड़ा उठाती है। वह खुद की ख्वाहिशों का परित्याग करके मानव को मानवी बनाती है। एक ऑपरेशन के बाद मानव पूरी तरह से स्त्री बन जाती है, जैसा कि उसका स्वभाव है। इस प्रकार कहानी में एक ऐसे प्रेम को दर्शाया गया है जो बिना किसी स्वार्थ के जीने की ललक पैदा करता है और दूसरों के लिए भी जीवन जीने की प्रेरणा देता है।

4.2 कथा और किन्नर- सं. डॉ.विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौड़

'कथा और किन्नर' कहानी-संग्रह में किन्नर समुदाय की पीड़ा को एक-एक कहानियों के माध्यम से दिखाया गया है। यह कहानियाँ अलग-अलग प्रसंगों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है जिनमें हाशिये के समुदाय की पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है। इस कहानी संग्रह में 'हिजड़ा', 'अथ किन्नर कथा', 'प्रतिशोध', 'किन्नर माँ', 'इतनी देर में', 'आखिर कब तक', 'पहचान', 'प्रतिमान', 'मिस्टी', 'दर्द', 'अँधेरे की परते', 'वो किन्नर' 'बरगद की छाँव', 'हिजड़ा चरित्र' 'अपमानित' 'घर' कहानियों को संकलित किया गया है।

हिजड़ा:-

'हिजड़ा' नामक कहानी अपने नाम से ही हिजड़ों के दुत्कार, तिरस्कार और अपमान की कहानी बयां करती है। पात्रों में गोपाल और निषेध बाबू नाम के दो पात्र है। गोपाल के घर नेग मांगने आये किन्नरों को वह दुत्कार देता है, लेकिन निषेध बाबू उसे समझाते है कि किन्नर भी इंसान है, अपितु इस असमानता की खाई से इन्हें बाहर निकालना चाहिए। "गोपाल बाबू किन्नर भी प्यार के भूखे होते है। वे भी प्रेम, नफ़रत और दुत्कार की भाषा समझते है। उन्हें इज्जत देते तो वे धमाचौकड़ी क्यों करते? उन्हें भी शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में वरीयता मिलती तो वे भी अपने पाँव पर खड़े होते, क्यों न्यौछावर गाते, क्यों तीज-त्योंहार पर दरवाजे-दरवाजे दस्तक देते। बाबू पेट का सवाल है। किन्नरों को भी भूख लगती है, प्यास लगती है।"[211] हम अपनी जातिवादी, लैंगिक मानसिकता में

---

[210] वही, पृ.सं.91

[211] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 14

जकड़े हुए होते हैं। इसी आधार पर तो स्त्री और पुरूष को बांटा गया है और किन्नरों को एकदम अलग-थलग।

अथ किन्नर कथा

डॉ. महेंद्र प्रताप सिंह द्वारा यह कहानी किसी विशेष प्रसंग को लेकर नहीं अपितु यह कहानी किन्नरों के द्वारा स्वयं कही गई कहानी है। रामदास और महावीर के मध्य किन्नरों की स्थिति को लेकर वार्तालाप होता है मधु बाई किन्नर जिसे मेयर चुना गया उसके जीवन संघर्षों को लेकर यह कहानी लिखी गई साथ ही इसमें किन्नरों के देवता अरावन की कथा भी है जो महाभारत कालीन एक प्रसंग है। इस कहानी में किन्नरों की पीड़ा की अभिव्यक्ति इस प्रकार है:-

"अपने तो बच्चे नहीं अपना सब संसार।

बच्चों के शुभ जन्म पर, करूं नृत्य हर द्वार।।

सबकी खुशियों में सदा, मैं प्रसन्न हर काल।

सबको दूँ शुभकामना, फिर भी मैं बेहाल।

हँसना जीवन सार है, हँसना है व्यायाम।

सदा हंसाता सकल जग, है मेरा यह काम।।"[212]

इसमें कुवागम मेले (तमिलनाडु) का वर्णन है जिसमें किन्नर समुदाय के विवाह, त्योहार, रस्में आदि होते हैं, सभी प्रकार के उत्सव यहाँ मनाएं जाते हैं। रामदास इस मेले का प्रत्यक्षदर्शी है। वह किन्नरों के महत्त्व और दशा पर समुचित प्रकाश डालता है।

[212] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 21

प्रतिशोध:-

यह विजेंद्र प्रताप द्वारा लिखी गई कहानी है। आजीवन अभिशप्त और तिरस्कार का जीवन जीता यह समुदाय अपनी आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नेग मांगने, बधाई गाने और भीख के लिए मजबूर है। राखी सिंह किन्नर अक्सर अपनी टोली के साथ विवाह के अवसर पर नेग मांगने जाती है किंतु उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है और पीटा जाता है जिससे उसके खून आ जाते है। और यह वही आदमी होता है जिसे एक बार घायल होने पर वह अस्पताल पहुँचाती है। वह उसे भूल जाता है लेकिन राखी किन्नर को यह याद रहता है। वह आदमी उसके साथ बुरा बर्ताव करता है। जिससे किन्नरों की टोली उनके साथ बेइज्जती से पेश आती है, अपने सारे कपड़े उतार देते हैं तथा उन्हें उनकी मर्दानगी का उलाहना देते है:- "साहब हममें थोड़ी बहुत इंसानियत बची है...पर तुम लोगों में...अरे। तुम बड़े लोगों को जब अपने माँ-बाप का एहसान तक याद नहीं रहता तो मुझ जैसे हिजड़े की मदद कैसे याद रहेगी। अपने मुँह पर रह गये खून को पोछते हुए उसने कहा...भीख मांगना...तुम लोगों के सामने हाथ फैलाना..दर-दर बेइज्जती सहना, हमें भी अच्छा नहीं लगता...पर करें तो क्या करे....न कोई काम देता है और न कोई दाम।"[213]

इस प्रकार 'प्रतिशोध' कहानी में किन्नरों के द्वारा किये गये अपमान का बदला लिया जाता है। इसी कारण से कहानी का शीर्षक भी 'प्रतिशोध' रखा गया है। किन्नरों के समक्ष रोजगार की समस्या सबसे बड़ी है। बिना कुछ कमाए वे अपना पेट कैसे भरे इस कारण उन्हें भीख मांगने पर मजबूर होना पड़ता है।

किन्नर माँ

मोहित शर्मा 'जहन' द्वारा लिखी गई यह कहानी छोटी मगर बड़ी मार्मिक है। एक किन्नर माँ द्वारा दूसरे किन्नर बच्चे के सेक्स ऑपरेशन के लिए अपनी किडनी बेच दी जाती है और वह इस कारण कि वह उसको पढ़ाना चाहती है, और कोई विकल्प न रहने पर वह अपनी किडनी बेच देती है ताकि पैसों से वह बच्चे का लिंग परिवर्तन करवा सकें। समाज के डर से परे वह उसको शिक्षित

करना चाहती है ताकि वह भी घर-घर जाकर मांगे नहीं इसी संदर्भ में वह कहती है कि:-"[214] कभी मैं भी रूमी की तरह होशियार थी। मदद में लिए बहुत भागी, गिड़गिड़ाई पर किसी ने मेरे 'हिजड़े' की पहचान से आगे कुछ जानना ही नहीं चाहा।" इस प्रकार से अपनी दयनीय स्थिति के समान वह रूमी को नहीं देखना चाहती थी। वह उसे सक्षम बनाकर आत्मनिर्भर बनाना चाहती थी। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना उनकी स्थिति में कुछ सुधार ला सकता सकता है।

इतनी देर में

अलका प्रमोद की यह कहानी एक बहन और भाई की कहानी है जिसमें माँ हमेशा भाई को दुनिया की नजर से बचाकर रखती है, उसकी ममता बार-बार जाग उठती है लेकिन वह किसी को भी नहीं बताती है। मरते-मरते अपने बेटे के किन्नर होने का सच वह अपनी बेटी को बता देती है और कहती है कि तेरा भी एक भाई है उसका ध्यान रखना तब वह उसे बचाने जाती है और वापस आने को भाई को कहती है किंतु उसके मन में आक्रोश और विद्रोह का स्वर कुछ इस प्रकार दिखाई पड़ता है:- "उसने मेरी बात काट कर कहा "इतनी देर में तुम्हें याद आया? उस समय तुम कहाँ थे जब मुझे माँ की गोद चाहिए थी। बहन का प्यार चाहिए था। मेरी न तो कोई माँ है, न बाप, न बहन और जिन्हें तुम आवारा कह रही हो उन्होंने ही मुझे पाला है, जीवन दिया है। वही मेरे सब-कुछ है और नाच-गाना ही मेरा जीवन। 'उसने हिकारत से मुझे देखते हुए कहा और मुझे कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही, एक झटके से उठ कर बिना पीछे मुड़ कर देखे मटकता हुआ चला गया।"[215]

इस प्रकार वह अपने जीवन में ही खुश रहता है वह वापस उस जिल्लत भरी जिंदगी में नहीं जाना चाहता जिसमें पहले उसे स्वीकार नहीं किया गया था। जिन्होंने उसे अपनाया वह उनके साथ ही रहना चाहता है।

आखिर कब तक

अखिलेश निगम 'अखिल' की यह कहानी एक सेठ रामेश्वर प्रसाद जो किन्नर से सेठ बना उसके इर्द-गिर्द घूमती है। पत्रकारों द्वारा उनके आजीवन समाज सेवा करने तथा अविवाहित रहने से

---

[214] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 32

[215] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 39

प्रभावित होकर उसका इन्टरव्यू लिया जाता है। लेकिन जब यह सच्चाई उन्हें पता चलती है कि यह एक किन्नर है, उन पत्रकारों का व्यवहार एकदम बदल जाता है। रामेश्वर प्रसाद का मानना था कि कोई भी किन्नर बच्चा शिक्षा से वंचित ना रहे...वह कहता है कि:- "किसी बालक के किन्नर पैदा होने में उसका क्या दोष है, समाज उसे उपहास की दृष्टि से क्यों देखता है उसने ऐसा कौनसा अपराध किया है। जिससे आपका सभ्य समाज उसके प्रति करूणा दिखाने के बजाय उसका मखौल उड़ाता है। आखिर कब तक किन्नरों को समाज द्वारा हेय दृष्टि से देखा जायेगा?" रामेश्वर प्रसाद भी एक अनाथालय में रह रहे थे, बाद में एक मील में नौकरी की और एक लंबे संघर्ष के बाद सेठ बन गये। इस दौरान उन्होंने जो कुछ झेला उसका चित्रण कहानी में किया गया है, उन्हें आजीवन इस बात का दुःख था कि उन्हें पढ़ने का मौका नहीं मिला।

पहचान

कविता विकास द्वारा लिखी गई इस कहानी में रूबीना एक किन्नर है जिसका अंत बड़ा दुःखदायी होता है। वह अपने समुदाय से अलग अपनी पहचान बनाना चाहती है। उसे अपने समाज का इस तरह भीख माँगना पसंद नहीं है। इसलिए वह भाग जाती है लेकिन उसके समुदाय के लोगों का बड़ा नेटवर्क होने के कारण उसे वापस पकड़ लिया जाता है। वह फिर उसी काम में लग जाती है, इसी दौरान उसे अस्पताल में एक लावारिस बच्ची मिलती है, जिसका पालन-पोषण करने की वह ठानती है। वह उसे पढ़ा-लिखाकर काबिल बनाती है उसका नाम जेबा रखती है और उसे समाज की नजरों से बचाकर रखना चाहती है। इसी कारण से वह उसको ठाकुर के बेटे के साथ विदेश में भेज देती है, इस कारण उसे कठोर यातनाएँ झेलनी पड़ती है। उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है। फिर भी वह उसका पता नहीं बताती है। इसलिए ठाकुर द्वारा उसको अपमानित किया जाता है:- "सोचती है चार अक्षर पढ़ क्या ली सभ्रांत बन गई। आखिर है तो यही हिजड़ी, जिसका न कोई जात, न कोई लिंग। न देह न दिमाग, ठाकुर ने क्रोध में कहते हुए यह उसकी तस्वीर फोरवर्ड करना शुरू किया। बेटी का जिक्र होते ही रूबीना रोने, गिड़गिड़ाने लगी। कुछ भी हो जाए पर जेबा पर कुछ आंच नहीं आनी चाहिए। ठाकुर ने भी कच्ची गोलियां नहीं खेली थी। छुटते ही पूछा, तो बता तेरी बेटी ने कुंवर

को कहाँ भगाया है।"[216] इस प्रकार से उसकी फोटो वायरल कर दी जाती है जिसे वह सहन नहीं कर पाती है और अपने बचपन की स्मृतियों में खोकर नींद की गोलियां खा लेती है और अपनी जान दे देती है।

प्रतिमान

रवि कुमार गौड़ ने अपनी इस कहानी के माध्यम से किन्नरों के प्रति दो अलग-अलग प्रतिमान रखे हैं। कहानी अपनी रोचकता बरक़रार रखती है। लक्ष्मी और पायल दो किन्नरों को आधार बनाकर कहानी लिखी गई है। यह कहानी किन्नरों के प्रति सोच के अंतर को प्रकट करती है। लक्ष्मी को मंदिर में एक नवजात बच्चा मिलता है, जिसको वह पालने का निर्णय लेती है, उसका नाम शिवालिका रखा जाता है। जब लक्ष्मी एक स्कूल में उसका दाखिला करवाने जाती है तब उसे हिकारत की नजर से देखा जाता है, मास्टर को जब पता चलता है कि यह बच्चा किन्नर है। वह इस प्रकार से लक्ष्मी को जलील करता है:-"इतना सुनते ही मास्टर साहब के तेवर बदल गये। लक्ष्मी को डांटते हुए कहा:- "यह कोई हिजड़ों के लिए विद्यालय नहीं खुला है। हिजड़े पढ़ने-लिखने लगेंगे तो बाकी क्या घास छीलेंगे। अरे तुम लोगों का काम तो लोगों का मनोरंजन करना है। वही जाकर करो और इसे भी सिखाओ। यह कलेक्टर बनने से रही।"[217] उनकी इस बात से लक्ष्मी बहुत हताश-निराश हो जाती है, लेकिन दूसरे ही पल पायल द्वारा सुझाने पर उसे आशा की किरण दिखलाई पड़ती है, वह उसे दूसरी स्कूल में ले जाती है जहाँ हिजड़ा समुदाय के प्रति विचारों का अंतर दिखाई पड़ता है। उस स्कूल में उसे दाखिला मिल जाता है। हेड-मास्टर अपनी खुली सोच को कुछ इस प्रकार से अभिव्यक्त करते हैं:- "हेड-मास्टर- कौन कहता है कि हिजड़ों को पढ़ने-लिखने का अधिकार नहीं। ये सब बातें मुर्ख लोग ही करते हैं और अगर लोगों की यही सोच है तो निश्चित ही भारत देश के लिए शर्मनाक है। तुम फ़िक्र न करो। मैं शिवालिका को प्रवेश दूंगा, इसे शिक्षित करूंगा ताकि ये बुलंदियों को छू सके।

[216] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 49

[217] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 56

इस प्रकार से इस कहानी में दो अलग-अलग प्रतिमानों की और इशारा किया गया है, एक तरफ जहाँ किन्नरों को दुत्कार दिया जाता है और सिर्फ मनोरंजन करने का पैमाना बना दिया जाता है वही समाज में इनके प्रति सही दृष्टिकोण वाले मनुष्य भी रहते है जो इनके प्रति सद्भाव का नजरिया रखते हैं।

मिस्टी

नीना अंदोत्रा पठानिया की यह कहानी सुधा और नरिंदर की कहानी है। दस वर्षों के बाद वह गर्भवती हुई थी। घर में चारों और ख़ुशी थी। सुधा का भी अधिक खयाल रखा जाने लगा था। लेकिन जैसे ही प्रसव हुआ और सबको पता चला कि इसने किन्नर को जन्म दिया है उसका जीना दूभर हो गया सब उस बच्चे को हिजड़ों के हवाले करना चाहते थे, नरिंदर भी मूक बना रहा लेकिन सुधा अडिग थी वह इसे पालना चाहती थी इस कारण उसने पति का घर भी त्याग दिया। उसकी सास उसे जली-कटी बातें सुनाने लगी:- “सुधा का यह जवाब सुनकर उसकी सास गुस्से से लाल हो गई ‘मेरी तरह सींचा है...मेरी तरह...अगर मेरी तरह सींचा होता जै पैदा न करती, अभी आ जायेंगे इसको ले जाने वाले पता चल जायेगा इसकी जगह कहाँ है।”[218] लेकिन सुधा वहाँ से चली जाती है। वह उसको पढ़ा-लिखाकर डॉक्टर बनाती है और दुनिया से बचाती है।

दर्द

संगीता सिंह भावना द्वारा लिखी गई यह कहानी वैदेही नामक पात्र के दर्द की अभिव्यक्ति करती है जिसे स्वयं का दर्द तो है ही वह दूसरों का दर्द भी समझती है। उसके जन्म का जब पता चला कि वह किन्नर है तो उसकी माँ ने उसे अपने पास ही रखने का निर्णय किया। वह किसी भी हालत में उसे अपने से दूर नहीं करना चाहती थी यथा:- “रम्भा तुम्हारी ये बेटी क्यों असामान्य हरकत करती रहती है, जबकि बाकी की दोनों बेटियां तो सामान्य लगती है, मेरी मानों तुम इसे अपने साथ रखकर समाज से बड़ी बगावत कर रही हो तब माँ बड़े ही आत्मविश्वास से कहती जब मुझे अपने बच्चे से कोई परेशानी नहीं तो आप लोग नाहक क्यों अपनी ऊर्जा व्यर्थ करते हो।”[219] किन्नर

---

[218] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 63
[219] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 72

होने पर भी निशांत नामक लड़के से उसकी शादी हो जाती है लेकिन जब बच्चा नहीं होता है तो बच्चे के लिए उस पर दबाव बनाया जाता है। तब तक उसकी माँ को यह पता नहीं होता है कि वह किन्नर है जब उसको पता चलता है तो उसकी माँ का नजरिया ही उसके प्रति बदल जाता है। उसे सब भला-बुरा कहते हैं लेकिन जब निशांत के भाई का बेटा बीमार हो जाता है तब वैदेही ही उसे खून देती है। वैदेही के अलावा बचने का उसके पास कोई अन्य विकल्प शेष नहीं रहता

अंधेरे की परते

यह कहानी उस अंधेरे की ओर इशारा करती है कभी रोशनी आयी ही नहीं। ऐसी जिंदगी थी निशा की जिसमें कभी सुख की झलक नहीं दिखाई पड़ी थी, तीन बेटियों की मौत के बाद भी चौथी संतान के रूप में उसने सुख की कल्पना की थी उसे वह भी नसीब नहीं हो पायी। उसे चौथी संतान के रूप में भी किन्नर बच्चा पैदा हुआ। इस विकट परिस्थिति में उसके पति रवि ने भी उसका साथ नहीं दिया। वह बिना बताये घर-छोड़कर भाग गया। निशा ने अकेले दम पर बच्चे को पालने का निर्णय लिया। वह आजीवन दर्द सहती रही, उसकी जिंदगी में कभी खुशियाँ नहीं आयी। उसे सबके ताने सुनने पड़ते। वह परेश को सबकी नजरों से बचाना चाहती थी लेकिन समाज से उसको हमेशा हिकारत मिली।

अंत में किन्नर टोली उसे उठा ले गई, वे उसे समझाते हुए कहते है कि:-किन्नर समुदाय पता नहीं परेश के जवान होने की प्रतीक्षा में ही था, एक रोज शाम ढ़लने को हुई तो पहुँच गए किन्नर लोग उसे लेने परेश कुछ देर तो छिपा रहा परंतु उन्होंने उसे बहला-फुसलाकर दरवाजा खुलवा ही लिया और अपने साथ चलने के लिए उस पर दबाव बनाने लगे, उसे इस निर्जीव समाज के कड़वे सच से अवगत कराने लगे कि तुम्हारी माँ के बाद ये लोग तुम्हे हाथ तक नहीं लगायेंगे और हमारी दुनिया में तुम राज करोगे...।"[220] इस प्रकार किन्नर बच्चा किन्नर समुदाय में ही सुरक्षित रह सकता है क्योंकि घर-परिवार, समाज में उसे आसानी से स्वीकार नहीं किया जा सकता। उसे हिकारत की नजर से ही देखा जाता है। यदि आर्थिक रूप से वह संबल है तो वह अपना-जीवन आसानी से गुजार सकता है।

---

[220] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 82

वो किन्नर

अजय कुमार चौधरी की इस कहानी में जतिन नामक पात्र किन्नर समुदाय के बारे में जानने का कौतुहल रखता है। वह जब किन्नरों को ऐसे ट्रेन के डिब्बों में मांगते हुए देखता है तो उसे गुस्सा आता है, वह जानना चाहता है कि ये आखिर ऐसे क्यों है ये कुछ काम भी तो कर सकते हैं। रानी के पिता उसके हाव-भाव को पसंद नहीं करते थे, वह उससे नफरत करते थे, इस कारण वह परेशान होकर किन्नरों की टोली में शामिल हो गया। उसका हर स्तर पर शोषण किया जाता रहा। शारीरिक, मानसिक, सभी प्रकार से उसे चोंटे पहुंचायी गई। एक स्थान पर जतिन को उतनी व्यथा सुनाती है:- “क्या करूँगी बाबू जी, माँ-बाप ने अपनाने से इंकार कर दिया, समाज हम लोगों को हेय दृष्टि से देखती है। कहीं कोई सम्मान नहीं, ऐसे लगता है हम समाज की तिरस्कृत वस्तुओं में से एक है, जिसका स्थान कूड़ेदान के अलावा कहीं नहीं। मैं इस व्यवस्था के कारण अंदर से टूट सी गई।”[221] जतिन किन्नरों के लिए कुछ करना चाहता है लेकिन सबसे पहले शुरुआत अपने घर से करना चाहता है।

बरगद की छाँव

डॉ. निरुपमा चौधरी ने इस कहानी में बताया है कि एक बेटी अपने पिता को पत्र लिखती है, वह किन्नर हैं इस कारण से उसे 12 वर्ष की उम्र में घर छोड़ना पड़ता है, वह इस बात की शिकायत करती है कि मेरे हाथ-पैर सब-कुछ है फिर भी मेरे साथ भेदभाव किया जाता है आखिर क्यों? वह अपने पिता को बरगद की छाँव मानती है, उसे अपने पापा की जरूरत थी, तब उसका साथ किसी ने नहीं दिया, वह अपने पिता रूपी बरगद की छांव से दुनिया की तपिश से बचना चाहती है यथा:- लेकिन पापा मैं जैसी भी हूँ आपकी ही हूँ। फिर इसमें मेरा क्या कसूर है?..पापा शर्मा अंकल का बेटा जो सुन नहीं पाता और देख नहीं सकता...वह भी तो रहता है अपने मम्मी-पापा के साथ। फिर मैं क्यों नहीं???।”[222] इस प्रकार वह अपने पापा से कहती है कि आप मुझे अपनी छांव में रख लेना। मैं जैसी भी हूँ आपकी बेटी हूँ।

---

[221] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 90
[222] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 95

अपमानित

डॉ. चंद्रेश कुमार छतलानी की इस कहानी में एक नवजात को देखकर किन्नर उनसे नेग मांगने आये, वह चिकित्सक था, लेकिन उसने उनका अपमान कर दिया। रास्ते में एक बच्चे ने पूछा कि ये लोग कौन हैं...तो वह चिल्लाकर बोले...हम किन्नर है और एक क्षण बाद "उठे हुए हाथ की मुट्ठी बंद कर गुर्राते हुए बोला अपाहिज नहीं।"[223] अर्थात वे शारीरिक रूप से पूरे सक्षम है, काम कर सकते है। बस लैंगिक विकलांगता से उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है।

हिजड़ा चरित्र

इसमें पार्टी के नेता किन्नरों से सहयोग मांग रहे हैं, यहाँ वे किन्नरों के विकास की बात कर रहे हैं। लेकिन वास्तविकता कुछ ओर ही है, चुनावों के समय उनका पक्ष ले रहे हैं, बस किन्नर भी उनको जवाब दे देते हैं, उन नेताओं पर वे व्यंग्य करते हैं यथा:- "नेता जी आप हमारे दल में शामिल हो जाइए, हमारा स्तर विकसित हो न हो, सत्य तो विकसित हो जायेगा।"[224] इस प्रकार नेता अपने स्वार्थों की पूर्ति करने के लिए किन्नरों का सहयोग मांगते है लेकिन वे व्यंग्य करते है कि हमारी टोली में शामिल हो जाईये।

घर

पारस दासोत ने इस कहानी में एक किन्नर के घर जाने की व्यथा को प्रकट किया है जो बस याद करके रह जाती है। उसे अन्य साथी समझाते है कि तेरा वहाँ कोई भी नहीं। "कुछ ही दूर एक खटिया पर लेटे बूढ़े नायक ने अपने सभी साथियों को अपने पास बुलाया और अपने पास ही बैठकर बोला- बेटे जिस घर को तू अपना घर बोल रही है वह शायद तेरी नजर में हो सकता है तेरा घर।"[225] लेकिन वास्तविकता में वह तेरा घर नहीं है, वे कुछ गानों के माध्यम से भी घर के न होने की अभियक्ति करते हैं क्योंकि हिजड़ों का तो कोई संसार ही नहीं होता उसका समुदाय ही उनका अपना है, परिवारजन तो उनको पैदा होते ही त्याग देते है।

---

[223] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 99

[224] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 100

[225] सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' पृ.सं. 101

4.3 इस जिंदगी के उस पार- राकेश शंकर भारती

युक्रेन में रहने वाले लेखक राकेश शंकर भारती ने अपने कहानी-संग्रह में न केवल किन्नर समुदाय बल्कि उससे जुड़े आस-पास के कई संदर्भों को इसमें अभिव्यक्त किया है। इस कहानी संग्रह में ग्यारह कहानियाँ संकलित है। इन कहानियों में थर्डजेंडर लोगों की जीवन शैली और कार्य व्यापार को दर्शाया गया है, इन कहानियों में थर्ड जेंडर समुदाय की मन की स्थिति उनके अवसाद से गुजरने की प्रक्रिया, गरीबी और विवशता का चित्रण किया गया है।

इस जिंदगी के उस पार, मेरे बलम चले गये', 'मेरी बेटी', 'दयाबाई', 'बधिया', 'रक्तदान', आदि कहानियाँ इस कहानी संग्रह में संकलित है। लेखक ने एक ऐसे विषय को केंद्र में रखा है जो समाज की पीछे की सच्चाई को सामने लाता है। इस कहानी संग्रह में पहली कहानी 'जिन्दगी के उस पार' है।

'जिन्दगी के उस पार'

इसमें विष्णु और महेन्द्रनाथ नामक दो लड़कों को कथानक का आधार बनाया गया है, विष्णु की पत्नी मर जाने के उपरान्त दोनों जिस्मफरोसी के धंधे में लग जाते है। विष्णु इस दलदल से बाहर निकलना चाहता है क्योंकि पुलिस के डर से उसका धंधा उतना नहीं चल रहा था वह अपने गाँव लोटने की सोचता है, तभी उसकी मुलाकात सुभद्रा नामक किन्नर से होती है, वह उसे अपने मुखिया से मिलवाती है तब से उसके जीवन में परिवर्तन आने लगता है, इस कहानी में किन्नर समुदाय की पूरी तस्वीर पेश की गई है, विष्णु वहाँ से भी वापस ऊब जाता है और अपने गाँव लौटकर शादी कर लेता है। कहानी में लेखक को जिंदगी के डरावने और भयावह रूप का चित्रण करने में पूरी सफलता मिली है।

यह कहानी एक ऐसे जीवन की सच्चाई प्रकट करती है जो वास्तविकता से काफी परे है। विष्णु नाम का लड़का जो किन्नर नहीं है फिर भी मज़बूरी वश देह-व्यापार करता है और बाद में किन्नर मंडली में जाकर शामिल हो जाता है और रूपमती नाम की किन्नर के संपर्क में रहता है, वह रूपमती को अपनी दास्तां सुनाता है और रूपमती भी अपने कठोर दिनों को याद करके आंसू बहाती

है। वह विष्णु से हमदर्दी रखती है। वह इस प्रकार कहती है कि:- "मैं एक किन्नरी पैदा हुई हूँ तो क्या आम लोगों की तरह मेरा भी दिल धड़कता है।"[226] इस प्रकार विष्णु अपनी शादी और बच्चे को लेकर उदास रहने लग जाता है तब रूपमती उसे कारण पूछती है। अंत में दोनों अलग-अलग हो जाते है और वापस गंगा घाट पर मिलते हैं जहाँ विष्णु एक बच्चे को गोद लिये हुए रहता है, उसे देखकर रूपमती बहुत अधिक प्रसन्न होती है जैसे वह उसका बेटा हो। कहानी विभिन्न रंगो को अपने में समेटे हुए विष्णु और किन्नरों के साथ उसके जीवन की खट्टी-मीठी यादों को बयाँ करती है जो हम लोगों के जीवन से काफ़ी दूर है। किन्नर जीवन के विविध पक्षों को उजागर किया गया है। अलग-अलग कथानकों के माध्यम से उनके जीवन का चित्र खींचा गया है।

अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 'इस जिंदगी के उस पार' कहानी संग्रह में किन्नर जीवन के विविध पक्षों को उजागर किया गया है। अलग-अलग कथानकों के माध्यम से उनके जीवन का चित्र खींचा गया

मेरे बलम चले गये

इस कहानी संग्रह की कहानी है 'मेरे बलम चले गये' कहानी में सुशीला जो कि किन्नर है और प्रदीप दोनों के मध्य अन्तरंग प्रेम को दर्शाया गया है। सुशीला का जन्म एक किन्नर के रूप में होता है। लेकिन आरंभ में उसे इस बात का एहसास नहीं था बाद में सात साल के बाद पता चला कि वह एक किन्नर शरीर में है। मोहल्ले वाले उसकी माँ पर तरह-तरह की फब्तियां कसते है:- "उसने किन्नरी को जन्म दिया है। वही हिजड़ा, छक्का पता नहीं क्या-क्या? हे राम छी, छी, छी। ना ही औरत और ना ही मर्द।"[227] प्रदीप की माँ उस पर व्यंग्य कसती रहती है, कि वह प्रदीप को जाल में फंसाकर उससे शादी करना चाहती है। प्रदीप की शादी दूसरी जगह करा दी जाती है। लेकिन वह उसके साथ चैन से नहीं रह पाता है। बाद में वह किन्नर मंडली में शामिल हो जाती है और गुरू-चेले की परम्परा में शामिल हो जाती है। इसमें किन्नर समुदाय के सामाजिक क्रिया-कलापों और विवशता का चित्रण किया गया है।

---

[226] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार', पृ.सं.182
[227] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.14

मेरी बेटी

यह कहानी नि:संतान दम्पति द्वारा एक भीख मांगती लड़की को घर लाने तथा पालने-पोसने की कहानी है, यह लड़की किन्नर है जिसका नाम मुन्नी रखा गया। उसका सर्जरी के माध्यम से ऑपरेशन भी करवा दिया गया लेकिन फिर भी वह माँ नहीं बन सकती थी। उसे अब इस चीज के अलावा जीवन में कोई कमी नहीं थी, उसका जीवन साथी भी डॉक्टर था लेकिन उसे हमेशा अपने समुदाय को देखकर दुःख होता कि वे लो ऐसे क्यों है समाज उनकों क्यों नहीं स्वीकारता यथा:- “क्या हम सिर्फ भीख मांगने और जिस्मफरोशी के दलदल में फंसने के लिए जन्म लेते हैं। काश ऐसा चमत्कार हो जाता कि मेरे समुदाय के सारे लोग मेरे जैसे ही हो जाते। इस समाज में हमें भी उतना ही प्यार मिलता, जितना स्त्री-पुरूष को मिलता है।”[228] वह चाहती है कि सब मेरी तरह पढ़े-लिखे और सब अपने पैरों पर खड़े रहें। ताकि समाज इन्हें हिकारत की नजर से ना देखे। उसकी माँ मरते दम तक आसूं बहा रही थी। इस कहानी में किन्नरों के प्रगति के पथ पर बढ़ने का वर्णन किया गया है।

दयाबाई

यह कहानी एक किन्नर के किन्नर टोली में शामिल होने तथा किन्नर गुरू की पदवी तक पहुँचने की कथा है। उसे किन्नर गुरू लक्ष्मीबाई ने पाला था। उसकी बड़ी इच्छा थी कि वह एक बार अपने-माता पिता से मिले तब उसके दिल को तसल्ली आये। तब लक्ष्मीबाई उसे मिलाने ले जाती है। दयाबाई का ऐशो-आराम देखकर घरवाले चकित हो जाते हैं और मन में सोचते है कि यह हमसे ज्यादा सुखी है। इसलिए अपनी बेटी की शादी में सहयोग मांगते है, दया उनको सहयोग करती है सारी जिम्मेदारी वही संभालती है, दयाबाई द्वारा अपने भाई की बेटी की शादी में बहुत सहयोग किया जाता है। लेकिन उसके भाई नरेंद्र द्वारा उसका अपमान किया जाता है यथा:- “गाजियाबाद का हिजड़ा है। आप लोगों के स्वागत में सट्टे पर लाया है, नरेंद्र पीछे मुड़कर नहीं देख सका। थोड़ी दूर पर दयाबाई खड़ी थी। अपने बड़े भाई के मुँह से यह बात सुनकर उसकी आत्मा मोम की तरह पिघलने लगी। अब उसमें दोबारा संभलने की क्षमता नहीं बची थी।”[229] यह कहानी पड़ताल करती है किन्नरों

---

[228] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.33
[229] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.47

की संवेदनाओं की। उसकी अभिव्यक्ति करना इस कहानी की प्राथमिकता प्रतीत होती है, उसके भाई की इतनी सहायता करने के बावजूद उसका अपमान किया जाता है। इस बात से दयाबाई को बड़ा आघात लगता है।

रक्तदान

कहानी में विमल से बिमला बनी किन्नर की बड़ी दर्दनाक कहानी है, वह बचपन में यौन शोषण की शिकार हो जाने के कारण घर छोड़कर चली जाती है। कुछ रिश्तें ऐसे होते हैं जो कितने ही दुखदायी हो लेकिन भुलाए नहीं जा सकते। बिमला का भाई जब उसके बेटे के लिए रक्त की जरूरत पड़ती है तब तो बिमला को याद कर लेता है और बाद में उसको भुला देता है। उसकी भाई के बेटे से मिलने की बहुत इच्छा होती है लेकिन वह उसे मिलने नहीं देता है। बिमला गीतामाई के पास रहती है। उसको उसी ने पाला है। वह कभी-कभी अपने बचपन की बुरी स्मृतियों को याद करके बहुत दुखी होती है कि उसका बहुत यौन शोषण हुआ था। लेकिन गुरू गीतामाई का साथ मिलने से उसका जीवन परिवर्तित हो गया। बिमला मानती है कि मेरा जन्म तो ऐसे रूप में हुआ है लेकिन औरों को तो आशीर्वाद दे ही सकती हूँ यथा:- "जब तक दूसरों को दुआ नहीं देती हूँ, तब तक आत्मा को शांति नहीं मिलती। कौन जानता है कि दूसरे जन्म में पैदा लूँ या न लूँ। कम से कम इस जन्म में तो दूसरों की ख़ुशी में शरीक होकर अपनी आत्मा को संतोष दिला सकती हूँ।"[230] इस प्रकार किन्नर योनि में जन्म लेकर भी उनके लिए आशीर्वाद देने की बात सोचती है जो उन्हें भला-बुरा कहते हैं।

सौतन

सौतन भी इस कहानी संग्रह की प्रमुख कहानी है, यह समलैंगिक संबंधों पर आधारित कहानी है जो जैकी और शैलेश के मध्य बनते है, शैलेश के पत्नी होने के बावजूद वह जैकी से संबंध रखता है जिससे उसका वैवाहिक जीवन खराब हो जाता है। उसकी पत्नी को जब इस बात का पता चलता है तब वह बहुत क्रोधित होती है।

---

[230] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.50

बधिया

इस कहानी में जनार्दन के जानकी बनने तक का पीड़ादायी सफ़र है। इस कहानी में उस तथ्य को उजागर किया गया है जिसमें युवकों को बधिया बनाकर हिजड़ों की टोली में शामिल कर लिया जाता है। वह हिजड़ों की टोली के झांसे में आ जाता है। वह ट्रेन में भीख मांगता है इसी दौरान उसकी मुलाक़ात उसकी पुरानी महबूबा से हो जाती है। वह पुराने दिनों को फिर से लाना चाहती है लेकिन सच्चाई जानकर एकदम निराश हो जाती है, वह कुछ नहीं कर पाता है। इस कहानी को पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि लेखक द्वारा किन्नरों की कार्य-शैली को बहुत पास से देखा-परखा है। वह हिजड़ा न होते हुए भी बधियाकरण के द्वारा उसको हिजड़ा बना दिया जाता है। उसकी बचपन की प्रेमिका भी जब उससे पच्चीस साल बाद मिलती है तो आक्रोश व्यक्त करती है, जनार्दन भी उससे माफ़ी मांगता है:- "भगवान से यही प्रार्थना करता हूँ। मुझे माफ़ कर देना कि वादा करके भी तेरा साथ नहीं दे सका। मुझे हमेशा इस बात का खेद रहेगा।"[231] इस प्रकार दोनों आपस में मिल जाते है लेकिन क्या फायदा जनार्दन अब पहले जैसा नहीं रहा वह किन्नर बन गया है, सुष्मिता यह बात जानकार बहुत दुखी होती है।

फ्रेंड रिक्वेस्ट

इस कहानी के माध्यम से लेखक को एक किन्नर के अंतर्द्वंद्व को बेबाकी से उभारने में सफलता मिली है। जसप्रीत नामक किन्नर की कहानी है जिसे शादी के बाद पता चलता है कि वह किन्नर है। हरविंदर और जसप्रीत का प्रेम विवाह हुआ था लेकिन शादी के नो साल बाद भी उनके बच्चा नहीं हुआ। इस बात से दोनों बहुत चिंतित थे इसलिए डॉक्टर के पास जाने पर पता चलता है कि जसप्रीत के गर्भाशय नहीं है। "जसप्रीत जी बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि आप एक किन्नर है, इतने सालों में आपको किसी ने बताया नहीं कि आप एक किन्नर है। जन्म के बाद ही पता चल जाना चाहिए था। आपके पेट में बच्चादानी नहीं है।"[232] इस बात से दोनों को बहुत आघात लगता है और कुछ समय बाद दोनों एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं और एक लंबे समय बाद

[231] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.128
[232] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.91

फेसबुक के माध्यम से दोनों अनजान स्थिति में एक-दूसरे से मिलते है। हरविंदर के दो बच्चे हो जाते है जिसे जसप्रीत ख़ुशी-ख़ुशी अपना लेती है। इस प्रकार जहाँ से उन्होंने शुरुआत की थी वहीं पर दोनों आकर ठहर जाते हैं और बिछड़े हुए दो प्रेमियों का आपस में मिलन हो जाता है।

ट्रांसजेंडर

इस कहानी में सर्जरी के माध्यम से उसको ट्रांसजेंडर बना दिए जाने वाले ट्रांसजेंडर लोगों की कहानी है। देवराज नामक डॉक्टर जो खुद लोगों का ऑपरेशन करके लिंग परिवर्तित करता है उसी का बेटा जिससे उसे बहुत सारी अपेक्षाएँ थी वही बाद में ऑपरेशन करवाकर ट्रांसजेंडर बन जाता है। चांदनी जिसने खुद देवराज से अपना ऑपरेशन करवाया था उसने राधेश्याम जो देवराज का बेटा था उसको सब सच बता दिया। देवराज पहले ऑपरेशन करता था और बाद में उन्हीं के साथ संबंध बनाता था बाद में उसके बेटे को इस बात का पता चलता है तो देवराज खूब फूट-फूटकर रोता है। चांदनी राधेश्याम को कुछ इस प्रकार समझाती है:- "फिर तो आपको ट्रांसजेंडर बनने में ही रूह को सुकून मिलेगा। मेरे साथ भी यही हाल हुआ था। मैं इस दुविधा और बैचेनी से बाहर नहीं निकल पा रही थी। एक दिन अपने दोस्तों की मदद से सर्जरी करवा ली। अब मैं चांदनी की देह पाकर बहुत सुखी हूँ।"[233] इस तरह से वह भी सर्जरी करवा लेता है और जो उसकी आत्मा है उसी काया में आ जाता है।

तीन रंडिया

अर्जुन नामक एक किन्नर के जीवन की विविध दशाओं का वर्णन करती यह कहानी पाठक को सोचने पर मजबूर कर देती है कि उसकी जिंदगी में कितने बदलाव आ गये थे, वह एक लड़के के रूप में स्त्री आत्मा में पैदा हुआ था। उसके पिता की हर नजर से बचता हुआ एक दिन दिल्ली भाग जाता है जहाँ किन्नरों के सम्पर्क में आकर बाद में देह व्यापार के चक्कर में फंस जाता है। वह बार-बार ईश्वर से शिकायत करता है कि मुझे इस रूप में क्यों भेजा, मुझे लड़की बना देते लेकिन उसकी नजर में शायद ईश्वर को यह मंजूर नहीं था। :भाई-बहनों किसी को भी नहीं भुला सकती है। भगवान आज मुझमें छोटी सी खोट नहीं देते तो आज मेरी जिन्दगी का सितारा किसी दूसरी दिशा में रौशनी

---

[233]राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार' पृ.सं.106

की बौछार कर रहा होता। अगर घरवाले और समाज का सहारा मिलता तो सोने पे सुहागा।"[234] लेकिन यह सुख मेरे नसीब में नहीं था। अंत में एक वैश्या जो उसके पास रहती थी उससे उत्पन्न बच्ची को उसने पाला और उसकी शादी की, इससे उसके जीवन का उद्देश्य पूरा हो गया। अब उसकी जिन्दगी में कोई पछतावा नहीं था।

4.4 थर्डजेंडर की कहानियाँ- सं विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौड़

इस कहानी संग्रह में किन्नर आधारित कहानियों को संग्रहित किया गया है। इसमें 'हिजड़ा गली', 'सुगंधा', 'कर्तव्य', 'किन्नर का सम्मान', 'किन्नरों की प्रतिभा', 'क्या मेरा कसूर है', 'मेरा हक़' शगुन-अपशगुन के बीच', सोनम के चर्चे', 'नयना होटल,' 'सुरेखा की ईमानदारी', ताली की गूंज', तीसरा वर्ग', 'आदर्श', 'हिजड़ा कही का', 'किन्नर का आशीर्वाद', किन्नरों की दुआ-बद्दुआ', 'विलास रानी', कहानियां संकलित है जो किन्नर जीवन पर प्रकाश डालती है।

हिजड़ा गली

एस.जी.एस सिसोदिया द्वारा यह हिजड़ों द्वारा किये गये उपकार की कहानी है। इसमें हिजड़ा गली में जाने से भी लोग कतराते थे लेकिन एक दिन राधिका नामक लड़की के गुंडे पीछे पड़ जाते हैं तब हिजड़े जान पर कूदकर उसे बचाते है तब से सभी उसका सम्मान करने लग जाते है। "सभी कॉलोनी वाले अभिभूत थे, उनके इस सुकृत्य पर उनकी आँखों पर पड़ा पर्दा हट गया था। जिन हिजड़ों की परछाई से भी अभी तक कॉलोनी वाले बचते फिरते थे, आज वे ही किन्नर उनके हीरो बन गये।"[235] इस प्रकार से जिस प्रकार की मानसिकता उनके प्रति है, उस मानसिकता में बदलाव की कोशिश उन्होंने इस कहानी में की है।

सुगंधा

रेखा लोढ़ा 'स्मित' की यह एक मार्मिक कहानी है जो सुगंधा नामक किन्नर के जीवन की गाथा बयाँ करती है, इसमें लेखिका द्वारा सुगंधा नामक किन्नर की मदद की जाती है। इसमें जब

---

[234] राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार,' पृ.सं.134

[235] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 13

किन्नर सुगंधा को अपनी टोली में शामिल कर लेते है तब सुगंधा वहाँ से जाना चाहती है, वह पढ़-लिखकर कुछ करना चाहती है लेकिन किन्नर टोली उसे बाहर निकलने नहीं देती है वह लेखिका की मदद से अपनी स्थिति में बदलाव लाना चाहती है वह लेखिका से इस प्रकार कहती है:- "इन्होंने मुझ पर किन्नरों की तरह बर्ताव करने पर बहुत जोर डाला, पर आंटी मैं ऐसा नहीं करना चाहती। मैं पढ़ना चाहती हूँ। मैं कुछ बनना चाहती हूँ। मैं किन्नर हूँ पर उससे पहले एक इंसान हूँ।"[236] इस प्रकार सुगंधा उसके लिए मसीहा बनकर खड़ी होती है और उसकी पढ़ाई का बंदोबस्त करती है।

कर्तव्य

विजेंद्र प्रताप सिंह द्वारा लिखी गई यह कहानी एक किन्नर के कर्तव्य की कहानी है। जो विविध संघर्षों के बावजूद अपना फर्ज पूरा करती है वह है शिवानी। अपने ग़रीब होने में वह लाचारी महसूस नहीं करती अपितु अपने माँ-बाप का सहारा बनती है, वह ई-रिक्शा चलाने का काम करती है। उसे आरंभ में पता नहीं था कि वह एक हिजड़ा है, धीरे-धीरे उसके शरीर में आये बदलावों के आधार पर उसे पता चलता है, वह सभी विपदाओं का मुकाबला करती है, वह अपनी माँ की सहायता करने के लिए इस प्रकार कहती है:- "मेरा शरीर लड़की जैसा है पर मैं लड़की तो नहीं हूँ न। मैं बच्चा पैदा नहीं कर सकती घर नहीं बसा सकती और लड़कियों की तरह कोमल भी तो नहीं हूँ। मेरी दाढ़ी मूंछ नहीं आती लेकिन मन से मैं लड़का हूँ माँ...। तू चिंता मत कर आज के बाद तुझे काम करने की जरूरत नहीं...तेरा बेटा। जिसके साथ ईश्वर ने नाइंसाफी की है, अब वह तेरे साथ नाइंसाफी नहीं होने देगा।"[237] इस प्रकार वह हिम्मत से काम लेती है और अपनी हर मुश्किल राह को आसान बनाती है।

किन्नरों की प्रतिभा

रचना सिंह 'रश्मि' द्वारा लिखित यह कहानी किन्नरों द्वारा एक लावारिश पड़ी लड़की की पालने-पोसने तथा अपने समाज से लड़कर उसे पढ़ाने-लिखाने तथा आई.पी.एस. बनाने का सफ़र प्रकट करती है। शर्मीली नामक किन्नर द्वारा उसे पाला-पोसा जाता है और बड़ा किया जाता है, इस

[236] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 19
[237] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 25

दौरान वह सबसे लड़ती है। अपनी गुरू माँ से विद्रोह करके वह उसे पढ़ाने भेजती है और उसे उच्च पद के काबिल बनाती है। किन्नर समुदाय में भी दिल होता है इसी बात का उदाहरण है यह कहानी। इसमें उनकी दया, ममता, करूणा झलककर आती है। जब वह आई.पी.एस. बन जाती है तब वह किन्नरों के बारे में प्रेस वालों को कुछ इस प्रकार से बताती है:- "यह हिजड़ा माँ-बाप सब-कुछ है। प्रतिभा शर्मीली का हाथ-पकड़कर बोली। ना महिला है ना पुरूष इन सबसे ऊपर यह इंसान है, इनमें इंसानियत थी, जो मेरी रोती हुई आवाज से इनका दिल पिघल गया और किसी की परवाह किये बिना मुझे सीने से लगा लिया।"[238] इस प्रकार से किन्नरों द्वारा जिस प्रतिभा का लालन-पालन किया गया वह बड़ी प्रतिभावान निकली।

क्या मेरा कुसूर है

डॉ. रीता सिंह ने श्यामली नामक पात्र को आधार बनाकर यह कहानी लिखी है। लेखिका स्वयं इससे अनजान थी। वह रोज ऑटो में बैठकर उसके साथ जाती थी। एक दिन नहीं आयी तब उसे पता लगा कि वह दुर्घटना का शिकार हो गई और अस्पताल में है तब उसे पता चलता है तो वह फ़ौरन अस्पताल जाती है और श्यामली अपनी दास्तान सुनाती है। "मेरे पास न कोई नौकरी है न कोई चाकरी। इंसान होते हुए भी मैं कोई इंसान नहीं कहलाता। अपनों के होते हुए भी मैं अकेली हूँ। इस दुनिया में मेरा जन्म तो हुआ है पर मेरी अलग पहचान बन गई है।"[239] इस प्रकार वह अपने किन्नर होने का दर्द महसूस करती है। उसके पास जीवन जीने का कोई दूसरा जरिया नहीं है।

मेरा हक़

डॉ. अखिलेश निगम ने इस कहानी में किन्नरों द्वारा अपना हक़ मांगने की बात की है। शांतनु के माता-पिता उसे किन्नरों को नहीं देना चाहते लेकिन किन्नर उस बच्चे को लेना चाहते है इस विवाद को एक अधिकारी द्वारा निपटाया जाता है। किन्नर विवाद में उलझ जाते हैं और कहते हैं कि समाज ने स्वीकारा नहीं है। यदि यह बच्चा आज अपने माता-पिता के पास रह जायेगा तो बाद में हमारे पास ही आयेगा कोई इसे स्वीकारेगा नहीं। वे इस प्रकार कहते है:- "अरे आप किस माता-

[238] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 41
[239] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 44

पिता की बात कर रहें हैं, हम हिजड़ों का कोई नहीं होता...हमारा तो कोई ईश्वर भी नहीं है।"[240] इस प्रकार वे यह कहते है कि आज समाज कितना भी बदल गया हो, कितने ही नियम कानून बन गये हो लेकिन हमारे प्रति मानसिकता में अधिक बदलाव नहीं आया है।

शगुन-अपशगुन के बीच

लता अग्रवाल की यह कहानी किन्नरों द्वारा शादी में नेग मांगने को लेकर हुए विवाद पर आधारित है। उन्हें मुँह-माँगा नेग नहीं देने पर लड़के को श्राप दिया जाता है। लड़के की माँ उनसे उलझ जाती है। तब वे कहते है:- "हमारी बद्दुआ से महल के महल तबाह ही जाते है, तिजौरी के नोट मिट्टी के मिट्टी हो जाते है, हमारा अभिशाप जहाँ लग जाये कोख नहीं उजलती वहाँ।"[241] इस प्रकार वे वहाँ उनको नेग नहीं देने पर श्राप देकर जाते हैं। ऐसी मान्यता है कि उनके द्वारा दिया गया श्राप सही सिद्ध होता है।

सोनम के चर्चे

डॉ. अरविंद कुमार की यह कहानी सोनम नामक एक सुंदर किन्नर पर आधारित है। उसकी सुंदरता देखते ही बनती थी बस एक ही कमी थी उसमें कि वह किन्नर थी इस कारण उसे प्रताड़ना सहनी पड़ी। उसके माता-पिता उसे अपने पास रखना चाहते थे लेकिन मोहल्ले वालो से वह परेशान थी इस कारण घर से भागकर वह किन्नर मंडली में शामिल हो गई। उसकी सुन्दरता के इतने चर्चे थे कि लोग उसको देखकर ही नेग दे देते थे। जूली नामक किन्नर उसके लिए कहती है:- "कोई मंडली तो इसे ले जायेगी। इतनी सुंदर जो है, इतनी सुंदर जैसे चाँद।"[242] इस प्रकार सब जगह उसके चर्चे थे इस कारण कहानी का नाम भी इसी आधार पर रखा गया है।

---

[240] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 54

[241] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 60

[242] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 68

नयना होटल

डॉ. अरविंद कुमार की यह कहानी आजीविका हेतु एक होटल खोलने तथा रोजी-रोटी का जुगाड़ करने को लेकर लिखी गई है, इस कहानी में किन्नर टोली द्वारा नेग मांगने के अतिरिक्त कुछ आजीविका चलाने हेतु व्यवसाय करने की बात कही गई है। वह अपनी गुरू माई से इस प्रकार कहते हैं:- ‘‘नौकरी तो हम लोगों को सरकार देती नहीं है, हमारे लिए अन्य रोजगार का साधन नहीं है, हम करें तो क्या करे? विमला बीच में ही बोली-हम लोग भी बिजनेस कर सकते हैं।’’[243] इस तरह से वह चाय-नाश्ते की होटल खोलते है और देखते-देखते वह होटल चल पड़ती है और वह उस इलाके की प्रसिद्ध होटल सिद्ध होती है। यह कहानी किन्नरों के सशक्तिकरण का भी एक उदाहरण है।

सुरेखा की ईमानदारी

डॉ अरविंद ने सुरेखा नामक किन्नर की ईमानदारी को यहाँ प्रकट किया है। पहले वह गलत काम करती थी लेकिन बाद में उसे समझ में आ जाता है इसलिए वह सब-कुछ छोड़ देती है। और बसों में वसूली करते समय भी वह पूरी ईमानदारी अपनाती है उसकी इसी बात से लेखक प्रभावित होता है।

ताली की गूंज

ताली बजाना और नेग माँगना किन्नरों की स्वभावगत विशेषता है और मज़बूरी भी। अंजली गुप्ता प्रेमा नामक किन्नर के दर्द को इस कहानी में अभिव्यक्त करती है। वह मीरा को अपनी कहानी बताती है कि अपने जैसे लोगों पर ही विश्वास करना चाहिए। वह कहती है कि:- ‘‘वक्त बीतता गया और मैं बड़ा होता गया। कभी लगता सब लड़कियों की तरह बात करूँ, कपड़े पहनूं, चूड़ी पहनूं और कभी लगता लड़कों के साथ गुल्ली-डंडा खेलू। जो भी था पर मैं अंदर से हीन-भावना से भरा रहता। ऐसा लगता कहीं भाग जाऊं।’’[244] इस तरह बचपन में उसके साथ बहुत शोषण हुआ था इस कारण वह अपने लोगों अर्थात किन्नरों के साथ ही ज्यादा खुश रहती थी।

---

[243] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘थर्डजेंडर की कहानियाँ’, पृ.सं 76

[244] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘थर्डजेंडर की कहानियाँ’, पृ.सं.88

तीसरा वर्ग

डॉ. आनंद मोहन तिवारी की इस कहानी में एक किन्नर बाबा और उसके द्वारा पालित एक बच्चे की कहानी है। लेखक को कौतुहल रहता है किन्नरों के बारे में जानने का, तब जुबेदा उसे एक बाबा के पास लेकर जाती है और उसके सारे सवालों का जवाब मिल जाता है। जब वह लड़का कहता है कि आप मेरे बिना कैसे रहोगे तब बाबा कहता है कि:- "बेटा, तब मैं उस निर्दय प्रकृति की याद करके अपने-आप को समझा लूँगा, जिसने मुझे न नर बनाया है न नारी, बल्कि इस तीसरे वर्ग का बनाकर इस दुनिया की उपेक्षा को झेलने के लिए मजबूर कर दिया है।"[245] इस प्रकार से कहानी का शीर्षक भी साबित होता है कि किन्नर समुदाय को तीसरी श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है। उस घने जंगल में भी वह बाबा वहाँ रहने के लिए तैयार है।

आदर्श

डॉ. रवि कुमार गौड़ द्वारा लिखी गई यह कहानी चार सहेलियों द्वारा एक किन्नर बच्चे को पढ़ा-लिखाकर उसे उच्च पद पर बैठाने और समाज को यह दिखाना कि चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी विपरीत क्यों न हो यदि मनुष्य चाहे तो राह आसान कर सकता है। यह कहानी इसी बात को बयाँ करती है। प्रियांशी, शिवांशी, देवांशी, विनांशी द्वारा जंगल में मिले बच्चे को पाला जाता है। जब उन्हें यह पता चलता है कि यह तो किन्नर है तब भी वह यह ठान लेती है कि किन्नर हुआ तो क्या हुआ है तो इंसान ही। हम रखेंगे इसको और बड़ा आदमी बनायेंगे। और वह एक दिन न्यायालय का जज बन जाता है। "देश के तमाम टी.वी. चैनलों और पत्रकारों का तांता लग गया और हो भी क्यों ना, पहली बार कोई किन्नर न्यायाधीश के पद पर पदासीन हुआ है।"[246] इस तरह से उनके सहयोग से वह इतने उच्च पद पर बैठता है जो सबके सामने उदाहरण का पात्र है। एक किन्नर जो सपने में भी उच्च पद की कल्पना नहीं कर सकता वह जज जैसे उच्च पद पर आसीन होता है और किन्नर जीवन से जुड़ी हुई सभी धारणाओं को दरकिनार करके समाज के समक्ष उदाहरण पेश करता है।

---

[245] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.101

[246] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.109

हिजड़ा कहीं का

डॉ.अनीता पंडा द्वारा लिखी गई यह कहानी सुमी नामक किन्नर की कहानी है जो घर-घर जाकर नेग नहीं माँगना चाहती लेकिन उसकी मज़बूरी है। अपने माँ-बाप से अलग होने के बाद उसे मासी के द्वारा ही पाला जाता है जो उसी के समुदाय की है। जब लेखिका उसे मिलने के लिए कहती है तो वह इस प्रकार कहती है कि:- “ये जिंदगी भी कोई जिंदगी है। रास्ते में चलते-चलते लोगों की घूरती आँखे, फब्तियाँ कसना, मजाक उड़ाना, अपने ही घर और शादी-ब्याह मुंडन में गाना बजाना-नाचना, नेग माँगना, भीख मांगना...इन सबसे अजिज आ गया हूँ। दिल में दर्द होता है।”[247] इस तरह हर रोज सजना-संवरना और कमाई करना उसे अच्छा नहीं लगता वह भी सम्मान की जिंदगी जीना चाहता है पर जी नहीं पाता।

किन्नर का आशीर्वाद

कहते है कि किन्नर जो आशीर्वाद दे देते हैं वह फलीभूत हो जाता है और उनकी बद्दुआ भी जल्दी ही लगती है इस कहानी में डॉ. अर्चना दुबे ने बताया कि एक किन्नर ने ऐसा ही आशीर्वाद दिया है जिससे एक नि:संतान दंपति के संतान हो जाती है। शांताबाई किन्नर पंडित जी की बहु को जल्दी ही गोद भरने का आशीर्वाद देती है जिससे उसकी गोद हरी-भरी हो जाती है और वे किन्नरों को घर बुलाकर बहुत आदर-सत्कार करते हैं। शांताबाई कुछ इस प्रकार से उसे आशीर्वाद देती है:- “तु इतनी उदास मत हो, जल्द ही तेरे घर में किलकारियां गूंजेगी, ये शांताबाई की जबान हैं। ईश्वर की दया से आज तक खाली नहीं गया है। जो मुख से निकला है वह उसकी दया से पूरा हुआ है।”[248] इस प्रकार के आशीर्वाद से पंडित जी के घर में किलकारी गूंजती है और सब खुशियाँ मनाते हैं। जिसके बेटा होता है उसकी भी उनके साथ पूरी संवेदनाएँ जुड़ जाती है।

किन्नरों की दुआ-बद्दुआ

शांति कुमार स्याल की किन्नरों की दुआ-बद्दुआ पर आधारित यह कहानी प्रकट करती है कि हमें किन्नरों की बद्दुआ कभी भी नहीं लेनी चाहिए उनका आशीर्वाद लेना चाहिए। यदि वह कहीं

---

[247] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘थर्डजेंडर की कहानियाँ’, पृ.सं.112

[248] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘थर्डजेंडर की कहानियाँ’, पृ.सं.118

पर भी रूपया मांगें तो उन्हें दे देना चाहिए। कहानी में सचिन इस प्रकार कहता है कि:-"औरत और मर्द इन दोनों से मिलकर हमारा समाज बना है लेकिन इस समाज में एक ऐसा समुदाय भी है जिसे हम सालों से नजरंदाज करते रहें है।"[249] इनके प्रति मानसिकता में बदलाव की जरूरत है और वह सभी स्तरों पर हो यही कहानी का उद्देश्य भी है।

विलास रानी

अजित पाठक निकुंज की यह कहानी विलसबा से विलासरानी बने एक किन्नर पर आधारित है वह बीस साल बाद अपने गाँव आया था उसे देखकर पूरा गाँव अचंभित था कि यह कैसे हो गया और वह गाँव में रानी माता का मंदिर भी बनवाता है और भव्य जगराता भी करता है जिससे विलास रानी पूरे गाँव में चर्चित हो जाती है। उसकी कीर्ति मरकर भी अमर रहती है। इस प्रकार विजेंद्र प्रताप सिंह ने 'थर्डजेंडर की चर्चित कहानियाँ' शीर्षक कहानी संग्रह में संग्रहित कहानियों के माध्यम से किन्नर जीवन को रेखांकित किया है। विभिन्न पात्र अपने भावों को प्रकट करते हुए समाज के सम्मुख अपना वास्तविक जीवन प्रकट करते है।

4.5 कबीरन- सूरज बड़त्या

किन्नर जीवन को आधार बनाकर लिखी जाने वाली बहुचर्चित कहानी है जो थर्डजेंडर के दर्द उनके साथ बार-बार होने वाली असंवेदनशील घटनाओं और उनकों मनुष्यों की श्रेणी में न रखने की त्रासदी को उजागर करती है। सुमोघ और किन्नर कबीरन की कहानी जो दोनों भाई-बहन की आपसी संवेदना, मिलन, बिछड़ना और फिर पुन: मिलन की स्थितियों के भाव प्रस्तुत करती है। सुमोघ को पता नहीं था कि यह किन्नर उसकी बहन है उसे वह गली-मोहल्लों में नाचते-गाते हुए देखता है। तब वह सोचता है कि यह नाचते-गाते हुए इन्सान कहाँ से आये हैं। एक बार वह अपनी माँ को इसके गले लगते हुए देख लेता है। तब वह उससे पूछता है लेकिन वह उसकी बात को टाल देती है। बचपन में सुमोघ की आर्थिक हालत ठीक नहीं थी, उसके पिता सफाई कार्य करते थे और शराब पीते थे। सुमोघ पढ़-लिखकर चंडीगढ़ में प्रोफेसर हो गया था। वह ट्रेन से आते-जाते हिजड़ों को देखता था। कभी उसका उनसे बात करने का मन होता लेकिन वह बात नहीं कर पाता।

[249] सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.123

एक दिन वह अपने माता-पिता द्वारा उसके बारे में जानने के बाद निर्णय लेता है कि वह उससे बात करेगा। और उसे घर चलने के लिए कहता है लेकिन कबीरन इस बात को नहीं मानती है। वह कहती है कि:- "अब हमारा परिवार, रिश्ते-नाते सब यही समुदाय तो है। हम यही अपनी पूरी जिंदगी जी लेते है। भाई-बहिन, पति-पत्नी, माँ-बाप सब यही पर तो होते हैं। पर में पूरे विश्वास के साथ कह सकती हूँ कि तुम्हारी दुनिया से तो अच्छी है हमारी दुनिया। किसी को धोखा नहीं देते हैं, दुत्कारते नहीं हैं। हम मेहनत करते हैं गाते-बजाते हैं। उसके बदले कुछ लेते हैं....? हमारा समाज....तुम्हारी बेरहम दुनिया से अलग है बाबूजी।"[250] इस तरह से वह उस समाज में वापस नहीं जाना चाहती जिसने उसे दुत्कार दिया था। वह अपने भाई से शिकायत भी करती है कि अब तुम मुझे क्यों आने की कह रहे हो, पहले तुम लोगों ने मुझे त्याग दिया था और आने के लिए कहोगे तो मेरा मन नहीं मानेगा।

वह सुमोघ से प्रतिवाद करते हुए कहती है कि:- "मेरा क्या कसूर था जो बापू ने मुझे घर से निकाल दिया आज मैं दर-दर की ठोकरें खा रही हूँ तो क्यों? परिवार को दोषी मानू समाज को या किसे?"[251] इस प्रकार अपनों द्वारा ही त्यागी गई वह उस समाज में वापस नहीं आना चाहती। इस प्रकार सुमोघ को वह ज्ञानी लगी। वह घूमते-फिरते कबीर की भांति कबीरन कहलाई। उसकी बात का सुमोघ पर बहुत प्रभाव पड़ा। वह अपनी बहन को ऐसे देखकर बहुत खुश हो रहा था। कबीरन कहानी के माध्यम से लेखक ने एक किन्नर के प्रति समाज की दृष्टि, परिवार से उसका परित्याग और संवेदनाओं को उजागर किया गया है।

4.6 किन्नर पूनम पाठक

एक संक्षिप्त कलेवर लिए यह कहानी किन्नर जीवन की वेदना को प्रकट करती है तथा किन्नर के साहस का परिचय देती है। सामान्य जन समुदाय की किन्नरों के प्रति मानसिकता में परिवर्तन कर देती है। मानसी नामक एक पात्र एक दिन बस में बैठी थी, भीड़ की वजह से कुछ मनचले उससे टकरा रहे थे उसी बस में एक किन्नर भी बैठा था। उससे यह देखा नहीं गया। उसने खड़े होकर उनके थप्पड़ जड़ दिया तब मानसी जो कुछ देर पहले किन्नर के पास में बैठने से झिझक रही थी उसी

[250] https://www.jankipul.com/2018/04/a-short-story-of-suraj-badtya.html
[251] https://www.jankipul.com/2018/04/a-short-story-of-suraj-badtya.html

किन्नर ने उसकी रक्षा की। वह किन्नर का हाथ पकड़कर बोली कि:- "हिजड़ा यह नहीं बल्कि आप सभी लोग हो जो यह तमाशा इतनी देर से देख रहे थे। किसी हिंदी फिल्म की तरह, कुछ देर और चलता तो शायद एम.एम. एस. भी बनाने लगते। पर मदद को एक हाथ भी आगे नहीं आता।"[252] इस तरह किन्नर द्वारा सभी तमाशबीनों के सामने एक उदाहरण पेश किया गया।

[252] https://sahityamanjari.com/hindi-kahani/Kinnar-by-Poonam-Pathak.html

निष्कर्ष

इस क्षेत्र में कई कहानियाँ लिखी गई। कई कहनियाँ अनुदित है। मैंने केवल हिंदी भाषा में लिखी गई कहानियों को अपने शोध कार्य का आधार बनाया है क्योंकि अन्य भाषा में लिखी गई कहानियों का अनुवाद उतना अच्छा नहीं प्रतीत होता है।

थर्ड जेंडर:चर्चित कहानियाँ सं. विमल सूर्यवंशी द्वारा लिखित कहानी संग्रह में लेखिका ने किन्नर जीवन से जुड़ी हुई ग्यारह कहानियों को समाहित किया है जो मानव समुदाय का ही तथा-कथित हिस्सा हिजड़ा समुदाय के जीवन पर प्रकाश डालती है। मैंने अपने शोध शीर्षक के अनुसार ही चयनित कहानियों की समीक्षा प्रस्तुत की है। इस कहानी संग्रह में से मैंने दस कहानियों का चयन किया है, और उनकी समीक्षा की है जो किन्नर समुदाय के जीवन और संघर्ष पर आधारित है।

'कथा और किन्नर' कहानी-संग्रह में किन्नर समुदाय की पीड़ा को एक-एक कहानियों के माध्यम से दिखाया गया है। यह कहानियाँ अलग-अलग प्रसंगों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है जिनमें हाशिए के समुदाय की पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है। इस कहानी संग्रह में 'हिजड़ा', 'अथ किन्नर कथा', 'प्रतिशोध', 'किन्नर माँ', 'इतनी देर में', 'आखिर कब तक', 'पहचान', 'प्रतिमान', 'मिस्टी', 'दर्द', 'अँधेरे की परते', 'वो किन्नर' 'बरगद की छाँव', 'हिजड़ा चरित्र' 'अपमानित' 'घर' कहानियों को संकलित किया गया है।

युक्रेन में रहने वाले लेखक राकेश शंकर भारती ने अपने कहानी-संग्रह 'इस जिंदगी के उस पार' में न केवल किन्नर समुदाय बल्कि उससे जुड़े आस-पास के कई संदर्भों को इसमें अभिव्यक्त किया है। इस कहानी संग्रह में ग्यारह कहानियाँ संकलित है। इन कहानियों में थर्डजेंडर लोगों की जीवन शैली और कार्य व्यापार को दर्शाया गया है, इन कहानियों में थर्ड जेंडर समुदाय की मन की स्थिति उनके अवसाद से गुजरने की प्रक्रिया, गरीबी और विवशता का चित्रण किया गया है।

थर्डजेंडर की कहानियाँ- सं विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौड़ ने इस कहानी संग्रह में से किन्नर आधारित कहानियों को संग्रहित किया गया है। इसमें 'हिजड़ा गली', 'सुगंधा', 'कर्तव्य', 'किन्नर का सम्मान', 'किन्नरों की प्रतिभा', 'क्या मेरा कसूर है', 'मेरा हक़' शगुन-अपशगुन के

बीच', सोनम के चर्चे', 'नयना होटल,' 'सुरेखा की ईमानदारी', ताली की गूंज', तीसरा वर्ग', 'आदर्श', 'हिजड़ा कही का', 'किन्नर का आशीर्वाद', किन्नरों की दुआ-बद्दुआ', 'विलास रानी', कहानियां संकलित है जो किन्नर जीवन पर प्रकाश डालती है।

संदर्भ:-

1.सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी, ‘थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ’, (2018) रोशनी पब्लिकेशन्स, कानपुर पृ.सं.13
2.वही, पृ.सं.16
3.वही, पृ.सं.21
4.वही, पृ.सं.22
5.वही, पृ.सं.26
6.वही, पृ.सं.30
7.वही, पृ.सं.45
8.वही, पृ.सं.54-55
9.वही, पृ.सं.60
10.वही, पृ.सं.65
11.वही, पृ.सं.70
12.वही, पृ.सं.74
13.वही, पृ.सं.80
14.वही, पृ.सं.86
15.वही, पृ.सं.91
16.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 14
17.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 21
18.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 32
19.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 39
20.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 49
21.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 56
22.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 63
23.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 72
24.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 82
25.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 90
26.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 95
27.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 99
28.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 100
29.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘कथा और किन्नर’ पृ.सं. 101
30.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’, पृ.सं.182
31.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.14
32.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.33
33.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.47
34.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.50
35.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.128
36.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.91
37.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार’ पृ.सं.106
38.राकेश शंकर भारती, ‘इस जिन्दगी के उस पार,’ पृ.सं.134

39.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 13
40.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 19
41.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 25
42 सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 41
43.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 44
44.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 54
45.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 60
46.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 68
47.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं 76
48.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.88
49.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.101
50.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.109
51.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.112
52.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.118
53.सं.डॉ. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्डजेंडर की कहानियाँ', पृ.सं.123
54.https://www.jankipul.com/2018/04/a-short-story-of-suraj-badtya.html
55.https://www.jankipul.com/2018/04/a-short-story-of-suraj-badtya.html
56.https://sahityamanjari.com/hindi-kahani/Kinnar-by-Poonam-Pathak.html

पंचम अध्याय:- किन्नर केन्द्रित कथा-साहित्य: समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

5.1 सामाजिक दृष्टिकोण

5.1.1 रहन-सहन

5.1.2 किन्नर समुदाय की परंपराएँ

5.1.3 नैतिक मूल्य

5.1.4 किन्नरों के प्रति किया जाने वाला भेदभाव

5.1.5 किन्नर समुदाय और समाज

5.1.6 वास्तविक जीवन शैली- अतीत, वर्तमान और भविष्य

5.1.7 शिक्षा के क्षेत्र में किन्नर समुदाय

5.3 आर्थिक दृष्टिकोण

5.2.1 उपजीविका के साधन

5.2.2 सरकारी नौकरी में स्थान एवं उनकी स्थिति

5.3 राजनीतिक दृष्टिकोण

5.3.1 राजनीति में प्रमुख किन्नर

5.3.2 भागीदारी और अधिकार

5.4 धार्मिक दृष्टिकोण

5.4.1 किन्नर समुदाय का धर्म

5.5 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

5.5.1 किन्नर समुदाय और विस्थापन का दर्द

5.5.2 किन्नरों पर यौन अत्याचार

5.6 .सांस्कृतिक दृष्टिकोण

5.6.1 संस्कृति

5.6.1 लोकगीत

5.7 विशेष क्षेत्र में उल्लेखनीय किन्नर

किन्नर केन्द्रित कथा-साहित्य: समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

प्रथम अध्याय में समाजशास्त्र के प्रमुख बिन्दुओं का उल्लेख किया जा चुका है जिसमें साहित्य को समाजशास्त्र के साथ जोड़कर इस प्रकार देखा गया है कि साहित्य और समाजशास्त्र का एक-दूसरे से कितना संबंध है? क्या साहित्य और समाजशास्त्र का अलग-अलग अस्तित्व है? अथवा दोनों एक ही धारा से होकर निकलते हैं। इन सभी बिंदुओं की ओर दृष्टिपात किया गया है। साहित्य चिंतकों ने इस विषय पर गंभीरता से विचार किया और अपने-अपने मत प्रकट किये। यह तो तय है कि साहित्य का समाज से अलग कोई अस्तित्व नहीं हैं लेकिन समाजशास्त्र अध्ययन की एक पद्धति है जिसके अंतर्गत कई सारे विषय समाहित होते है, इसे दर्शन की एक शाखा भी माना जाता है तो विज्ञान भी। इसका संबंध इतिहास से भी जोड़ा जाता है तो सामाजिक विज्ञान से भी, इस कारण व्यापक फलक पर समाजशास्त्रीय अध्ययन पद्धति को देखा जाता है। इस अध्याय में मैंने शोध कार्य हेतु चयनित उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से समाजशास्त्रीय अध्ययन के बिंदुओं के आधार पर विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

जिसमें किन्नर समुदाय के सामाजिक संदर्भ का अध्ययन किया गया है। जिसके अंतर्गत रीति-रिवाज, परम्पराएँ, सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि, शिक्षा, किन्नरों के नैतिक मूल्य, समुदाय के प्रति समाज का रवैया, वास्तविक जीवन शैली, अतीत और वर्तमान, किन्नरों द्वारा समाज से अपेक्षित जीवन मूल्यों की आकांक्षा रखना, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य, भागीदारी, लोकगीत, उनके साथ किये जाने वाले भेदभाव, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का अध्ययन चयनित कथा-साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

समाजशास्त्रीय दृष्टि को मैंने इस कारण से अपने शोध कार्य हेतु चुना ताकि अपने कार्य में, मैं किन्नर समुदाय को समाज के साथ जोड़कर देख सकूं। समाज और साहित्य से जिस प्रकार की अपेक्षा इस समुदाय की है, उसकी अभिव्यक्ति की जा सकें और हिजड़ा समुदाय का जिस सभ्य समाज से अलगाव है, वह समाज उनके प्रति किस प्रकार का नजरिया रखता है? इसको भी प्रकट किया जा सके। हिजड़ा समुदाय स्वयं अपने आस-पास के समाज से किस प्रकार की आकांक्षा रखता है? इसका अध्ययन किया जा सके। "किन्नरों का जीवन एक अभिशप्त कथा सा प्रतीत होता

है जिसके साये में किन्नरों का पूरा परिवार आ जाता है। जननांग का विकास न होना उनके अभिशप्त जीवन का कारण बन जाता है। ए संसार पूर्णता को ही पूजता है। संतति उत्पन्न न कर पाने के कारण उन्हें पूरा जीवन समाज और परिवार के सहयोग के बिना बिताना होता है।"[253] वैसे तो सामाजिक जीवन में सारी चीजे समाज से ही जुड़ी हुई रहती है, जो व्यक्ति किसी कारण वश यदि समाज से नहीं जुड़ पाता तो वह जुड़ने की कोशिश करता है। समाज यदि उसको स्वीकार कर ले तो उसका सर्वांगीण विकास संभव है, यही स्थिति किन्नर समुदाय के साथ भी जुड़ी हुई है। इस हाशिये के समाज को हमारे सभ्य समाज का हिस्सा नहीं माना जाता, लेकिन उनको जरूरत है समाज में रहने की। कुछ करने की, अपना अस्तित्व ढूंढने की। इसी सोच को आगे बढ़ाने के प्रयास के परिणामस्वरूप इस विषय पर शोध किया जा रहा है।

इन सबका अध्ययन करने के पीछे यही उद्देश्य है कि साहित्य और समाज के अंतर्गत किन्नर समुदाय के प्रति कैसा नजरिया है? लोगों की इनके प्रति किस प्रकार की दृष्टि रही है? और जिस प्रकार की दृष्टि रही है क्या उसमें कुछ परिवर्तन आने की गुंजाइश शेष है? चयनित कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से किन्नर साहित्य का समाज में दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जायेगा। कहानियों में 'बिंदा महाराज', 'ई मुर्दन के गाँव', 'हिजड़ा', 'त्रासदी', 'बीच के लोग', 'नेग', 'इज्जत के रहबर', 'कबीरन', 'किन्नर', आदि है।

इस क्षेत्र में उपन्यास लेखन परम्परा की शुरुआत हिंदी साहित्य में सन् 2002 से हुई है। 'यमदीप', 'मैं पायल', 'किन्नर कथा', 'तीसरी ताली', 'गुलाम मंडी', 'मैं भी औरत हूँ', 'पोस्ट बॉक्स न. 203 नाला सोपारा', 'जिंदगी 50-50', 'दरमियाना', 'अस्तित्व', आदि उपन्यास लिखे गये हैं। इन सबके माध्यम से यह जानने का प्रयास किया जायेगा कि किन्नर समुदाय का वास्तविकता से क्या लेना-देना है। उपन्यास और कहानियों के माध्यम से प्रत्येक किन्नर पात्र का जीवन हमारे समक्ष रखा गया है जिनके माध्यम से किन्नर समुदाय की पीड़ा को समझा जा सके। लेकिन प्रत्येक पात्र का दुःख एक जैसा नहीं हैं, किसी का कम या ज्यादा है लेकिन दुःख की यातना सभी को सहन करनी पड़ती है। 'यमदीप' में नाजबीबी का। 'मैं भी औरत हूँ' में रोशनी का, 'जिन्दगी

---

[253] डॉ. मुक्ता टंडन, 'हाशिये पर दर्ज किन्नर व्यथा', सं. आशीष कुमार दीपांकर, 'भारतीय समाज में किन्नरों का यथार्थ', पृ.सं.75

50-50' में हर्षा, 'किन्नर कथा' में सोना, 'नाला सोपारा' में विनोद उर्फ़ बिन्नी, 'मैं पायल' में पायल सिंह 'दरमियाना' की तारा और रेशमा, 'अस्तित्व' उपन्यास की प्रीत आदि ऐसे पात्रों के जीवन संघर्ष को दिखाने का प्रयास किया गया जो किन्नर समुदाय के संघर्षों का प्रतिनिधित्व करते हैं साथ ही कहानियों में भी मुख्य पात्रों की पड़ताल के माध्यम से पता लगाया जा सकता है कि किस प्रकार की यातना ग्रस्त जीवन शैली से होकर इस समुदाय को गुजरना पड़ता है साथ ही कई प्रकार की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक आदि समस्याओं का सामना इन्हें करना पड़ता हैं। इस समुदाय का समाजशास्त्रीय अध्ययन इस प्रकार से प्रस्तुत किया गया है:-

5.1 सामाजिक दृष्टिकोण

सामाजिक दृष्टिकोण के अंतर्गत किन्नर समुदाय के रहन-सहन,किन्नर समुदाय की परंपराएँ, नैतिक मूल्य, किन्नरों के प्रति किया जाने वाला भेदभाव, किन्नर समुदाय और समाज, वास्तविक जीवन शैली- अतीत, वर्तमान और भविष्य, शिक्षा के क्षेत्र में किन्नर समुदाय आदि बिंदुओं को अभिव्यक्त किया गया है।

5.1.1 रहन-सहन

किन्नर समुदाय के रहन-सहन के अंतर्गत समाज में उनके क्रिया-कलापों को शामिल किया जाता है। किस प्रकार के वस्त्र, आभूषण वे धारण करते है? कौन-कौनसी गतिविधियों के माध्यम से समाज को प्रभावित करते हैं, साथ ही समाज की गतिविधियाँ इनकों किस प्रकार प्रभावित करती है? आदि का उल्लेख इनकें रहन-सहन के अंतर्गत किया जायेगा। प्राथमिक तौर पर इनके वेशभूषागत हाव-भाव को देखकर ही आंकलन किया जाता है कि यह किन्नर है, उनका अस्वाभाविक रूप से सजना-संवरना साधारण मनुष्य को अटपटा सा लगता है। जिनकी कोई प्रकृति नहीं, तयशुदा जेंडर नहीं, उनका रहन-सहन अपनी मर्जी मुताबिक होता है। वे अपने शरीर से विपरीत अपनी भावनाओं के अनुकूल वस्त्र धारण करना चाहते है, अधिकांशत: उनकी भावनाएँ स्त्रियोचित होती है, इस कारण वे स्त्रियोचित वेशभूषा, मेकअप करना, सजना-संवरना आदि पसंद करते है।

इस मामले में वे अपने-आपको स्वतंत्र महसूस करते हैं। शोध कार्य के अंतर्गत चयनित उपन्यासों और कहानियों में उनके रहन-सहन से जुड़े प्रसंगों का यथोचित स्थानों पर उल्लेख हुआ है। इन सबका विवरण इस अध्याय में दिया गया है। अंजना वर्मा अपनी कहानी 'कौन तार से बीनी चदरिया' में वेशभूषा से सम्बंधित वर्णन इस प्रकार करती है:- "चेहरे पर पूरा श्रृंगार काजल से भरी आँखों और ललाट पर बड़ी सी बिंदी, नाक में लौंग, कानों में लटकते हुए झुमके, गले में मोतियों की माला, मांग में सिंदूर और खूब चमक-दमक वाली सितारों जड़ी साड़ी।"[254] इस प्रकार से किन्नर समुदाय की वेशभूषा के बारे में बताया गया है। जो किन्नर नाच-गान में प्रवीण होते हैं वे अधिकतर सजना-संवरना पसंद करते हैं। सामान्यतया ये अपने घर में साधारण वस्त्र पहनते है लेकिन कहीं नेग मांगने जाते है तब सज-संवरकर निकलते हैं। इन्हें सजना-संवरना बहुत अधिक पसंद होता है। दक्षिण भारत के किन्नर सामान्यत: साड़ी पहनते हैं। जबकि उत्तर भारत में सलवार-कमीज, पेंट-शर्ट, यहाँ तक कि वेस्टर्न कपड़े भी पहनते है। लिपस्टिक लगाना, बिंदी लगाना, आभूषण पहनना आदि इनकों बहुत पसंद होता है। रहन-सहन उनके समाज में निर्धारित अस्तित्व को भी दर्शाता है। वे किस प्रकार के कपड़े पहनते है? कैसी चाल-ढाल है? ये उनके निजी मनोभावों से जुड़ा हुआ रहता है।

आभूषण:-

सामान्यतया ये बधाई देने जाने पर आभूषणों से लदकर जाते है, इन्हें किसी घर से उपहार में आभूषण भी प्राप्त होते है, अन्यथा ये अपनी कमाई से आभूषण बनवा लेते है इनकों आभूषण अत्यंत प्रिय होते है। मुख्यतया ये हाथ की चूड़ियाँ, नाक में बाली, अंगूठी, हार, आड़, नाक, कान आदि में आभूषण पहनते है। 'दरमियाना' उपन्यास में उनका सजना-संवरना इस प्रकार दिखाया गया है:- "वे औरतों की तरह सजते हैं, वैसा ही श्रृंगार धारण करते हैं, उनका हल्का गेंहुआ रंग, तीखी नाक पर नगदार फूल, आँखों में अभिसारिकाओं सी खुमारी काजल लगा लेने से और निखर उठती थी। उसके मेहंदी लगे हुए सुनहरे से बाल थे बनारसी पत्तों की सुर्खी लिए हुए, उसके रसदार होंठ।"[255] उपन्यास में लेखक ने उनके नख से लेकर शिख तक के सौंदर्य का वर्णन किया है, इस तरह

---

[254] सं. डॉ.एम फिरोज अहमद, वांग्मय-1 'थर्ड जेंडर:हिंदी कहानियाँ', 'कौन तार से बीनी चदरिया', अंजना वर्मा, पृ.सं.97

[255] सुभाष अखिल, 'दरमियाना', पृ.सं.19

से सौंदर्य उनमें भी कम नहीं होता फर्क सिर्फ हमारी मानसिकता का पड़ जाता है। अधिकांशत: वे बिना मेकअप के बाहर नहीं निकलते।

किन्नर समुदाय के लोग अधिकतर एक इलाके में रहते है। इनका अपना इलाका होता है, ये अगर दूसरी जगह रहना भी चाहे तो रहने के लिए कोई मकान नहीं मिल पाता, कोई किन्नरों को अपने यहाँ नहीं रखना चाहता। ये समूह के रूप में रहते है, तथा बाहर नेग मांगने के लिए भी समूह में ही जाते हैं, वहीं उनकी जिंदगी चलती रहती है। हंसतें-खेलते, पान चबाते, रोते, लड़ते-झगड़ते है फिर भी एक हो जाते हैं। यह कम शिक्षित होते हैं इस कारण स्वास्थ्य को लेकर इनमें कम जागरूकता होती है, ये शराब, सिगरेट आदि अनेक कुप्रवृतियों के शिकार हो जाते हैं। किन्नर समुदाय पर पहला शोध कार्य करने वाली विदेशी शोधकर्ता सेरेना नंदा इन्हें सांस्कृतिक प्रस्तुतकर्ता के रूप में स्वीकार करती है।

वे उनके बारे में लिखती हुई कहती है कि- "the most important and best known traditionan role for the hijraj in indian society is that of performing at homes where a male child has been born. The birth of a son is the most significant event for an Indian family and a cause for great celebration. It is on this happy and auspicious occasion that the hijras bless the child and the family and provide entertainment for friends, relatives and neighbors."[256] अर्थात भारतीय समाज में हिजड़ों के लिए सबसे महत्वपूर्ण और सबसे परम्परावादी भूमिका उन घरों में प्रदर्शन करने की है जहाँ एक पुरूष बच्चे का जन्म हुआ है। एक बेटे का जन्म एक भारतीय परिवार के लिए सबसे महत्वपूर्ण घटना हैं और यह उत्सव का कारण हैं। यह ख़ुशी इसी शुभ अवसर पर होती है कि हिजड़े बच्चे और परिवार को आशीर्वाद देते हैं और दोस्तों, रिश्तेदारों और पड़ोसियों के लिए मनोरंजन प्रदान करते हैं। वे उन्हें मनोरंजन कर्ता के रूप में देखती है। उनका यहाँ तात्पर्य है कि लोगों की दृष्टि उनके प्रति एक मनोरंजनकर्ता से इतर कुछ भी नहीं है, इसी भाव से वे उन्हें बुलाते हैं और नहीं भी बुलाते हैं तो वे जबरदस्ती चले आते हैं।

इनके रहन-सहन में इनके शारीरिक हाव-भाव को भी शामिल किया जाता है। इनमें एक और विशेषता झलकती है, यह बात करते समय बार-बार ताली का प्रयोग करते हैं। गुस्से में अधिक ताली बजाते है। इनके द्वारा बजाई जाने वाली ताली के भी अलग-अलग प्रकार है, एक खास ताली बजाने के माध्यम से इनकों पहचाना जाता है।

---

[256] सेरेना नंदा, नाइदर मेन नॉर वुमेन', वड्सरोथ पब्लिशिंग कंपनी 2.संस्करण पृ.सं.1

ताली के प्रकार:-

क्र.सं.	प्रकार	अर्थ
1.	आधी ताली (half clap)	इसमें किसी बात के लिए असहमति का संकेत दिया जाता है।
2.	डेढ़ ताली (one and half clap)	-
3.	ढाई ताली (two and a half clap)	इसमें पड़ोस में किसी खतरे की चेतावनी दी जाती है। जैसे- चलो चले, उठो, चलने के लिए तैयार हो, होशियार, खतरा है।
4.	चार छोटी ताली गाल पर उंगली रखते हुए	यह इस बात का संकेत देने के लिए कि उनके द्वारा किये गये वार्तालाप को कोई अन्य बाहरी व्यक्ति समझ रहा है। जैसे- उनके द्वारा ज्यादा पैसे की मांग की जा रही है।
5.	बीच की उंगली को ऊपर उठाते हुए ताली बजाना	यह इस बात का संकेत करती है कि विदाई ले रहे हैं। जैसे- i am leaving now, namste
6.	पूरी ताली बजाते हुए तीन उँगलियों को ऊपर उठाना।	सामूहिक विदाई का संकेत देना। जैसे-we are all leaving now

मनुष्य हमेशा से अपने रहन-सहन के प्रति जागरूक रहा है, उसके रहन-सहन में उसकी संस्कृति झलकती है। किन्नर समुदाय के लोगों को देखकर पता लगाया जा सकता है कि इनका रहन-सहन एक अलग प्रकार से दिखाई पड़ता है जो हमारे समाज से इनकों अलग करता है, अलग इस रूप में कि ये अपनी मान्यताओं को पूरी तरह से अपनाते हैं, अपने समुदाय के लोगों के द्वारा जो भी क्रिया-कलाप किये जाते हैं, उनका ये अनुसरण करतें हैं। जो इनकें लिए निर्धारित नियम होते हैं

उनका इनकों पालन करना ही पड़ता है अन्यथा स्वयं के समुदाय से इन्हें बहिष्कृत कर दिया जाता है। इसी प्रकार ये स्त्री और पुरूष के लिए निर्धारित वस्त्रों में से कोई भी वस्त्र पहन सकते है लेकिन अधिकांशत: ये स्त्रीगत मनोभावों की और अधिक झुके हुए होते हैं इस कारण भी इनकों सजना, संवरना आदि पसंद होता है और स्त्रियों के कपड़े पहनना भी।

5.2 किन्नर समुदाय की परंपराएँ

बगैर परंपरा के कोई भी समुदाय पूरा नहीं हो पाता, परम्पराएँ समुदाय को जीवंत बनाए रखती है और ये परम्पराएँ ही पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्थानांतरित होती रहती है। इनकी परम्पराओं से तात्पर्य किन्नर समुदाय की क्या मान्यताएं हैं? कई प्रकार की मान्यताएं इस समुदाय की होती है जिनका पालन किन्नरों को करना पड़ता है। उत्सवों का आयोजन, जलसा करना, शव संस्कार आदि ऐसी अनेक परम्पराएँ रही है जिनका ये पालन करते हैं, साहित्य के माध्यम से इनकी परंपराओं का उल्लेख किया गया है। उपन्यासों और कहानियों में कई स्थानों पर इनका उल्लेख मिलता है।

नीरजा माधव ने 'यमदीप' उपन्यास के माध्यम से गुरू-शिष्य परम्परा का उल्लेख किया है। नीरजा माधव जब जानकारी जुटाने हेतु किन्नरों की बस्ती में जाती है तब उनकी भेंट माहताब गुरू से होती है। उनके द्वारा उन्हें गुरू -शिष्य परम्परा की जानकारी मिलती है, जो इस प्रकार है:- "गुरूजी पूरे शहर के हिजड़ों के गुरू हैं। हिंजड़ा समुदाय में उनकी ही बात चलती है। उनका अनुशासन ही सर्वोपरि है। उनका निर्णय सर्वमान्य है। कब? किसे? किस क्षेत्र में नाचना-गाना है? किसी के बीमार होने पर किसे उसकी सेवा-टहल करनी है? उसकी कमाई न होने पर भी उसका एक हिस्सा गुरूजी के पास सुरक्षित हो जाता है।"[257] इस प्रकार गुरू की इनके समुदाय में महती भूमिका होती है। उसकी आज्ञा का पालन इन्हें अनिवार्यत: करना ही पड़ता है। गुरू जिसका लीडर होता है उसे इनकी भाषा में 'जमात' के नाम से जाना जाता है अर्थात किन्नर समुदाय के लोगों को जमात कहा जाता है जिसका मुखिया गुरू को बनाया जाता है। नये सदस्य को जमात में आने के लिए 150 रूपये का भुगतान करना पड़ता है (सभी क्षेत्रों में बाध्य नहीं हैं। जिसे दंड कहा जाता है। गुरू-चेला का सम्बन्ध इन लोगों में बहुत अनिवार्य है।

[257] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.16

गुरू -शिष्य परंपरा के अंतर्गत एक 'नायक' होता है। इसके बारे में डॉ. राधिका के.एन. इस प्रकार से परिचय देती है:- "प्रत्येक घर का एक मुखिया होता है; जिसे 'नायक' कहते हैं, जो गुरू नियुक्त करता है, यह बधाई देने वाले प्रसिद्ध गायक और चेले होते हैं। गुरू की जिम्मेदारी चेलों के रक्षक के रूप में कार्य करने की भी होती है। जो कि समुदाय के भीतर नायक और कानून निर्माता भी वही होता है। यदि चेलों के मध्य आपसी विवाद हो जाए या कोई किसी का अपमान करें, वरिष्ठ गुरू समुदाय से जुर्माना लगाने से लेकर निष्कासन की सजा और अभियोग लगाने के रूप में उनका फैसला कर सकता है।"[258] इस प्रकार से इनकी परम्पराओं में गुरू-शिष्य परम्परा का महत्वपूर्ण स्थान है। ये अपने गुरू को भगवान का दर्जा देते है, उनकी आज्ञा की अवहेलना करने पर इन्हें बिरादरी से बाहर कर दिया जाता है।

बधाई:- हिजड़ा समुदाय में बधाई को परम्परा माना जाता है, यह इनकी आजीविका का मुख्य साधन होता है। जिसमें किसी के यहाँ बच्चा होने पर इनके द्वारा ढोलक की थाप पर ये नाच-गाकर बधाई देते है, उसके उपरान्त उपहार स्वरूप जो कुछ इन्हें मिलता है उसे बधाई के रूप में जाना जाता है। बधाई में उनकों आटा, चीनी, मिठाई, कपड़े, साड़ी और कुछ पैसे मिलते है। यह नेग उनकों घर की स्थिति के हिसाब से मिलता है बड़े घरों में इन्हें अधिक मात्रा में रूपये मिलते है।

माना जाता है कि इनके द्वारा नेग के बदले में एक रूपया दिया जाता है जो कि बहुत ही शुभ माना जाता है, उस एक रूपये को लाल कपड़े में सिल कर तिजोरी में रखने से कभी पैसे समाप्त नहीं होते हैं, ऐसी मान्यता है। 'कौन तार से बीनी चदरिया' में बधाई के समय उनके द्वारा दिये गये आशीर्वाद का वर्णन इस प्रकार है:- "जियो दीदी जीयो, बने रहे तुम्हारे पूत। बना रहे तुम्हारा लल्ला। बाबू लाखिया होय। भगवान दिन देवे अइसा कि हम बार-बार नाचे गाये बधाई, नेग तुम्हारे दुआरे।"[259] बधाई देते हुए नाचते-गाते हिजड़ों का छायाचित्र इस प्रकार है-

[258] डॉ. राधिका के.एन. 'तृतीय लिंगी समाज की समस्याएं', युद्धरत आम आदमी, जनवरी-2018 दिल्ली, पृ.स.80
[259] अंजना वर्मा 'कौन तार से बीनी चदरिया', पृ.सं. 24

विवाह में किन्नरों द्वारा दी गई प्रस्तुति (HIJRA PERFORMANCES IN MARRIAGES)

किन्नरों को जब यह पता चलता है कि किसी के यहाँ विवाह है तो जब दुल्हन दुल्हे के घर आती है तब वे नाचते हैं। वहाँ बहुत से सगे संबंधी होते है, पड़ोसी होते है। वहाँ बहुत से दर्शक होते है जो उनकी हंसी-ठिठोली, नृत्य भंगिमाओं आदि को देखते हैं। वे वर-वधु को आशीर्वाद देने आते हैं। नाच-गाकर उपहार लेकर उनकें सुखी जीवन की कामना करते हैं। यह समूह के रूप में नृत्य करते हैं। किसी नए व्यक्ति को किन्नर समाज में शामिल करने के भी नियम और कई रीति-रिवाज है। इनकों समुदाय में शामिल करने से पहले नाच-गाना और भोज किया जाता है।

निर्वाण- निर्वाण जिसे बधियाकरण के नाम से भी जाना जाता है। यह प्रक्रिया किन्नर समुदाय के रीति-रिवाज के अंतर्गत आती है। यदि कोई अपनी आइडेंटिटी को पहचान नहीं पा रहा है और किन्नर समुदाय में शामिल होना चाहता है तो उसका बधियाकरण या निर्वाण किया जाता है। अंग्रेजी में इसके लिए emasculation शब्द का प्रयोग किया जाता है, इसकी एक व्यवस्थित प्रक्रिया है।

इस कार्य के लिए एक दाई को नियुक्त किया जाता है जिसको इस कार्य का अनुभव होता है, निर्वाण से पूर्व उस व्यक्ति का पूरे रीति-रिवाजों के साथ पूजन किया जाता है, उत्सव के रूप में आयोजन किया जाता है, इसे हम ऑपरेशन भी कह सकते है। इसके अंतर्गत दाई द्वारा निजी अंग को हटा दिया जाता है। इस कार्य की अवधि लगभग चालीस दिन होती है। निर्वाण के तीन दिन तक उसे कम मात्रा में चाय और ब्राउन सुगर दी जाती है। चौथे दिन चावल, सब्जी दी जाती है। निर्वाण के चालीस दिनों के अंदर अपने कमरे से बाहर निकलने की अनुमति नहीं है। उसे केला खाने और दूध पीने की मनाही होती है। आईने में देखना, बालों में कंघी करना आदि कार्य नही किये जाते। बारहवे दिन बाल और मुँह को धुलवाया जाता है उसके बाद 20वे और 30वे दिन यही प्रक्रिया दोहरायी जाती है। इस प्रकार इस प्रक्रिया में उसे काफी दर्द सहना पड़ता है तब जाकर निर्वाण की प्रक्रिया पूर्ण होती है।

विवाह

इनके समुदाय में विवाह-संस्कार भी किया जाता है। इनका विवाह अपने आराध्य देव और अलुपी के पुत्र अरावन से होता है और इनको देवता के रूप में पूजे जाते है और उन्हीं से विवाह किया जाता है। इस सम्बंध में किवदंती है कि अर्जुन को द्रोपदी के साथ विवाह की शर्त का उल्लंघन पर एक वर्ष की तीर्थयात्रा पर जाना पड़ा। इसी यात्रा के दौरान अर्जुन की भेंट एक विधवा राजकुमारी अलुपी से हुई जिससे अरावन नामक पुत्र हुआ वे उसको छोड़कर चले गये। अरावन से मोहिनी रूप में कृष्ण का विवाह मात्र एक दिन के लिए होता है क्योंकि अगले दिन अरावन देवता की मौत हो जाती है और इसी के साथ इनका वैवाहिक जीवन भी समाप्त हो जाता है। मान्यता है कि कृष्ण पुरूष होकर अरावन से स्त्री रूप में विवाह करते हैं। विवाह से पूर्व काफी दिनों तक उत्सव मनाया जाता है। उत्सव में सभी किन्नर हर्षोल्लास से भाग लेते हैं।

(pc.https://www.google.com/search?tbm=isch&sa=1&ei)

दाह संस्कार

किन्नर समुदाय में किसी की मौत हो जाने पर एक सप्ताह तक भूखा रहना पड़ता है। किसी किन्नर की मृत्यु होने पर उसे जलाया नहीं जाता अपितु दफनाया जाता है, शव को अन्य किन्नर चप्पलों से मारते हैं और दुःख प्रकट करते हैं, इनके शव को रात में चुपचाप दफनाया जाता है, किसी के सामने नहीं। (ऐसी मान्यता है सब किन्नरों पर यह बात लागू नहीं होती)

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नर समुदाय की परम्पराओं में बधाई देना और उत्सव, समारोहों में प्रस्तुति देना, विवाह, गुरू-शिष्य परम्परा, बधियाकरण, मृत्यु संस्कार आदि का उल्लेख किया जाता है। इनका नाचना-गाना, खुशियाँ मनाना आदि इनकी परम्पराओं में शामिल किया जाता है, अपनी परम्पराओं से इन्हें जीवन्तता मिलती है और ये क्रम निरंतर चलता रहता है। उत्सवों-आयोजनों में भाग लेना इनके लिए रूचि के साथ-साथ रोजगार का साधन भी बनता है।

5.1.3 नैतिक मूल्य

किन्नर समुदाय के लोगों को नैतिकता के नाम पर अलग किया जाता है। अधिकांशत: लोगों का मानना है कि ये अनैतिक गतिविधियों में लिप्त रहते हैं लेकिन उनके समुदाय में भी कुछ नैतिकताएं होती है जिनका ये पालन करते है। बीबीसी न्यूज के एक समाचार में बताया गया कि सन् 1857 में अंग्रेजों ने इन्हें नैतिकता के आधार पर अपराधी ठहराने तथा भारत से किन्नर समुदाय को मिटाने का प्रयास किया गया था। उ.प्र. के एक गाँव में भूरा नामक किन्नर पर अनैतिकता का आरोप लगया गया तब न्यायालय ने इस प्रकार से खतरा माना कि:- "ब्रिटिश अधिकारियों ने मानना शुरू कर दिया था कि किन्नर शासन करने योग्य नहीं हैं। विश्लेषकों ने किन्नरों को गंदा, बीमार, संक्रामक रोगी और दूषित समुदाय के तौर पर चित्रित किया। इन्हें पुरूषों के साथ सेक्स करने की लत वाले समुदाय की तरह पेश किया गया। औपनिवेशिक अधिकारियों ने कहा था कि यह समुदाय न केवल आम लोगों की नैतिकता के लिए खतरा हैं, बल्कि औपनिवेशिक राजनीतिक सत्तातंत्र के लिए भी खतरा है।"[260] इस प्रकार ब्रिटिश शासन में इनके प्रति पूर्णतया घृणा का भाव था। सिंगापुर की एक टेक्नोंलोजिकल यूनिवर्सिटी के इतिहास विभाग की प्रोफ़ेसर डॉ. हिंकी ने ब्रिटिश काल के समय के तथ्यों को खंगाला तब उनकों इससे सम्बंधित सूचनाएँ मिली। इस लिंग दोषी समाज की अपनी कुछ नैतिक भावनाएं भी परिलक्षित होती है।

मैंने अपने शोध-कार्य के दौरान यह महसूस किया कि कुछेक किन्नरों को छोड़ दिया जाये तो अधिकांशत: बड़ी नैतिकता से पेश आते है। इनके अपने नैतिक मूल्य भी है जिनका जिक्र उपन्यास और कहानियों के माध्यम से किया गया है। 'तीसरी ताली' उपन्यास में किसन के द्वारा बीबी नामक हिजड़े को जब गाँव में लाया जाता है तो उसका बहुत विरोध होता है तब किसन कहता है कि:- "हिजड़े कोई हिंसक जानवर नहीं हैं, जो गाँव में रहेंगे तो लोगों को मारकर खा जायेंगे। उन्हें भी भगवान ने ही बनाया है। तुम लोगों की तरह वे हुक्का गुड़गुड़ाते और ताश पीटते नहीं बैठे रहते। तुम्हारी जनानियाँ गोरू और खेत पर काम न करें तो भूखे मर जाओ। हिजड़े मेहनत करते हैं। नाच-गाकर कमाते हैं। दूसरों के लिए दुआएं मांगते हैं। असल में तुम लोगों का मेहनत से बैर हो गया

[260] https://www.bbc.com/hindi/india-48488118

है।"[261] उनकों लगता है कि हिजड़े के हमारे गाँव आने से गाँव का वातावरण दूषित हो जायेगा, उनके परिवार पर गलत असर पड़ेगा? लेकिन ऐसा नहीं होता है। इसी संदर्भ में यह बात कही गई है।

किन्नरों पर एक आरोप यह भी लगाया जाता है कि ये किसी को जबरदस्ती हिजड़ा बना देते हैं। उनके गुप्तांग काट देते हैं लेकिन नीरजा माधव द्वारा लिखित उपन्यास 'यमदीप' के माध्यम से माहताब गुरू से लिए गये एक साक्षात्कार में वे इस बात का जिक्र करती है तो वे दुखी हो जाते है कि एक तो उनकी जिंदगी में दुःख क्या कम है और ऊपर से यह आरोप। वे बताते हैं कि:- "देख लो बेटी, हमारी कोठरिया में। अगर एक ठो ऑपरेशन थियटर बना है। जहाँ किसी को काट-पीटकर हिजड़ा बना देंगे हम। एक तो भगवान ने हमें न जाने किस पाप की सजा देकर इस योनि में भेजा, ऊपर से हम और पाप करके किस नरक में जायेंगे? अरे हम तो एक चींटी को भी मारने से हिचकते हैं बेटी।"[262] उनमें नैतिक मूल्य और मानवीयता भी रहती है।

डॉ. प्रमोद मीना अपने आलेख 'किन्नर भी इंसान होता है' में इस प्रकार लिखतें है कि:- "विनोद न सिर्फ अपने को पैरों पर खड़ा करने के लिए संघर्ष करते दिखता है अपितु वह राजनीति द्वारा उपलब्ध कराए अवसर का लाभ उठाकर अपनी हिजड़ा बिरादरी को भी ओढ़ी गई नियति से मुक्त होने का प्रबोधन देने के लिए प्रयास करता है। वह पढ़-लिखकर अपने पैरों पर खड़ा होने की जिद अपने घरवालों द्वारा हिजड़ा बिरादरी में फेंक दिये जाने के बाद भी नहीं छोड़ता।"[263] इस प्रकार वह भी नैतिक आचरण करना चाहता है लेकिन कोई उस पर विश्वास नहीं करेगा।

किन्नरों पर आरोप लगाये जाते हैं कि इनका व्यवहार अभद्र होता है ये किसी से भी लड़ने पर उतारू हो जाते हैं, हम देखते है कि ट्रेनों में, बसों में, यह भीख मांगते हुए दिख जाते हैं कई बार इनकों पैसे नहीं देने पर ये जबरदस्ती करने लग जाते है तथा मार-पीट करने पर उतारू हो जाते हैं। जो इनकी अनैतिकता को दर्शाता है, कई बार ये अश्लीलता भी करने लग जाते हैं इस कारण भी लोग इनसे डरने लगते हैं। लेकिन मजबूरन इनको ऐसी अभद्रता करनी पड़ती है, यदि इन्हें भी रोजगार के समुचित अवसर मिल जाए तो इनको ऐसे काम करने की नौबत नहीं आयेगी। हिजड़ों के अपने

---

[261] प्रदीप सौरभ, तीसरी ताली, पृ.सं.94

[262] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.166

[263] प्रमोद मीना, 'किन्नर भी इंसान होता है', 'अनुसंधान पत्रिका', पृ.सं.12

उसूल होते हैं, उनमें भी इंसानियत होती है, पेट भरने के लिए वे बिना गुरू की अनुमति के उगाही नहीं कर सकते, इसके लिए उन्हें बहिष्कृत भी किया जा सकता है। भीख, चोरी, हिंसा, आदि करना उनके लिए भयंकर पाप माना जाता है। यदि उन्होंने गिरिया बना भी लिया तो उसे पूरी उम्र वफादार की तरह रखना पड़ेगा उसे छोड़ नहीं सकते।

यह समुदाय लोगों की भ्रामक धारणाओं का शिकार रहता है प्राय: लोग इनकी जीवन शैली को लेकर भ्रम में रहते हैं। आम लोगों की यह धारणा है कि किसी के घर किन्नर बच्चा पैदा होते ही इनको कैसे पता चल जाता है। अगर वह लड़के के शरीर में पैदा हुआ है तो वे इस बारे में जान लेते हैं लेकिन लड़की के शरीर का पता तो बड़ी होने के बाद ही चलता है। क्योंकि सारे शारीरिक परिवर्तन बाद में होते है। इनकों लेकर आम जन के मन में एक प्रकार का डर बना रहता है, वे उनके पास जाने से भी कतराते रहते हैं। उनकों यह भय सताता रहता है कि कहीं उनकों पकड़कर वे हिजड़ा बना देंगे। इस भय से वे किन्नरों से कतराते रहते हैं।

इनके बारे में यह भी कहा जाता है कि यह अपने समुदाय का वर्चस्व स्थापित करने के लिए लोगों को हिजड़ा बना देते हैं लेकिन यह सत्य नहीं हैं 'यमदीप' उपन्यास में इसका उदाहरण बखूबी देखा जा सकता है, लेखिका जब उपन्यास में महताब साहब से पूछती है कि "ऐसा सुना जाता है कि आप लोग युवकों को बहला-फुसलाकर जबरन उनका ऑपरेशन करके हिंजड़ा बना देते हैं? महताब साहब कहते हैं कि देखो बेटी, अफ़वाह उड़ाने को तो हम मना नहीं कर सकते। अगर ऐसा किसी के साथ हुआ हो, उसे हम अपनी कोठरी में बंद तो नहीं रखेंगे न? बाहर नाचने-गाने जाते ही हैं हमारी बिरादरी के लोग। क्यों नहीं जाकर थाना-पुलिस में रपट करके हमें धरवा देते?"[264] कहीं-कहीं अपनी इस स्थिति के लिए ये खुद भी जिम्मेदार होते हैं , इस बात का उदहारण स्वयं महेंद्र भीष्म अपने उपन्यास 'मैं पायल' में देते हैं यथा:- "आज भी हम किन्नरों के प्रति सामाजिक स्थिति जस की तस बनी हुई है, स्वयं किन्नर भी इस स्थिति के लिए बराबर के दोषी हैं, जो खुद भी चली आती हुई

[264] नीरजा माधव, 'यमदीप' पृ.सं.167

व्यवस्था में खुद को ढाले हुए हैं, वे बने हुए घेरे से बाहर आने में डरते हैं, उनमें आत्मविश्वास की जबरदस्त कमी हैं।"[265]

इस प्रकार की धारणाएँ वास्तविक रूप से बनी रहती है, यह सामान्य बात है लेकिन जरूरत है इस विचार को बदलने की। इनमें कुछ दूषित प्रवृतियाँ भी रहती है जैसे अधिक मात्रा में नशा करना, लड़ाई-झगड़ा करना, अवैध यौन सम्बंध आदि। यह सभी दूषित आदतें भी इनके पिछड़ने का कारण है, इसका निदान शिक्षा के माध्यम से ही किया जा सकता है।

5.1.4 किन्नरों के प्रति किया जाने वाला भेदभाव

यहाँ चयनित उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से किन्नरों के जीवन में व्याप्त भेदभाव को उद्घाटित किया गया है। भेदभाव से असंतोष उत्पन्न होता है और असंतोष के परिणामस्वरूप क्रांति या आंदोलन होता है। साहित्य में यह आंदोलन वाक् प्रहार के आधार पर न होकर रचनात्मक ढंग से किया जाता है और एक प्रकार से विमर्श चल पड़ता है। किन्नर समुदाय के साथ हुए भेदभाव पर ध्यान जब साहित्यिक चिंतकों का गया तो विमर्श का दौर चला और इस समुदाय की समस्याओं, जीवन शैली, और समाज में स्थिति पर प्रकाश डाला गया। कई आलोचक इसके पक्ष में थे तो कई इसके विपक्ष में। कुछ ने विरोध किया तो कुछ ने स्वीकार किया।

किन्नर समुदाय जन्म से ही भेदभाव का शिकार होता रहा है। जन्म से लेकर मृत्यु तक आजन्म वह अपने-आपको कोसता रहता है, कि मैं ऐसा क्यों हूँ? इसके साथ पारिवारिक स्तर से ही भेदभाव शुरू हो जाता है जिसकी खाई अंत तक नहीं पटती। उसको हर जगह समाज में हिकारत और असंवेदनशीलता की दृष्टि से देखा जाना कचोटता रहता है। वह शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य आदि में पिछड़ा रहता है। लेकिन कोरी संवेदना से ही उसका पेट नहीं भर जाता है। उसको चाहिए समानता। भारतीय सविंधान में अनुच्छेद 12-14 तक समानता के अधिकार का भारत के सभी नागरिकों हेतु उल्लेख है लेकिन क्या यह समुदाय देश के नागरिकों की श्रेणी में नहीं आता? भेदभाव का हावी हो जाना इनके असंतोष में परिणीत हो जाता है, परिणामस्वरूप ये समाज से कट जाते हैं

[265] महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', पृ.सं.119

और अलग-थलग रहने पर मजबूर हो जाते हैं। जिस कारण से इनमें अनेक प्रकार की विषमताएं उत्पन्न हो जाती है।

'गुलाममंडी' उपन्यास में एक स्थान पर लेखिका कल्याणी को लेकर इस प्रकार कहती है कि "ठीक बात है यहाँ सभी लोग जीभ पर दंश नहीं लेते, कोई हथेली पर कटवाता है, कोई पैर के अंगूठे पर, तो कोई एड़ी पर। कल्याणी तो जीभ पर ही दंश लेना चाहती है, वह भी कोबरा का दंश। ताकि जिंदगी का दंश कोबरा के दंश में घुल जाए।"[266] इस प्रकार शुरुआत से त्रस्त जीवन जिसकी कोई पहचान नहीं होती। रमीला के माध्यम से उनके जन्म लेने से लेकर आजीवन छिपाकर रखने की और संकेत किया गया है ताकि किसी को उनके होने का पता न चल जाये। इसके मूल में कारण है समाज का डर होना, क्योंकि हमारे समाज को इन्हें ग्रहण करने में संकुचन का भाव महसूस होता है।

इनके प्रति भेदभाव का स्तर दक्षिण और उत्तर भारत में भी अलग-अलग है। यथा- "दक्षिण भारत के अधिकांश क्षेत्र में किन्नर की कोई सांस्कृतिक भूमिका नहीं हैं, यही स्थिति देश के उत्तरी भागों में है, ज्यादातर नियोक्ता उपलब्ध रोजगार के लिए उन्हें नौकरी देने के लिए तैयार नहीं हैं। अक्सर वे अपनी लैंगिक पहचान छिपा लेने का सहारा लेते हैं, लेकिन ज्यादातर मामलों में पता चल जाता है तो, वे अपने पद से हटा दिए जाते हैं या वेतन कम प्राप्त करते हैं।"[267] इस तरह से प्रत्येक स्थान पर उनके लिए काम करना दूभर हो जाता हैं। यह केवल अपने परम्परागत व्यवसायों से जुड़े हुए रहते हैं। शादी समारोहों में जाना, नेग माँगना, और न देने पर बवाल खड़ा करना आदि काम करने पर यह मजबूर होते हैं।

सामान्यतया सामाजिक भेदभाव के दो रूप होते है, औपचारिक जिसमें कार्यस्थल पर होने वाले भेदभाव को माना गया दूसरा अनौपचारिक, जिसमें सामाजिक तौर पर असम्मानपूर्ण व्यवहार को रखा गया। इसी दूसरे कारण की वजह से उन्हें कलंक माना जाता है लेकिन इनके साथ तो इन दोनों प्रकार का ही भेदभाव किया जाता है। कई बार इनके साथ भेदभाव करने से ये अपनी क्षमताएँ खो देते हैं।

[266] निर्मला भुराड़िया, 'गुलाममंडी', पृ.सं.10

[267] सं. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श', अमन प्रकाशन कानपुर (2016) पृ.सं.162

राज्य सभा चैनल के लिए बनाये गये वृत्तचित्र में 'किन्नर लोक का सच' में इस समुदाय की अनु कहती है कि:- "किसी को स्वास्थ्यगत समस्या होने पर डॉक्टर के पास जाते हैं, तो डॉक्टर हमें छूता नहीं हैं। हमारे देश में बाल रोग, स्त्री रोग, नाक, कान, गला, रोग विशेषज्ञ हैं, हमारा देश हिजड़ों के रोगों को देखने के लिए विशेषज्ञ तैयार नहीं कर पाया है। दरअसल यह किन्नर समाज, सरकार और नीति-नियंताओं की सोच परिधि में नहीं आता"[268] उनके प्रति किये गये भेदभाव के अनेक रूप हैं, जो उनकी कमजोर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक स्थिति को प्रकट करता है। ऐसा कोई भी स्थान हम विकसित नहीं कर पाये जहाँ किन्नरों को लेकर भेदभाव नहीं होता हो।

इनके साथ किये गये भेदभाव के कई स्तर है, इन्हें समुचित चिकित्सा पद्धति नहीं दी जाती है, चिकित्सक के पास जाने पर वह भी इन्हें नहीं देखता है, कहीं रोजगार मांगने जाने पर इन्हें नही दिया जाता है, लोग इन्हें दूर से देखकर इनके सम्बंध में बाते तो करते हैं लेकिन इनके पास आने से कतराते हैं। 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम' की रोशनी जब प्रशासनिक अधिकारी बन जाती है तब वह अपने बीते हुए दिनों को नहीं भूलती है और अपने वरिष्ठ अधिकारीयों को संबोधित करते हुए इस प्रकार कहती है:- "मुझे इस शहर में अमन-चैन बनाये रखने और इसकी साफ़-सुथरी छवि बनाये रखने के लिए आप सबकी बेहद जरूरत है...। खैर इस पर हम बाद में बात करेंगे। अभी जैसा मैं कह रही थी। मैं बहुत ही साधारण और निकृष्ट समझने वाली बिरादरी की एक नुमाइंदा हूँ। मैं रोशनी...एक किन्नर हूँ। इसमें कोई संदेह नहीं कि मेरे बारे में आपको पता नहीं था। लेकिन मैं स्वयं आपसे मुखातिब होना चाहती थी।[269]

अप्रैल 2014 में सुप्रीम कोर्ट ने इनकों लेकर समाज के बारे में इस प्रकार कहा था कि:- "Seldom, our society realizes or cares to realize the trauma, agony and pain which the members of Transgender community undergo, nor appreciates the innate feelings of the members of the Transgender community, especially of those whose mind and body disown their biological sex. Our society often ridicules and abuses the Transgender community and in public places like

[268] पंजाब स्क्रीन INDIA, 'मानवाधिकार में कहीं खो सी जाती है तीसरे लिंग की आवाज',. htm से-
[269] हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.11

railway stations, bus stands, schools, workplaces, malls, theatres, hospitals, they are sidelined and treated as untouchables, forgetting the fact that the moral failure lies in the society's unwillingness to contain or embrace different gender identities and expressions, a mindset which we have to change."[270] अर्थात शायद ही हमारे समाज को ट्रांसजेंडरों के समाज की पीड़ा, आघात और दर्द का एहसास होता होगा जिससे इस समुदाय के सदस्य गुजरते है, और न ही उनकी भावनाओं को प्रोत्साहित करते हैं। विशेष रूप से उन लोगों के बारे में जिनके मन और शरीर का उनके साथ जैविक यौन संबंध होते हैं। हमारा समाज अक्सर ट्रांसजेंडर समुदाय का उपहास और उनके साथ दुर्व्यहार करता है और सार्वजनिक स्थलों जैसे रेलवे स्टेशन, बस स्टेशन, स्कूल, कार्यस्थल, मॉल, थियटर, अस्पताल, से उन्हें दरकिनार कर दिया जाता हैं, उन्हें अछूत माना जाता हैं। इस तथ्य को भूलकर इनकी नैतिक विफलता समाज की अनिच्छा में है। विभिन्न लिंगों के रूप में पहचाने जाने वाली अभिव्यक्तियों को समाहित करना या गले लगाना चाहिए, यह मानसिकता है जिसे हमें बदलना होगा।

इस प्रकार से भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कहा गया यह कथन किन्नर समुदाय के हितों के बारे में सोचने के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। अनेक स्थलों पर उन्हें भेदभाव का सामना करना पड़ता है, वह भी समाज के द्वारा ही दी गई प्रताड़ना है। 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम' उपन्यास में रज्जो अपने साथ हुए भेदभाव को इस प्रकार महसूस करती है:-"रज्जो अपना बचपन याद करती है तो सिहर जाती है। सिर्फ वही क्यों उसके जैसे तमाम लोग जिन्हें लिंगभेद के कारण जानवरों की तरह दुत्कार दिया था। सबकी कहानियाँ एक जैसी है जो असहनीय पीड़ा सहते हुए गुजरी है। आज भी समय कहाँ बदला है। नित्य नये किस्से खर-पतवार की तरह उग आते हैं।"[271]

उपन्यास गुलाम मंडी में किन्नरों के प्रति किये गए भेदभाव को लेखिका इस प्रकार प्रकट करती है, उपन्यास में अंगूरी कहती है:- "कोई भरती करता क्या पाठशाला में, पहले पूछते मेल कि फिमेल। अपनी वो शर्मीला है न, छोरा बनके भरती हुई थी, तो बहनजी ने एक दिन चड्डी उतरवा ली थी उसकी और जूते मारकर, के स्कूल से निकलवा दिया था उसको। उमराव गुरू के कुनबे ने

[270] http://sarhadepatrika.com/article/kiran-grovar-35-46.pdf
[271] हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.109

शरण दी उसको वरना भूखी मर जाती तो वो भी...।"[272] इस प्रकार शिक्षा के स्थल पर भी जहाँ पर सबको समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है, उनके साथ भेदभाव किया जाता है।

'संझा' कहानी में किरण सिंह ने किन्नर के माध्यम से बताने का प्रयास किया है कि उनमें कोई कमी नहीं फिर भी उन्हें अलग दृष्टि से क्यों देखा जाता है संझा कहती है कि:- न मैं तुम्हारे जैसी मर्द हूँ। न तुम्हारे जैसी औरत। मैं वो हूँ जिसमें पुरूष का पौरुष है और न औरत का औरतपन। तुम मुझे मारना तो दूर, अब मुझे छू भी नहीं सकते...अपनी औषधियों से अमरित का सिफत मैंने तप करके हासिल किया है। मैं जहाँ जाऊँगी , मेरी इज्जत होगी। तुम लोग अपनी सोचो।"[273] इस प्रकार की मनोदशा वह व्यक्त करती है क्योंकि वह जीना चाहती है, दूसरों की तरह, उड़ना चाहती है लेकिन उसकी शारीरिक कमी उसे इन सबसे दूर रखती हैं।

सामाजिक बहिष्करण इनके विकास में सबसे बड़ी बाधा है। सामाजिक बहिष्कार व्यक्ति को पूर्णतया अपने अधिकार, स्त्रोतों, और अवसरों को पाने से रोक देता है, रोजगार, स्वास्थ्य सुविधाएँ, आदि से दूर कर देता है। इन्हें सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया से दूर रखा जाता है। इनका परिवार से भी बहिष्कार हो जाता है तो समाज से भी, इस कारण ये अपने-आपको कटा-कटा महसूस करते हैं। आर्थिक रूप से किये जाने वाला भेदभाव उन्हें सभी क्षेत्रों में पछाड़ देता हैं इस कारण उनका विकास नहीं हो पाता है, राजनीतिक रूप से किये जाने वाले भेदभाव की तो पृष्टभूमि ही अलग है, जब तक सामाजिक, आर्थिक रूप से भेदभाव किया जाता रहेगा तब तक राजनैतिक स्तर पर तो भेदभाव अवश्य बना रहेगा।

इस प्रकार सामाजिक स्थलों पर, परिवार में, समाज में उन्हें भेदभाव की दृष्टि से देखा जाता है। यह हिंदी कथा-साहित्य और अन्य भाषा के साहित्य में भी दिखाया गया है लेकिन आम तौर पर हम अपने आस-पास भी देख सकतें है, कि इन्हें स्वीकार करना हमारे लिए भी सहज नहीं होता है लेकिन ये अपनी स्थिति सुधारने के लिए हमसे जुड़ना चाहते हैं ताकि इनके साथ भेदभाव न किया जाए। किन्नर समुदाय अपने साथ किये गये इस शारीरिक भेदभाव के लिए भगवान को दोषी ठहराते

[272] निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं.69

[273] किरण सिंह, 'संझा', थर्डजेंडर: चर्चित कहानियाँ-सं. डॉ.विमल सूर्यवंशी पृ.सं.79

हैं, उनका कहना है कि भगवान ने हमें जानवर से भी बद्तर बनाया है, 'यमदीप' उपन्यास में नाजबीबी अपने मनोभाव इस प्रकार व्यक्त करती है:- "अपने लिए तो जानवर भी जी लेते हैं। हमें भी तो भगवान ने जानवर से भी बद्तर बनाये रखने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी थी। हो सकता है इस बच्ची के रूप में इन्सान की सेवा करने से अगला जन्म सुधर जाये शायद इसीलिए भगवान ने उसके पास इस रूप में सोना को भेज दिया है। नाजबीबी ने आसमान की ओर देखकर, अपने दोनों हाथ बच्ची समेत थोड़ा ऊपर उठाकर प्रणाम की मुद्रा में जोड़े थे।"[274] इस प्रकार वे हमेशा अपने-आपको तथा भगवान को कोसते रहते हैं।

भारतीय स्तर पर यदि हम किन्नर समुदाय की वर्तमान स्थिति देखे तो कानूनों के निर्माण के बावजूद भी ये मुख्यधारा के समाज से जुड़ नहीं पा रहें हैं। इनकी पूर्व में जो स्थिति थी वह तो कैसी भी रही लेकिन वर्तमान समाज का परिदृश्य पूर्णतया बदल चुका है, समाज आधुनिक और उत्तर आधुनिकता के दौर में प्रवेश कर चुका है लेकिन वह हिजड़ा समुदाय से पूर्वाग्रह रखता है, उसे स्वीकार करने की शक्ति हममें उत्पन्न नहीं हो पाती है।

5.1.5 किन्नर समुदाय और समाज

सामाजिक दृष्टि से किसी भी समाज के सोशल स्टेटस का पता लगाया जाता है कि वह समाज कितना अभी के समाज में स्वीकार्यता रखता है या समाज में उसका कितना अधिक महत्त्व है, थर्ड जेंडर समुदाय भी अपने इसी महत्त्व की तलाश करता है लेकिन हर जगह उसे निराशा ही हाथ लगती है। पहली बात तो इनका कोई सामाजिक दृष्टिकोण ही समाज में स्वीकार्य नहीं हैं। न तो इनके साथ सामान्य मनुष्य की तरह बर्ताव किया जाता है और न ही कोई मनुष्य इनके साथ उठना-बैठना पसंद करता है। इनका समाज से पूर्णतया अलगाव है या यो कहे कि समाज से यह एकदम विलग है, इसका मुख्य कारण लैंगिक भेदभाव या हमारी लिंग आधारित मानसिकता। जिसको सोचकर हम किन्नर समुदाय को सामाजिक स्वीकार्यता नहीं दे सकते। दिलाने की बात तो दूसरी है, हम खुद पहले स्वीकार नहीं कर पाते। शादी-समारोहों में तो लोग इनकी दुआएँ लेने के लिए इनकों नेग में कुछ दे देते है, लेकिन आम तौर पर इनके पास से गुजरने में भी कतराते हैं। हिंदी साहित्य में

[274] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.25

लेखकों ने कहानियों, उपन्यासों के माध्यम से इनके प्रति समाज के रवैए को प्रकट करने का प्रयास किया है। किन्नर समुदाय को लेकर लिखी गई कविता 'अधूरी देह' में उनकी मनोभावनाएँ इस प्रकार है:-

"अधूरी देह क्यों मुझको बनाया

बता ईश्वर, तुझे क्या सुहाया?

किसी का प्यार हूँ, न कि वास्ता हूँ

न तो मंजिल हूँ, न मैं रास्ता हूँ

अनुभव पूर्णता का हो न पाया,

अजब यह खेल, रह-रह धूप छाया,

अधूरी देह...।"[275]

'कौन तार से बीनी चदरिया' के माध्यम से रंजना वर्मा इस प्रकार कहती है कि- "ओ सबके दुनिया अलग है, अउर हमर सबके दुनिया अलग। हाथ-पैर-मुँह-कान मानुस के समान होके भी हम मानुस में नहीं गिनाते हैं। ऐसे अच्छा होता कि हम कौनों जानवरे जाति में जनम लेते चाहे मरद होते चाहे मउगी। अभी हम क्या है बताओ तो।"[276] इस प्रकार जीवन को जीने के लिए जिन भी अंगों की आवश्यकता होती है वो तो है लेकिन इनसे समाज कहाँ उनकों जीने देता है, लिंग आधारित मानसिकता इन्हें घृणित दृष्टि से देखती है। उन्हें अलग-थलग करके रख देती है। समाज और व्यक्ति का परस्पर सम्बन्ध होता है, व्यक्ति को समाज में रहने के लिए उससे जुड़ना आवश्यक हो जाता है। अन्यथा वह समाज का हिस्सा नहीं बन पाता है, यही स्थिति किन्नरों की समाज में बनी हुई है।

'उपन्यास 'मैं पायल' में पायल सिंह इस प्रकार से अपने विचार प्रकट करती हैं:- "आज भी हम किन्नरों के प्रति मानसिक स्थिति जस की तस बनी हुई है। इसमें स्वयं किन्नर भी इस स्थिति के

---

[275] गीतिका वेदिका, 'अधूरी देह', पृ.सं.13

[276] अंजना वर्मा, 'कौन तार से बीनी चदरिया', सं. डॉ.विमल सूर्यवंशी, पृ.सं.59

लिए बराबर के दोषी है, जो खुद भी स्वयं को चली आ रही व्यवस्था में ढाले हुए हैं। वे बने हुए घेरे से बाहर आने में डरते हैं, उनमें आत्मविश्वास की जबरदस्त कमी है।"[277] वर्तमान काल की अपेक्षा प्राचीन काल में इनकी स्थिति सामान्य थी, इन्हें कम-से-कम मनुष्य तो माना जाता था, लेकिन वर्तमान समय में कानूनों का निर्माण होने के बावजूद इन्हें समाज से नकार दिया जाता है। समाज में व्यक्ति इनकों अछूत की दृष्टि से देखता है।

प्रदीप सौरभ के उपन्यास 'तीसरी ताली' में गौतम साहब के बच्चे के माध्यम से दर्शाया गया है:- "बच्चे को घर में तो नहीं रखा जा सकता था। किसी ने नहीं रखा आज तक, तो गौतम साहब ऐसे आधे-अधूरे बच्चे को कैसे रख सकते थे। उन्हें भी तो समाज में रहना था।"[278] इस तरह से उन्हें आधे-अधूरे की संज्ञा दी जाती है। किन्नरों को लेकर यह कहा जाता है कि वे जबरदस्ती किसी के घर में घुसकर किन्नर पैदा हुए बच्चे को उठाकर ले जाते हैं। कई हद तक यह बात सच भी है लेकिन एक दूसरा पक्ष भी यह है कि जब तक सहमति से इन्हें ले जाने दिया जाता है तब वे जबरदस्ती करते हैं।

भगवंत अनमोल उपन्यास 'जिंदगी 50-50' में समाज के प्रति आक्रोश प्रकट करते हैं। उनका मानना है कि जो समाज जिसके पास साधन है केवल उसी को पूछता है तो वह समाज हमारे किस काम का। वह अपनी माँ से कहता है यथा:- "आप किस समाज की बात कर रही है? जो समाज, भूखे रहने पर कभी खाने की नहीं पूछता और अगर हमारे यहाँ रोज का खाना खाने के लिए भोजन है तो आये दिन हमें निमंत्रण देता है। आप उस समाज की बात कर रही हैं। मैं उस समाज को अपनी ठोकर पर रखता हूँ जिसे किसी व्यक्ति की इज्जत करना नहीं आता। किसी लड़के को प्रोत्साहित करने की बजाये, उसे हतोत्साहित करना आता है। इसी तरह वे उपन्यास में कई स्थानों पर शायरी का प्रयोग भी करते है:-

"अपने गुनाहों पर सौ पर्दे डालकर,

---

[277] महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', पृ.सं.119

[278] प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली', पृ.सं.41

हर शक्स कहता है जमाना बहुत खराब है।"[279]

इस प्रकार से लेखक का मंतव्य यहाँ सिर्फ यह बताना है कि यदि समाज के डर से किन्नर बच्चों को अपनाया नहीं जाता है, यह समाज जो विपदा में साथ नहीं देता है। केवल साधन-सम्पन्न लोगों को ही पूछने आता है। अर्थ रहित लोगों को तो कोई पूछता भी नहीं है। समाज का दृष्टिकोण बहिष्करण का दृष्टिकोण है, किन्नर समुदाय समाज को स्वीकार्य नहीं हैं क्योंकि वह शारीरिक कमी का शिकार है। समाज का नजरिया इनके प्रति अवहेलना का सा प्रतीत होता है।

सामाजिक मान्यताएं और स्थिति

समाज में रहने वाला प्रत्येक मनुष्य सामाजिक मान्यताओं से जुड़ा हुआ रहता है, उसे जुड़ना ही पड़ता है, अन्यथा वह समाज से अपने को कटा-कटा महसूस करता है। सामाजिक मान्यताएं मनुष्य को समाज से जोड़े रखती है। किन्नर समुदाय की अपनी सामाजिक मान्यताएं है जो और समुदायों से उसे अलग करती है। ये अपनी सामाजिक मान्यताओं के पक्के होते हैं, और उन्हें बड़ी तत्परता से निभाते हैं।

किन्नर भी अपने देवी-देवताओं की पूजा करते है उनमें अपार विश्वास रखते है, उनके समाज में दंड-विधान है। उनके लिए उनकी गुरू माई का आदेश मील का पत्थर है। इनके अपने रीति-रिवाज, परम्पराएँ, धार्मिक मान्यताएँ होती है, ये लोग धार्मिक संस्कारों का बड़े मनोभाव से पालन करते हैं जिसका वर्णन इस प्रकार है। सबसे पहले माता की पूजा। डेरे के आंगन में तुलसी चौरा के पास बहुचर देवी का छोटा, किंतु दिव्य मंदिर बना हुआ रहता है। मुर्गी के ऊपर सवार चार भुजाधारी माँ बहुचर देवी एक हाथ में त्रिशूल, दूसरे हाथ में तलवार, तीसरे में चूड़ियाँ तो चौथे में धार्मिक ग्रंथ धारण किए हुए है। गले में पुष्पमाला, सर पर 'श्री' लिखा मुकुट धारण किये हुए खुले केशों में माँ की सजीव मूर्ति दृष्टिगोचर हो रही होती है। बुचरा माता का विवाह जिस पुरूष के साथ हुआ था वह अधूरा था। वह अपनी पत्नी के पास नहीं रहता था। लेकिन सभी उस लड़की पर आरोप लगाते थे कि तुममें ही कोई कमी होगी। एक दिन उसने उसको जंगल में हिजड़ा जैसा व्यवहार करते हुए पाया। और तभी भयंकर देवी का रूप धारण कर लिया कि अगर तुम ऐसे थे तो तुमने मुझसे विवाह करके

[279] भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', पृ.सं.44

मेरा जीवन क्यों बर्बाद किया। तब उसने पारिवारिक दबाव को अपनी मज़बूरी बताया। तब देवी ने जो कहा उसका उल्लेख देवदत्त इस प्रकार करते हैं:- "तुम जैसे पुरूषों को चाहिए कि वे खुद को बधिया कर ले, स्त्रियों जैसी पोशाक पहनें और देवी के रूप में मेरी पूजा करें।"[280] मंदिर परिसर में सेकड़ों मुर्गियाँ होती है, जो माँ बहुचर देवी की शाही सवारी मानी जाती है।

तमिलनाडु के विल्लिपुरम जिले के कुवांगम गाँव के कुथान्दावर मंदिर परिसर में प्रत्येक वर्ष के अप्रैल माह में अठारह दिन तक 'कुथाअंडावर महोत्सव' मनाया जाता है, जिसमें सम्मिलित होने के लिए देश-विदेश से हजारों की संख्या में किन्नर पहुँचते है। सारे किन्नर अर्वान देवता से ब्याह रचाते है, रात भर नाच गाना होता है और अगले दिन सुबह अर्वान देवता के बलि चढ़ने के बाद में उनकी मृत्यु का शोक मनाते है, अपनी चूड़ियाँ फोड़ते है। तमिलनाडु के हिजड़े स्वयं को

[280] देवदत्त पट्टनायक, 'शिखंडी', पृ.सं.114

‘थिरुनान्गाई’ (ईश्वर पुत्री) समझते है और ‘अरुवानी’ कहलाना पसंद करते है और हिंदू देवता अर्जुन पुत्र ‘अरवान’ की पूजा करते है।

केरल में लायप्पा और चाम्यया- बिल्कू उत्सव, कर्नाटक में यल्लमा देवी उत्सव और गुजरात में बहुचर देवी के मंदिर में नवरात्र भर में डांडियां, गरबा नृत्य-गायन व अन्य रंगारंग कार्यक्रम होते है। इसी स्थान पर अर्जुन द्वारा हिजड़ा शरीर का वरन किया गया। और ‘बृहन्नला’ कहलाए, तभी से ही बहुचर देवी के मंदिर का अस्तित्व माना जाता है।

इन हिजड़ों में ईश्वर प्रदत दैवीय शक्तियाँ निहित होती है, जिस कारण हिजड़ों को भी साधु-महात्मा की तरह समाधि दी जाती है। उनका दाह-संस्कार नहीं किया जाता। बावजूद इसके कि कोई भी हिजड़ा यह आकांक्षा नहीं रखता कि उसका पुनर्जन्म हिजड़ा रूप में हो, न ही वह किसी के लिए ऐसी कामना करता है। क्योंकि जिस योनि में उसने जन्म लिया है उससे उसका जीवन नारकीय बन जाता है। किन्नर समुदाय से जुड़ी एक समस्या है-असली और नकली हिजड़ों की पहचान कैसे की जाए? हिजड़ों की चार शाखाएँ हैं- बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। बुचरा पैदाइशी हिजड़े है, नीलिमा स्वयं बने तथा हंसा शारीरिक कमी के कारण बने हिजड़े है।

सम्पूर्ण हिजड़ा समुदाय को सामाजिक सरंचना की दृष्टि से सात घरानों में बांटा जा सकता है। हर घराने के मुखिया को नायक कहा जाता है यह नायक ही अपने डेरे के गुरू का चयन करता है, हिजड़े जिनसे शादी करते है उन्हें ‘गिरिया’ कहते है। यह इन्हें ऐसे ही अपने पास रखते है। किन्नर समाज में जन्मजात हिजड़ों को महत्त्व पूर्ण स्थान प्राप्त होता है जिनकी संख्या न के बराबर है। इन्हें बुचरा कहा जाता है। अधिक नकली हिजड़े होते है, जिन्हें ‘अबुआ’ कहते है। लिंगोछेदन कर बनाए गए हिजड़ों को छिबरा कहते है। असली हिजड़ा किसी को श्राप नहीं देता। यह ठेलो-मेलों पर इधर-उधर भीख मांगते हुए नहीं दिखेंगे।

हिजड़ा होना आजन्म अभिशाप ढोने का पर्याय है। बचपन से लेकर आज तक यह अपने अंदर दर्द पीते आ रहे है। दूसरों की खुशियों में शरीक होते आये है। दूसरों को आशीष देने के सिवाय इन्होनें कुछ नहीं दिया। ईश्वर से हमेशा उन्हें यह शिकायत रहती है कि आखिर उन्होंने हमें ऐसा क्यों बनाया? उन्हें हिजड़ा होने का दंड क्यों दिया गया? काश वे भी औरों की तरह स्त्री-पुरूष होते।

हिजड़ा होना कितनी बड़ी सजा है, यह कोई हिजड़ा ही समझ सकता है, दूसरा कोई कभी भी नहीं समझ सकता। इनकी ख़ुशी, शादी-ब्याह, बच्चे का जन्म हो या मुंडन में पहुँच जाते है बिन बुलाये। इस प्रकार का इनका जीवन गुजरता है। इनके द्वारा बजायी जाने वाली ताली का भी उपहास उड़ाया जाता हैं लेकिन लेखक ने उसमें भी एक खास विलक्षणता का जिक्र किया हैं: "भारत में तीसरे लिंग अर्थात हिजड़े एक खास ढंग से ताली बजाते हैं ताकि यह सुनिश्चित हो कि दुनिया उनकी विलक्षणता, उनकी किन्नरता की अनदेखी न कर सके।"[281] इस तरह से उनकी इस हरकत को लेकर मजाक किया जाता है लेकिन यह प्रवृति उनमें अपने-आप विकसित होती है।

किन्नर समुदाय जिस प्रकार अपना अलग अस्तित्व रखता है उसी प्रकार मनुष्य समाज से भिन्न उसके संस्कार, रीति-रिवाज, मूल्य, परम्पराएँ, धार्मिक अन्धविश्वास, होते है। कुछ मान्यताएं इनको अन्धविश्वास की ओर धकेलती है। इस प्रकार की मान्यता है कि इनकी मृत्यु होने पर इनके शव को रात के अँधेरे में निकाला जाता है ताकि कोई गर्भवती स्त्री उन्हें ना देख ले और उसके भी वैसी संतान ना हो जाये। दाह संस्कार से पहले उसके शव को जूतों-चप्पलों से बहुत पीटा जाता है। उसे जलाया नहीं अपितु दफनाया जाता है और गालियाँ निकाली जाती है कि पुन: इस योनि में कभी पैदा मत होना। इस अन्धविश्वास का उल्लेख नवतेज पुआधी ने अपनी कहानी 'ऊँचा बुर्ज लाहौर का' में इस प्रकार किया है:- "हमारी बिरादरी में जब कोई यह जून छोड़ता है, तो हम लोगों को नहीं बताते, बल्कि आधी रात को शव छिपाकर ले जाते हैं, कहीं कोई गर्भवती स्त्री न देख ले और हमारे जैसे औलाद पैदा कर दे- न मर्द न औरत। बल्कि हम तो उसको जूतों से पीटते है कि फिर इस जून में पैदा ना होना।"[282] लेकिन यह सब किवदंतियां है। आजीवन वंचना, उपेक्षा, तिरस्कार के शिकार होते रहते है। मरने के बाद भी भयानक यंत्रणा उनका पीछा नहीं छोड़ती।

गुरू -शिष्य परंपरा-

भारतीय समाज में गुरू का महत्वपूर्ण स्थान है। किन्नर समुदाय में गुरू का अत्यधिक महत्त्व होता है प्रत्येक घर का एक मुखिया होता है जिसे 'नायक' कहा जाता है। यही नायक गुरू की

[281] देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, पृ.सं.40
[282] नवतेज पुआधी, 'ऊँचा बुर्ज लाहौर का', पृ.सं.83

नियुक्ति करता है। गुरू वे होते है जो बधाई और प्रसिद्ध गायन, नृत्य और आशीर्वाद, अनुष्ठान आदि में उनके चेलों को प्रशिक्षित करते हैं। माना जाता है कि एक गुरू की देख-रेख में पाँच या उससे अधिक चेले होते हैं। गुरू चेलों के रक्षक के रूप में कार्य करता है। जो अपने समुदाय का नायक और कानून निर्माता भी वही होता है। यदि इनके आपस में कोई विवाद हो जाता है तब जुर्माना लगाकर इनके निष्कासन की सजा सुनाई जाती है।

उत्सव

ये भी इंसान है हमारी तरह। इनका भी दिल करता है कि उत्सव मनाए। यह अपना मन बहलाने के लिए उत्सवों में भाग लेते है। इनके साथ इनकी कुछ परम्पराएँ भी छिपी हुई रहती है; जिनका पालन करना इनके लिए अनिवार्य हो जाता है। प्रतिवर्ष अलग-अलग स्थानों पर ये भी मिलकर उत्सव का आयोजन करते है। देश के विभिन्न स्थानों से किन्नर एकत्रित होते हैं। जिसमें कई आयोजन, प्रतियोगिताएं आयोजित की जाती है। इस संबंध में डॉ.राधिका के.एन. इस प्रकार लिखती हैं कि- "तमिलनाडु के विल्लुपुरम जिले के कुरांगम गाँव के कुथांडावार मंदिर के आस-पास प्रत्येक वर्ष के अप्रेल-मई माह में 18 दिन कुथांडावार महोत्सव मनाया जाता है। किन्नर समुदाय के लिए भोपाल में त्योहार मनाया जाता है।[283]" इन त्योहारों में गायन, सौंदर्य, नृत्य आदि प्रतियोगिताएँ होती है। यह आयोजन अलग-अलग नामों से किये जाते हैं। केरल में आमप्पा और चामप्पा बिहकू उत्सव। कर्नाटक में येल्लामा देवी उत्सव आदि गुजरात के बहुचर देवी के मंदिर में नवरात्र भर डंडिया, गरबा नृत्य गायन आदि कार्यक्रम किये जाते हैं। मान्यता है कि इनको दैवीय स्वरूप में माना जाता है। इन्हें सामाजिक साधु-संतों की मान्यता मिली हुई है। आमतौर पर ज्यादातर इन्हें जबरन सगुन मांगने के लिए जाना जाता है, इनकी भाषा में ये अपने यजमानों से या आपस में अलग शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

क्र.सं.	शब्द	हिंदी में अर्थ	किन्नर समुदाय में प्रयुक्त अर्थ

[283] डॉ. राधिका के.एन., तृतीय लिंगी की समस्याएं, युद्धरत आम आदमी, सं.सूरज बडत्या-53 (जन-2018) नई दिल्ली पृ.80

1	थाली	बड़ी प्लेट जिसका संबंध विशेष अवसर से होता है।	ग्राहक के पास जाना है (थाली के पास जाना है)
2	अथेरी		जो गरीब है वह दया का पात्र है।
3.	चाकर	नौकर, जिसके पास एक नौकरी है।	जिनके पास बहुत पैसा है और आसानी से उनका शोषण किया जा सकता है।
4.	घिसी रकम	डकैती के सिक्के	बहुत कंजूस ग्राहक
5.	उठाऊ चुल्हा	खाना बनाने का चूल्हा	जिस पर भरोसा नहीं किया जा सकता क्योंकि वह बहुत ज्यादा घूमता है।
6.	चलती करना	छुटकारा पाना	ग्राहक से छुटकारा पाना
7.	जाकर	जो कसकर पकड़ता है, जाने नहीं देता।	कोई ऐसा व्यक्ति जो कंजूस हो, जो पैसे नहीं दे रहा हो उसे परेशान न किया जाए।

पारिवारिक स्तर पर सामाजिक स्थिति

किन्नर परिवार में आमतौर पर बेटियाँ, बहने, माँ शामिल है कोई पुरूष नहीं होता है। अपने परिवार द्वारा तिरष्कृत किये जाने के बाद इस परिवार से ही इनकी भावनाएं जुड़ जाती है। और इनका सबसे भावात्मक संबंध जुड़ जाता है। ये मजबूत होते है तथा परित्यक्त किये गये लोगों का सुरक्षा कवच बनकर उभरते है। समुदाय में स्वागत करते है तथा बधिया प्रक्रिया के बाद उसे अपने समुदाय में ले लेते है। इस प्रकार से इसे संस्कार कहा जाता है, जिसे निर्वाण नाम दिया गया। बधिया प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है। परिवार में इनकी स्थिति का स्तर अलग है इनके जीवन की असली गाथा परिवार से ही शुरू होती है।

जन्म लेने के बाद इनके अस्तित्व का पता चलता है लेकिन परिवार किसी भी परिस्थिति में इनकों स्वीकार नहीं कर पाता है, समाज के डर से या अपनी अस्मिता के बचाव में इनकों दूर रखने का प्रयास किया जाता हैं, माँ की ममतामयी दृष्टि इन पर रहती हैं। लेकिन वह भी परिवार समाज के डर से इनसे दूर रहना चाहती हैं। “वह लज्जा के भाव से परिवार में रहता है, उसको हर पल यही लगता है कि वह घर छोड़कर भाग जाए। सबके दुखों का कारण वही बना रहता हैं, वह सोचता है कि सबको उसकी वजह से शर्मिंदा होना पड़ता हैं, इस कारण सबकी नजरों से वह दूर होना चाहता है।”[284]

यह तो हुई किन्नर व्यक्ति की बात लेकिन जब वह अपना परिवार त्यागकर हिजड़ा समुदाय में प्रवेश करता है तो उसकी स्थिति बिल्कुल परिवर्तित हो जाती है। इनके समुदाय में भी हम लोगों जैसे पारिवारिक रिश्तें होते हैं, जो खून के रिश्ते ना होकर भी भावनात्मक रूप से अधिक जुड़े हुए रहते हैं। जैसे एक ही परिवार में बेटियाँ, बहने और माँ शामिल है, कोई पुरूष नहीं होता है। ये मजबूत होते हैं तथा परित्यक्त लोगों के लिए सहारा एवं सुरक्षा का काम भी करते हैं। ये आपस में चाची-मौसी आदि कहकर पुकारते हैं। इनके संबंध सामान्यतया स्त्री सम्बोधन पर ही आधारित होते हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक स्थिति

हम इक्कीसवी सदी के मशीनी युग में जी रहे हैं फिर भी अपनी परम्परागत धारणाओं और मान्यताओं से अपना पीछा नहीं छुड़ा रहे हैं। आज किन्नर समाज की अत्यंत दयनीय स्थिति के पीछे हाथ हमारे समाज का ही है, जो उन्हें चैन और सम्मान से जीने भी नहीं देता। समाज की वैचारिक मानसिकता किन्नरों के उत्थान कार्य के बारे में सोचने से भी हिचकिचाती है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि व्यक्ति की समाज में सामाजिक स्थिति ही उसके विकास को तय करती है, तभी वह समाज सामूहिक रूप से विकास कर पाता है जब समाज में उसको उचित स्थान प्राप्त हो। लेकिन किन्नर समुदाय के लिए इस प्रकार की स्वीकृति एक बहुत बड़ी चुनौती है। इनकी सामाजिक मान्यताएँ एकदम अलग है। ये भी अपने त्योहारों का आयोजन करते हैं। गुरू-शिष्य परंपरा इनमें खासा महत्त्व रखती है, ये उत्सवों का आयोजन करते हैं और एक स्थान पर एकत्र होते

---

[284] चित्रा मुद्गल, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा', पृ.सं.

हैं। इनकी सामाजिक स्थिति का स्तर भी अलग-अलग है। पारिवारिक स्तर पर इनसे अलग प्रकार से व्यवहार किया जाता है और राष्ट्रीय स्तर पर अलग से व्यवहार किया जाता है। परिवार में जन्मते ही यह लोग दुराव-छिपाव का कारण बन जाते है और राष्ट्रीय स्तर पर उपेक्षा का। उपेक्षा दोनों ही स्तरों पर की जाती है लेकिन मानदंड बदल जाते है। राष्ट्रीय स्तर पर इसका फलक विस्तृत हो जाता है।

5.1.6 वास्तविक जीवन शैली:- अतीत, वर्तमान और भविष्य

किसी भी मनुष्य का जिसने इस संसार में किसी भी योनि में जन्म लिया हो उसका अपना अतीत, वर्तमान और भविष्य होता है ऐसा माना जाता है कि जो इस संसार में आया है उसका जाना तो तय है, किन्नर समुदाय की वास्तविक जीवन शैली की जाँच-पड़ताल हम उनको करीब से जानने पर कर सकते है। अतीत में उनकी स्थिति कैसी थी समाज में? वर्तमान कैसा है? और भविष्य में उसमें कोई सुधार होगा या नहीं इस बात की जानकारी जुटाने की कोशिश मैंने अपने शोधकार्य के दौरान की। जैसा कि समाजशास्त्रीय अध्ययन में समाज में रहने वाले प्रत्येक प्राणी का अध्ययन किया जाता है, इतिहास से लेकर वर्तमान तक का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार की व्यवस्था का उस पर प्रभाव पड़ा है? उसी अध्ययन के अंतर्गत मैंने किन्नरों की वास्तविक जीवन शैली को जानने का प्रयास किया।

उसका अतीत किस प्रकार वर्तमान से भिन्न रहा है, उसमें किस प्रकार के बदलाव आये हैं। किन्नर समुदाय के व्यक्ति आरंभ से अपने आपको समाज से कटा हुआ महसूस करते रहे है, या उन्हें यह एहसास दिलाया जाता है कि तुम हमारे समाज में शामिल नहीं हो सकते। उनका अतीत एकदम उनके बचपन से शुरू होता है, जिसमें अपनी पहचान के उपरांत कि यह 'हिजड़ा' है कहकर दुत्कार दिया जाता है। वर्तमान इनका काफी सुधरा है लेकिन उपरी स्तर पर आंतरिक स्थिति तो वैसी की वैसी है।

सूरज बड़्त्या ने अपनी कहानी 'कबीरन' में इनकी स्थिति को इस प्रकार व्यक्त किया है:- "मेरे पास बताने को कुछ भी नहीं बाबूजी। अब हमारा परिवार, रिश्ते-नाते, सब यही समुदाय तो है।' हम यही अपनी पूरी जिंदगी जी लेते हैं।' भाई-बहन, पति-पत्नी, माँ-बाप सब यही होते हैं।' पर मैं पूरे विश्वास से कह सकती हूँ कि तुम्हारी दुनिया से अच्छी होती है हमारी दुनिया। किसी को धोखा नहीं

देते, दुत्कारते नहीं हैं।' हम मेहनत करते हैं, गाते-बजाते हैं, उसके बदले कुछ लेते हैं।' हमारा समाज...तुम्हारी बेरहम दुनिया से अलग है बाबूजी' कहते-कहते तल्ख होती गई थी कबीरन।"[285] इस प्रकार से कबीरन अपनी स्थिति में ही खुश रहना चाहती है। इंसानों की दुनिया में आने पर तो उसे और भी अधिक जिल्लत का सामना करना पड़ता है। इस कारण अपने भाई द्वारा घर बुलाने पर वह आक्रोश प्रकट करती है।

मोहम्मद हुसैन द्वारा किन्नरों से लिए गये साक्षात्कार में यह पूछने पर कि रोजगार, स्वास्थ्य, सुरक्षा, सामाजिक एवं राजनैतिक अधिकारों से जुड़े हुए मुद्दों पर अगर आपका समाज बात करने के लिए सामने नहीं आएगा तो समस्याओं का समाधान कैसे होगा? इस पर सलोनी किन्नर इस प्रकार से उत्तर देती है- "सुप्रीम कोर्ट ने हमें थर्ड जेंडर की श्रेणी प्रदान कर दी है। इसे तकरीबन दो वर्ष से ज्यादा का समय हो गया है। सरकार को कई दिशा-निर्देश भी कोर्ट के द्वारा दिए गये, पर हुआ क्या? जमीन पर क्यों कोई सुधार होता दिखाई नहीं दे रहा है। पब्लिक टॉयलेट तक में हमारे लिए कोई सुविधा अलग से नहीं हैं। समाज की विकृत सोच के कारण किन्नर बचपन से ही शिक्षा से उपेक्षित हो जाते हैं। हमारी हार्दिक इच्छा होने के बावजूद हम ज्यादा पढ़ नहीं पाते।"[286] इस प्रकार उनके अतीत और वर्तमान में कोई खास परिवर्तन नहीं आ पाया है। बाह्य रूप से भले ही उन्हें अधिकार मिल गए हो लेकिन आज भी उनकी स्थिति कुछेक को छोड़कर वैसी ही है।

उनकी वर्तमान स्थिति की यदि बात की जाए तो कई कानूनों के निर्माण के बावजूद भी उनकी स्थिति वही की वही ठहरी हुई है। कोई ज्यादा फर्क नहीं आया है, उनकों स्वीकारने में, बस हमारी मानसिकता अवरोधक बनती हैं। हमारे समाज में लिंग सम्बंधी जो अवधारणा बनी हुई है वह कहीं न कहीं हमें रोकती है। वर्तमान समय में वे साहित्य अध्यताओं की जानकारी में भी आ रहें रहें हैं इस कारण चर्चा का विषय बने हुए है। लेकिन वास्तविकता कुछ और ही होती है, ये चर्चा का केंद्रबिंदु तो बन गये हैं लेकिन सही रूप में इन्हें पहचानने में हमें असहजता का भाव महसूस होता है। सभा संगोष्टियों में अतिथि के रूप में तो इन्हें बुलाया जाता है किंतु मुख्य अतिथि के रूप में इन्हें दर्जा नहीं दिया जाता जिस कारण ये भी समारोह स्थल पर पहुंचकर अपने-आपको असहज महसूस करते

[285] सूरज बड़त्या, 'कबीरन', वेब से-

[286] मोहम्मद हुसैन डायर, 'किन्नरों का सामूहिक साक्षात्कार', सरस्वती अप्रेल-सित.2018 सं.महेश भारद्वाज, नई दिल्ली, पृ.सं.23

हैं। भगवंत अनमोल अपने उपन्यास 'जिंदगी 50-50' में उनकी वर्तमान स्थिति पर इस प्रकार प्रकाश डालते हैं:- "आखिर ये लोग क्यों नहीं समझते कि शारीरिक कमियों के लिए हम खुद जिम्मेदार नहीं होते। क्या ऐसा कोई रास्ता नहीं कि ऐसे असंवेदनशील लोगों में थोड़ी सी संवेदना जाग जाये, और मेरे और हर्षा जैसे तमाम लोग एक सामान्य जीवन बिता सकें।"[287] लेखक का कहने का तात्पर्य यह है कि हम वर्तमान समय में जनसामान्य के साथ रह सकें, उनके साथ उठ-बैठ सकें। तब जाकर हम वर्तमान संदर्भ में जी सकेंगें अन्यथा वही नारकीय जीवन की पीड़ा उनकों सहन करनी पड़ेगी।

भविष्य इनका कैसा होगा? क्या आने वाले समय में इनकी स्थिति और भी अच्छी हो पाएगी? क्या यह भी आम आदमी की तरह जीवन-यापन कर सकेंगे? प्रेम की आवश्यकता, सहानुभूति, सहनशीलता, संवेदनशीलता आदि की इन्हें भी आवश्यकता महसूस होती है, यह भी चाहते हैं कि लोग इन्हें प्यार करें, पर ऐसा हो नहीं पाता है। यह भी भविष्य में हमारी तरह बिना किसी रोक-टोक के स्वच्छंद घूमना चाहते, लेकिन हमारी मानसिकता शायद इनके मार्ग में रोड़ा बन जाती है। इनकी वर्तमान स्थिति के बारे में इनके अस्तित्व को लेकर शरद सिंह की पंक्तियाँ कही जा सकती है,

"एक दिन

घर की बैठक में

उसका आना होगा एकदम सामान्य

किसी मित्र की तरह

किसी परिचित की तरह

किसी अपने की तरह

होगी चर्चाए और बहसें

और तब नहीं रहेगी उसकी पहचान

---

[287] भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', पृ.सं.145

किसी ताली या बनावटी हाव-भाव वाली

उस दिन वह थर्ड जेंडर खड़ा होगा

स्त्री और पुरूष के समकक्ष

लैंगिक दुराव से परे

समाज का अभिन्न हिस्सा बनकर

फ़िलहाल जारी है अस्तित्व की लड़ाई...।"[288]

वर्तमान संदर्भ इनका अपने अस्तित्व को लेकर है, यह हमारी तरह ही रहना, उठना, बैठना चाहते हैं, जीना चाहते हैं, मुख्यधारा के समाज में आना चाहते हैं लेकिन अभी तक नहीं आ पा रहें हैं। वे अपनी सभी स्थितियों में सुधार चाहते हैं, पर इसमें समय लगने के साथ ही इनकों शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक, रूप से जागरूक होने की आवश्यकता है। इस प्रकार से स्पष्ट है कि उनके अतीत को तो सुधारा नहीं जा सकता लेकिन वर्तमान को तो सुधारा जा सकता है ताकि उनकों भी अपनी तरफ देखकर यह एहसास नहीं हो कि उनका अस्तित्व कुछ नहीं है।

5.1.7 शिक्षा के क्षेत्र में किन्नर समुदाय

जब तक कोई भी वर्ग शिक्षा से वंचित रहता है वह पिछड़ा हुआ ही माना जाता है, यह पिछड़ापन, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में दिखाई पड़ता है। शिक्षा घर-परिवार समाज और देश की व्यापक प्रगति में सहायक होती है। मनुष्य को आदिम से सभ्य बनाने का काम शिक्षा ही करती है। किसी भी वर्ग की यदि बात की जाए दलित, आदिवासी, स्त्री आदि शिक्षा के अभाव में शोषित होते रहें, जब ये जागरूक होने लगे तो अपने अधिकारों की मांग करने लगे, यही स्थिति किन्नर समुदाय की रही है। शिक्षा के क्षेत्र में इनकी गौण भूमिका रही है, इसी कारण इन्हें अपने-आपको न्याय दिलाने में समय लगा। नेल्सन मंडेला के अनुसार "शिक्षा एकमात्र ऐसा हथियार है

[288] शरद सिंह, 'जारी है अस्तित्व की लड़ाई', सरस्वती, पृ.सं.6

जिससे पूरी दुनिया को बदला जा सकता हैं।"[289] यहाँ नेल्सन मंडेला का यह कथन किन्नर समुदाय के लिए भी लागू होता है। ताकि इनकी स्थिति में भी सुधार लाया जा सके। राइट टू एजुकेशन में थर्डजेंडर बच्चों को स्कूल में दाखिला लेने का अधिकार दिया गया। अप्रैल 2014 के सर्वोच्च न्यायालय के आदेश की पालना करते हुए मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा यह कहा गया कि इन बच्चों को भी शिक्षा से वंचित ना रखा जाये। इस तरह किन्नर समुदाय की शिक्षा के लिए भारत में यह पहला कदम उठाया गया। 'क्या मेरा कुसूर है' नामक कहानी में श्यामली किन्नर अशिक्षित होने के कारण कोई रोजगार न मिलने से परेशान होकर कहती है:- " मेरे पास न कोई नौकरी है या चाकरी। इन्सान होते हुए भी मैं इंसान नहीं कहलाता। अपनों के होते हुए भी मैं अकेली हूँ। इस दुनिया में मेरा जन्म तो हुआ मगर मेरी पहचान बन गई, उसने एक ही सास में कहा।"[290] इस प्रकार शिक्षा के समुचित साधन न मिलने के कारण रोजगार के अभाव में उनकी दयनीय स्थिति हो जाती है।

इनके लिए आरक्षण को लेकर भी मुद्दा उठाया गया। इनकों लेकर सरकार अभी असमंजस की स्थिति में हैं। 2019 में सम्पन्न हुए लोकसभा चुनाव में पहली बार इन्हें अन्य की श्रेणी में मत देने का अधिकार दिया गया। "रेलवे प्रशासन ने भी किन्नरों के आरक्षण फ़ार्म में बदलाव किया है, अब इन्हें अपने फॉर्म में केवल 'टी' लिखना होगा। इस तरह से सर्वोच्च न्यायालय के प्रयासों से इस समुदाय में कुछ बदलाव आ रहे हैं।

कुम्भ में किन्नरों के अखाड़े को स्नान करने की सहमति प्राप्त हुई (प्रयागराज, 2019) महामंडलेश्वर अखाड़े का प्रमुख लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी को बनाया गया। यह इस बात का द्योतक है कि इनकों धीरे-धीरे समाज के कुछ क्रिया-कलापों में शामिल किया जा रहा है जिससे इनकी चेतना में जागरूकता उत्पन्न की जा सके साथ ही हमारे समाज के द्वारा भी किन्नरों को ग्रहण करने की शक्ति उत्पन्न की जा सकें।

शिक्षा जगत में अलग-अलग क्षेत्रों में किन्नरों ने अपनी धाक जमाने की कोशिश की है। मद्रास हाईकोर्ट ने भी तमिलनाडु सेवा भर्ती बोर्ड को निर्देश दिया था की एक ट्रांसजेंडर जो सब इंस्पेक्टर के तौर पर तैनात करें। मधु किन्नर रायगढ़ की पहली किन्नर मेयर बनी। इसी प्रकार कोच्चि

[289] https://aajtak.intoday.in/education/story/nelson-mandela-quotes-in-hindi-1-878501.html
[290] डॉ. रीता सिंह, 'क्या मेरा कुसूर है', पृ.स. 44

में तृतीय लिंगी के लिए एक विशेष स्कूल-सहज इंटरनेशनल स्कूल स्थापित किया है। इस प्रकार शिक्षा के माध्यम से इनमें जागरूकता लाई जा सकती है लेकिन शैक्षिक स्थानों पर इनसें असहज व्यवहार किया जाता है इस कारण ये अपने-आपको सहज महसूस नहीं करते और शिक्षा से वंचित रह जाते हैं, फलस्वरूप इनमें कई बुरी आदतें घर कर जाती है। नशा करना, वैश्यावृति, एड्स जैसी कई जानलेवा बिमारियों का शिकार हो जाना आदि। यह तो हुई भारतीय समाज में किन्नरों की शिक्षा पर लिए गए निर्णय तथा लोगों की किन्नरों को लेकर धारणाओं की बात। अब हिंदी साहित्य में किन्नरों की शैक्षणिक योग्यता को लेकर क्या दशा है-

हिंदी साहित्य के साहित्यकारों ने तथा आलोचकों ने इनकी शिक्षा को लेकर पर्याप्त प्रकाश डाला है। हिंदी में कहानियों और उपन्यासों में विभिन्न पात्रों के माध्यम से इनकी शिक्षा को लेकर जो दशा है उसकी चर्चा की गई है। कहीं इन्हें शिक्षा से वंचित दिखाया गया है तो कहीं शिक्षा प्राप्त कर उच्च पद प्राप्त करते हुए। लेकिन किन्नर समुदाय जब शिक्षित होने लगेगा तो इनमें जो भी दुष्प्रवृतियां होगी वे धीरे-धीरे कम होने लगेगी। शिक्षा के माध्यम से लेखिका चित्रा मुद्गल इनमें परिवर्तन लाने की वकालत करती है।

उनका मानना है कि यदि इनकों समुचित शिक्षा प्रदान की जाये तो ये अनेक दूषित वृत्तियों के शिकार होने से बच सकतें हैं:- “चित्रा जी की यह मान्यता सराहनीय है कि वे किसी भी कुरीति का तोड़ शिक्षा के आलोक के माध्यम से मानती हैं। इसीलिए वे थर्ड जेंडर की मुक्ति का मार्ग शिक्षा के माध्यम से समाज की मुख्यधारा में शामिल होने में मानती हैं। यही कारण है कि उपन्यास का प्रमुख पात्र विनोद पांच-छह वर्षों से पढ़ाई छूट जाने पर भी अपनी पूरी हिम्मत जुटाकर फिर से पढ़ाई शुरू करता है। वह बकायदा कंप्यूटर-प्रशिक्षण ग्रहण करता है, किन्नरों की बिरादरी में रहते हुए भी शिक्षा के प्रति उसकी उत्कट कामना उसे आगे चलकर शिक्षितों की तरह नौकरी मुहैया करती है।”[291] इस प्रकार से यहाँ लेखिका का किन्नर समुदाय के प्रति चेतना का भाव दिखाया गया है, यदि किन्नर शिक्षित हो जाए तो वे अपने लिए कुछ कर सकतें है अथवा जागरूक होकर समाज में अपने प्रति सही वातावरण बनाने में महत्त्व पूर्ण भूमिका निभा सकतें हैं।

---

[291] डॉ. रेशमी पांडा मुखर्जी, 'वजूद को साबित करने की जद्दोजहद में', अनुसंधान- पृ.सं.32

नीरजा माधव ने अपने उपन्यास 'यमदीप' में इनकी शिक्षा को लेकर सवाल उठाया है, नंदरानी की माता उसे पढ़ा-लिखाकर अपने पैरों पर खड़ा करना चाहती है ताकि उसे भी नारकीय जीवन ना जीना पड़े। उपन्यास में नंदरानी के सामने महताब गुरू सवाल करते हैं कि:- "जैसे कुछ जातियों के लिए सरकार कर रही है। हमारे लिए तो वह भी नहीं\ माता-पिता, घर-परिवार सबसे छुड़ाकर इस बस्ती में नाचने-गाने के लिए फेंक दी जाती है हमारी किस्मत। समाज भी नहीं, सरकार तो अपना वोट मांगने के लिए उन्हीं के सामने चारा फेंकेगी न, जो रोज मुर्गियों की तरह अंडे देकर आबादी बढ़ाएंगे। हम कौन से अंडे देने वाले हैं। अल्लाह मिया ने तो हमें वह नेमत भी नहीं दी।"[292] इस प्रकार की स्थिति है किन्नरों की शिक्षा को लेकर, लेकिन वर्तमान समय बदल चुका है किन्नर पढ़ रहें हैं और उच्च पदों पर भी पहुँच रहे हैं। जिनमें प.बंगाल की कॉलेज प्राचार्य मानोबी बंदोपाध्याय का नाम लिया जा सकता है, राजस्थान में गंगा नाम की पहली महिला ट्रांसजेंडर कांस्टेबल बनी है। जो इस बात का संकेत है कि किन्नरों में धीरे-धीरे शिक्षा के प्रति चेतना जाग्रत हो रही है।

इनकी शिक्षा व्यवस्था को ध्यान में रखकर अल्पना सिंह लिखती है कि:- "हमारी सामाजिक व्यवस्था जिसमें 'शिक्षा है सबका अधिकार' नारा दिया जाता है। वहाँ भी इनकें लिए किसी विशेष शिक्षा की व्यवस्था नहीं है। अगर ये समाज की विशेष श्रेणी में हैं, तो जिस तरह विकलांगों के लिए विश्वविद्यालय है, इनके लिए भी होने चाहिए और अगर इन्हें 'विशेष श्रेणी नहीं माना जा रहा है, तो सामान्य नागरिक की तरह इन्हें भी शिक्षा नीति में स्थान मिलना चाहिए। किसी भी प्रकार के रोजगार में इनके लिए कोई ठोस नीति दिखाई नहीं देती।[293] इस तरह से किन्नर समुदाय की शिक्षा को लेकर हिंदी साहित्य में पर्याप्त प्रकाश डाला गया है और उनकी शिक्षा के मुद्दे को उठाया गया है। ताकि प्रत्येक किन्नर सम्मान से जी सकें।

उपन्यास यमदीप, किन्नर कथा, जिन्दगी, 50-50, नाला सोपारा, आदि के माध्यम से लेखकों ने किन्नर समुदाय को लेकर शिक्षा प्रदान कराने की वकालत की है। वहीं कहानियों के माध्यम से कहा गया है कि कुछ-पढ़ लिखकर रोजगार पाने लायक हो जाए तो इनकी स्थिति में

---

[292] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.94

[293] अल्पना सिंह, 'विमर्श तीसरी सत्ता का संघर्ष', जनसत्ता (सित. 2017)

सुधार लाया सके। उपन्यासों का कोई न कोई पात्र इस चेतना से युक्त दिखाई पड़ता है। जिंदगी 50-50 का नायक भी अपने किन्नर बच्चे को पढ़ा-लिखाकर बड़ा बनाना चाहता है वही, नाला सोपारा का विनोद भी आगे पढ़ना चाहता है, वह अपने समाज में नहीं जाना चाहता है।

5.2 आर्थिक दृष्टिकोण

कोई भी मनुष्य अपनी आर्थिक स्थिति के आधार पर जीवन यापन करता है। समाज में वह जितना अधिक आर्थिक दृष्टि से संपन्न होगा, उसकी प्रतिष्ठा भी समाज में उतनी ही होगी। जिसके पास पैसा है उसी का वर्चस्व रहता है। संपूर्ण समाज, देश अर्थ पर टिका हुआ है, बिना अर्थ के हम अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते है। किन्नरों के पास जीवन यापन करने हेतु कोई साधन नहीं होते, क्योंकि वे तिरस्कृत होते है, समाज उनको परित्यक्त कर देता है। इस कारण भीख मांगने के अलावा उनके पास कोई चारा नहीं रहता है। हिंदी साहित्य में प्रत्येक कहानी और उपन्यास में इनकी आर्थिक समस्या को उठाया गया है। इनके पास नाचने-गाने और भीख मांगने के अलावा दूसरा रास्ता नहीं है। इनकी आर्थिक स्थिति बहुत गिरी हुई रहती है। कुछ हिजड़ों को तो दो जून की रोटी तक नसीब नहीं होती लेकिन कुछ किन्नर अपने दम पर आर्थिक स्थिति सुधार लेते है।

यमदीप उपन्यास की लेखिका इस समाज में इनकी उपयोगी भूमिका की तरफ ध्यान केंद्रित करती है:- “जैसे मुंबई में एक कंपनी ने बकाया धन की वसूली के लिए इनकी नियुक्ति हुई और परिणाम यह हुआ कि जिस ऋण की वसूली वर्षों से नहीं हो पा रही थी, उसे चुटकी बजाकर ये लोग वसूल कर लेते हैं।”[294] जीवन जीने के लिए आजीविका के साधनों की आवश्यकता होती है तथा जीवन शैली का स्तर उच्च बनाये रखने के लिए आर्थिक सुदृढ़ता का होना आवश्यक है। किन्नरों के पास जब आजीविका का साधन ही नहीं है तो यह अपनी जीवन शैली में कैसे सुधार ला सकते हैं? आर्थिक विषमता उनके गले में कांटे की तरह काम करती है। इनकी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने हेतु समय-समय पर देश के अलग-अलग राज्यों ने इनके लिए कुछ प्रोग्राम चलाये हैं जो इस प्रकार है:-

[294] नीरजा माधव, 'यमदीप' पृ.सं. 212

1. छत्तीसगढ़ में यूएनडीपी ने एक लीडरशिप प्रोग्राम चलाया जिसमें किन्नरों के लिए अलग से हॉस्टल बनाने की बात की गई।
2. तमिलनाडु में इन्हें बी.पी.एल. सूची में शामिल किया गया।
3. इसी प्रकार से वे धीरे-धीरे वे स्वयं भी अपनी स्थिति में सुधार लाने का प्रयास कर रहे हैं लेकिन कुछ को छोड़कर बाकी सबकी स्थिति ज्यों कि त्यों बनी हुई है। राजनीति में आने से कुछ किन्नरों की स्थिति में सुधार हुआ है, लेकिन वहाँ भी उन लोगों को इतनी इज्जत नहीं मिलती जितनी अन्यों को मिलती है।

5.2.1 उपजीविका के साधन

मनुष्य को जिंदा रहने के लिए उसकी सबसे पहली प्राथमिकता, उपजीविका का साधन तलाशने की होती है। किन्नर उपजीविका का साधन तलाशने हेतु दर-दर की ठोकरें खाते है। वह कभी ट्रेनों में मांग-मांग कर रोटी तलाशते है इसी बीच यदि कोई उन्हें पैसे नहीं देता है तो उनके बीच में हाथापाई और गाली-गलौच भी हो जाती है। 'तीसरी ताली' उपन्यास में किन्नर समुदाय के पेट भरने की समस्या को इस प्रकार प्रकट किया गया है:- " माना मैं मर्द हूँ लेकिन ये समाज मुझसे मर्द का काम लेने के लिए राजी नहीं हैं। मुझे इस समाज में मादा की तरह तब्दील कर दिया है, मैं मर्द रहूँ, औरत रहूँ या हिजड़ा बन जाऊं इससे किसी को कोई फर्क नहीं पड़ेगा। पेट की आग तो बड़े-बड़ों को न जाने क्या से क्या बना देती है।"[295] यह किसी के घर शगुन मांगने जाते है तब उन्हें अपनी कमाई का नियत हिस्सा अपने गुरू को देना पड़ता है। यदि कोई इसमें चोरी भी करना चाहे तो उसे बिरादरी में बेईज्जत किया जाता है। उनकों सामाजिक स्वीकृति नहीं है, इस कारण वह वे काम नहीं कर सकते जिसे आम मनुष्य करता है।

जैसे- दुकान चलाना, ठेला चलाना, व्यापार करना आदि प्रकार के कोई भी काम वे नहीं कर सकते। इस कारण भीख मांगने पर मजबूर होते है। उनकी आर्थिक दुरावस्था सबसे अधिक खराब होती है। इसलिए उन्हें उपजीविका के साधन के लिए बसों, रेलवे स्टेशनों, घरों, वैवाहिक स्थलों

[295] प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली', पृ.सं. 78

आदि में जाना पड़ता है। इस अध्याय में इनकी आर्थिक स्थिति का अवलोकन किया गया है। जिसे फील्ड वर्क के दौरान किये गए सर्वेक्षण के आधार पर समझा जा सकता है।

1.बधाई देकर शगुन मांगना।

2.सड़कों और सार्वजनिक स्थलों पर भीख मांगना।

3.मजबूरन सेक्स वर्क करके पैसे कमाना।

कई क्षेत्रों में किन्नर अलग-अलग प्रकार से उपजीविका के साधनों से अपना जीवन यापन करते है। अपने शोध-कार्य में फिल्ड-वर्क के दौरान पता लगाया कि बधाई देकर, भीख मांगकर, सेक्स वर्क करके, एन.जी.ओ. में कार्य करके वे कितना धन कमा पाते हैं। जिसका विवरण इस प्रकार है-

किन्नर का नाम	**व्यवसाय**	**पहचान पत्र**	**जन्म स्थान**	**प्रतिदिन आय**
शशि	**बधाई**	**आधार**	**पटना**	**2000-5000**
कमला	**भीख मांगना**	**आधार**	**बिहार**	**500-800**
माधुरी	**एकाधिक**	**आधार**	**पटना**	**2000**
सोन्या	**सेक्स वर्क**	**आधार**	**नेपाल**	**8000**
उषा	**एन.जी.ओ.**	**आधार**	**तमिलनाडु**	**1000**
रंजना	**एकाधिक**	**आधार**	**गुजरात**	**1500**
चांदनी	**बधाई**	**आधार**	**भोपाल**	**500**
चारू	**एकाधिक**	**आधार**	**आसाम**	**1500**
काजल	**वैश्यालय की मुखिया**	**आधार**	**गुजरात**	**5000**

किन्नर समुदाय रूपयों को अपनी भाषा में अलग तरह से प्रयोग में लाते हैं। वे कहीं शगुन मांगने जाते है तब पैसे मांगने में इस प्रकार की शब्दावली का प्रयोग करते हैं।

क्रमांक	नाम	संबंधित अन्य नाम	हिजड़ा समुदाय में अर्थ
1.	दल	लेंतिल्स	कमाई का जरिया
2.	ताप्पू		एक रुपया
3.	पावकट	हिंदी में एक चौथाई	पच्चीस रूपये
4.	अधिक्त	आधा	50 रुपये
5.	बारू	बड़ा	सौ रुपये
6.	पेक बार	बड़ा	500 रुपये

	पत्ता		

इस प्रकार से वे धनार्जन करते है और अपना जीवन निर्वहन करते है। यदि कुछ किन्नरों को छोड़ दिया जाए तो बाकी किन्नरों की आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ नहीं होती है उनके लिए दो वक्त का खाना भी नसीब नहीं हो पाता है। जितना नेग, भीख आदि में मिलता है उसका अधिकांश हिस्सा उन्हें अपने गुरू को देना पड़ता है। उनके पास कुछ नहीं बचता। दिन भर मारे-मारे फिरने के उपरांत शाम को उनका वही हाल रहता है। इस कारण उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं हो पाता है। कई बार इस कार्य के दौरान लड़ाई-झगड़ा भी हो जाता है जिस कारण उन्हें चोट भी लग जाती है। इस तरह से उनमें आर्थिक विषमता तो हमेशा बनी ही रहती है।

5.2.2 सरकारी नौकरी में स्थान एवं स्थिति

किन्नर समुदाय में सरकारी नौकरी और पढ़ने को लेकर काफी पिछड़ापन है। किन्नर समुदाय का सरकारी नौकरी में स्थान न के बराबर है। 'यमदीप' के माध्यम से परसों जब वह बच्चों के उस प्राइवेट स्कूल में जानकारी लेने प्रिंसिपल के कमरे में जा रही थी तो गेट पर ही दरबान ने कितना गुर्राकर मना किया था-'ऐ तुम यहाँ कहाँ?'"[296] वर्तमान समय में स्थितियाँ थोड़ी बदली है और किन्नरों को भी पढ़ने का अधिकार मिल गया है। लेकिन समाज में परिवर्तन आना शेष है।

5.3 राजनीतिक दृष्टिकोण

किन्नर समुदाय की राजनैतिक रूप से भागीदारी को राजनीतिक दृष्टिकोण के अंतर्गत देखा जा सकता है। उनकी अस्मिता पर ही प्रश्नचिन्ह लगाया जाता है तो राजनैतिक जागरूकता की अपेक्षा करना दूर की बात है। फिर भी कुछ किन्नर है जिन्होंने अपने दम पर राजनीति में अपनी पहचान बनायी है।

---

[296] नीरजा माधव, 'यमदीप' पृ.सं. 49

5.3.1 भागीदारी और अधिकार

किन्नर समुदाय के लिए राजनीतिक भागीदारी और अधिकार नगण्य है। कुछ किन्नरों को छोड़ दिया जाए तो राजनीति में इनकी भूमिका निष्क्रिय है। सबसे पहला प्रश्न कि क्या समानता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक भागीदारी आवश्यक है? राजनीतिक भागीदारी में मताधिकार, राजनयिक पद प्राप्त करना, राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना आदि शामिल है। किन्नर समुदाय यह मांग नहीं करता की राजनीति में बड़े-बड़े पद मिले, लेकिन यदि उनकों राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने का अवसर मिल जाए तो वे भी आम जन के समान अपनी भूमिका अदा कर सकते हैं। इस क्षेत्र में शबनम मौसी 1998 में मध्यप्रदेश के विधानसभा चुनाव में पहली किन्नर विधायक बनी । वह बारह भाषाएँ जानती है। इसी प्रकार से कमला जैन ने मेयर का चुनाव जीता। इसी प्रकार से आशा देवी सन् 2000 में गोरखपुर की मेयर चुनी गई। लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी एक ऐसा चेहरा है जिसने अपने समुदाय का संयुक्त राष्ट्र में प्रतिनिधित्व किया।

उपन्यास 'तीसरी ताली' और 'नाला सोपारा' में कुछ स्थानों पर किन्नरों के राजनीतिक बिन्दुओं को उठाया गया है। चित्रा जी ने तृतीय लिंगियों की राजनीतिक चेतना को जिस रूप में चित्रित किया है, उससे उनके अंदर का आक्रोश प्रकट होता है:- "राजनेता चाहते है कि तृतीय लिंगियों को जीरो श्रेणी में आरक्षण मिले, वे अपनी राजनीतिक रोटियां सेकना चाहते है' मूल मकसद यही है। चारों ओर प्रदेशों से आरक्षण की मांग उठने लगेगी तो उनकी पार्टी को समाज की आँख में जमें तिल की शल्यक्रिया करने में आसानी होगी। खौलते आक्रोश को हम सोशल मीडिया से जोड़ देंगे।"[297] राजनीतिक प्रभुत्व सम्पन्न लोग यह चाहते हैं कि यदि ये भी राजनीति से जुड़ गये तो हमारी भागीदारी में कमी पड़ जायेगी इसी कारण वे किन्नरों के राजनीतिक आरक्षण की बात को नकारते हैं।

किन्नरों द्वारा पहला वोट सन् 1994 में तमिलनाडु में किया गया। इस संदर्भ में कोश्लेंद्र अपने आलेख में इस प्रकार लिखतें है:- "तमिलनाडु राज्य में कोर्ट इन्हें राशनकार्ड, वोटरकार्ड में नामांकन के आदेश 1998 में दिये थे जिसका परिणाम यह हुआ कि इस राज्य में हिजड़ों की स्थिति कानूनन

[297] सूरज पालीवाल, 'सघन अनुभूतियों में रचा-बसा सजग तृतीय लिंगी समाज', पहल-107 सं. पृ.सं.232

तौर पर अन्य राज्यों से बेहतर है। वही दिल्ली उच्च न्यायालय ने अप्रैल 2014 में आदेश दिया था कि सरकारी फॉर्म में स्त्री-पुरूष के साथ ही तृतीयलिंग व अन्य नाम से कॉलम बनाएं। इन्हें शिक्षा, रोजगार आदि में स्थान दिए जाएं। याद हो कि यह वही वर्ष जब शबनम मौसी ने चुनाव जीता। आगे चलकर कमलाजान और उत्तरप्रदेश के गोरखपुर में भी हिजड़े ने अपनी उपस्थिति दर्ज की।"[298] उनकों लेडीज बाथरूम का उपयोग करने की आजादी दी गई, इससे पहले इसका प्रयोग उनके लिए वर्जित था। इस प्रकार उनकों मिले अधिकारों से उनकी स्थिति में कुछ सुधार होने की गुंजाईश बनी हुई है। मुख्य चुनाव आयुक्त टी.एन.शेषन ने 1994 में किन्नरों को मताधिकार प्रदान किया था। लेकिन अपने इस मताधिकार के प्रयोग से वे खुश नहीं है, उनकों लगता है कि केवल मत के आधार पर ही उन्हें बराबरी का हक नहीं मिलेगा, राजनीति में भी तो फिर उनकी भूमिका नगण्य है।

5.3.2 राजनीति में प्रमुख किन्नर

शबनम मौसी- उत्तर प्रदेश की शबनम मौसी को देश की पहली महिला ट्रांसजेंडर विधायक होने का गौरव प्राप्त है। उनको सर्वाधिक मत प्राप्त हुए है। राजनीतिक क्षेत्र में आकर उन्होंने किन्नर समुदाय के समक्ष एक मिसाल कायम की है। इससे इस समुदाय में चेतना फैली है। तथा जनमानस का दृष्टिकोण भी परिवर्तित हुआ है कि एक किन्नर बधाई देने, नेग मांगने के अलावा अन्य कार्य भी कर सकता है।

मधु बाई किन्नर- छत्तीसगढ़ के रायपुर की मधु बाई किन्नर को पहली मेयर चुना गया। इन्होंने ट्रेनों में घूम-घूमकर कुछ पैसे कमाए और उन्हीं की सहायता से चुनाव जीता। वह इस पद पर आने वाली पहली ट्रांसपर्सन है। इनका ध्यान साफ़-सफाई से जुड़े मुद्दों पर अधिक केन्द्रित रहा। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में किन्नर समुदाय की भागीदारी नगण्य है। इस हेतु पहली प्राथमिकता उनके लिए शिक्षा है और उसके बाद प्राप्त अधिकारों का सुचारू क्रियान्वयन होना जिससे उनकों राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने का अवसर मिल सकें। केवल वोट देने के अधिकार के आधार पर उन्हें मुख्यधारा की श्रेणी में नहीं लाया जा सकता।

[298] कोशलेन्द्र, 'तृतीयपंथी यानि किन्नरों की शिक्षा', हिंदी गद्यकोश से-

5.4 धार्मिक दृष्टिकोण

प्राचीन साहित्य में नैतिकता की बात की गई है, उसमें जाति-भेद, धार्मिक आडम्बरों का जाल, धर्म को लेकर आक्रामक नीति आदि जैसे कई लक्षण विद्यमान नहीं थे। लेकिन धीरे-धीरे धर्म का स्वरूप विगलित होता गया और धर्म के आधार पर लोगों में भेदभाव की भावना पनपने लगी। किन्नर समुदाय पर अध्ययन करने के दौरान यह प्रश्न मस्तिष्क में अवश्य आता है कि किस धर्म से यह अपना संबंध रखते हैं? किन्नर समुदाय को लेकर अधिकांशत लोगों में उत्सुकता रहती है कि आखिर इनका धर्म क्या है? किस धर्म को आधार बनाकर ये रहते है? या इनका कोई धर्म ही नहीं होता।

5.4.1 किन्नर समुदाय का धर्म

धार्मिक आधार पर यदि इनके बारे में पता लगाया जाये तो किसी विशेष धर्म की भ्रामक धारणाओं के ये शिकार नहीं होते हैं। इनके ऊपर हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि किसी धर्म विशेष का प्रभाव कम दिखाई पड़ता है। अब धर्म से पहले जाति पर बात करना अनिवार्य है कि क्या इनकी जाति भी होती है? और जिस जाति में यह लोग जन्में हैं उसी जाति के धर्म को यह मानते होंगे। कहीं-कहीं यह उल्लेख होता है कि पैदा होने के बाद यदि इनकों अपने जन्म के बारे में कोई जानकारी नहीं होती है तो इनकों गुरू के द्वारा जो नाम दिया जाता है उसी आधार पर इनका धर्म बन जाता है। ‘कबीरन’ कहानी में कबीरन नामक किन्नर की माँ सुमोघ नामक किन्नर से उनकी जाति को इस प्रकार स्पष्ट करती है:- “जाति-पाति के बारे में माँ का कथन कितना सार्थक है कि- बेटा म्हारी छोटी जात, जात तो जात है बेट्टा, वह चाहे इंसानों में रहे चाहे हिजड़ों में फर्क तो पड़ता ही है। यह सब सुनकर सुमोघ भाव-विभोर हो गया और बहन को घर वापस ले आने की शपथ ली।”[299] गुजरात में हिंदू और मुस्लिम किन्नर अलग से रहते थे और एक दूसरे के साथ खाना भी नहीं खाते। इस संदर्भ में सेरेना नंदा इनके धर्म को लेकर इस प्रकार लिखती है:- “in the division of the hijra community into houses an analog is also made with jaati (caste) as one hijra explained it to me. There is only one caste of eunuchs all over india, all

---

[299] सूरज बडत्या, ‘कबिरन’, वेब से-

over the world. But for convenience like in one family. There are six brother. It is like that. We have kept these houses also. Hijras also describe their houses 'like the five fingers on the hand"[300]

अर्थात हिजड़ा समुदाय के घरों में विभाजन एक जाति के साथ भी किया जाता है क्योंकि एक हिजड़ा ने मुझे समझाया था। पूरे भारत में केवल एक ही जाति है, लेकिन एक परिवार की तरह। जिसमें छ: भाई, रहते हैं, हमारे पास घर भी है, हिजड़ा अपने घरों के बारे में इस प्रकार भी बताते हैं जैसे हाथ की पाँचों उंगलियाँ। इस प्रकार से उनकी कोई विशेष जाति नहीं होती, परिवार होता है जिसमें वे रहते हैं उन्हें प्राय: घरानों का नाम दिया जाता है।

धर्म को लेकर माहताब साहब कहते हैं कि:- "राम भी वही, रहीम भी वही। जाना भी एक बात, आना भी एक। कोई जनेऊ पहनकर हिंदू बच्चा तो पैदा नहीं होता। न कोई मुसलमान बच्चा खतना करवाकर। यह तो हम लोगों की भावना है कि यह मेरा अल्ला है, यह मेरा गॉड है। सभी धर्मों का थोड़ा-थोड़ा खून इकट्ठा करिए। उसे देखकर कोई डॉक्टरया साइंस बता दे कि यह हिंदू का खून है, यह मुसलमान का, तो हम अपना नाम बदल दें।"[301]

किन्नरों के लिए आरक्षण को लेकर भी जाति की बात उठायी जाती है कि इन्हें किस वर्ग में रखा जाये। लेकिन सरकार अभी तक असमंजस की स्थिति में है। इन्हें ओबीसी वर्ग में रखा गया है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी कहती है कि:- "किन्नर समाज शुरू से पूजनीय था, आज भी पूजनीय है। सुप्रीम कोर्ट के जजमेंट के बाद हमें लगा कि सरकार के कॉलम्स में हम वो चीज पा सकते हैं पर हमारा खोया हुआ सम्मान मिल जायेगा। लेकिन ये जो समाज है, उसने हमें पूरा पिछड़ा वर्ग कर दिया। उस समाज को सिस्टम में लाने के लिए समय तो लगेगा, इसीलिए हमनें किन्नर अखाड़े का गठन किया और किन्नर अखाड़े का उद्देश्य यह था कि सनातन हिंदू धर्म में जो किन्नरों का वजूद है उपदेवता का वह उसको यथावत स्थापित करने के लिए किन्नर अखाड़े का गठन किया गया।"[302] इस प्रकार अखाड़े के माध्यम से भी किन्नरों के वजूद का एहसास आम-जन को कराया गया कि यह

---

[300] सेरेना नंदा, 'नाइदर मैंन नोर ए विमेन', पृ.सं. 65

[301] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं 165

[302] https://www.gaonconnection.com/desh/why-the-kinnars-had-to-make-their-own-separate-akhara-43622

भी किसी धर्म के नियमों का पालन कर सकतें हैं अथवा धार्मिक क्रिया-कलापों में हिस्सा ले सकतें हैं। इनके धार्मिक क्रिया-कलापों में भाग लेने से धर्म अछूत नहीं हो जायेगा। कुंभ में स्नान करने पर इनका काफ़ी विरोध किया गया लेकिन बाद में इनकों सहमति मिल गई।

5.5 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

यौनिक भिन्नता के प्रति द्वेष रखते हुए कभी इन्हें स्वीकारा ही नहीं गया। समाज का प्रत्येक वर्ग इन्हें अलग-अलग नजरिये से देखता है। थर्डजेंडर लोगों का भी मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया जा सकता है। इनकी जीवन शैली, शारीरिक बदलाव के दौर से गुजरने वाली मानसिक स्थिति और पीड़ा से यह ग्रसित रहते हैं। इस दौरान इनमें कई शारीरिक और मानसिक परिवर्तन आते रहते हैं, इसे विज्ञान का एक रूप कहा गया। हार्मोन्स में आये बदलावों के परिणामस्वरूप इनकी शारीरिक सरंचना भी बदल जाती है, यदि इनमें नर हार्मोन टेस्टेस्टेरोन की अधिकता होती है तो इनमें पुरूष के लक्षण अधिक दिखाई पड़ते हैं। अगर मादा हार्मोन एण्ड्रोजन की अधिकता होती है तो इनका स्वभाव अधिक स्त्रैण होता है। ज्यादातर इनमें मादा हार्मोन की ही अधिकता होती है। इनके लिए प्राकृतिक या अप्राकृतिकता की बात की जाती है, लेकिन इनके लिए इस प्रकार की बात करना बेतुकी है, यह तो जैविक गड़बड़ी है इसके लिए प्रकृति को दोष देना उचित नहीं है। हम प्रकृति को दोष देकर इनकों स्वीकार करने से कतराते है।

किन्नर जीवन को करीबी से जानने के दौर में किन्नरों की मनोवैज्ञानिक स्थिति को जानना भी आवश्यक है। इससे यह पता चलता है कि यह किस प्रकार की मानसिक धारणा से होकर गुजरते हैं। अगर ये अपनी अस्मिता से समाज के सहयोग से अपने-आपको सही पहचान दे पाये तो काफी आगे जा सकतें हैं, लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी एक ऐसा ही नाम है।

भारतीय समाज का एक ऐसा अंग जो साधारण मनुष्य की भांति समाज का अंग नहीं माना जाता हैं। ‘हिजड़ा’ शब्द मुख्यतया: गाली के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। आज विज्ञान ने इनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति का जायजा लेने की कोशिश की है कि किस मानसिक स्थिति से यह गुजरते हैं? किस तरह से मानसिक अवसाद को झेलते हैं और किस प्रकार की जद्दोजहद अपने-आप से इन्हें करनी पड़ती है? ये हीन-भावना का शिकार रहते हैं अपनी तथा दूसरों की। एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सक हेमांगी म्हप्रोलकर कहते हैं कि- “किन्नर व्यक्तियों के माता-पिता इन्कार की स्थिति में

होते हैं, उन्हें लगता है कि यह उनके बच्चों के साथ नहीं हो सकता। इस मुद्दे से जुड़ी शर्म की बात है। वे चिंता करते हैं कि लोग क्या कहेंगें। क्या पूरा समाज उनके बच्चों को स्वीकार करेगा।"[303] हिंदी कथा साहित्य में लेखकों ने अपनी कहानियों और उपन्यासों के माध्यम से उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति को यत्र-तत्र प्रकट करने की कोशिश की है।

एक स्थिति उनकी ऐसी होती है कि वे अपने जीवन को समाप्त करना चाहते हैं, उस अभिशप्त जीवन को जिसका इस समाज में कोई मतलब नहीं है, वह केवल दुरदुराए जाते हैं। 'संझा' कहानी उन्हें समाज द्वारा न स्वीकारने का मनोविज्ञान प्रकट करती है:- "इस घरती के बाशिंदों ने तुम्हारी जाति के लिए नरक की व्यवस्था की है। उस नरक के लोग पहाड़ी पर तुम्हारे जन्म के सात साल बाद आकर बस गये हैं।वे लोग कपड़ा उठाकर नाचते हैं, और भीख मांगते हैं। लोग उन्हें गालियाँ देते हैं और थूकते हैं, उनके मुँह पर दरवाजा बंद कर लेते हैं, उन्हें घेरकर मारते हैं...तुम्हारे बारे में पता लग गया तो वे तुम्हें भी छिनने आ जायेंगे।"[304] इस कहानी में उनके प्रति समाज की सोच पर से पर्दा उठाया गया है कि कैसी मनोभावनाएँ उनके प्रति रहती है, किन्नरों के जो नैसर्गिक गुण है उनकों छिपाने की यहाँ कोशिश की जाती है। ये प्रत्येक स्तर पर मनोवैज्ञानिक स्थिति के खराब दौर से गुजरते हुए आते है। परिवार में जन्म से लेकर समाज में बाहर निकलने पर इन्हें दूसरों के द्वारा दी गई प्रताड़ना से मानसिक दुःख मिलता है।

पहले माता-पिता की क्रूर दृष्टि का वे शिकार होते है फिर परिवार वालों की और सामाजिक स्तर पर तो इनकी पीड़ा का दायरा ही बढ़ जाता है। वे अपने शरीर को कोसते रहते है और इसके लिए भगवान को दोष देते है, कई बार इन्हें मानसिक रोगी तक करार दिया जाता है और कई बार इस योनि में जन्म लेने की पीड़ा के कारण वे आत्मघाती भी बन जाते हैं। 'मैं भी औरत हूँ' उपन्यास में रोशनी इस प्रकार का अनुभव करती है:- "यद्यपि वह उस भावना को कभी अपने पर हावी नहीं होने देना चाहती थी, पर जब भी वह एकांत में होती, अपने अतीत में जाती, उसे बचपन में उन वहशी लड़कों से सुने हुए वे शब्द याद आ जाते, 'अरे यह तो हिजड़ा है' और वह तिलमिला उठती। तब उसे अपने-आप पर दया आने लगती, अपने-आपसे घृणा होने लगती और उस अदृश्य ताकत पर गुस्सा आने लगता है कि उसने उसे अधूरा क्यों बनाया है? एक नॉर्मल लड़की क्यों नहीं

[303] Hindi.mapsofiindia.com
[304] डॉ. इकरार एहमद, 'साहित्य के आईने में थर्डजेंडर', पृ.सं.56

बनाया।"[305] इस प्रकार से उपन्यास में एक बहुत बड़े पद पर कार्यरत रहते हुए भी उसके मन में एक हीन भावना हमेशा रहती थी। जैसे-जैसे वे बड़े होते जाते हैं उनके व्यवहार में भी परिवर्तन होने लगता है, यह भी एक मनोवैज्ञानिक कारण हैं। उनका स्वभाव स्त्रीगत मनोभावों की ओर अधिक झुकने लगता है। उन्हें लड़कियों की तरह रहना, सजना-संवरना अधिक अच्छा लगने लगता है।

भगवंत अनमोल ने अपने उपन्यास 'जिंदगी 50-50' में एक स्थान पर उनके स्वभाव का उल्लेख किया है:- "तभी मुझे प्यास लगी और मैं किचन की तरफ पानी के लिए उठा। मैं जा ही रहा था, तो सूर्या शीशे के सामने खड़ा अपने माथे पर बिंदी लगाकर होंठों पर लिपस्टिक लगा रहा था। यह देखकर मेरी आँखे एकाएक उसी पर ठहर गई। कुछ देर मैं खड़ा रहा पर मैं कतई चौंका नहीं, न ही परेशान हुआ। उसका ऐसा करना स्वभाविक ही तो था।"[306] इस प्रकार से उनमें शारीरिक परिवर्तन होने के साथ-साथ व्यवहारिक रूप से भी परिवर्तन आने लगता है। उनकी मनोभावनाएँ भी बदलने लगती है। साथ ही लोगों से बात करने का भी तरीका और थोड़ा सा शर्मीलापन आने लगता हैं। यह सब उनमें आये मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के परिणामस्वरूप होता है। उनके मन की संरचना हमसे अलग होती है। हर कोई दूसरे से अलग होता है, उसके मन में क्या चल रहा है यह सब हार्मोन्स तय करते हैं।

हार्मोन्स पर उसका कोई नियंत्रण नहीं हैं। कई बार वह इस विवशता से भी जूझते हैं कि वे किसी से वैवाहिक संबंध स्थापित नहीं कर सकते। विमलेश शर्मा की मन मरीचिका नामक कहानी में मानव की विवशता झलकती है। सुलोचना से मानव यही कहता है कि:- "मैं तुम्हारे लायक नहीं, मैं तुम्हें कोई सुख नहीं दे सकता। मैं शादी नहीं कर सकता क्योंकि मैं वो सब नहीं कर सकता जो इस रिश्ते को जरूरत है।"[307] विश्व स्वास्थ्य संगठन के दिशा निर्देशों के अनुसार ट्रांसजेंडर होने को मानसिक विकार नहीं माना जायेगा। जिनमें कहा गया कि किसी भी ट्रांसजेंडर व्यक्ति को प्रकृति द्वारा प्रदत लैंगिकता से अलग अन्य लैंगिकता का एहसास होना कोई बीमारी नहीं है। आईसीडी(इंटरनेशनल क्लासिफिकेशन ऑफ़ डिजीज) ने किसी भी व्यक्ति को चिन्हित किये जाने के बाद स्वास्थ्य सम्बंधी जरूरतों को पूरा करने के लिए यौन स्वास्थ्य हेतु सूचीबद्ध किया है।

---

[305] अनुसूया त्यागी, 'मैं भी औरत हूँ', पृ.सं.59
[306] भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', पृ.सं.72
[307] विमलेश शर्मा, 'मन मरीचिका', पृ.सं. 49

इस तरह से मनोवैज्ञानिक रूप से यदि देखा जाए तो यह अपने-आप में एक हीन ग्रंथि का शिकार रहते हैं, यह अपने-आपको कोसते रहते है, ईश्वर को भी कोसते है कि हमें ऐसा क्यों बनाया लेकिन इसके लिए प्रकृति दोषी नहीं है, जैविक कारण होते हैं इसलिए उन्हें इस योनि में जन्म लेना पड़ता है। यह कई बार अपने शरीर को लेकर मानसिक रूप से बीमार रहते है और स्वयं को समाप्त करने की भी सोचते हैं, वे इस शरीर से बाहर निकलना चाहते हैं जब समाज द्वारा उन्हें कहकर यह बता दिया जाता है कि वे हिजड़े हैं इससे ज्यादा कुछ नहीं, यह उनके मानसिक रूप से प्रताड़ित रहने के लक्षण हैं।

5.5.1 किन्नर समुदाय और विस्थापन का दर्द

विस्थापन का तात्पर्य है, अपनी जन्म-भूमि से अलग होना, या कर दिया जाना। विस्थापन से मनुष्य अपनी भूमि, भाषा, माता-पिता सबसे अलग हो जाता है, उसका सबसे अलगाव हो जाता है, इसके उपरांत उसे अपने परिवार से मिलने की चाह को भी खोना पड़ता है। किन्नर समुदाय को भी विस्थापन का दर्द झेलना पड़ता है, इनकों तो जन्मते ही परिवार से अलग कर दिया जाता है, घर-परिवार में सब इनके समुदाय के लोग ही होते हैं। विस्थापन का दंश इनके जीवन पर मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अत्यंत पीड़ादायक होता है जो इन्हें पूर्णतया तोड़ देता है। वह उन्हें तनाव, चिंता, अवसाद जैसी भावनाओं से घेरे रहता है। महेंद्र भीष्म अपने उपन्यास ‘मैं पायल’ में पायल सिंह के परिवार से विस्थापन के दर्द को इस प्रकार उकेरते हैं:- “यह दीगर बात थी कि घर-परिवार से विस्थापित जीवन जीने का जो दंश मेरे हृदय में बिंधा था वह पल-प्रतिपल मेरे आंसुओं के बांध को भेदता रहता है। मैं हृदय में बहुत जब्त किये मन ही मन रोती रहती थी और ईश्वर से एकांत के क्षणों में अपने अपराध के लिए पूछती रहती थी, ‘हे ईश्वर, ऐसा कौन सा पाप मैंने किया जो तूने मुझे इस जीवन में हिजड़ा रूप दिया।’”[308] इस प्रकार वह अपने परिवार से मिलना चाहती है लेकिन किन्नर रूप में पैदा होने के कारण वह नहीं मिल पाती है। वह बार-बार अकेले में ईश्वर को अपने इस जन्म को लेकर कोसती रहती है कि आखिर मुझे ऐसा जन्म क्यों दिया?

[308] महेंद्र भीष्म, ‘मैं पायल’, पृ.सं.82

हिंदी में किन्नर केन्द्रित साहित्य में उपन्यास और कहानियों में प्रत्येक किन्नर पात्र को अपनी जन्म भूमि को छोड़ने का दंश झेलना पड़ता है। और उनकों यह दुःख जिन्दगी भर सलता रहता है, वे चाहकर भी अपने परिवार जनों से नहीं मिल सकते। उपन्यास 'गुलाम मंडी' की पात्र अनारकली अपनी कहानी इस प्रकार बताती है:- "अरि मैं तो कचरे के ढेर पे मिली थी अब किसको मिली यह तो नहीं पता। जिस उमर में आँखे खुली तो अपने को वृंदा गुरू की छांह में पाया और क्या?...अब क्या बार-बार मेरे मुँह से सुनेगी हरामजादी कि मेरे को मेरी माँ ही फेंक गई होगी घूरे पर।"[309] परिवार वाले उनसे मिलना नही चाहते और किन्नर समुदाय के लोग भी उन्हें वापस अपने घर जाने की अनुमति नहीं देते। इन सभी कारणों से उन्हें विस्थापन का दंश झेलना पड़ता है।

5.5.2 किन्नरों पर किया जाने वाला यौन अत्याचार

किन्नरों को उपयोग की वस्तु समझा जाता है। हर कोई समझता है कि इनकों बचाने वाला कोई नहीं है इसलिए शोषण करने लगते हैं। हिजड़ा अपनी शिकायत करने पहुँचता है तो उसकी शिकायत सुनने के बजाए उसी पर आरोप लगाया जाता है। अधिकांशत: उस पर यौन हिंसा की जाती है, हमारा समाज भी उन्हें इसी नजर से देखता है। यौन-शोषण सम्बंधी यातनाएं उनके मन को भीतर से आहत कर देती है।

उनके साथ किये गए बलात्कारों के परिणामस्वरूप यौन रोगों में बढ़ोतरी हो रही है, 'यमदीप' में माहताब गुरू नाजबीबी से इस प्रकार कहते हैं:- "उनका मानना है कि इस प्रकार यौन रोगों में बढ़ोतरी के अवसर बढ़ रहे हैं। देखो नाज, चोरी-छिपे यहाँ जो धंधा चल रहा है, उसका फल तो तुम देख ही रही हो। जुबैदा चल बसी और अब सोबराती की बारी है, अब चला जाए कि तब। इसीलिए बस्ती में हम सबको मना करते रहे कि जिस करम को करने लायक अल्ला ने ही हमें नहीं बनाया तो उसके साथ कोई जोर-जबरदस्ती मत करो, लेकिन कौन सुनता हैं?"[310] कई बार पुलिसकर्मी उनके साथ यौन हिंसा करते हैं तो कई बार वे खुद आर्थिक तंगी के चलते इस दलदल में घुस जाते है। वे वैश्यावृति जैसा काम भी शुरू कर देते हैं परिणामस्वरूप एड्स जैसी घातक जानलेवा बीमारियों के

[309] निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं. 68
[310] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.28-29

शिकार हो जाते हैं अंत में उनकों मृत्यु का सामना करना ही पड़ता है। उपन्यास और कहानियों में जितने भी किन्नर मुख्य पात्र है उनकों कहीं न कहीं यौन अत्याचारों का शिकार होना ही पड़ता है।

पायल सिंह, नाज बीबी, विनोद, सूर्या, विनीत आदि पात्र है जो कहीं न कहीं अपने जीवन काल में शोषण के शिकार अवश्य हुए है, कहानियों में 'बिंदा महाराज' का बिंदा, 'खलीक अहमद बुआ' की बुआ 'किन्नर' में किन्नर जाति 'बीच के लोग' एक व्यंग्य प्रधान कहानी हैं। किरन सिंह की 'संझा' की संझा आदि ऐसे पात्र है जो यौन अत्याचारों का शिकार हुए थे, ये अपनी दास्तां खुद कथा-आलोक के माध्यम से बताते हैं। रेलवे स्टेशनों पर, गलियों में, सड़कों में कहीं पर भी इनके साथ ज्यादतियाँ की गई। वे शर्मवश किसी से अपना दर्द बयाँ नहीं कर पाते या किसी से शिकायत करो तो भी उनकी गलती ही मानी जायेगी। उल्टा उन पर ही आरोप लगाया जाता है कि इन्होंने ही कुछ किया होगा, और इसी बात का फायेदा उठाकर पुलिसवाले इनका शोषण करने लगते हैं।

'कबीरन' कहानी में कबीरन का अनाथालय में रहते हुए किसी पुरूष ने यौन शोषण किया, इसके बारे में वह कहते हुए समाज से पूछती है कि:- "पर मैं किसे बताती कि कौन मेरे साथ...कौन विश्वास करता कि हिजड़े के साथ बलात्कार हुआ है। कहीं किसी कानून में लिखा है कि हिजड़े के साथ बलात्कार की सजा क्या है। तुम्हारा समाज न हमें स्त्री मानता है और न पुरूष।"[311]

कुछ लोग थर्ड जेंडर का सम्बंध यौन शोषण से जोड़कर देखते हैं। उनका मानना हैं कि हिजड़ा समुदाय के लोग इस कार्य में लिप्त रहते हैं लेकिन ब्रह्मचर्य का दिखावा करने वाले लोग ही इस दलदल में अधिक धंसते हुए दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार से बहुत से ऐसे अपराध होते हैं जिनका पता भी नहीं चलता। उनके साथ हुई यौन हिंसा से वे मानसिक अवसाद की स्थिति में रहते हैं। वे यदि पुलिस से भी शिकायत करने जाये तो उनकी बात कोई सच नहीं मानता। उल्टा उन पर यौन-हिंसा करने का आरोप लगाया जाता है।

---

[311] कबीरन वेब से-

5.6 सांस्कृतिक दृष्टिकोण

प्रत्येक समुदाय का अपना सांस्कृतिक दृष्टिकोण होता है, उसी प्रकार किन्नर समुदाय का भी सांस्कृतिक परिदृश्य होता है जिसके अंतर्गत उससे जुड़ी संस्कृति, लोक-व्यवहार, सभ्यता आदि को समाहित किया जा सकता है। इनके उत्सव-पर्व विशेष में ये बड़ी धूमधाम से हिस्सा लेते है प्रतिवर्ष इसके समुदाय द्वारा अलग-अलग स्थानों पर उत्सवों का आयोजन किया जाता है। इन में सबकी भागीदारी होती है और खुशियाँ मनाई जाती हैं, इनका जो प्रमुख गुरू होता है उसके नियंत्रण में सारा काम होता है। तरह-तरह की प्रतियोगिताएँ करवाई जाती है। जिसमें सब भाग लेते हैं।

5.6.1 संस्कृति:-

इस शोध-कार्य में किन्नर समुदाय की संस्कृति को समझने के साथ-साथ उनका वर्तमान संदर्भ भी समझना होगा। संस्कृति में किन्नर समुदाय की जीवन शैली के अंतर्गत आने वाले सभी पक्षों का अध्ययन किया जायेगा। इस क्रम में गुजराती संस्कृति के तत्व यहाँ देखे जा सकतें हैं, विशेषकर संबोधन में, मेरी माँ पगे लागूं, और दिकरा जैसे शब्द और अभिवादन के तरीके गुजराती संस्कृति का परिचायक है। समाज में किस तरह से रहते हैं तथा समाज को कौनसे दृष्टिकोण से प्रभावित करते हैं। जिस स्थान में इनका जन्म होता है वहाँ की संस्कृति के तत्व इनमें अपने-आप आ जाते हैं, जैसे नाला सोपारा उपन्यास में विनोद में गुजराती संस्कृति के तत्व समाहित है इसके पीछे लेखिका का एक मंतव्य है कि:- "गुजराती संस्कृति को कथा का हिस्सा बनाने के पीछे मंशा यह है कि समाज अपेक्षाकृत खुला समाज है और ऐसी आकांक्षाओं को सहज ही स्वीकृति दे सकता है। अत: घर वापसी की यह शुरुआत एक अपेक्षाकृत खुले समाज से हो तो अधिक सशक्त शुरुआत हो सकती है।"[312] उपन्यासों और कहानियों में कहीं-कहीं अलग-अलग संस्कृति की झलक दिखाई पड़ती है, पंजाबी क्षेत्रों में जन्में किन्नरों में पंजाबी संस्कृति की झलक दिखाई पड़ती है तो कहीं गुजराती, राजस्थानी, आदि क्षेत्रों की।

संस्कृति और जेंडर के संबंध में लेखक इस प्रकार लिखतें हैं:- "शरीर का स्वरूप जितना प्रकृति से निर्धारित हुआ है उतना ही संस्कृति से भी। थर्ड जेंडर भी इसी सोच का शिकार है। इस

---

[312] डॉ. रमाकांत राय, 'घर वापसी का नया पोस्ट बॉक्स नंबर 203', (अनुसंधान) पृ.सं.42

प्रकार उसकी अधीनता, जैविक असमानता से नहीं पैदा होती है बल्कि यह ऐसे सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों और संस्थाओं की देन है। पुरूष थर्ड जेंडर में स्त्री के उन्हीं गुणों को खोजने का भरसक प्रयास करता है।"[313] हमारी संस्कृति में जेंडर को लेकर एक अलग मानसिकता रही है। दो विपरीत लिंगी व्यक्ति ही एक-दूसरे के लिए आकर्षण का केंद्र रहें हैं। लिंग आधारित समाज ने समाज को दो वर्गों स्त्री और पुरूष में विभाजित करके रख दिया है, एक यह भी कारण है कि समाज में जो तृतीयलिंगी लोग है उनको हम स्वीकार नहीं कर पाये हैं। क्योंकि वे मुख्यधारा के समाज में नही आते।

5.6.2 लोकगीत:- इनकी अपनी भाषा या फिर हिंदी भाषा में गीत होते है जो बधाई के समय नेग मांगने पर, ट्रेनों में मनोरंजन करने हेतु या फिर शादी-समारोहों में, ख़ुशी के मौकों पर अधिकांशत: गाए जाते है। बधाई टोली का मुख्य आधार गीत होते है। इनके माध्यम से यह अपनी खुशी प्रकट करते हैं। बच्चे को दुआएं देते है। उनके इस क्रिया-कलाप में एक ढोलक भी होता है, जिसकी थाप पर यह नाचते गाते हुए गीतों के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति करते हैं। शोधकार्य के दौरान किन्नर समुदाय के गीतों के बारे में जानकारी प्राप्त हुई है जो इस प्रकार है:- किसी के घर पुत्र जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले गीत-

तीन लोक के नाथ कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

तीन लोक के नाथ कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

कहा कन्हैया ने जन्म लियो है...

आओन सब मिल मांगे बधाइयां कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

राधा नाच नचाइयां कन्हैया जी ने जन्म लियो है। इन महलों में जेवर नहीं है...

इन महलों में जेवर नहीं...

का... अरे का... पहने मेरो कन्हैया...

---

[313] डॉ. इकरार एहमद, 'किन्नर विमर्श साहित्य के आईने में', विकास प्रकाशन कानपुर 2017

कन्हैया जी ने जन्म लियो है।

तीन लोक के नाथ कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

इन महलों में झूला नहीं है...

इन महलों में झूला नहीं है...

कहाँ झूलें मोरो कन्हैयां...कन्हैया जी ने जन्म लियो है...।।

तीन लोक के नाथ कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

तीन लोक के नाथ कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

तीन लोक के नाथ कन्हैया जी ने जन्म लियो है...

इस प्रकार से बधाई गीतों के माध्यम से अपनी भावनाओं को प्रकट करते हैं। कन्हैया के रूप में उस बालक को माना जाता है, उसे दुआएँ दी जाती है,

किसी घर में बच्चे के होने की ख़ुशी में वे गीत गाकर प्रकट करतें हैं। वे नवजात को कन्हैया कहकर बड़े मान-सम्मान के साथ बधाई प्रस्तुत करतें हैं। एक और गीत इस प्रकार है-

"सज रही गली तोरी अम्मा चुन्नर कोटे में...

सज रही गली तोरी अम्मा चुन्नर कोटे में...

चुन्नर कोटे में चुन्नर कोटे में...

चुन्नर कोटे में चुन्नर कोटे में...

नाचू में हा हा हा हा...

नाचू में खुशी से अम्मा चुन्नर कोटे में...।"[314]

इस प्रकार किन्नर समुदाय के सांस्कृतिक दृष्टिकोण में उनकी संस्कृति, गीत आदि आते हैं यहाँ संस्कृति किसी विशेष कालखंड को आधार बनाकर प्रस्तुत नहीं की गई है अपितु किन्नर समुदाय के जीवन-यापन की गतिविधियों का जिक्र किया गया है, जिसमें उनके गीत, बोलीगत व्यवहार आदि को प्रकट किया गया है। जेंडर के साथ संस्कृति को देखा गया है। जेंडर आइडेंटिटी के साथ व्यक्ति जैसी सहजता महसूस करेगा वह वैसी ही संस्कृति को अपनायेगा।

5.7 विशेष क्षेत्र में उल्लेखनीय किन्नर

भारत में इस समुदाय से संबंध रखने वाले कुछ ऐसे भी समुदाय है जिन्होंने अपनी हिम्मत, काम और मेहनत के बल पर अपनी विशिष्ट पहचान बनायीं है। विपरीत परिस्थितियों में रहकर भी इन्होने समाज में अपनी पहचान स्थापित की है। यह उन लोगों को करारा जवाब है जो इनकों स्वीकारने की हिम्मत नहीं कर पाते। किन्नरों के लिए सबसे पहला संकट पहचान का संकट है। कुछ तो ऐसे ही अपनी जिंदगी से समझौता करते-करते मर जाते है और कुछ अपनी पहचान छोड़ जाते हैं। तृतीय पंथी समाज के प्रति सहिष्णुता का भाव होना जरूरी है इसका यह मतलब नहीं की हम उनके प्रति पूर्णतया समर्थन में नारे लगाने लग जाये, लेकिन थोड़ी संवेदना और सोच के माध्यम से वह लोग अपनी स्थिति में सुधार ला सकते हैं।

विभिन्न क्षेत्रों में कुछ किन्नरों ने अपनी पहचान स्थापित करने की कोशिश की है। जहाँ जोइता मंडल देश की पहली न्यायाधीश बनी वही शानवी पोनुस्वामी पहली मॉडल, पृथिका पशिनी पहली उपनिरीक्षक, मानबी बंधोपाध्याय पहली महाविद्यालय प्राचार्य और शबनम बानों पहली किन्नर विधायक बनी। इन सबने यह प्रमाणित किया कि यदि इन्हें उचित शिक्षा और परिवेश दिया जाये तो इनमें भी कुछ करने का जज्बा रहता है बशर्ते उनकों उचित परिवेश और शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो।

[314] राजकुमार, 'थर्ड जेंडर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन', विकास प्रकाशन, कानपुर (2018) पृ.सं.

इनकी शिक्षा को लेकर सब-लोग पत्रिका के संपादक किशन कालजयी अपने संपादकीय लेख में इस प्रकार लिखते हैं- "शिक्षा, चिकित्सा, संगीत, राजनीति, न्यायिक सेवा, सामाजिक कार्य समेत मुख्यधारा के लगभग सभी क्षेत्रों में अपनी उपलब्धियों के खूंटे गाड़कर इन्होंने यह प्रमाणित कर दिया है कि अगर इन्हें शिक्षा और प्रशिक्षण का समुचित परिवेश मिले तो ये कोई भी उपलब्धि हासिल कर सकते हैं और इनके योगदान से समाज में चौतरफा समृद्धि भी आ सकती है।"[315] इन्हें समाज इस कारण से नहीं अपना पाता कि यह लैंगिक स्तर पर समाज के दो वर्गों से मेल नहीं खाता है। मेल और फिमेल के वर्गीकरण में इनकों दूर रखा जाता है। इस समुदाय में कुछ ऐसे लोग भी हुए है जिन्होंने अपनी मेहनत और संघर्ष के बल पर अपनी पहचान बनाने की कोशिश की है। इनमें मानबी बंदोपाध्याय, भारती, मधु बाई किन्नर, कलकी सुब्रमण्यम, पद्मनी प्रकाश, लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी आदि का नाम लिया जा सकता है।

मानबी बंदोपाध्याय- यह एक ऐसी ट्रांसजेंडर महिला है जिनके द्वारा लिखे गये उपन्यास 'एंडलेस बॉंडेज' की सर्वाधिक प्रतियाँ बिकी। यह उपन्यास किन्नर जीवन पर आधारित है। यह बंगाली भाषा की प्रोफेसर रह चुकी है साथ ही वर्तमान में बंगाल के एक महिला कॉलेज में प्राचार्य भी है। इनके संघर्ष की दासता इनकी आत्मकथा में हैं। अभी इन्होंने अपने सहयोगियों की प्रताड़ना से दुखी होकर अपने पद से इस्तीफा दे दिया है।

भारती- भारती को समाज द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया। लेकिन परिपूर्ण शक्ति और धैर्य ने उनके जीवन को परिवर्तित कर दिया। उन्होंने ईसाई धर्म का नामंकरण किया तथा थियोलोजी में स्नातक की डिग्री पूरी की और वह आज भारत के इंजीलवादी चर्च में एक पादरी है और शादियों का आयोजन करती है।

मधु बाई किन्नर- इनके माता-पिता ने इनकों घर से निकल दिया, फिर भी अपनी मेहनत के दम पर वह छतीसगढ़ की पहली महिला किन्नर नागरिक बनी। अब वर्तमान में वह एक लोक कलाकार के रूप में अपना जीवन यापन कर रही है।

---

[315] किशन कालजयी, जरूरत है एक सहिष्णु सामाजिक नजरिये की', सबलोग-जुलाई (2019) अंक-7 दिल्ली

कलकी सुब्रमण्यम- यह एक सामाजिक पत्रकार एवं कार्यकर्ता हैं। इनके पास दो स्नातकोत्तर डिग्रियां हैं। उन्होंने नर्तकी लाइफ ऑफ़ ए ट्रांसजेंडर वुमन में एक अभिनेत्री की भूमिका निभायी हैं। कलकी ने सहोदरी फाउंडेशन की स्थापना भी की जो किन्नर समुदाय की सहायता के लिए बनाया गया है।

पद्मिनी प्रकाश- यह सुप्रशिक्षित कथक नर्तकी और एक गायक कलाकार भी है। उन्हें भारत के मिस ट्रांसजेंडर के ख़िताब से भी सम्मानित किया गया था। यह धारावाहिकों में भी काम करती है और समाचार चैनल में एक लोकप्रिय हिस्सा है। इसी प्रकार से राजस्थान की गंगा कुमारी सन् 2017 में पुलिस कांस्टेबल बनी। पृथिका याशिनी देश की प्रथम ट्रांसजेंडर सब इंस्पेक्टर बनी। कलकत्ता की जोयिता मंडल प्रथम जज बनी।

मजम्मा जोगाठी

वर्ष 2021 में राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद से पद्म श्री पुरस्कार प्राप्त करने वाली कर्नाटक की जोगम्मा विरासत की ट्रांसजेंडर, लोकनर्तक है। जिन्होंने कई कठिनाइयों को झेलते हुए भी जोगती नृत्य और जनपद गीत, कन्नड़ भाषा के गीतों पर नृत्य कला में पारंगत हुई। उनके इसी योगदान के लिए उन्हें पद्म श्री से नवाजा गया।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अपने क्षेत्र में विशिष्ट पहचान बनाने वाले किन्नर अपने समुदाय के अन्य लोगों के भीतर भी प्रेरणा का संचार करते हैं। उन लोगों से प्रेरणा पाकर अन्य के मन में भी कुछ करने की इच्छा जाग्रत होती है। मानबी, भारती, मधुबाई, लक्ष्मी आदि ने अपने क्षेत्र में विशेष छाप छोड़ी है। इन लोगों को अपने लक्ष्य तक पहुँचने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लोगों की प्रताड़नाएं सहन करनी पड़ी, लेकिन फिर भी ये डटें रहे और आगे बढ़ते रहे, जो आज इनके समुदाय के लिए प्रेरणा का कार्य कर रहें हैं।

निष्कर्ष:-

मनुष्य हमेशा से अपने रहन-सहन के प्रति जागरूक रहा है, उसके रहन-सहन में उसकी संस्कृति झलकती है। किन्नर समुदाय के लोगों को देखकर पता लगाया जा सकता है कि इनका रहन-सहन एक अलग प्रकार से दिखाई पड़ता है जो हमारे समाज से इनकों अलग करता है, अलग इस रूप में कि ये अपनी मान्यताओं को पूरी तरह से अपनाते हैं, अपने समुदाय के लोगों के द्वारा जो भी क्रिया-कलाप किये जाते हैं, उनका ये अनुसरण करतें हैं। जो इनकें लिए निर्धारित नियम होते हैं उनका इनकों पालन करना ही पड़ता है, अन्यथा स्वयं के समुदाय से इन्हें बहिष्कृत कर दिया जाता है। इसी प्रकार ये स्त्री और पुरूष के लिए निर्धारित वस्त्रों में से कोई भी पहन सकते है लेकिन अधिकांशत: ये स्त्रीगत मनोभावों की और अधिक झुके हुए होते हैं इस कारण भी इनकों सजना, संवरना आदि पसंद होता है और स्त्रियों के कपड़े पहनना भी।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नर समुदाय की परम्पराओं में बधाई देना और उत्सव, समारोहों में प्रस्तुति देना, विवाह, गुरू-शिष्य परम्परा, बधियाकरण, मृत्यु संस्कार आदि का उल्लेख किया जाता है। इनका नाचना-गाना, खुशियाँ मनाना आदि इनकी परम्पराओं में शामिल किया जाता है, अपनी परम्पराओं से इन्हें जीवन्तता मिलती है और ये क्रम निरंतर चलता रहता है। उत्सवों-आयोजनों में भाग लेना इनके लिए रूचि के साथ-साथ रोजगार का साधन भी बनता है।

इस प्रकार सामाजिक स्थलों पर, परिवार में, समाज में उन्हें भेदभाव की दृष्टि से देखा जाता है। यह हिंदी कथा-साहित्य और अन्य भाषा के साहित्य में भी दिखाया गया है लेकिन आम तौर पर हम अपने आस-पास भी देख सकते है, कि इन्हें स्वीकार करना हमारे लिए भी सहज नहीं होता है लेकिन ये अपनी स्थिति सुधारने के लिए हमसे जुड़ना चाहते हैं ताकि इनके साथ भेदभाव न किया जाए। किन्नर समुदाय अपने साथ किये गये इस शारीरिक भेदभाव के लिए भगवान को दोषी ठहराते हैं, उनका कहना है कि भगवान ने हमें जानवर से भी बद्तर बनाया है।

इस प्रकार से लेखक का मंतव्य यहाँ सिर्फ यह बताना है कि यदि समाज के डर से किन्नर बच्चों को अपनाया नहीं जाता है, यह समाज जो विपदा में साथ नहीं देता है। केवल साधन-सम्पन लोगों को ही पूछने आता है। अर्थविहिन लोगों को तो कोई पूछता भी नहीं है। समाज का दृष्टिकोण बहिष्करण का दृष्टिकोण है, किन्नर समुदाय समाज को स्वीकार्य नहीं हैं क्योंकि वह शारीरिक कमी का शिकार है। समाज का नजरिया इनके प्रति अवहेलना का है।

किन्नर समुदाय जिस प्रकार अपना अलग अस्तित्व रखता है उसी प्रकार मनुष्य समाज से भिन्न उसके संस्कार, रीति-रिवाज, मूल्य, परम्पराएँ, धार्मिक अन्धविश्वास, होते है। कुछ मान्यताएं इनको अन्धविश्वास की ओर धकेलती है। इस प्रकार की मान्यता है कि इनकी मृत्यु होने पर इनके शव को रात के अँधेरे में निकाला जाता है ताकि कोई गर्भवती स्त्री उन्हें ना देख ले और उसके भी वैसी संतान ना हो जाये। दाह संस्कार से पहले उसके शव को जूतों-चप्पलों से बहुत पीटा जाता है। उसे जलाया नहीं अपितु दफनाया जाता है और गालियाँ निकाली जाती है कि पुन: इस जून में कभी पैदा मत होना।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि व्यक्ति की समाज में सामाजिक स्थिति ही उसके विकास को तय करती है, तभी वह समाज सामूहिक रूप से विकास कर पाता है जब समाज में उसको उचित स्थान प्राप्त हो। लेकिन किन्नर समुदाय के लिए इस प्रकार की स्वीकृति एक बहुत बड़ी चुनौती है। इनकी सामाजिक मान्यताएँ एकदम अलग है। ये भी अपने त्योहारों का आयोजन करते हैं। गुरू -शिष्य परंपरा इनमें खासा महत्त्व रखती है, ये उत्सवों का आयोजन करते हैं और एक स्थान पर एकत्र होते हैं। इनकी सामाजिक स्थिति का स्तर भी अलग-अलग है। पारिवारिक स्तर पर इनसे अलग प्रकार से व्यवहार किया जाता है और राष्ट्रीय स्तर पर अलग से व्यवहार किया जाता है। परिवार में जन्मते ही ये लोग दुराव-छिपाव का कारण बन जाते है और राष्ट्रीय स्तर पर उपेक्षा का। उपेक्षा दोनों ही स्तरों पर की जाती है लेकिन मानदंड बदल जाते है। राष्ट्रीय स्तर पर इसका फलक विस्तृत हो जाता है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि व्यक्ति की समाज में सामाजिक स्थिति ही उसके विकास को तय करती है, तभी वह समाज सामूहिक रूप से विकास कर पाता है जब समाज में उसको उचित स्थान प्राप्त हो। लेकिन किन्नर समुदाय के लिए इस प्रकार की स्वीकृति एक बहुत बड़ी चुनौती है। इनकी

सामाजिक मान्यताएँ एकदम अलग है। ये भी अपने त्योहारों का आयोजन करते हैं। गुरू -शिष्य परंपरा इनमें खासा महत्त्व रखती है, ये उत्सवों का आयोजन करते हैं और एक स्थान पर एकत्र होते हैं। इनकी सामाजिक स्थिति का स्तर भी अलग-अलग है। पारिवारिक स्तर पर इनसे अलग प्रकार से व्यवहार किया जाता है और राष्ट्रीय स्तर पर अलग से व्यवहार किया जाता है। परिवार में जन्मते ही ये लोग दुराव-छिपाव का कारण बन जाते है और राष्ट्रीय स्तर पर उपेक्षा का। उपेक्षा दोनों ही स्तरों पर की जाती है लेकिन मानदंड बदल जाते है। राष्ट्रीय स्तर पर इसका फलक विस्तृत हो जाता है।

वर्तमान संदर्भ इनका अपने अस्तित्व को लेकर है, ये हमारी तरह ही रहना, उठना, बैठना चाहते हैं, जीना चाहते हैं, मुख्यधारा के समाज में आना चाहते हैं लेकिन अभी तक नहीं आ पा रहें हैं। वे अपनी सभी स्थितियों में सुधार चाहते हैं, पर इसमें समय लगने के साथ ही इनकों शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक, रूप से जागरूक होने की आवश्यकता है। इस प्रकार से स्पष्ट है कि उनके अतीत को तो सुधारा नहीं जा सकता लेकिन वर्तमान को तो सुधारा जा सकता है ताकि उनकों भी अपनी तरफ देखकर यह एहसास नहीं हो कि उनका अस्तित्व क्या है।

उपन्यास यमदीप, किन्नर कथा, जिन्दगी, 50-50, नाला सोपारा, आदि के इनके माध्यम से लेखकों ने किन्नर समुदाय को लेकर शिक्षा प्रदान कराने की वकालत की है। वहीं कहानियों के माध्यम से कहा गया है कि कुछ-पढ़ लिखकर रोजगार पाने लायक हो जाए तो इनकी स्थिति में सुधार लाया सके। उपन्यासों का कोई न कोई पात्र इस चेतना से युक्त दिखाई पड़ता है। जिंदगी 50-50 का नायक भी अपने किन्नर बच्चे को पढ़ा-लिखाकर बड़ा बनाना चाहता है वही, नाला सोपारा का विनोद भी आगे पढ़ना चाहता है, वह अपने समाज में नहीं जाना चाहता है।

इस प्रकार से वे धनार्जन करते है, और अपना जीवन निर्वहन करते है। यदि कुछ किन्नरों को छोड़ दिया जाए तो बाकी किन्नरों की आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ नहीं होती है उनके लिए दो वक्त का खाना भी नसीब नहीं हो पाता है। जितना नेग, भीख आदि में मिलता है उसका अधिकांश हिस्सा उन्हें अपने गुरू को देना पड़ता है। उनके पास कुछ नहीं बचता। दिन भर मारे-मारे फिरने के उपरांत शाम को उनका वही हाल रहता है। इस कारण उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं हो पाता है। कई

बार इस कार्य के दौरान लड़ाई-झगड़ा भी हो जाता है जिस कारण उन्हें चोट भी लग जाती है। इस तरह से उनमें आर्थिक विषमता तो हमेशा बनी ही रहती है।

इस तरह से मनोवैज्ञानिक रूप से यदि देखा जाए तो ये अपने-आपमें एक हीन ग्रंथि का शिकार रहते हैं, ये अपने-आपको कोसते रहते है, ईश्वर को भी कोसते है कि हमें ऐसा क्यों बनाया लेकिन इसके लिए प्रकृति दोषी नहीं है, जैविक कारण होते हैं इसलिए उन्हें इस योनि में जन्म लेना पड़ता है। ये कई बार अपने शरीर को लेकर मानसिक रूप से बीमार रहते है और स्वयं को समाप्त करने की भी सोचते हैं, वे इस शरीर से बाहर निकनला चाहते हैं जब समाज द्वारा उन्हें कहकर यह बता दिया जाता है कि वे हिजड़े हैं इससे ज्यादा कुछ नहीं, ये उनके मानसिक रूप से प्रताड़ित रहने के लक्षण हैं।

कुछ लोग थर्ड जेंडर का सम्बंध यौन शोषण से जोड़कर देखते हैं कि उनका मानना हैं हिजड़ा समुदाय के लोग इस कार्य में लिप्त रहते हैं लेकिन ब्रह्मचर्य का दिखावा करने वाले लोग ही इस दलदल में अधिक धंसते हुए दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार से बहुत से ऐसे अपराध होते हैं जिनका पता भी नहीं चलता। उनके साथ हुई यौन हिंसा से वे मानसिक अवसाद की स्थिति में रहते हैं। वे यदि पुलिस से भी शिकायत करने जाये तो उनकी बात कोई सच नहीं मानता। उल्टा उन पर यौन-हिंसा करने का आरोप लगाया जाता है।

किन्नर समुदाय के सांस्कृतिक दृष्टिकोण में उनकी संस्कृति, गीत आदि आते हैं यहाँ संस्कृति किसी विशेष कालखंड को आधार बनाकर प्रस्तुत नहीं की गई है अपितु किन्नर समुदाय के जीवन-यापन की गतिविधियों का जिक्र किया गया है, जिसमें उनके गीत, बोलीगत व्यवहार आदि को प्रकट किया गया है। जेंडर के साथ संस्कृति को देखा गया है। जेंडर आइडेंटिटी के साथ व्यक्ति जैसी सहजता महसूस करेगा वह वैसी ही संस्कृति को अपनायेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अपने क्षेत्र में विशिष्ट पहचान बनाने वाले किन्नर अपने समुदाय के अन्य लोगों के भीतर भी प्रेरणा का संचार करते हैं। उन लोगों से प्रेरणा पाकर अन्य के मन में भी कुछ करने की इच्छा जाग्रत होती है। मानबी, भारती, मधुबाई, लक्ष्मी आदि ने अपने क्षेत्र में विशेष छाप छोड़ी है। इन लोगों को अपने लक्ष्य तक पहुँचने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लोगों

की प्रताड़नाएं सहन करनी पड़ी, लेकिन फिर भी ये डटें रहे और आगे बढ़ते रहे, जो आज इनके समुदाय के लिए प्रेरणा का कार्य कर रहें हैं।

संदर्भ

1.सं. डॉ. एम फिरोज अहमद, वांग्मय-1 'थर्ड जेंडर:हिंदी कहानियाँ', 'कौन तार से बीनी चदरिया', अंजना वर्मा, पृ.सं.97
2.सुभाष अखिल, 'दरमियाना', पृ.सं.19
3.सेरेना नंदा, नाइदर मेन नॉर वुमेन', वड्सरोथ पब्लिशिंग कंपनी 2.संस्करण पृ.सं.1
4.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.16
5.डॉ. राधिका के.एन. 'तृतीय लिंगी समाज की समस्याएं', युद्धरत आम आदमी, जनवरी-2018 दिल्ली, पृ.स.80
6.अंजना वर्मा 'कौन तार से बीनी चदरिया', पृ.सं. 24
7.https://www.bbc.com/hindi/india-48488118
8.प्रदीप सौरभ, तीसरी ताली, पृ.सं.94
9.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.166
10.प्रमोद मीना, 'किन्नर भी इंसान होता है', 'अनुसंधान पत्रिका', पृ.सं.12
11.नीरजा माधव, 'यमदीप' पृ.सं.167
12.महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', पृ.सं.119
13.निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं.
14.सं. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श', अमन प्रकाशन कानपुर (2016) पृ.सं.162
15.पंजाब स्क्रीन INDIA, 'मानवाधिकार में कहीं खो सी जाती है तीसरे लिंग की आवाज',. htm से-
16.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.11
17.http://sarhadepatrika.com/article/kiran-grovar-35-46.pdf
18.हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', पृ.सं.109
19.निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं.69

20.किरण सिंह, 'संझा', थर्डजेंडर: चर्चित कहानियाँ-सं. डॉ.विमल सूर्यवंशी पृ.सं.79
21.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.25
22.गीतिका वेदिका, 'अधूरी देह', पृ.सं.13
23.अंजना वर्मा, 'कौन तार से बीनी चदरिया', सं. डॉ.विमल सूर्यवंशी, पृ.सं.59
24.महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', पृ.सं.119
25.प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली', पृ.सं.41
26.भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', पृ.सं.44
27.देवदत्त पट्टनायक, 'शिखंडी', पृ.सं.114
28.देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, पृ.सं.40
29.नवतेज पुआधी, 'ऊँचा बुर्ज लाहौर का', पृ.सं.83
30.डॉ. राधिका के.एन., तृतीय लिंगी की समस्याएं, युद्धरत आम आदमी, सं.सूरज बडत्या-53 (जन-2018) नई दिल्ली पृ.80
31.चित्रा मुद्गल, 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा', पृ.सं.
32.सूरज बड्त्या, 'कबीरन', वेब से-
33.मोहम्मद हुसैन डायर, 'किन्नरों का सामूहिक साक्षात्कार', सरस्वती अप्रेल-सित.2018 सं.महेश भारद्वाज, नई दिल्ली, पृ.सं.23
34.भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', पृ.सं.145
35.शरद सिंह, 'जारी है अस्तित्व की लड़ाई', सरस्वती, पृ.सं.6
36.https://aajtak.intoday.in/education/story/nelson-mandela-quotes-in-hindi-1-878501.html

37.डॉ. रीता सिंह, 'क्या मेरा कुसूर है', पृ.स. 44
38.डॉ. रेशमी पांडा मुखर्जी, 'वजूद को साबित करने की जद्दोजहद में', अनुसंधान- पृ.सं.32
39.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.94
40.अल्पना सिंह, 'विमर्श तीसरी सत्ता का संघर्ष', जनसत्ता (सित. 2017)
41.नीरजा माधव, 'यमदीप' पृ.सं. 212
42.प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली', पृ.सं. 78
43.नीरजा माधव, 'यमदीप' पृ.सं. 49
44.सूरज बडत्या, 'कबिरन', वेब से-
45.सेरेना नंदा, 'नाइदर मैंन नोर ए विमेन', पृ.सं. 65
46.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं 165
47.डॉ. मुक्ता टंडन, 'हाशिये पर दर्ज किन्नर व्यथा', सं. आशीष कुमार दीपांकर, 'भारतीय समाज में किन्नरों का यथार्थ', पृ.सं.75
48.https://www.gaonconnection.com/desh/why-the-kinnars-had-to-make-their-own-separate-akhara-43622
49.Hindi.mapsofiindia.com
50..डॉ. इकरार एहमद, 'साहित्य के आईने में थर्डजेंडर', पृ.सं.56
51.अनुसूया त्यागी, 'मैं भी औरत हूँ', पृ.सं.59
52.भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', पृ.सं.72
53.विमलेश शर्मा, 'मन मरीचिका', पृ.सं. 49
54.महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', पृ.सं.82
55.निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', पृ.सं. 68
56.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.28-29
57.कबीरन वेब से-
58.सूरज पालीवाल, 'सघन अनुभूतियों में रचा-बसा सजग तृतीय लिंगी समाज', पहल-107 सं. पृ.सं.232
59.कोशलेन्द्र, 'तृतीयपंथी यानि किन्नरों की शिक्षा', हिंदी गद्यकोश से-
60.डॉ. रमाकांत राय, 'घर वापसी का नया पोस्ट बॉक्स नंबर 203', (अनुसंधान) पृ.सं.42
61.डॉ. इकरार एहमद, 'किन्नर विमर्श साहित्य के आईने में', विकास प्रकाशन कानपुर 2017
62.राजकुमार, 'थर्ड जेंडर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन', विकास प्रकाशन, कानपुर (2018) पृ.सं.
63.किशन कालजयी, जरूरत है एक सहिष्णु सामाजिक नजरिये की', सबलोग-जुलाई (2019) अंक-7 दिल्ली

षष्टम अध्याय: किन्नर केन्द्रित साहित्य की भाषा

6.1भाषा

6.2 भाषागत विविधता

6..3 व्यावहारिक भाषा

6.4 व्यवसायिक भाषा

षष्टम अध्याय: किन्नर केन्द्रित साहित्य की भाषा

प्रस्तुत अध्याय में किन्नर समुदाय द्वारा अपने आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन में जिस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया जाता है; उसका अध्ययन किया जायेगा। इस अध्याय में उनकी जीवन शैली में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का हिंदी में अनुवाद करके बताया गया है। इनकी भाषा की भी एक शब्दावली हो सकती है लेकिन अभी तक इनका कोई अलग से शब्दकोश तैयार नहीं किया गया है, इनसे पूछकर ही शब्दों का अर्थ पता किया जा सकता है। अपने शोध कार्य में इनसे संबंधित पुस्तकों के अध्ययन के दौरान पाये गये शब्द और इनसे साक्षात्कार लेकर पता किये गये शब्दों का विवरण इस अध्याय में हैं। इनका किस प्रकार का शब्द प्रयोजन है, यह अपने लोगों से बात करते समय अलग शब्दावली का प्रयोग करते है और अन्य लोगों से बात करते समय अलग शब्दों का, इसका विवरण प्रस्तुत अध्याय में दिया जायेगा।

भावों की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम माना जाता है भाषा तत्व। प्रभावी भाषा का असर लेखक की लेखनी के माध्यम से अवश्य दिखाई देता है। शब्द प्रयोग, वाक्य-रचना, भाषा-शैली, सांकेतिकता आदि को भाषा शैली के अंतर्गत माना जाता है। भाषा के निर्माण की प्रक्रिया में संबंधित समुदाय का सामाजिक सांस्कृतिक दबाव भी बना रहता है। समाज के विभिन्न वर्गों और सामाजिक स्थितियों का प्रभाव उस भाषा पर दिखाई पड़ता है। भाषा की सामाजिकता को लेकर इस प्रकार रखा गया है:- "समाज और मनुष्य के जीवन में भाषा का बुनियादी महत्त्व होता है। समाज की मानवीयता और मनुष्य की सामाजिकता के विकास में भाषा की अहम भूमिका सब स्वीकार करते हैं। भाषा मनुष्य की सामाजिकता का अहम लक्षण, माध्यम और प्रमाण है।"[316] इस तरह से भाषा का एक सामाजिक आधार होता है। इस पुरूष प्रधान समाज में जहाँ स्त्रियों को ही दोयम दर्जे का माना जाता है तो किन्नर समुदाय को विशेष मामलों में बोलने का अधिकार कहाँ है? किन्नर समुदाय का भाषागत संदर्भ अपने-आप में कोई विशेष नहीं है किंतु किन्नर समुदाय पर शोध कार्य के दौरान यह अनुभव हुआ कि इनका भी अलग से एक भाषिक संदर्भ हो सकता है क्योंकि यह जिस समुदाय में अपना-जीवन यापन करते है वहाँ अलग-अलग स्थानों से लोग आते हैं इसलिए इनकी भाषा मिली-

---

[316] मैनेजर पाण्डेय, 'आलोचना की समाजिकता'. पृ.सं.4

जुली खिचड़ी के रूप में हो जाती हैं। भाषागत विविधता और अलग-अलग शब्द प्रयोग देखने को मिलते हैं।

भाषा-शैली के अंतर्गत किन्नर समुदाय के भाषागत व्यवहार को समझा जायेगा। साहित्यकार अपने विचारों के माध्यम से दृश्य विशेष का अथवा पात्रों के व्यवहार से उसे भाषाबद्ध करके प्रस्तुत करता है। भाषा के माध्यम से ही वह अपनी मनोभावनाएँ अभिव्यक्त कर पाता है। वह इस ढंग से प्रस्तुत करता है कि पाठक के सामने जीता-जागता चित्र प्रस्तुत करे। लेखक भाषा-शैली के माध्यम से कृति को रोचक बनाने का प्रयास करता है।

6.1 भाषा

भाषा एवं शैली का उपन्यास और कहानी साहित्य में काफ़ी महत्त्व होता है। कोई भी रचनाकार भाषा-शैली के माध्यम से अपनी रचना के लिए आधार तैयार करता है, यदि भाषा-शैली आकर्षक है तो पाठक लेखक के उस उद्देश्य तक आसानी से पहुँच सकता है। उपन्यास और कहानी में कौतुहल बनाये रखने के लिए भाषा-शैली का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। प्रेमचंद के अनुसार शब्दों में रचना शैली, सजीव और प्रभावोत्पादक होनी चाहिए। भोलानाथ तिवारी के अनुसार:- "भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं।"[317] भाषा एक व्यवस्था होती है। भाषा अव्यवस्थित नहीं हैं। सामान्यत: एक भाषा का प्रयोग एक विशेष वर्ग अथवा समाज में होता है। उसके द्वारा ही वह भाषा बोली या समझी जाती है। भोलानाथ तिवारी की एक और परिभाषा इस प्रकार है:- "भाषा उच्चारणों से उच्चरित यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाज के लोग आपस में भावों और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।"[318] विचारों के आदान-प्रदान से भाषा का दायरा विस्तृत होता है। भाषा के प्रसार का माध्यम विस्तृत क्षेत्र-विशेष होता है। जितना बड़ा क्षेत्र होगा भाषा भी उतनी ही व्यापक होगी।

किन्नर समुदाय पर शोध कार्य करते हुए मैंने यह पाया कि इनकों जानने के साथ-साथ इनकी भाषिक विशेषता को भी जानना आवश्यक है। इनकी भाषागत विविधता को जानने का मौका

[317] भोलानाथ तिवारी, 'भाषा विज्ञान', पृ.सं.1
[318] वही, पृ.सं.4

मिला। इनकी भाषा का भी अलग से शिल्प विधान का अध्ययन किया जाना चाहिए जिसमें उनकी भाषा में प्रयुक्त प्रतीकों, बिम्बों आदि का पता लगाया जा सके और इससे यह भी पता चलता है कि हिंदी भाषा से इस समुदाय के भाषागत प्रयोजन कितने अलग है। इस अध्याय में किन्नर समुदाय के भाषागत प्रयोग को हिंदी भाषा से जोड़कर देखा जायेगा कि हिंदी भाषा से मिलते-जुलते कितने ही शब्दों का प्रयोग किया जाता हैं।

भाषा अभिव्यक्ति का एक माध्यम है। किन्नर जीवन पर लिखा गया साहित्य अलग-अलग भाषाओं में अपनी रचनात्मकता प्रस्तुत करता है। भाषागत विभिन्नता होने पर भावनाएं समाप्त नहीं हो जाती अपितु ज्यों कि त्यों बनी रहती है। तमिल, तेलगु, मराठी, अंग्रेजी, हिंदी आदि भाषाओं में किन्नर जीवन शैली आधारित साहित्य लिखा जा रहा है। भाषागत विभिन्नता से इनके जीवन के परिदृश्य में विस्तार आ जाता है। अलग-अलग भाषिक संबोधन इनके दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करते हैं। इनके द्वारा प्रयोग में लायी जाने वाली शब्दावली इनकों अन्य लोगों से एकदम अलग करती है। जो इनकें मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को भी दर्शाती है। उनके लोकजीवन से संबंधित गीतों की भाषा, दैनिक व्यवहार की शब्दावली आदि शब्दों का प्रयोग यह करते हैं। भाषिक सम्प्रेषण से संस्कृति, परंपरा, समाज की सभ्यता आदि का आदान-प्रदान होता है। भाषा को किसी पर जबरदस्ती थोपा नहीं जा सकता अपितु वह तो ज्ञान के विस्तार का प्रतीक है। किन्नर समुदाय द्वारा प्रयुक्त भाषा को एक प्रकार से मिश्रित भाषा कहा जा सकता है। जिसमें फ़ारसी के शब्दों का प्रयोग बहुतायत मिलता है।

कई लेखकों ने इनकी भाषा को फ़ारसी भाषा करार दिया है। जिसका पता तो अध्ययन और विश्लेषण के आधार पर ही लगाया जा सकता है। इनकी भाषा को आसानी से समझा नहीं जा सकता और ऐसा कोई शब्दकोश भी नहीं जिसके माध्यम से इसे समझा जा सकें। इनके द्वारा शब्दों का अर्थ बताये जाने पर ही हम शब्दों की पड़ताल कर पाते हैं। नीरजा माधव ने अपने उपन्यास यमदीप में किन्नर समुदाय की भाषा का बहुतायत प्रयोग किया है। जिससे उनके द्वारा प्रयुक्त शब्दों की जानकारी प्राप्त होती है, लेखिका ने इनसे बात करके, इनके क्षेत्रों में घूम-घूमकर शब्दों का संग्रह किया। किन्नरों की भाषा व्यवहार में प्रयुक्त की गई है जो आपसी वार्तालाप के माध्यम से प्रकट होती है।

विचलनः- इस अध्याय में किन्नर साहित्य के अंतर्गत उपन्यास और कहानियों में आने वाले ध्वनि-चयन, विचलन, आदि का अनुशीलन किया गया है।

भाषा के कुछ नियम होते हैं, जब कोई भी साहित्यकार इन नियम और बन्धनों से परे जाते हुए भाषा की इकाइयों को रचनाओं में अपनी इच्छा के अनुसार प्रयोग करता है, उसे विचलन माना जाता है, यह विचलन ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य अर्थ, आदि रूपों में देखने को मिलता है।

ध्वनि विचलनः-

'कर्तव्य' कहानी में ध्वनि विचलन इस प्रकार है- "मैं लड़का हूँ लड़का और ताकत है तो लड़के देख ले...मुझसे।"[319] इस कहानी में लड़का शब्द को विशेष जोर देकर बोला गया है।

"रसाली ऐसा सबक दो कि फिर जुबान न खोल सके या ले जाकर राजघाट पुल से इसे भी झटका देना...।"[320] रसाली एक गाली है जो अपने मूल शब्द साली से हटकर बोला गया है।

रूप स्तर पर विचलनः-

रूप के स्तर पर विचलन में भाषा में शब्दों के प्रयोग में विचलन दिखाई पड़ता है:- "तुम्हारे पास जुलूस निकालने का अनुमति पत्र है?...यह सुनते ही रामकली ने अपना छतरीनुमा पेटीकोट इंस्पेक्टर के सामने कमर तक उठा दिया।"[321] छतरीनुमा शब्द में यहाँ विचलन देखने को मिलता है जो पेटीकोट के लिए प्रयोग में लाया गया है।

वाक्य स्तर:- कोई भी साहित्यकार यदि व्याकरण के नियमों को तोड़कर वाक्य निर्माण करता है तो उसे वाक्य स्तर पर विचलन कहा जाता है जो इस प्रकार है:-

अपूर्ण वाक्य-

[319] विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्ड जेंडर की कहानियाँ', 'कर्तव्य', पृ.सं.24

[320] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.280

[321] सलाम बिन रज्जाक, 'बीच के लोग', 'थर्डजेंडर: हिंदी कहानियाँ-खंड एक (वांग्मय पत्रिका) पृ.सं.34

'इस जिंदगी के उस पार' कहानी में अपूर्ण वाक्य इस प्रकार है:- "दूसरा पुलिस वाला और नजदीक आकर धमकाते हुए बोला 'बता आज कितने रूपये कमाये...।"[322] इस कहानी में वह अपनी बात पूरी न करते हुए उससे प्रश्न करता है।

"बंद कोठरी में जमीन पर लेट गई और दोनों पाँव दीवार पर फैलाकर टिका लिया। शरीर को धनुष की तरह तान लिया। अम्मा की धोती फाड़कर मुँह में ठूंस लिया।... सांस रोकी।[323] यही वाक्य समाप्त हो गया यहाँ से दूसरा वाक्य आरंभ हो गया। इस तरह से वाक्य में विचलन आ गया।

पूर्ण वाक्य:- "साहब जी, पूरी शाम में सिर्फ दो ही ग्राहक आये। अब तो कमरे पर लौटने का समय भी हो गया है। अँधेरे में अब कहीं से ग्राहक नहीं आयेंगे। शाम होते ही ग्राहक झाड़ी में आने से डरते हैं। बहुत ज्यादा कमाई नहीं होती है। इसी पैसे से सब्जी आटा और राशन भी खरीदना है। आप की कृपा नहीं हो तो भूखे मर जाऊँगा।"[324] यहाँ पात्र ने वाक्य पूरा किया और पुलिस वाले के सामने अपनी बात कही।

इसी प्रकार:- बिंदा महाराज कहानी में "मर्द होता तो बीवी बच्चे होते, पुरुषत्व का शासन होता, स्त्री भी होती तो किसी मर्द का सहारा मिलता, बच्चों की किलकारियों से आत्मा का कण-कण तृप्त हो जाता।"[325] यह एक प्रकार से पूर्ण वाक्य है स्वयं बिंदा महाराज अपनी विवशता बताता है।

अर्थ विचलन

भाषा का शरीर वाक्य से चलकर ध्वनि की इकाई पर समाप्त होता है। इसके बाद उसकी आत्मा पर विचार करना पड़ता हैं। अर्थ को भाषा की आत्मा कहते हैं। किसी भाषा के अर्थ को समझने पर ही उसकी आत्मा को समझा जा सकता है। अर्थ विचलन में एक वाक्य के दो या अधिक अर्थ हो सकते हैं यथा:- 'ई मुर्दन का गाँव' कहानी में एक उदाहरण अलिंगी किन्नर के संदर्भ में इस

---

[322] पृ.सं.156

[323] किरन सिंह, 'संझा', 'थर्डजेंडर: हिंदी कहानियाँ-खंड एक (वांग्मय पत्रिका) पृ.सं.64

[324] वही,पृ.सं.156

[325] शिवप्रसाद सिंह, 'बिंदा महाराज' थर्डजेंडर: हिंदी कहानियाँ-खंड एक (वांग्मय पत्रिका) पृ.सं.26

प्रकार कहा गया है:- "उनकी रूट्स तो इंडिया में हैं।"[326] अर्थात वे भारत के रहने वाले हैं और बाहर रहतें है लेकिन उनकी जान इंडिया में बसी है, इस तरह से यहाँ अर्थ विचलन हैं।

ध्वनि चयन:-

संझा कहानी में इस प्रकार है:- "वे डरे और जले हुए लोग अपनी बिरादरी बढ़ाना चाहते हैं। तुम्हारे बारे में पता चल गया तो वो लोग तुम्हें छिनने आयेंगे और चौगांव के लोग तुम्हें घर से खींचकर उनके साथ जेल भेज देंगे।...तुम्हें जिंदगी भर अपने-आपको छिपाना है संझा।"[327] ध्वनि गत शब्दों का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है जिसमें विशेष ध्वनि सुनाई दे।

शब्द चयन:-

शब्द की विशेष सार्थकता को शब्द चयन कहते हैं। 'यमदीप', 'दरमियाना' उपन्यासों के शीर्षक में शब्द चयन की प्रधानता है जैसे:-

"शायद सब के सब दरमियाने, यानी न तो वे जनाने थे और न ही मर्दाने।

'यमदीप' उपन्यास में बार-बार यमदीप शब्द का प्रयोग किया गया है, यम से तात्पर्य अँधेरा और दीप का अर्थ है प्रकाश फैलाने वाला। वह दीप जो अँधेरे को दूर करता है।

'नाला सोपारा' उपन्यास में नाला सोपारा शब्द अधिक स्थानों पर प्रयुक्त किया गया है। यह जगह का नाम है।

इसी प्रकार बिंदा महाराज कहानी में 'बिंदा' शब्द अधिक प्रयोग में लाया गया है जो कहानी के मुख्य पात्र का नाम है यथा:- चारपाई पर लेटे-लेटे बिंदा महाराज का दिल डूबने लगा। बखत की तरह उजली धूप देखकर उसे बड़ी राहत मिली। कहानी में अनेक स्थानों पर बिंदा शब्द का प्रयोग हुआ है।

---

[326] कुसुम अंसल, 'ई मुर्दन का गाँव', थर्ड जेंडर: हिंदी कहानियाँ खंड-1, पृ.सं.52

[327] किरन सिंह, 'संझा' थर्ड जेंडर: हिंदी कहानियाँ खंड-1, पृ.सं.65

लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग:-

किन्नर केंद्रित साहित्य में कहीं-कहीं लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भी दिखाई देता है। 'यमदीप' उपन्यास में इसका उदाहरण देखने को मिलता है:- "इस बार अगर भईया मामला फिट हो जाये और संत राव मान जाय तो वनमंत्री का पद दिजियगा। हर्र लगे न फिटकरी, रंग चोखा हो जाय।"[328]

इसी प्रकार "प्रजातंत्र के नाम पर जिस तरह की भेड़िया धसान यहाँ हैं, उसी को देख सब समझ लेते हैं कि कर लो बेटा उल्लू सीधा।"[329]

"घर को फूट, जगत को लूट"[330]

6.2 भाषागत विविधता

मुख्यतया जिस भाषा का यह समुदाय दैनिक व्यवहार में प्रयोग करते हैं उसका रूप अलग-अलग हो सकता है। मौखिक रूप में साधारण बोल-चाल में जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं, जैसे उठने-बैठने, गाने-बजाने में प्रयुक्त किये जाने वाले शब्द मौखिक रूप में कहे जायेंगे।

इनके लिखित रूप को यदि ध्यान में रखे तो इनका कोई विशेष ग्रंथ, भाषा अथवा लिपि नहीं होती यदि ये पढ़ना-लिखना जानते हैं तो उसी भाषा का प्रयोग यह अन्य कार्यों में करते हैं। जैसे हिंदी में पढ़े-लिखे हिंदी भाषा का प्रयोग करेंगे और अंग्रेजी पढ़े हुए अंग्रेजी का प्रयोग करेंगे। यदि अन्य भाषा क्षेत्र से यदि वह आता है तो उसी भाषा, बांग्ला, मराठी, तमिल, तेलगु का वह प्रयोग करेगा।

सांकेतिक भाषा से यहाँ अभिप्राय इनके हाव-भाव और तालियों के माध्यम से जो अभिव्यक्ति की जाती है उसे सांकेतिक भाषा कहा जाता है। यह विशेष अवसरों पर प्रयुक्त की जाती है। इनके द्वारा बजाई जाने वाली ताली के भी अलग-अलग प्रकार है। उत्सवों, बधाई के समय नाच-

---

[328] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.117

[329] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.119

[330] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.166

गाने में यह अधिकांशत: ताली का प्रयोग करते हैं और कभी-कभी बातचीत करते समय भी संकेत के रूप में ताली का प्रयोग करते हैं।

ताली के माध्यम से अभिव्यक्ति:-

ताली बजाना उनके व्यवहार की स्वभावगत विशेषता है, जो उनके व्यवहार में अपने-आप आ जाती है। दरमियाना उपन्यास में कुछ इस प्रकार के उदाहरण देखे जा सकते हैं-

'तभी वह फिरकी की तरह घूमी और घूमकर बैठ गयी। उसके दोनों हाथों की हथेलियाँ अब भी रह-रह कर टकरा जाती थी।

'किन्नरों की प्रतिभा' कहानी में ताली बजाकर प्रतिरोध प्रकट किया गया है:- "ताली बजाते हुए शर्मीली ने कहा मुय्ये कुछ तो शर्म कर तेरे कीड़े पड़ेंगे तू सड़-सड़ के मरेगा। छोड़ दे इसको जल्दी चल यह बच्ची रो भी नहीं रही है। भूखी-प्यासी है सवेरे से। चल जल्दी घर चलते हैं।"[331]

न-री-न इक्यावन से कम न लूंगी, हाँ पहला लड़का होया है और वो भी चाँद सा। एक-दूसरे दरमियाने ने ताली दे मारी। खुदा करें हमरी उमर भी इसे लग जाये...।

ताली का अर्थ भावों की अभिव्यक्ति से लगाया जा सकता है। अपनी किसी बात को प्रकट करना, अभिव्यक्ति देना, नकारना अथवा गुस्सा या नाराजगी जाहिर करना भावों को किन्नर ताली के माध्यम से प्रकट करते हैं।

"...रेशमा ने उसी तरह दोनों हाथों की हथेलियों के मध्य भाग को टकराया और लचकते हुए कहने लगी।"[332]

भाषा मनुष्य के व्यवहार को प्रकट करने का सबसे महत्वपूर्ण साधन होती है। भाषा के बिना कोई भी समाज अविकसित अवस्था में रहता है। भाषा एक समाज का निर्माण करती है और एक समाज दूसरे समाज से भाषा के माध्यम से जुड़ता हुआ चला जाता है। किसी भी समुदाय की अपनी

---

[331] रचना 'रश्मि', 'किन्नरों की प्रतिभा', पृ.सं.31

[332] सुभाष अखिल, 'दरमियाना', पृ.सं. 43

एक भाषिक पहचान होती है। भाषागत विविध रूप हो सकतें है, लेकिन विविधता के बावजूद वह समाज दूसरे समाज से जुड़ना चाहता है। भाषा विचारों के आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम होती है। भाषा के विकास के लिए उसके लोक व्यवहार में प्रयुक्त होना अति-आवश्यक है। भाषा व्यक्ति में सम्प्रेषण शक्ति उत्पन्न करती है। भाषागत व्यवहार में सामान्यत: व्यक्ति अपने मन के भाव एक-दूसरे को समझाने व समझने के लिए संकेतों का सहारा लेता है।

किन्नर समुदाय की भाषा

किन्नर समुदाय को अपने समाज से अलग किया गया है, तो स्वभाविक रूप से इनका भाषागत व्यवहार भी अलग होगा। इसका यह तात्पर्य नहीं हैं कि यह भाषा के आधार पर मुख्यधारा के समाज से एकदम कटे हुए हैं। जिस परिवेश में यह उत्पन्न होते है उस परिवेश की भाषा का ज्ञान तो इन्हें अवश्य होता है। उत्तरप्रदेश में जन्मा वहाँ की भाषा जानता है, दिल्ली में जन्मा दिल्ली की तथा राजस्थान में जन्मा किन्नर समुदाय अपने क्षेत्र विशेष की भाषा का ज्ञान अवश्य रखता है। बात सिर्फ इन्हीं प्रदेशों की नहीं थी अपितु पूरे हिंदुस्तान के अलग-अलग क्षेत्रों की है। अन्तराष्ट्रीय स्तर पर भी कुछ ऐसा ही देखने को मिलता है कि जिस जगह में यह समुदाय रहता है वहाँ की भाषा को अवश्य जानता हैं। क्षेत्र-विशेष की भाषा के अलावा भी इनकी अपनी सामुदायिक भाषा होती है। जो इनके आपसी व्यवहार, क्रिया-कलाप आदि में प्रयुक्त की जाती है। इनकी व्यवसायिक भाषा भी होती है जो नेग मांगने, गाने-बजाने मनोरंजन आदि के रूप में प्रयोग में ली जाती है।

भारतीय समाज का एक ऐसा वर्ग जो सामान्य मनुष्य है परंतु उसकी समाज में एक अलग पहचान बनी हुई है। सामाजिक और संस्कृति के आधार पर किन्नर समुदाय द्वारा प्रयोग की जाने वाली प्रादेशिक प्रधान भाषा के साथ-साथ लाक्षणिक और मिश्रित भाषा के अनेक रूप देखने को मिलते है। मुख्यतया इनकी भाषा को प्रदेश-जनित कहा जाये तो कोई अतियुक्ति नहीं होगी। जिसमें लिंग, कारक, शब्द, वाक्य, शब्द-विन्यास व्याकरण पद्धति के मापदंड लागू नहीं होते है, इन पर क्षेत्रीय प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है। किन्नर समुदाय की भाषा पूर्ण रूप से व्याकरणिक संज्ञान नहीं करवाती है क्योंकि इनकी भाषा कुछ निश्चित नियमों से बंधी हुई नहीं है। किन्नर साहित्य में किन्नरों द्वारा प्रस्तुत हाव-भाव और वाचिक अभिव्यक्तियों का भी बोध कराया गया है। इनमें उनके

द्वारा बजायी जाने वाली तालियों को प्रतीक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। शब्दों का सीमित प्रयोग किंतु संप्रेषण का सशक्त माध्यम इस समुदाय की भाषा में देखने को मिलता है। भाषा में निहित भाषाई संज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण भाषा को कहीं न कहीं महत्त्व अवश्य प्रदान करता है। किन्नर समुदाय का यह प्रायोगिक दृष्टिकोण समाज से दूर था किन्तु आज यह चर्चा का विषय बना हुआ है।

6.3 व्यावहारिक भाषा

ज्यों-ज्यों हम विकास कर रहें हैं, हमारी भाषाएँ भी अधिक व्यवस्थित और नियमित होती जा रही है। एक भाषा का प्रयोग एक से अधिक वर्ग या समाज में होता है और उसी वर्ग अथवा समाज के माध्यम से यह बोली और समझी जा सकती है। किन्नर समुदाय की व्यावहारिक बोलचाल की भाषा के शब्द हमारी भाषा से बिलकुल मेल नहीं खाते है। उठने-बैठने, दैनिक व्यवहार के शब्द, आदि का प्रयोग इस प्रकार करते हैं, जरूरी नहीं कि ऐसे उदाहरण हर जगह देखने को मिले कहीं-कहीं पर ही दिखाई पड़ते है। उनके कुछ उदाहरण इस प्रकार देखने को मिलते हैं:-

जैसे- हमसी भाव की तकनी- मेरी गुरू जो हमारी माँ है वो चाय पी रही है।

हमसी चिस्पन गिरिया है...पर हमसी गिरिया लिकम अड़ियल- मेरा प्रेमी बहुत सुंदर है और साथ ही उसका लिंग भी बड़ा और मजबूत है।

खिलवा टाक ले आकर- ला शराब पी ले आकर

रिश्ते से संबंधित शब्द- नानी, मौसी, ये ऐसे शब्द है जो समान प्रयुक्त किये जाते हैं।

चन्द्ररू- जान-पहचान वाला

यजमान- समाज

टूलना- लड़का, टूलनी-लड़की

सुट्टा-बूढा, सुटी-बूढी

भावला-भाई, भावली-बहन

टेपका-बच्चा, टेपकी-बच्ची

रोटी-चटाई- बड़ा उत्सव जिसमें सभी प्रान्तों के किन्नर मिल-जुलकर अपने इस ख़ुशी उल्लास के कार्यक्रम करते हैं।

घड़ा- किसी बुजुर्ग किन्नर के मरने के बाद किया जाने वाला उत्सव

बधाई टोली द्वारा भाषा का प्रयोग-

लारे दे बधाई निकाल...।

होली का नेग दे रे सेठ...बरकत होगी...।

ऐ चिकने का क्या कर रहा है, रे है अड़ियल बाबा

हाय...निकाल चल पैसा नहीं तो बताउंगी में कैसी हूँ।

ला रे बाबा...हिजड़े की दुआ लगेगी।

सफेदगा- चांदी

झलके- चिल्लर, ढप्पर (पैसा) पनर्क- दस रुपये, बड़मा- सौ रुपये

शब्दावली

TG - transegender

CD - crossdresser

V - verstile gas/les

t - top gay/les

B - bottom gay/lerb

lesb -   lesbian

TS - transsexual

BI -   bisexual

het-s - hetro sexual

टेब्बो वर्ड: ऐसे शब्द जिसमें ऐसे कई तरह के शब्दों की व्यंजना होती है।

1. ऐ चिकने...ऐसे क्या देखता है रे तू...कभी हिजड़ा नहीं देखा क्या रे...।
2. हाय...बन्नों कितनी चीसपन की निहारण है।
3. हमसी अड़ियल खांजरेबाज

किन्नर समुदाय की बोलचाल की भाषा में आपसी संवाद की भाषा दिखाई पड़ती है। इसके अंतर्गत वे अपने गुरू व समाज के लोगों से आपसी चर्चा करते हैं। शोध में चयनित उपन्यासों और कहानियों की पृष्ठभूमि अलग-अलग है, इसीलिए भाषा का वैविध्य भी यहाँ प्राप्त होता है। अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग शब्दों का प्रयोग किया गया है। साहित्य में लेखकों ने अपना दृष्टिकोण भी प्रस्तुत किया है। किन्नर समुदाय की भाषा का अध्ययन व्यावहारिक और व्यवसायिक दोनों परिप्रेक्ष्य में किया जा सकता है। सामान्य रूप से बधाई, उत्सवों, बोल-चाल की भाषा, रेलवे स्टेशनों पर भीख मांगने के दौरान प्रयोग में लायी गई भाषा आदि की विविधता प्राप्त होती है। किन्नरों की एक अलग से कोई भाषा निर्धारित नहीं है। बस उनकी भाषा की एक खास विशेषता बन जाती है जिसमें काकू और खिचड़ी का मेल रहता है साथ ही फेमिनाइज्ड का पुट दिखाई पड़ता है।

किन्नर समुदाय भाषा को लेकर बंटा हुआ हैं, ये जिस प्रदेश में रहते है, वैसी ही भाषा का प्रयोग करते है। लेकिन आपसी रूप में ये अपने व्यवहार गत शब्दों का प्रयोग करते हैं। क्योंकि अपने अस्तित्व की लड़ाई में स्वयं अपने समुदायों में व्याप्त भाषिक विविधता को नहीं देख पाते हैं। यह अपनी भाषा का वास्तविक संदर्भ नहीं समझ पाते हैं। किन्नर समाज की भाषा को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है। इनकी भाषा में संप्रेषण इनकी विशेषता है। कम शब्दों का प्रयोग होने पर भी इनका संप्रेषण तीव्र होता है। एक शोधार्थी द्वारा इनकी भाषा पर शोध किया गया,

तब पता लगाया कि:- "प्रादेशिक रूप से हटकर किन्नर समुदाय द्वारा प्रयोग की जाने वाली प्रयोजनमूलक भाषा कहीं न कहीं किन्नर समुदाय के भाषाई संज्ञान का नवीन विस्तार करने में सक्षम हैं। इस संज्ञान का विस्तार किन्नर समाज को एक नये पहलू एवं नये साहित्यिक बोध से समाज का परिचय करने में सक्षम है। आज इसी विस्तार एवं ज्ञान का कारण है कि किन्नर समाज की भाषा को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परखने की आवश्यकता महसूस हो रही है।"[333] तात्पर्य है कि भाषा के अर्थों का पता लगाया जा सकें। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के माध्यम से भाषा का विस्तार से अध्ययन समझा जा सकता है।

इसी प्रकार से उपन्यास 'नाला सोपारा' में दिकरा, बा, पगे लागूं, मोटा भाई, खीज भरे धौल मेरे पखौरे हिला देता। जैसे शब्दों का प्रयोग किया गया है।

6.4 व्यवसायिक भाषा

इनकी व्यवसायिक भाषा में किन्नरों द्वारा व्यवसायिक कार्यों में प्रयोग में लायी जाने वाली भाषा है।

लेखिका नीरजा माधव इनकी भाषा के सम्बंध में इस प्रकार लिखती हैं कि:- "इस भाषा का कोई स्थायी व्याकरण शास्त्र या विधान न था जिसे पूरे भारत के तृतीय प्रकृति समुदाय के लोग जानते हों। अस्तु मैंने उनके करीब आने और उनकी भाषा को समझने के साथ-साथ उनके भीतर छिपी संवेदनाओं को भी समझने का प्रयास किया इस क्रम में उनके सैकड़ों नये शब्दों से परिचित हुई जिनका प्रयोग मैंने 'यमदीप' उपन्यास में किया है।"[334] इस प्रकार यमदीप उपन्यास में इनसे जुड़े विभिन्न भाषागत व्यवहार को देखा जा सकता है।

छिबरी- लिंग रहित हिजड़ों के लिए प्रयुक्त शब्द

टेपका- नवजात शिशु

कड़े ताल-पुरूष वेशधारी हिजड़ा

---

[333] राजकुमार, 'थर्ड जेंडर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन', विकास प्रकाशन, कानपुर (2018) पृ.सं.88

[334] सं. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श', पृ.सं.27

बुचरा माता- हिजड़ों की आराध्य देवी

बड़मा-सौ रुपये का नोट

चोसा-अच्छा

डामरी- ढोलक

टेंटुआ-गला

निहारन-औरत

वीला-कंजूस

पानकी-दस रूपये का नोट

काटका-पचास रुपये का नोट

बधिया-नसबंदी

छिन्दू- हिंदू

छिलवूह- मुसलमान

धौंकन्नी-बीड़ी

कनबासी- टेलीफोन

कथुआई-कलाई घड़ी

बंदरिया-अंग्रेज

खैरगल्ले- हिजड़ों के बटें क्षेंत्र में अनधिकार प्रवेश करके दूसरे नाचने गाने वाले हिजड़े

ठपरवाला-मोटा आसामी

पनके-अपने क्षेत्र में गाने-बजाने वाले हिजड़े

'यमदीप' में मंजू नामक पात्र के माध्यम से भाषा की बानगी:- ''यहाँ जजमान ही का भरोसा। कभी-कभार चोसा मिला तो ठीक, नहीं तो वीला मिल गया तो बहुत होगा एक मानकी या आधा कटका थमा देगा। हमारे पेट की सुध किसे है? न सरकार को न जजमान को। मंजू ने हाथ नचाते हुए कहा।''[335]

इसी प्रकार से उपन्यास 'नाला सोपारा' में गुजराती भाषा के शब्दों का प्रयोग किया गया है क्योंकि उपन्यास गुजराती परिवेश को आधार बनाकर लिखा गया है। विनोद और उसकी माँ का पत्रों के माध्यम से जो संवाद होता है उसमें कुछ-कुछ गुजराती भाषा के शब्द प्रयोग में लाये जाते है, दिकरा, बा, पगे लागूं, मोटा भाई

खीज भरे धौल मेरे पखौरे हिला देता।

अस्तित्व की तलाश में सिमरन में सिमरन देवी माँ के लिए एक लोकगीत इस प्रकार गाती है:-

''माई भजन बड़ी दूर भैया मोरी आशा न तोड़ो।

आशा न तोड़ो, निराशा को मोड़ो।।

कहु चढ़ावे मैदा ध्वजा और नारियल,

कहु लवंग गले हार मैया, मोरी आशा न तोड़ों।।

राज चढ़ावे मैया, ध्वजा दो नारियल,

रानी लंवंग वाले हार, मैया मोरी आशा न तोड़ो

काहे कारण भैया ध्वजा और नारियल

काहे लवंग वाले हार, मैया मोरी आशा न तोड़ो।

[335] नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.27

कहा बसे मैया काली रे भवानी

कहा बसे महादेव, मैया मोरी आशा न तोड़ो॥"[336]

[336] वही, पृ.सं.108

निष्कर्ष:-

इस प्रकार से किन्नर समुदाय की भाषा का कोई विशेष क्षेत्र नहीं है या विशेष भाषा नहीं है। जिस क्षेत्र में ये पले-बढ़े होते है उसी भाषा या बोली का प्रभाव इन पर दिखाई पड़ता है। कुछ विशेष शब्द होते है जो केवल इनके द्वारा प्रयुक्त किये जाते है। जो आपस में समझ सकते हैं। वार्तालाप कर सकते हैं। जिस समाज को सामान्य स्त्री-पुरूषों ने हमेशा से दुत्कार कर भगा दिया। उन्हें त्याज्य माना गया उनके अलग भाषागत संदर्भ का अस्तित्व कैसे हो सकता है? कोई उनके पास कम ही जाना चाहेगा। लेकिन पता करने पर अवश्य पता चलता है कि इनका अपना अस्तित्व है। सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक के साथ इनका भाषिक दृष्टिकोण भी होता है जो सभी जनसमुदाय के साथ इनकों जोड़ने का प्रयत्न करता है।

संदर्भ:-

1.मैनेजर पाण्डेय, 'आलोचना की समाजिकता'. पृ.सं.4
2.https://www.aplustopper.com/bhasha-ki-paribhasha/
3.भोलानाथ तिवारी, 'भाषा विज्ञान', पृ.सं.1
4वही, पृ.सं.4
5.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'थर्ड जेंडर की कहानियाँ', 'कर्तव्य', पृ.सं.24
6.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.280
7.सलाम बिन रज्जाक, 'बीच के लोग', 'थर्डजेंडर: हिंदी कहानियाँ-खंड एक (वांग्मय पत्रिका) पृ.सं.34
8.पृ.सं.156
9.किरन सिंह, 'संझा', 'थर्डजेंडर: हिंदी कहानियाँ-खंड एक (वांग्मय पत्रिका) पृ.सं.64
10.पृ.सं.156
11.शिवप्रसाद सिंह, 'बिंदा महाराज' थर्डजेंडर: हिंदी कहानियाँ-खंड एक (वांग्मय पत्रिका) पृ.सं.26
12.कुसुम अंसल, 'ई मुर्दन का गाँव', थर्ड जेंडर: हिंदी कहानियाँ खंड-1, पृ.सं.52
13.किरन सिंह, 'संझा' थर्ड जेंडर: हिंदी कहानियाँ खंड-1, पृ.सं. 65
14.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.117
15.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.119
16.रचना 'रश्मि', 'किन्नरों की प्रतिभा', पृ.सं.31
17.सुभाष अखिल, 'दरमियाना', पृ.सं. 43
18.राजकुमार, 'थर्ड जेंडर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन', विकास प्रकाशन, कानपुर (2018) पृ.सं.88
19.सं. विजेंद्र प्रताप सिंह, 'भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श', पृ.सं.27
20.नीरजा माधव, 'यमदीप', पृ.सं.27
21.वही, पृ.सं.108

उपसंहार

समाजशास्त्र का कैनवास काफी विस्तृत है इसीलिए पश्चिम के विचारकों ने इस पर बड़ी गंभीरता से अध्ययन किया है। विद्वानों में भी समाजशास्त्र को लेकर एकमत नहीं है। प्रमुख समाजशास्त्रियों में अगस्त कौंत, रेमंड विलियम्स, तेन, मादाम स्टेल, लूसिए गोल्डमान, हर्बर्ट स्पेंसर, कार्ल मार्क्स आदि का नाम लिया जा सकता है। । प्रमुख विचारकों में इनका नाम लिया जा सकता है:-गोविंद सदाशिव घुर्ये (1893-1983) धुर्जटि प्रसाद मुखर्जी(1894-1961) अक्षय रतनलाल देसाई(1915-1994)डॉ.अम्बेडकर(1891-1956)आदि। इन समाजशास्त्रियों से प्रेरणा लेकर ही साहित्य के समाजशास्त्रियों ने इस दिशा में आगे कार्य किया।

समाजशास्त्र एक विकासशील विज्ञान है। यह विज्ञान का दूसरा रूप है जिसमें प्रयोग तो होते हैं लेकिन उसकी अवस्था अन्य प्रकार की होती है। प्रत्येक कार्य के पीछे कारण होता है तथा उस कारण की छानबीन करते-करते उसका सामान्यीकरण किया जाता है। आरंभ में समाजशास्त्र की अवधारणाएं तथा सैद्धांतिक कोटियाँ पश्चिमी समाज के संदर्भ में विकसित हुई, लेकिन वे भारतीय संदर्भ से मेल नहीं खाती है। दोनों के समाजों में पर्याप्त भिन्नता है। इन विभिन्नताओं को हमें दोनों समाजों में पृथक अवधारणात्मक एवं सैद्धांतिक कोटियों का निर्माण करने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार से समाजशास्त्र के सैद्धांतिक पक्ष को समझा जा सकता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि साहित्य के समाजशास्त्र के अध्ययन हेतु सर्वप्रथम उपन्यास के समाजशास्त्रीय दृष्टिकोणों का अध्ययन करना अति-आवश्यक है। पश्चिम के विचारकों ने भी उपन्यास के विकास की अगली कड़ी के रूप में ही अन्य विधाओं के विकास की स्थिति को स्वीकार किया है। उपन्यास साहित्य में आदर्श और यथार्थ दोनों रूपों में दिखाई पड़ता है। वह केवल आदर्शवादी नहीं रह सकता तो कोरा यथार्थवादी भी नहीं रह सकता अपितु दोनों का मिला जुला रूप रहता है।

इसी तरह से कहानी में रचनाकार की सामाजिक दृष्टि निहित रहती है साथ ही मूल्यों की अभिव्यक्ति भी होती है। कहानी में मूल्य की परख का आधार मानवीय संसक्ति है। इसमें मूल्यों का निरंतर विकसित होना एक पक्ष के रूप में देख सकते हैं। इन मूल्यों की खोज करना भी कहानी के

समाजशास्त्रीय अध्ययन का मुख्य पक्ष है। यदि निष्कर्ष में संक्षिप्त रूप से कहे तो कहानी अपने विशेष अस्तित्व के माध्यम से जीवन का बोध कराती है।

संवेदना के बगैर साहित्य नहीं लिखा जा सकता। साहित्यकार के हृदय की संवेदनात्मक अनुभूति ही संवेदना के रूप में बाहर निकलकर आती है। वह अपने मन की अनुभूतियों को अपनी कृति के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। प्रत्येक साहित्यकार अपने समाज और परिवेश से संवदेनाओं को ग्रहण करने की क्षमता रखता है। वह सामाजिक अनुभूतियों को नवीन अर्थ प्रदान करता है और उसे जनमानस के मध्य रखता है। उससे रचनाकार की संवेदना साधारण मनुष्यों से जुड़ जाती है; इसीलिए दोनों का संबंध परस्पर अन्योन्याश्रित है।

संस्कृति का प्रभाव मानव के संपूर्ण जीवन पर दिखाई पड़ता है। वह व्यक्ति को एक ऐसा मानव बनाती है जिसके बिना उसकी स्थिति बर्बर पशु के समान मानी जाती है। मनुष्य-मनुष्य को आपस में जोड़ने का काम संस्कृति करती है। प्रत्येक मनुष्य का जन्म अपने समाज में होता है। जिसका एक सांस्कृतिक वातावरण होता है, जिसमें वह रहता है, क्रिया-प्रतिक्रिया करता है। हमारा जीवन रहन-सहन और हमारी विचारधारा हमारी संस्कृति का ही फल है। जैसी हमारी संस्कृति होती है उसी अनुरूप हम बनते जाते हैं।

लोकप्रिय साहित्य का सबसे अधिक विस्तार उपन्यास के क्षेत्र में हुआ है। प्रकाशन और पत्र-पत्रिकाओं के विकास के साथ उपन्यास का विकास जुड़ा हुआ है और उसकी लोकप्रियता का प्रसार भी। उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त सस्ता जीवनीपरक साहित्य भी लोकप्रिय साहित्य के अंतर्गत आता है।

इसी प्रकार किन्नर समुदाय के इतिहास के बारे में विविध ग्रन्थों और कालों को आधार बनाकर किन्नर समुदाय के इतिहास की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। लेकिन इनका निश्चित समय निर्धारित नहीं किया जा सकता। क्योंकि कहीं पर भी निश्चित तिथि का उल्लेख नहीं हैं। 4000 ईस्वी पूर्व का समय बताया जाता है किंतु वह भी लगभग ही है। विविध ग्रंथो, पुराणों, मिथकीय साहित्य, मनुस्मृति आदि में इनका उल्लेख किया गया है जो तात्कालिक समय में इनकी स्थिति तथा समाज में उनकी उपस्थिति को दर्शाता है।

अत: स्पष्ट है कि किन्नर समुदाय को किस प्रकार पहचान मिल सकती है? उससे पहले उनके वजूद की तलाश करनी आवश्यक है। बगैर पहचान के उनकी स्थिति से हम अवगत नहीं हो सकते। प्राचीन धार्मिक ग्रंथों में जो उल्लेखित है वह सबको स्वीकार्य है अत: यहाँ उन ग्रंथों का हवाला देना आवश्यक हो जाता है। रामायण, महाभारत, आदि में जो किन्नर समुदाय का उल्लेख हुआ है वह इस बात का द्योतक है कि जिस समय उनका उल्लेख हुआ उनके विविध नाम प्रचलित नहीं थे, इस कारण भी इनकी जानकारी विस्तृत नहीं हो पायी, वर्तमान में इनकों अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है जिनमें उपहास का पुट अधिक दिखाई पड़ता है।

उपेक्षित किन्नर समुदाय को अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया जा सकता है। कुछ इन्हें जैविक गड़बड़ी मानते हैं तो कुछ इन्हें प्रकृति की विकृति करार दे देते हैं। लेकिन यह समुदाय अभी-अभी ही अचानक से पैदा नहीं हुआ है इसका उल्लेख तो मिथकों, कोशों में भी किया गया है। इनकें नाम और इनकें प्रति धारणाओं में भी काफी अंतर दिखाई पड़ता है।

किन्नर समुदाय धीरे-धीरे कैसे अस्तित्व में आने लगा, अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग नामों से उच्चारण किया जाने लगा, साथ ही साहित्य के माध्यम से प्रकाश में आने लगा; परिणामस्वरूप इनकों जानने की जिज्ञासा होने लगी। इनकी प्रकृति को लेकर भी सवाल उठाया जाता है कि इनके निर्माण में सारा दोष प्रकृति का है और इसी आधार पर हम इन्हें अस्वीकारते भी हैं। किंतु इसमें प्रकृति को दोष न देकर इसे जैविक गड़बड़ी मानना चाहिए ताकि इनकी स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकें। बांग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान आदि अलग-अलग देशों में इनकें अधिकारों को लेकर कुछ नियम बनाये गये हैं।

इसी प्रकार से हिंदी शब्दकोश, अंग्रेजी शब्दकोश, ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी आदि में इनकों अलग-अलग में परिभाषित किया गया है। इन सबको यदि एक अर्थ में बताया जाए तो वह व्यक्ति जो अपनी पहचान निर्धारित नहीं कर पाता है कि वह नर है अथवा नारी। वह अपने शरीर के विपरीत भावनाएँ महसूस करता है।वह किन्नर है।

इस प्रकार की कथाओं से पता चलता है कि भारत के साथ-साथ अन्य देशों की संस्कृति में इस प्रकार की अवधारणाएं व्याप्त थी। जिनका किन्नरों से किसी न किसी प्रकार से संबंध था। जब

हिन्दू कथाओं में किन्नरता का उल्लेख किया जाता था तब केवल आध्यात्मिक दृष्टि से इनकी विवेचना की जाती थी विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण नहीं अपनाया जाता था। लेकिन अन्य देशों की सभ्यताओं सुमेरियन, मेसापोटामिया आदि में इनका विस्तृत उल्लेख मिलता हैं।

अनेक ऐसे दृष्टान्त है जिनसे प्राचीन काल में हिजड़ों का अस्तित्व प्रमाणित होता है। इस प्रकार श्रीराम के द्वारा उन्हें आशीर्वाद दिया गया और कलयुग में इनकों पूजे जाने का आशीर्वाद मिला लेकिन कलयुग में इनकी स्थिति और भी बद्तर हो गई, समाज का दुराभाव इनकों सहन करना पड़ा।

'बुचरा' को वास्तविक हिजड़ा माना जाता है। ये जन्मजात होते हैं जबकि नीलिमा कारणवश अपने-आपको हिजड़ा बना लेते है। मनसा की मानसिक स्थिति अलग होती है इस कारण वे अपने शरीर के विपरीत स्थिति के मनुष्य से अपनी निकटता महसूस करते हैं। हंसा शारीरिक कमी के कारण उनकों हिजड़ा कहा जाता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'रामचरितमानस' और 'महाभारत' जैसे धार्मिक ग्रंथों में भी किन्नरों का उल्लेख मिलता है। इन ग्रन्थों में इनकी स्थिति ठीक थी, किसी प्रकार का दुराभाव इनके प्रति नहीं था, मध्यकाल तक भी इनकी स्थिति ठीक रही किंतु धीरे-धीरे आधुनिक काल तक आते आते इनकी स्थिति परिवर्तित होने लगी और संख्या में भी इजाफा होने लगा परिणामस्वरूप इनकी अवहेलना की जाने लगी।

मध्यकाल जो विदेशी आक्रान्ताओं का काल रहा है उसमें किन्नरों की स्थिति रक्षक के रूप में मानी जाती थी। फिर चाहे वह अलाउद्दीन खिलजी का समय हो अथवा जहांगीर का समय हो कुछ प्रसंगों में किन्नरों का उल्लेख मिलता है। वे अपनी रानियों की सुरक्षा की दृष्टि से इनकी नियुक्ति करते थे ताकि कोई उन पर गलत दृष्टि ना डाल सकें। युद्ध अभियान में जाते समय हरम में रानियों को अकेले रहना पड़ता था इसलिए किन्नर को उनके पास रखा जाता था। मलिक काफूर भी एक हिजड़ा ही था, वह अलाउद्दीन का प्रिय सेनापति था।

किन्नर साहित्य को लेकर आधुनिक परिप्रेक्ष्य की बात की जाए तो यह अब काफी विकसित अवस्था में आ चुका है। पौराणिक काल में इनका यत्र-तत्र उल्लेख मिलता हैं लेकिन आधुनिक समय में समय और समाज अपने अधिकारों को लेकर जागरूक होने लग गया है। इसलिए वर्तमान समय में इस विषय पर लिखा जा रहा है और चर्चा-परिचर्चा का भी विषय बना हुआ है। आधुनिक समय में तमिल, तेलगु, मराठी, अंग्रेजी, हिंदी, आदि भाषाओं में साहित्य रचा जा रहा है।

इसी प्रकार से तमिल साहित्य में किन्नर समुदाय पर लेखन का कार्य सन् 1994 से माना जाता है। फिर रेवती, विद्या आदि ने स्वयं अपनी आत्मकथाएं लिखकर अपने वास्तविक जीवन का चित्र प्रस्तुत किया और अपने जीवन की विभीषिकाओं के माध्यम से अपने समुदाय को प्रस्तुत किया। तमिलनाडू के अरावन मंदिर को लेकर भी विशेष रूप से किन्नरों के लिए तमिलनाडू का महत्त्व है।

मराठी साहित्य में किन्नर समुदाय को अभिव्यक्ति देने का कार्य लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के द्वारा किया गया। अपनी आत्मकथा के माध्यम से उन्होंने हिजड़ा समुदाय में जागृति पैदा करने का कार्य किया। ‘मी लक्ष्मी मी हिजड़ा’ का अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। इसके अलावा और भी कई रचनाएँ प्रकाश में आयी ‘मी का नाही’, एका मित्राची गोष्ट आदि ने किन्नर जीवन को प्रकाश में लाने का कार्य किया।

इस प्रकार से अंग्रजी साहित्य के माध्यम से किन्नर समुदाय की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है, अंग्रेजी भाषा में इनसे संबंधित विषयों पर शोधकार्य हुए, कई आलेख प्रकाशित हुए जिसके माध्यम से जनमानस में चेतना प्रकट हुई। जर्मन जाफरी, सेरेना नंदा, जर्मन ग्रियर, खुशवंत सिंह आदि ने किन्नरों पर लिखकर इस विषय के बारे में हमें अवगत कराने का प्रयास किया कि ऐसा भी एक समुदाय होता है, जो समाज में रहकर भी समाज से कटा-कटा अपने को महसूस करता है।

उत्तर-आधुनिक दौर में किन्नर समुदाय शोध विषयों का प्रमुख केंद्र बना हुआ है। चाहे वह नृविज्ञान हो अथवा हिंदी या अंग्रेजी साहित्य। कोई इसे जेंडर पर आधारित विषय बनाकर अध्ययन करता है तो कोई इनका सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन। इनका अध्ययन तो किया जा रहा है

किंतु क्या इस अध्ययन करने से इनकी स्थिति में परिवर्तन लाया जा सकता है? यही हमारे लिए विचारणीय प्रश्न हैं।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नरों हेतु विविध स्तरों पर कानूनों का निर्माण किया गया है। इन कानूनों के माध्यम से उनके जीवन स्तर में सुधार की आशा की गई है। यह वैधानिक प्रावधान भारतीय और अंतराष्ट्रीय स्तर पर बनाए गये। अलग-अलग देशों में अलग-अलग समय पर किन्नर समुदाय के हितों के लिए कानूनों का निर्माण किया गया। भारत, नेपाल, पाकिस्तान, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी आदि देशों में इनके उत्थान हेतु कानूनों का निर्माण किया गया।

समय-समय पर फिल्मों के माध्यम से इनकी भूमिकाओं को अलग-अलग रूपों में दर्शाया गया। फिर चाहे वह अंग्रेजी सिनेमा हो या फिर भारतीय सिनेमा। दोनों में किन्नरों को पात्रों के रूप में स्थान दिया गया। आरंभिक रूप में इनकी भूमिका यदा-कदा संक्षिप्त रूप में दिखाई जाती थी लेकिन कई फिल्मों में इनको मुख्य किरदार के रूप में भी शामिल किया गया। जिनमें 'शबनम मौसी', 'तमन्ना', 'वाटर' आदि फिल्मों का नाम लिया जा सकता है। फिल्मों के माध्यम से दर्शायी गई इनकी भूमिका से समाज को इस समुदाय के अस्तित्व की जानकारी प्राप्त हो पाई है ऐसी बात नहीं है कि इससे पूर्व इनके बारे में जानकारी नहीं थी लेकिन सिनेमा ने लोगों को इनसे जोड़ना प्रारंभ किया।

किन्नर साहित्य पर अश्लीलता का आरोप लगाया जाता है इस कारण कुछ आलोचक इसको पढ़ने से कतराते है, लेकिन ऐसा वास्तविक रूप से पूर्णतया सत्य प्रतीत नहीं होता है। उनका परिवेश ही ऐसा बन जाता है कि वह अश्लील है, हिंदी साहित्य में उग्र जैसे रचनाकार के साहित्य को अश्लील करार दिया गया उसी रचनाकार को पाठक वर्ग बड़े चस्के से पढ़ता है। यही स्थिति किन्नर साहित्य के साथ भी बन रही है। लेकिन एक सही दृष्टिकोण से विश्लेषणात्मक दृष्टि अपनाते हुए ही हम किन्नर विमर्श में अपनी भूमिका अदा कर सकतें हैं।

'यमदीप' उपन्यास का संपूर्ण कथानक रोचक बन पड़ा है। इसमें किन्नर समुदाय के साथ-साथ लेखिका ने मानवी का प्रसंग भी उपन्यास में जोड़ दिया है जो अंत में किन्नरों के साथ खड़ा हुआ दिखाई देता है। लेकिन उपन्यास को पढ़ने के दौरान कुछ-कुछ स्थानों पर लगता है कि कुछ प्रसंग अनावश्यक रूप में आ गए हैं। जैसे डी.एम. साहब, मानवी नामक पात्र को हावी बनाना जो

कभी-कभी नाजबीबी के प्रसंग को कमजोर कर देता है। राजनेताओं से संबंधित कथानक, मूल कथानक पर भारी पड़ता हुआ दिखाई पड़ता है फिर भी उपन्यास में लेखिका का सारगर्भित उद्देश्य प्रकट हुआ है।

'मैं भी औरत हूँ' उपन्यास अपने मुख्य उद्देश्य से विलग होकर कथानक आगे बढ़ाता है जिससे कथानक गतिशील बना रह सकें और पाठक को अपनी और आकर्षित कर पाए। उपन्यास की शुरुआती योजना किन्नर समुदाय की समस्याओं और किन्नर से लिंग परिवर्तित करवाकर स्त्री अथवा पुरूष बनने का विकल्प भी यहाँ प्रस्तुत है ताकि इनके जीवन में बदलाव आ सके और जिस शरीर में यह अपने-आपको सहज महसूस करते हो, उसमें रह सके। यही उपन्यास का उद्देश्य भी है।

किन्नरों की पीड़ा की अभिव्यक्ति की कड़ी में यदि किसी उपन्यास का नाम लिया जाये तो 'किन्नर कथा' का लिया जा सकता है। जो पाठक की मानसिक स्थिति को इस कदर झकझोंर कर रख देता है कि वह भी उनके सम्बन्ध में विचार करने पर मजबूर हो जाता है और आंकलन करता है कि इस प्रकार के शरीर को धारण कर उसे किस प्रकार की दर्दनाक पीड़ा से गुजरना पड़ता है। हम सोचने और समझने को मजबूर हो जाते है कि आखिर इन्होंने ऐसा कौन सा पाप कर दिया जिसका प्रायश्चित उन्हें आजीवन तरह-तरह की यातनाएँ सहकर करना पड़ता है।

'गुलाम मंडी' उपन्यास में मानव तस्करी, स्त्रियों का शोषण, और तीसरी समस्या है हिजड़ा समुदाय, जो मेरे शोध-विषय का मुख्य आधार है। ट्रांसजेंडर और ट्रांससेक्सुअल, हिजड़ा समुदाय से जुड़ी हुई समस्या है जो समुदाय समाज के तयशुदा खाँचों में नहीं आ सकता। इसी कारण समाज द्वारा यह लंबे समय से उपेक्षित और बहिष्कृत रहे। लैंगिक भेदभाव से पीड़ित हमारा पुरूष सत्तात्मक समाज हमेशा से ही लैंगिक श्रेष्ठता में पुरूषों की वकालत करता है।

इस तरह से इन्हें मौका मुहैया करवाने की कोशिश सरकार को करनी चाहिए। समाज, कानून का इनको अगर हौसला मिल जाएगा तो इन्हें मुख्यधारा में आने से कोई नहीं रोक सकता। इन्हें भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने की आवश्यकता है। उपन्यास 'नाला सोपारा' के माध्यम से लेखिका का यही मंतव्य है।

लेखक महेंद्र भीष्म ने पात्र पायल सिंह के चरित्र को उपन्यास ‘मैं पायल’ में बखूबी उभारा है। उसका पूरा चित्रण उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है। लेकिन अन्य किन्नरों की स्थिति का ब्यौरेवार वर्णन इसमें दिखाई नहीं पड़ता है। एक-दो स्थानों पर उनका उल्लेख मात्र हुआ है। लेकिन महेंद्र भीष्म उपन्यास के मुख्य पात्र के प्रति पूरा न्याय कर पाए हैं। यही उपन्यास का उद्देश्य भी हैं।

भगवंत अनमोल ने ख़ुद अपनी ज़िंदगी को ही इस उपन्यास ‘जिंदगी 50-50’ में एक किरदार के रूप में पेश करके बड़ा ही पुण्य का काम किया है। समाज के उस उपेक्षित वर्ग के दुःख-दर्द और मानवीय संवेदना को अपने उपन्यास में उकेरने का काम किया है, जिसके बारे में इक्कीसवीं सदी में भी लोग सोचना तक नहीं चाहते हैं। अपने धार्मिक ग्रंथों, भगवद् गीता, रामायण में भी किन्नरों की चर्चा है और किन्नरों को समाज वह इज़्ज़त नहीं दे सका, जिसके वे हक़दार हैं। आज भी किन्नरों को अमानवीय बर्ताव और सामाजिक अवहेलना का सामना करना पड़ता है।

इसी प्रकार स्पष्ट है कि ‘दरमियाना’ उपन्यास में किन्नरों के ममत्व भाव को दर्शाया गया है। उनमें भी भावना होती है, ममता, स्नेह, दया होती है। जैसे आम मनुष्य में होती है। वे निःस्वार्थ किसी काम को करते है। उपन्यास में लेखक के स्वयं के जीवन अनुभव है किन्नरों के साथ। इसलिए वह इतनी करीबी से उन्हें जान पाए है।

‘अस्तित्व’ उपन्यास मध्यमवर्गीय परिवार को आधार बनाकर लिखा गया है। प्रीत को माता-पिता ने अपना तो लिया लेकिन यह परिवार, समाज उसे कहाँ जीने दे रहा था। समाज में रहकर ही तो मनुष्य बड़ा होता है, सीखता है लेकिन वही समाज शोषण का विषय बन जाये तो व्यक्ति कहीं का नहीं रहता। यही स्थितियाँ प्रीत के साथ भी थी। वह धीरे-धीरे बड़ी होती जा रही थी तो समाज की आँखों का काटा भी बनने लगी थी। उसके विषय में कई प्रश्न बनकर उठ रहे थे, क्यों इसकी शादी पहले नहीं हो रही? इसे ज्यादा लोगों से मिलने क्यों नहीं दिया जाता आदि कई तरह की उत्सुकता लोगों के मन में रहती। जो प्रीत के लिए परेशानी का कारण थी।

‘हफमेन: ए पेनफुल जर्नी’ उपन्यास में लेखक भुवनेश्वर उपाध्याय की दृष्टि सार्थक है, वह इधर-उधर भटका नहीं है उसने किन्नर जीवन के दर्द को समेटकर रखा और अर्जुन के माध्यम से ऐसा उदाहरण पेश किया जिससे अन्य लोगों को भी प्रेरणा मिले वे समाज के सामने अपने बल पर

कुछ कर सके और लिंग आधारित मानसिकता से अपने-आपको दूर कर सके, यही उपन्यास और लेखक का उद्देश्य भी है।

सिमरन में गजब की जिजीविषा थी। उसे दर-दर की ठोकरे खानी पड़ी फिर भी वह उठकर फिर खड़ी हो जाती थी। उसे भीख भी मांगनी पड़ी, मजदूरी करनी पड़ी। रहने के लिए जगह नहीं थी और अंत में वह बीमार हो गई उस समय उसे किसी का सहारा नहीं मिला जिससे वह बहुत अधिक हताश हो जाती है, उसकी आँखों के आंसू सूख जाते है। फिर भी वह अड़ी रहती है और अंत में समाज सेविका बनकर अपने समाज के लिए कुछ करना चाहती है जिससे उसके अस्तित्व को प्राप्त किया जा सके यही उपन्यास का उद्देश्य भी है।

इस प्रकार 'ऐ जिन्दगी तुझे सलाम' उपन्यास की रोचकता अंत तक बनी रहती है और शैली वर्णनात्मक है जो पाठक को ऊबने नहीं देती है। किन्नर विमर्श की अभिव्यक्ति की कड़ी में यह उपन्यास महत्वपूर्ण साबित होता है, साथ ही इसमें विषय से भटकाव की गुंजाइश भी कम है। रोशनी नामक किन्नर के संपूर्ण जीवन पर यह प्रकाश डालता है तथा उसके दुःख-दर्द और साहस की कुशल अभिव्यक्ति लेखक ने यहाँ की है।

इस तरह से उपन्यास 'मेरे हिस्से की धूप' का शीर्षक भी यही है जो यह कहता है कि मोनी को उसके हिस्से की धूप लेनी है उसे भी यही अधिकार है, सम्मान से जीने का हक है जो उसे सर्राफा बाजार में काम करके मिल जाता है। उसका व्यापार अपने पिता की तरह चलने लग जाता है सब उसके काम की तारीफ करते हैं। उसे अब अलग नहीं देखा जाता बल्कि सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। पहले-पहल सभी व्यपारियों ने इसका विरोध किया कि एक 'किन्नर' के सर्राफा व्यापार में आने से हमारे व्यापार को नुकसान पहुँचेगा लेकिन देखते-देखते वे सभी व्यापारी उसके काम को देखकर उससे सलाह-मशविरा करते हैं।

इस प्रकार 'मंगलमुखी' उपन्यास के अंत में शगुन की बेटी अनुपमा अफसर बनकर उनका मान बढ़ाती है और सबके सामने एक मिसाल कायम करती है। सबको वह यह बताती है की यह मेरे माँ-बाप नहीं है फिर भी इन्होंने उनका फर्ज अदा किया। वह पत्रकारों से महेंद्री और उनके समुदाय के लोगों के बारे में बताती है कि इनके उपकार के कारण ही मैं आज इस स्थिति में हूँ जिससे महेंद्री का

सिर गर्व से ऊँचा हो जाता है और उसकी अश्रुधारा बहने लगती है। इस प्रकार शारीरिक बनावट वाली मानसिकता के स्थान पर इंसानियत यहाँ बयाँ होती है जो मनुष्यता बनाये रखने में महती भूमिका निभाती है और यही उपन्यास की सार्थकता सिद्ध होती है।

इस क्षेत्र में कई कहानियाँ लिखी गई। कई कहनियाँ अनुदित है। मैंने केवल हिंदी भाषा में लिखी गई कहानियों को अपने शोध कार्य का आधार बनाया है क्योंकि अन्य भाषा में लिखी गई कहानियों का अनुवाद उतना अच्छा नहीं प्रतीत होता है।

थर्ड जेंडर:चर्चित कहानियाँ सं. विमल सूर्यवंशी द्वारा लिखित कहानी संग्रह में लेखिका ने किन्नर जीवन से जुड़ी हुई ग्यारह कहानियों को समाहित किया है जो मानव समुदाय का ही तथा-कथित हिस्सा हिजड़ा समुदाय के जीवन पर प्रकाश डालती है। मैंने अपने शोध शीर्षक के अनुसार ही चयनित कहानियों की समीक्षा प्रस्तुत की है। इस कहानी संग्रह में से मैंने दस कहानियों का चयन किया है, और उनकी समीक्षा की है जो किन्नर समुदाय के जीवन और संघर्ष पर आधारित है।

'कथा और किन्नर' कहानी-संग्रह में किन्नर समुदाय की पीड़ा को एक-एक कहानियों के माध्यम से दिखाया गया है। यह कहानियाँ अलग-अलग प्रसंगों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है जिनमें हाशिये के समुदाय की पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है। इस कहानी संग्रह में 'हिजड़ा', 'अथ किन्नर कथा', 'प्रतिशोध', 'किन्नर माँ', 'इतनी देर में', 'आखिर कब तक', 'पहचान', 'प्रतिमान', 'मिस्टी', 'दर्द', 'अँधेरे की परते', 'वो किन्नर' 'बरगद की छाँव', 'हिजड़ा चरित्र' 'अपमानित' 'घर' कहानियों को संकलित किया गया है।

युक्रेन में रहने वाले लेखक राकेश शंकर भारती ने अपने कहानी-संग्रह **'इस जिंदगी के उस पार'** में न केवल किन्नर समुदाय बल्कि उससे जुड़े आस-पास के कई संदर्भों को इसमें अभिव्यक्त किया है। इस कहानी संग्रह में ग्यारह कहानियाँ संकलित है। इन कहानियों में थर्डजेंडर लोगों की जीवन शैली और कार्य व्यापार को दर्शाया गया है, इन कहानियों में थर्ड जेंडर समुदाय की मन की स्थिति उनके अवसाद से गुजरने की प्रक्रिया, गरीबी और विवशता का चित्रण किया गया है।

‘**थर्डजेंडर की कहानियाँ**’ सं विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौड़ ने इस कहानी संग्रह में से किन्नर आधारित कहानियों को संग्रहित किया गया है। इसमें ‘हिजड़ा गली’, ‘सुगंधा’, ‘कर्तव्य’, ‘किन्नर का सम्मान’, ‘किन्नरों की प्रतिभा’, ‘क्या मेरा कसूर है’, ‘मेरा हक़’ शगुन-अपशगुन के बीच’, सोनम के चर्चे’, ‘नयना होटल,’ ‘सुरेखा की ईमानदारी’, ताली की गूंज’, तीसरा वर्ग’, ‘आदर्श’, ‘हिजड़ा कही का’, ‘किन्नर का आशीर्वाद’, किन्नरों की दुआ-बद्दुआ’, ‘विलास रानी’, कहानियां संकलित है जो किन्नर जीवन पर प्रकाश डालती है।

किन्नर समुदाय के समाजशास्त्र सम्बंधी बिंदुओं का अध्ययन किया गया है। मनुष्य हमेशा से अपने रहन-सहन के प्रति जागरूक रहा है, उसके रहन-सहन में उसकी संस्कृति झलकती है। किन्नर समुदाय के लोगों को देखकर पता लगाया जा सकता है कि इनका रहन-सहन एक अलग प्रकार से दिखाई पड़ता है जो हमारे समाज से इनकों अलग करता है, अलग इस रूप में कि यह अपनी मान्यताओं को पूरी तरह से अपनाते हैं, अपने समुदाय के लोगों के द्वारा जो भी क्रिया-कलाप किये जाते हैं, उनका यह अनुसरण करतें हैं। जो इनकें लिए निर्धारित नियम होते हैं उनका इनकों पालन करना ही पड़ता है, अन्यथा स्वयं के समुदाय से इन्हें बहिष्कृत कर दिया जाता है। इसी प्रकार यह स्त्री और पुरूष के लिए निर्धारित वस्त्रों में से कोई भी पहन सकते है लेकिन अधिकांशत: ये स्त्रीगत मनोभावों की और अधिक झुके हुए होते हैं इस कारण भी इनकों सजना, संवरना पसंद होता है और स्त्रियों के कपड़े पहनना भी।

किन्नर समुदाय की परम्पराओं में बधाई देना और उत्सव, समारोहों में प्रस्तुति देना, विवाह, गुरू-शिष्य परम्परा, बधियाकरण, मृत्यु संस्कार आदि का उल्लेख किया जाता है। इनका नाचना-गाना, खुशियाँ मनाना आदि इनकी परम्पराओं में शामिल किया जाता है, अपनी परम्पराओं से इन्हें जीवन्तता मिलती है और यह क्रम निरंतर चलता रहता है। उत्सवों-आयोजनों में भाग लेना इनके लिए रूचि के साथ-साथ रोजगार का साधन भी बनता है।

इस प्रकार सामाजिक स्थलों पर, परिवार में, समाज में उन्हें भेदभाव की दृष्टि से देखा जाता है। यह हिंदी कथा-साहित्य और अन्य भाषा के साहित्य में भी दिखाया गया है लेकिन आम तौर पर हम अपने आस-पास भी देख सकते है, कि इन्हें स्वीकार करना हमारे लिए भी सहज नहीं होता है

लेकिन यह अपनी स्थिति सुधारने के लिए हमसे जुड़ना चाहते हैं ताकि इनके साथ भेदभाव न किया जाए। किन्नर समुदाय अपने साथ किये गये इस शारीरिक भेदभाव के लिए भगवान को दोषी ठहराते हैं, उनका कहना है कि भगवान ने हमें जानवर से भी बद्तर बनाया है।

इस प्रकार से लेखक का मंतव्य यहाँ सिर्फ यह बताना है कि यदि समाज के डर से किन्नर बच्चों को अपनाया नहीं जाता है, यह समाज जो विपदा में साथ नहीं देता है। केवल साधन-सम्पन लोगों को ही पूछने आता है। अर्थविहिन लोगों को तो कोई पूछता भी नहीं है। समाज का दृष्टिकोण बहिष्करण का दृष्टिकोण है, किन्नर समुदाय समाज को स्वीकार्य नहीं हैं क्योंकि वह शारीरिक कमी का शिकार है। समाज का नजरिया इनके प्रति अवहेलना का है।

किन्नर समुदाय जिस प्रकार अपना अलग अस्तित्व रखता है उसी प्रकार मनुष्य समाज से भिन्न उसके संस्कार, रीति-रिवाज, मूल्य, परम्पराएँ, धार्मिक अन्धविश्वास, होते है। कुछ मान्यताएं इनको अन्धविश्वास की ओर धकेलती है। इस प्रकार की मान्यता है कि इनकी मृत्यु होने पर इनके शव को रात के अँधेरे में निकाला जाता है ताकि कोई गर्भवती स्त्री उन्हें ना देख ले और उसके भी वैसी संतान ना हो जाये। दाह संस्कार से पहले उसके शव को जूतों-चप्पलों से बहुत पीटा जाता है। उसे जलाया नहीं अपितु दफनाया जाता है और गालियाँ निकाली जाती है कि पुन: इस जून में कभी पैदा मत होना।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि व्यक्ति की समाज में सामाजिक स्थिति ही उसके विकास को तय करती है, तभी वह समाज सामूहिक रूप से विकास कर पाता है जब समाज में उसको उचित स्थान प्राप्त हो। लेकिन किन्नर समुदाय के लिए इस प्रकार की स्वीकृति एक बहुत बड़ी चुनौती है। इनकी सामाजिक मान्यताएँ एकदम अलग है। यह भी अपने त्योहारों का आयोजन करते हैं। गुरू -शिष्य परंपरा इनमें खासा महत्त्व रखती है, ये उत्सवों का आयोजन करते हैं और एक स्थान पर एकत्र होते हैं। इनकी सामाजिक स्थिति का स्तर भी अलग-अलग है। पारिवारिक स्तर पर इनसे अलग प्रकार से व्यवहार किया जाता है और राष्ट्रीय स्तर पर अलग से व्यवहार किया जाता है। परिवार में जन्मते ही ये लोग दुराव-छिपाव का कारण बन जाते है और राष्ट्रीय स्तर पर उपेक्षा का। उपेक्षा दोनों ही स्तरों पर की जाती है लेकिन मानदंड बदल जाते है। राष्ट्रीय स्तर पर इसका फलक विस्तृत हो जाता है।

वर्तमान संदर्भ इनका अपने अस्तित्व को लेकर है, ये हमारी तरह ही रहना, उठना, बैठना चाहते हैं, जीना चाहते हैं, मुख्यधारा के समाज में आना चाहते हैं लेकिन अभी तक नहीं आ पा रहें हैं। वे अपनी सभी स्थितियों में सुधार चाहते हैं, पर इसमें समय लगने के साथ ही इनकों शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक, रूप से जागरूक होने की आवश्यकता है। इस प्रकार से स्पष्ट है कि उनके अतीत को तो सुधारा नहीं जा सकता लेकिन वर्तमान को तो सुधारा जा सकता है ताकि उनकों भी अपनी तरफ देखकर यह एहसास नहीं हो कि उनका अस्तित्व क्या है।

उपन्यास 'यमदीप', 'किन्नर कथा', 'जिन्दगी 50-50', 'नाला सोपारा', आदि के माध्यम से लेखकों ने किन्नर समुदाय को लेकर शिक्षा प्रदान कराने की वकालत की है। वहीं कहानियों के माध्यम से कहा गया है कि कुछ-पढ़ लिखकर रोजगार पाने लायक हो जाए तो इनकी स्थिति में सुधार लाया सके। उपन्यासों का कोई न कोई पात्र इस चेतना से युक्त दिखाई पड़ता है। जिंदगी 50-50 का नायक भी अपने किन्नर बच्चे को पढ़ा-लिखाकर बड़ा बनाना चाहता है वही, नाला सोपारा का विनोद भी आगे पढ़ना चाहता है, वह अपने समाज में नहीं जाना चाहता है।

इस प्रकार से वे धनार्जन करते है, और अपना जीवन निर्वहन करते है। यदि कुछ किन्नरों को छोड़ दिया जाए तो बाकी किन्नरों की आर्थिक स्थिति इतनी सुदृढ़ नहीं होती है उनके लिए दो वक्त का खाना भी नसीब नहीं हो पाता है। जितना नेग, भीख आदि में मिलता है उसका अधिकांश हिस्सा उन्हें अपने गुरू को देना पड़ता है। उनके पास कुछ नहीं बचता। दिन भर मारे-मारे फिरने के उपरांत शाम को उनका वही हाल रहता है। इस कारण उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं हो पाता है। कई बार इस कार्य के दौरान लड़ाई-झगड़ा भी हो जाता है जिस कारण उन्हें चोट भी लग जाती है। इस तरह से उनमें आर्थिक विषमता तो हमेशा बनी ही रहती है।

इस तरह से मनोवैज्ञानिक रूप से यदि देखा जाए तो यह अपने-आप में एक हीन ग्रंथि का शिकार रहते हैं, अपने-आपको कोसते रहते है, ईश्वर को भी कोसते है कि हमें ऐसा क्यों बनाया लेकिन इसके लिए प्रकृति दोषी नहीं है, जैविक कारण होते हैं इसलिए उन्हें इस योनि में जन्म लेना पड़ता है। यह कई बार अपने शरीर को लेकर मानसिक रूप से बीमार रहते है और स्वयं को समाप्त करने की भी सोचते हैं, वे इस शरीर से बाहर निकनला चाहते हैं जब समाज द्वारा उन्हें कहकर यह

बता दिया जाता है कि वे हिजड़े हैं इससे ज्यादा कुछ नहीं, यह उनके मानसिक रूप से प्रताड़ित रहने के लक्षण हैं।

कुछ लोग थर्ड जेंडर का सम्बंध यौन शोषण से जोड़कर देखते हैं कि उनका मानना हैं हिजड़ा समुदाय के लोग इस कार्य में लिप्त रहते हैं लेकिन ब्रह्मचर्य का दिखावा करने वाले लोग ही इस दलदल में अधिक धंसते हुए दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार से बहुत से ऐसे अपराध होते हैं जिनका पता भी नहीं चलता। उनके साथ हुई यौन हिंसा से वे मानसिक अवसाद की स्थिति में रहते हैं। वे यदि पुलिस से भी शिकायत करने जाये तो उनकी बात कोई सच नहीं मानता। उल्टा उन पर यौन-हिंसा करने का आरोप लगाया जाता है।

किन्नर समुदाय के सांस्कृतिक दृष्टिकोण में उनकी संस्कृति, गीत आदि आते हैं यहाँ संस्कृति किसी विशेष कालखंड को आधार बनाकर प्रस्तुत नहीं की गई है अपितु किन्नर समुदाय के जीवन-यापन की गतिविधियों का जिक्र किया गया है, जिसमें उनके गीत, बोलीगत व्यवहार आदि को प्रकट किया गया है। जेंडर के साथ संस्कृति को देखा गया है। जेंडर आइडेंटिटी के साथ व्यक्ति जैसी सहजता महसूस करेगा वह वैसी ही संस्कृति को अपनायेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अपने क्षेत्र में विशिष्ट पहचान बनाने वाले किन्नर अपने समुदाय के अन्य लोगों के भीतर भी प्रेरणा का संचार करते हैं। उन लोगों से प्रेरणा पाकर अन्य के मन में भी कुछ करने की इच्छा जाग्रत होती है। मानबी, भारती, मधुबाई, लक्ष्मी आदि ने अपने क्षेत्र में विशेष छाप छोड़ी है। इन लोगों को अपने लक्ष्य तक पहुँचने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लोगों की प्रताड़नाएं सहन करनी पड़ी, लेकिन फिर भी ये डटें रहे और आगे बढ़ते रहे, जो आज इनके समुदाय के लिए प्रेरणा का कार्य कर रहें हैं।

इस प्रकार से किन्नर समुदाय की भाषा का कोई विशेष क्षेत्र नहीं है या विशेष भाषा नहीं है। जिस क्षेत्र में ये पले-बढ़े होते है उसी भाषा या बोली का प्रभाव इन पर दिखाई पड़ता है। कुछ विशेष शब्द होते है जो केवल इनके द्वारा प्रयुक्त किये जाते है। जो आपस में समझ सकते हैं। वार्तालाप कर सकते हैं। जिस समाज को सामान्य स्त्री-पुरूषों ने हमेशा से दुत्कार कर भगा दिया। उन्हें त्याज्य माना गया उनके अलग भाषागत संदर्भ का अस्तित्व कैसे हो सकता है? कोई उनके पास कम ही जाना

चाहेगा। लेकिन पता करने पर अवश्य पता चलता है कि इनका अपना अस्तित्व है। सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आर्थिक के साथ इनका भाषिक दृष्टिकोण भी होता है जो सभी जन-समुदाय के साथ इनकों जोड़ने का प्रयत्न करता है।

परिशिष्ट:-

विशेष क्षेत्र में उल्लेखनीय किन्नर

शबनम मौसी

(shabnam mausi pic download - Google सर्च)

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी

मानोबी बंदोपाध्याय

[मानोबी बंदोपाध्याय - Google सर्च]

गंगा ट्रांसजेंडर

पद्मिनी प्रकाश

[padhmini prakash - Google सर्च]

कल्कि सुब्रमन्यम

मधुबाई किन्नर

madhubaai kinnr - Google सर्च

संदर्भ-ग्रंथ सूची

1) आधार ग्रंथ

1 नीरजा माधव, 'यमदीप', , (2002) सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

2 अनुसूया त्यागी, 'मैं भी औरत हूँ', (2011) परमेश्वरी प्रकाशन, नई दिल्ली

3 महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा', (2011) सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

4 प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली' वाणी प्रकाशन, (2011) नई दिल्ली

5 निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी', (2014) सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

6 चित्रा मुद्गल, 'पॉस्ट-बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा, (प्रथम संस्करण 2016) सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

7 महेंद्र भीष्म, 'मैं पायल', (2016) अमन प्रकाशन, कानपुर

8 भगवंत अनमोल, 'जिंदगी 50-50', (2017) राजपाल एंड संस, नई दिल्ली

9 सुभाष अखिल,' दरमियाना', (2018) अमन प्रकाशन, कानपुर

10 अस्तित्व- गिरिजा भारती (2018) विकास प्रकाशन, कानपुर

11 मोनिका देवी, 'अस्तित्व की तलाश में सिमरन', (2019) माया प्रकाशन, कानपुर

12 भुवनेश्वर उपाध्याय, 'हाफमैन' (2020) अमन प्रकाशन, कानपुर

13 हरभजन सिंह मेहरोत्रा, 'ऐ जिंदगी तुझे सलाम', (2020) अमन प्रकाशन, कानपुर

14 नीना शर्मा, 'मेरे हिस्से की धूप',(2020) माया प्रकाशन, कानपुर

15 डॉ. लता अग्रवाल, 'मंगलमुखी', (2020) विकास प्रकाशन, कानपुर

कहानी संग्रह एवं कहानियाँ

1.सं. डॉ. विमल सूर्यवंशी, 'थर्ड जेंडर: चर्चित कहानियाँ', (2018) रोशनी पब्लिकेशन्स, कानपुर

2.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, 'कथा और किन्नर' (2018) अमन प्रकाशन, कानपुर

3.राकेश शंकर भारती, 'इस जिन्दगी के उस पार', (2019) अमन प्रकाशन, कानपुर

4.थर्ड जेंडर की कहानियाँ- सं. विजेंद्र पताप सिंह, डॉ. रवि कुमार गौड़ (2020) अमन प्रकाशन, कानपुर

5. कबीरन- सूरज बड़त्या-वेब से

6. किन्नर- पूनम पाठक वेब से

2) संदर्भ-ग्रंथ सूची

1. मुजतबा हुसैन, 'समाजशास्त्रीय विचार', (2010) ओरियंट ब्लैकस्वान प्रकाशन, नई दिल्ली

2. talcott parsons, the social system', the free press, glencoe illinois (1952)

3 मैनेजर पाण्डेय, 'आलोचना की सामाजिकता', प्रथम सं.(2005) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

4. वीरेंद्र प्रकाश शर्मा, 'समाजशास्त्र विश्वकोश', (2011) पंचशील प्रकाशन जयपुर,

5.डॉ. निर्मला जैन, 'साहित्य का समाजशास्त्रीय चिंतन', (प्रथम.सं.1985) आदेश बुक डिपो, नई दिल्ली

6. डॉ. नगेन्द्र, 'साहित्य का समाजशास्त्र', (1982) नेशनल बुक डिपो, नई दिल्ली ,

7 The sociology of art and literature (edited) (उपन्यास का समाजशास्त्र)
8. एस.एल.दोषी, पी.सी जैन, 'मुख्य समाजशास्त्रीय विचारक', (2018) रावत प्रकाशन, जयपुर

9. मैनेजर पांडेय, 'साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका', (चतुर्थ सं. 2014) हरियाणा ग्रंथ अकादमी, पंचकूला

10. एनसीईआरटी, कक्षा-11

11.डॉ. एम.एम. लवानिया, 'भारत का समाजशास्त्र', (reprint-2017) रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर

12.श्यामसुंदर दास, 'साहित्यालोचन', (1988) साहित्य रत्न माला, काशी

13.टी.बी. बोटमोर, 'समाजशास्त्र', अनुवादक- गोपाल प्रधान प्रथम हिंदी संस्करण-(2004)

14 भोलानाथ तिवारी, 'भाषा विज्ञान', किताब महल प्रकाशन, (NEW-2008) इलाहबाद.

15. डॉ. रामविलास शर्मा, 'आस्था और सौंदर्य', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, (1990)

16. गरिमा श्रीवास्तव, 'उपन्यास का समाजशास्त्र'',(2006) संजय प्रकाशन, दिल्ली

17. रॉल्फ फॉक्स, ‘उपन्यास और लोक जीवन’, अनुवाद- नरोत्तम नागर (1857) पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

18. ian watt, ‘the rise of the novel’, (1963) लंदन, पैग्विन बुक्स

19. डॉ. अमरनाथ, ‘हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली’, (2009) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

20. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, ‘समकालीन कहानी की भूमिका’, (1977) प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली

21. विजय बहादुर सिंह, ‘उपन्यास समय और संवेदना’, (2007) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

22. उषा यादव, ‘हिंदी की महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना’, (1999) राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

23. कमलेश्वर, ‘नई कहानी की भूमिका’, (2015) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

24. डॉ. शेखर शर्मा, ‘समकालीन संवेदना और हिंदी नाटक’, (1988) भावना प्रकाशन, नई दिल्ली

25. राम मनोहर त्रिपाठी, हिंदी कविता: संवेदना और दृष्टि’, (1986) किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली

26. रामधारी सिंह दिनकर, ‘संस्कृति के चार अध्याय’, तीसरा सं.(2010) लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद

27. रामजी उपाध्याय, ‘भारतीय धर्म और संस्कृति’, (2014) लोकभारती प्रकाशन, इलाहबाद

28. मेहरोत्रा, ‘साहित्य का समाजशास्त्र: मान्यता और स्थापना’, (1970) रचना प्रकाशन, वाराणसी

29. kingsley devid, ‘human society’, (1949) कोलियर मैकमिलन प्रकाशन, कनाडा

30.सं. विजेंद्र प्रताप सिंह, ‘भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श’, (2016) अमन प्रकाशन, कानपुर

31. टीकाकार रामचरण वर्मा शास्त्री, ‘मनुस्मृति’ नया संस्करण (2021) ‘प्रभात प्रकाशन’ नई दिल्ली

32.सेरेना नंदा, नाइदर मैंन नोर अ विमन: द हिजड़ाज ऑफ़ इंडिया (1998) वर्ड्सरोथ पब्लिकेशन, केलिफोर्निया

33.राम अवध द्विवेदी, 'साहित्य-सिद्धांत',(1962) राष्ट्र भाषा परिषद, बिहार

34.डॉ. बच्चन सिंह, 'आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द', (2015) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

35.राहुल सांकृत्यायन, 'किन्नर देश में', (2000) इंडिया पब्लिशर्स, प्रयाग

36.महायोगी श्रीगोरक्षनाथ, सिद्ध-सिद्धांत पद्धति, (2014)अनुवादक- स्वामी द्वारिका दास शास्त्री, वाराणसी

37.देवदत्त पट्टनायक, शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ, (2015) राजपाल एंड संस, नई दिल्ली तृतीय सं.

38.शिला डांगा, 'किन्नर गाथा', (2020) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

39. सं. आशीष कुमार दीपांकर, 'भारतीय समाज में किन्नरों का यथार्थ', (2018) अनुसन्धान पब्लिशर्स, कानपुर

40.वात्सायन, 'कामसूत्र', पंचम अध्याय, epustkalay.com

41.लिंगानुशासन, (शब्दों के लिंग ज्ञान करने का शास्त्र) संस्कृत भाषा...htm

42.रामचरितमानस, 'अयोध्याकाण्ड' 398/4 गीता प्रेस गोरखपुर

43.तुलसीदास, 'रामचरितमानस, 'उत्तरकांड', आठवा विश्राम (सप्तसोपान) वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

44.महाभारत-भीष्मपर्व (79 वाँ सर्ग) श्लोक-29

45.शरद सिंह, 'थर्ड जेंडर विमर्श और प्रमुख हिंदीयेत्तर कृतियां, (2019) सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

46.हजारीप्रसाद द्विवेदी, 'ग्रंथावली भाग-10', 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है', (2007) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

47.सं.विजेंद्र प्रताप सिंह, रवि कुमार गौंड, ‘विमर्श का तीसरा पक्ष’, डॉ.चंदेश्वर, सिनेमा और साहित्य में हिजड़े: एक समीक्षा’ (2016) अनंग प्रकाशन, दिल्ली

48.पारू मदननाईक, ‘मैं क्यों नहीं’, (2012) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

49 गीतिका वेदिका, ‘अधूरी देह’, (2016) क्वालिटी बुक्स प्रकाशन, कानपुर

50.डॉ. इकरार एहमद, ‘साहित्य के आईने में थर्डजेंडर’, (2017) विकास प्रकाशन, कानपुर

51.राजकुमार, ‘थर्ड जेंडर का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन’, (2018) विकास प्रकाशन, कानपुर

3.पत्र-पत्रिकाएँ-

1.प्रेमचंद, ‘हंस’, अप्रैल-1930

2.ओमप्रकाश ग्रेवाल, ‘नयापथ’, जुलाई 1997,

3.हस्ताक्षर, अंक-51 सं.के.पी. अनमोल सांचौर,

4. सं.महेश भारद्वाज, ‘सरस्वती’, अप्रैल-सित.(2018)

5. प्रांजल धार, ‘तीसरी ताली वर्जित दुनिया के तीखे रंग’, लमही, अप्रैल-जून (2011)

7. सं.सूरज बडत्या अंक-53 युद्धरत आम आदमी, (जन.-2018) नई दिल्ली

8. सं. डॉ.शगुप्ता नियाज, ‘अनुसन्धान’, अक्तूबर-दिसम्बर (2017) अलीगढ़

8.सूरज पालीवाल, ‘सघन अनुभूतियों में रचा-बसा सजग तृतीय लिंगी समाज’, पहल-107

9.सं. डॉ. फिरोज खान, ‘वांग्मय पत्रिका’, थर्डजेंडर की कहानियाँ,

10. सं. डॉ. फिरोज खान, ‘वांग्मय पत्रिका’, थर्डजेंडर की कहानियाँ, भाग-2

11. सबलोग-जुलाई (2019) अंक-7 दिल्ली

(सब-लोग, अनुसंधान, सरस्वती, वांग्मय पत्रिकाओं के विशेषांक सम्मिलित किये गये है।)

4.समाचार पत्र-

1.अनुज शुक्ल, 'वर्जनाओं के टूटते दस्तावेज', दैनिक भास्कर, 20 मार्च 2011

2.जयपाल सिंह, 'उपन्यास के नए प्रस्थानों में उत्तर समय', इण्डिया टुडे, (पुस्तक समीक्षा) फरवरी-2011
3.अल्पना सिंह, 'विमर्श तीसरी सत्ता का संघर्ष', जनसत्ता (सित. 2017)
4.ममता कालिया, 'नवभारत टाइम्स' (सित. 2016)
5.चित्रा मुद्गल, 'सत्याग्रह समाचार-पत्र साक्षात्कार', (31जनवरी 2016)

5.कोश-

1. philip lawrance harina, 'the new dictionary of psychology', p.303
2.कोशलेन्द्र, 'तृतीयपंथी यानि किन्नरों की शिक्षा', हिंदी गद्यकोश से-
3.'ऑक्सफोर्ड एडवांस लीनर्स डिक्शनरी', सेवेंथ एडिसन-

6. वेब से-

Sociology- all blogspots.com.com, 2009- home page (maxweber-theory of social and economic)
https://www.kailasheducation.com/2020/04/samajshastra-arth-paribhasha-visheshtaye.html
https://www.rsedublog.in/meaning-and-definition-of-sociology/
https://wwwnformise.com/auguste-comte-father-of-sociology-full-description-in-hindi/
https://www.sociologyguide.com/thinkers/Karl-Marx.php
https://en.wikipedia.org/wiki/Social_fact
https://www.hindisamay.com/contentDetail.aspx?id=2442&pageno=1
विकिपीडिया से-
https://www.collinsdictionary.com/dictionary/english/hijra
Elglish-hindi dictinary वेब से-
https://educalingo.com/hi/dic-hi/hijara
https://shabdkosh.raftaar.in/Meaning-
https://dict.hinkhoj.com/meaning-in-english.words
http://www.maxgyan.com/hindi

https://www.genderspectrum.org/the-language-of-gender/
डैंजी ब्रोंक्स, फेमिलियर वेजल, विकिपीडिया से-
www.bbc.com
www.bbc.com
नीरजा माधव, डॉ. एम. फिरोज खान से बातचीत, साहित्यपीडिया हिंदी-
https://hindi.news18.com/news/nation/nirmala-bhuradia-book-release-369871.html

https://hindi.news18.com/news/nation/nirmala-bhuradia-book-release-369871.html
https://www.bbc.com/hindi/india-48488118
पंजाब स्क्रीन INDIA, 'मानवाधिकार में कहीं खो सी जाती है तीसरे लिंग की आवाज',. htm से-
http://sarhadepatrika.com/article/kiran-grovar-35-46.pdf
https://aajtak.intoday.in/education/story/nelson-mandela-quotes-in-hindi-1-878501.html
.https://www.gaonconnection.com/desh/why-the-kinnars-had-to-make-their-own-separate-akhara-43622
Hindi.mapsofiindia.com
https://www.aplustopper.com/bhasha-ki-paribhasha/
नितिन कलाल, 'किन्नर' वेब से-
कृष्णमोहन झा, 'हिजड़ा-2' कविताकोश से-
अंग्रेजी शब्दकोश, विकिपीडिया

(क)विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा जारी शोध-प्रबंध के दिशा-निर्देशों के अनुसरण में दो आलेख और दो शोध-पत्र प्रमाण-पत्र के रूप में सलग्न हैं।

1. किन्नर समुदाय: सम्मान की दरकार, हस्ताक्षर पत्रिका, सांचौर, संपादक-के पी अनमोल, अंक-44 अक्टूबर-2017 (ISSN 2454-5684)
2. थर्ड जेंडर कानून के दायरे में: वैधानिक प्रावधान, दृष्टिकोण पत्रिका, मार्च-अप्रेल 2020 (ISSN 0975-119X) संपादक-डॉ. अश्विनी महाजन अंक-2

(ख) सेमीनार में प्रस्तुत शोध-पत्र के प्रमाण पत्र

ISSN 2454-6984

प्रज्ञा प्रकाशन, सांचोर द्वारा प्रकाशित

हस्ताक्षर
उत्कृष्ट साहित्य का मासिक दस्तावेज

अक्तूबर
2017
अंक -44

प्रधान संपादक : के.पी. 'अनमोल'
संस्थापक एवं संपादक: प्रीति 'अज्ञात'
तकनीकी संपादक : मोहम्मद इमरान खान

आलेख

किन्नर समाजः सम्मान की दरकार- वंदना शर्मा

'किन्नर' नाम सुनते ही एक लज्जा का भाव हमारे दिमाग में आ जाता है। लेखन तो दूर, नाम लेने मात्र से भी लोग कतराते हैं। शायद आपने भी यह भाव कभी महसूस किया हो! 'किन्नर' शब्द सुनते ही हमारे मस्तिष्क में एक मनोग्रंथि बन जाती है और हम शर्म महसूस करने लगते हैं। 'किन्नर' शब्द को मैंने इसीलिए विशेष जोर देकर कहा ताकि आपका ध्यान आकर्षित हो सके और आप इस शब्द के परे जाकर इनके लिए सोचने और समझने की दृष्टि उत्पन्न कर सकें। किन्नर समाज, जिसके साथ बिल्कुल उपेक्षित-सा व्यवहार किया जाता है; उपहास उड़ाया जाता है, उसको आज सम्मान की दरकार है। वे आम आदमी की तरह जीने का अधिकार रखते हैं। आज उनकी व्यथा-कथा, समस्याएँ, उपेक्षा और तकलीफ से हमारे समाज को रू-ब-रू होने की आवश्यकता है। उनको भी समाज की मुख्य धारा, मुख्य समाज में रहने, जीने का अधिकार है। आज साहित्य उनकी पीड़ा की अभिव्यक्ति के लिए तरस रहा है, किंतु उसको उचित अभिव्यक्ति नहीं मिल पा रही है। किन्नर समाज को लेकर अभी तक कम ही लेखन हुआ है लेकिन जितना भी हुआ है, उसने साहित्य के प्रति हमारे दृष्टिकोण में खासा परिवर्तन किया है।

सामाजिक पूर्वाग्रह से युक्त हमारा तथा-कथित सभ्य समाज इस प्रजाति को हेय और घृणित दृष्टि से देखता है। ऐसे कई अवसर आते हैं, जब उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रखा जाता है। चाहे विद्यालय हो, प्रशिक्षण संस्थान हो या फिर नौकरी देने की बात हो, उनके साथ उपेक्षित व्यवहार किया जाता है। हमारे गरिमामय भारतीय संविधान में इस बात का साफ-साफ उल्लेख है कि जाति, धर्म, लिंग के आधार पर नागरिकों के साथ भेदभाव नहीं किया जाएगा। लेकिन फिर भी इन लोगों के साथ यह भेदभाव क्यों किया जाता है।

लैंगिक दृष्टि से विवादित समाज के जो लोग प्राय: 'हिजड़े' कहकर बुलाये जाते हैं, वे जीवन जीने की कशमकश और ऊहापोह के बीच दर्दनाक जीवन गुजारने पर विवश हो जाते हैं। इनको समाज द्वारा परित्यक्त हिस्सा माना जाता है और उपहास किया जाता है जबकि उनके इस प्रकार जन्म लेने में उनका कदाचित दोष नहीं होता है। हिंदी कथा-साहित्य में इन पर अधिक मात्रा में लेखन कार्य नहीं हुआ है लेकिन जितना भी हुआ है उन सभी से इनको सम्मान की दरकार रही है। यह लोग भी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं, अधिकारों और आम आदमी की तरह जीवन यापन करने की आकांक्षा रखते हैं। इनके आजीवन संघर्षरत रहने की व्यथा-कथा चित्रण करने वाले कुछ महत्त्वपूर्ण उपन्यासों की चर्चा मैं यहाँ करना चाहूँगी, जिनके माध्यम से लेखकों ने जो विषय अब तक शर्म का विषय समझा जाता था उसको प्रकाश में

रचनाकार परिचय

वंदना शर्मा

पत्रिका में आपका योगदान . . .
आलेख/विमर्श (1)
आलेख

लाने का साहसिक कदम उठाया। इसी क्रम में महेंद्र भीष्म द्वारा लिखित 'किन्नर कथा', नीरजा माधव का 'यमदीप' प्रदीप सौरभ का 'तीसरी ताली' निर्मला भुराड़िया का 'गुलाम मंडी' चित्रा मुद्गल का 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' का नाम लिया जा सकता है।

इसी कड़ी में 'किन्नर कथा' किन्नर समाज की पीड़ा की पैरवी में लिखा गया उपन्यास प्रबुद्ध पाठक वर्ग का ध्यान आकर्षित करता है और किन्नरों को अपने सम्मान और अधिकारों के प्रति जागरूक करता है। इसमें समाज, परम्परा और खोखले मूल्यों पर एक साथ चोट करते हुए नवीन जीवन मूल्यों को अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। 'किन्नर कथा' के माध्यम से किन्नरों की आह और वेदना की उपस्थिति दर्ज की गई है, जो अपने ही परिवार और समाज से निरंतर दुखों की पीड़ा झेलते रहते हैं। मानव समाज अपने चरम विकास के युग में प्रवेश करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा है किंतु समाज का यह वर्ग अभी भी इस मुख्य धारा से जुड़ नहीं पा रहा है, इसके मूल में अनेक कारण विद्यमान हैं किंतु मूल कारण है जन सामान्य की इस वर्ग के प्रति हेय मानसिक अवधारणा। इस उपन्यास में राजघराने में जन्मी चंदा की कहानी है, जिसके किन्नर होने का पता चलने पर अपने ही पिता के द्वारा मरवाने का प्रयास किया जाता है। "उसके खानदान की साख को बट्टा न लगे, वंश में हिजड़ा बच्चा पैदा होने के कलंक से बच जाए। कुल की मर्यादा सुरक्षित रहे, वह सौंप दे अपनी बेटी को मृत्यु का ग्रास बनने के लिए।" उपन्यास के कथानक में अधूरी देह की पीड़ा, सामाजिक उपेक्षा, पारम्परिक एवं पारस्परिक संघर्ष, अवसाद एवं विद्रोह जैसे नकारात्मक भावों को दर्शाते हुए लेखक ने किन्नर समाज की कारुणिक कथा को अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। शारीरिक रूप से यदि कोई विकलांग हो तो उसको इतना दंश नहीं झेलना पड़ता, जितना यौनिक रूप से विकलांग व्यक्ति को। इससे वह मानसिक और शारीरिक दोनों ही रूपों में हीन ग्रंथि का शिकार हो जाता है। इसमें किन्नरों की अनदेखी, अनसुनी पीड़ा को खुलकर अभिव्यक्ति दी गयी है।

हम इक्कीसवीं सदी के मशीनी युग में जी रहे हैं फिर भी अपनी परम्परागत धारणाओं और मान्यताओं से अपना पीछा नहीं छुड़ा पा रहे हैं। आज किन्नर समाज की अत्यंत दयनीय स्थिति के पीछे हाथ हमारे समाज का ही है, जो उन्हें चैन और सम्मान से जीने भी नहीं देता। समाज की वैचारिक मानसिकता किन्नरों के उत्थान कार्य के बारे में सोचने से भी हिचकिचाती है, नीरजा माधव ने 'यमदीप' में किन्नरों की सामाजिक स्थिति का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है, साथ ही इन्हें समाज की मुख्यधारा में बुनियादी हक देने का मुख्य रूप से प्रयास उपन्यास में किया गया है। किन्नर को सामाजिक, शारीरिक और मानसिक भेदभाव और शोषण से गुजरना पड़ता है। इस संवेदनशीलता की स्थिति ने इनकी स्थिति में और भी अधिक गिरावट उत्पन्न कर दी है। अपनी सामाजिक दृष्टि की सम्पन्नता और जागरूकता के बल पर ही लेखिका ने किन्नरों की यथार्थ स्थिति से पर्दा उठाया है। सामान्य आम आदमी को किन्नरों की तकलीफ से कोई लेना-देना नहीं है। उनका दिल किस प्रकार धड़कता है, कैसी भावनाओं की आकांक्षा करता है, इससे उन्हें कोई सरोकार नहीं है क्योंकि वह खुद सामान्य है और किन्नर असामान्य। किन्नर समाज अपनी जैविक असमानता को झेलता है, यदि माता-पिता ऐसी संतान को स्वीकार करना भी चाहें तो इसे हमारा समाज स्वीकार नहीं करने देता, यही सवाल 'यमदीप' में उठाया गया है। नंदरानी के माता-पिता उसे अपने पास रखना चाहते हैं, नंदरानी की माता उसे पढ़ा-लिखाकर अपने पैरों पर खड़ा करना चाहती है। नंदरानी की माँ के सामने महताब गुरु सवाल उठाते हैं कि "माता किसी स्कूल में आज तक हिजड़े को पढ़ते लिखते देखा है? किसी कुर्सी पर हिजड़ा बैठा है? मास्टरी में, पुलिस में, कलेक्टरी में– किसी में भी, अरे! इसकी

दुनिया यही है माता भी कोई आगे नहीं आयेगा कि हिजड़ों को पढ़ाओ, लिखाओ, नौकरी दो जैसे कुछ जातियों के लिए सरकार कर रही है।"

ऐसे संवाद शायद किन्नरों के यथार्थ जीवन पर प्रकाश डाल रहे हैं। उपन्यास में कहीं-कहीं किन्नरों से डर संबंधी संवादों को भी उभारा गया है। सार्वजनिक स्थलों पर लोग इनसे बात करने और साथ खड़े रहने से भी कतराते हैं। इन सभी मार्मिक प्रसंगों का चित्रण उपन्यास में खुलकर हुआ है, जिससे किन्नर समाज की वास्तविक पीड़ा से हम रू-ब-रू हो सकते हैं।

किन्नरों की पीड़ा की कुशल अभिव्यक्ति की अगली कड़ी में 'गुलाम मंडी' आता है। निर्मला भुराड़िया का यह बहुचर्चित उपन्यास किन्नर विमर्श में अपनी महती भूमिका अदा करता है। जटिल विषय को अपने लेखन का केंद्र बनाने वाली निर्मला जी गहनतम संवेदना के स्तर पर गुलामी के दंश को कुशलता से अभिव्यक्त कर पायी हैं। आज के तिरस्कृत वर्ग किन्नरों की समस्या और मानव तस्करी का भयावह चेहरा उपन्यास में दिखाया गया है। एक ज्वलंत समस्या पर लेखन का प्रयास गुलाम मंडी में किया गया है, उस सच को बड़ी बारीकी से उघाड़ने का प्रयास किया गया है, जिसे बार-बार दबाने की कोशिश की जाती है। लेखिका अपने अनुभवों को उपन्यास में अभिव्यक्त करती हैं यथा- "प्रोजेक्ट आधारित उपन्यासों से एकदम अलग यह उपन्यास रचनाकार के मूल सरोकारों से सीधा जुड़ा हुआ है, जो पूरी संजीदगी से एक इंसान को इंसान मानने की वकालत करता है...फिर चाहे वह एक मजदूर स्त्री हो या समाज का तिरस्कार झेलने को मजबूर किन्नर।" उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया, उन्हें हिजड़ा, किन्नर, खुसरा आदि कई नामों से पुकारा जाता है मगर अपमान के साथ। लेखिका एक स्थान पर उल्लेख करती हैं कि "बचपन से देखती आयी हूँ उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को, जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। इसमें इनका क्या दोष? ये क्यों हमेशा त्यागे गए, दुरदुराए गए, सताए गए और अपमान के भागी बने। इन्हें कई नामों से पुकारा गया मगर तिरस्कार के साथ ही क्यों? आखिर ये बाकि इंसानों की तरह मानवीय गरिमा के हकदार क्यों नहीं?" इसमें किन्नरों के जीवन की त्रासदी और सामाजिक उपेक्षा के दर्द को बहुत ही मार्मिकता के साथ उभारा गया है।

अगला उपन्यास प्रदीप सौरभ का 'तीसरी ताली' है। वे उस तीसरी ताली की बात करते हैं, जिसे समाज में मान्यता नहीं मिली है। इस समाज में जिसे हम समाज का हिस्सा नहीं मानते, उनकी अपनी समस्याएँ हैं। जेंडर के अकेलेपन और जेंडर के अलगाव के बावजूद समाज में जीने की ललक से भरपूर दुनिया का परिचय करवाता है यह उपन्यास। इसमें ऐसे तमाम सच उभरकर सामने आये हैं, जीवन के ऐसे महत्वपूर्ण सच, जिन्हें हम माने या न माने लेकिन उनका अपना वजूद है। यह उपन्यास प्रदीप सौरभ के साहसी लेखन की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है। यह कहानी है गौतम साहब और आनंदी आंटी की, जिनके बच्चा होने पर आये किन्नरों को दरवाजा नहीं खोलते हैं इस डर से कि कहीं वे उनके बच्चे को उठाकर न ले जाएँ। बच्चा होने पर खुशी के स्थान पर शोक मनाया जाता है। ऐसे बच्चे के पैदा होने का केवल अंत आत्महत्या के रूप में परिणिति, किन्नर जीवन का एक और सच उपन्यास के माध्यम से हमारे सामने आता है। आर्थिक विषमता के चलते किन्नरों के कार्यकलापों पर भी लेखक ने प्रकाश डाला है, जिसमें उनको भीख तक मांगनी पड़ती है यथा- "मैं मर्द रहूँ, औरत रहूँ या फिर हिजड़ा बन जाऊं, इससे किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता, पेट की आग तो न जाने बड़े-बड़ों को क्या-क्या बना देती है।" यहाँ किन्नर समाज की उस सच्चाई को सामने रखने का प्रयास किया गया है, जिसे

दुनिया से छिपाकर रखा जाता है। उभयलिंगी वंचित समाज के तहखाने में झाँकने का लेखक ने भरपूर प्रयास किया है। यह उस दुनिया की कहानी है, जिसे न तो जीने का अधिकार और न ही सभ्य समाज में रहने का।

अभी हाल ही में चित्रा मुद्गल का उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा' प्रकाशित हुआ है। इसमें लेखिका ने किन्नर समाज की दर्दनाक पीड़ा को अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। यह उपन्यास किन्नर समाज की दशा और दिशा से हमारा परिचय कराने में अपनी महती भूमिका अदा करता है। उनकी जिन्दगी का हर पाठ यातना, क्रूरता और फिर उपेक्षा का पाठ है। जेंडर के अकेलेपन और समाज में सम्मान से जीने की ललक से भरपूर दुनिया के मार्मिक पहलू को लेखिका ने यहाँ उजागर किया है। किन्नरों के दुःख-दर्द को बयान करता यह उपन्यास स्त्री-विमर्श के बासी, उबाऊ, अर्थहीन दम तोड़ते मुद्दों से कहीं दूर जाकर लिखा गया है। इसके संदर्भ में ममता कालिया 'नवभारत टाइम्स' में लिखती हैं कि "नाला सोपारा नितांत नई कथावस्तु प्रस्तुत करने वाला, नये शिल्प का उपन्यास है जिसमें लिंगभेदी समाज की समस्या को अत्यंत मानवीय दृष्टि से उठाया गया है।" विनोद उर्फ बिन्नी नामक पात्र को किन्नर होने का वीभत्स दंश झेलते हुए दिखाया गया है। जब अन्य हिजड़ों को उसके किन्नर होने का पता चलता है तो वे सब उसे लेने आ जाते हैं लेकिन तभी उसे उनसे उसके छोटे भाई को दिखाकर बचाया जाता है लेकिन बाद में उसकी पहचान मिटा दी जाती है। इस प्रकार का मुश्किल कथानक किन्नर समाज पर गहरी दृष्टि डालने पर मजबूर करता है, साथ ही हमें सोचने और समझने पर भी विवश करता है कि कैसे इस समाज का विकास किया जाये।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हमारे समाज के एक अभिन्न अंग किन्नर समुदाय पर लिखे गए ये उपन्यास कहीं न कहीं हमारे समाज को किन्नरों की पीड़ा, दुःख-दर्द, जीवन जीने की विभीषिका और भयंकर त्रासद स्थिति से अवगत कराना चाहते हैं। किन्नरकथा, यमदीप, तीसरी ताली, गुलाम मंडी, पोस्ट बॉक्स नं 203 नाला सोपारा इन उपन्यासों में एक किन्नर होने का दर्द क्या होता है? उस नारकीय जीवन में व्याप्त घृणा, अपमान, घुटन और इससे बाहर निकलने की बेचैनी क्या होती है? इसका सफल चित्रण किया गया है। इन सबसे मुक्ति की कामना करता यह समाज आज अपने सम्मान और अधिकारों की माँग के लिए अपनी झोली फैलाए खड़ा है जिसे हमारे समर्थन की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में और भी उपन्यासों के आने की दरकार हमें है जिससे किन्नरों के वास्तविक जीवन को हम पहचान पाएँ, ताकि उनके दुःख-दर्द, उनकी पीड़ा को समझकर हम उनके अधिकारों तथा सम्मान हेतु समुचित प्रयास कर सकें। यही इस आलेख का उद्देश्य भी है।

संदर्भ-

1.महेंद्र भीष्म, 'किन्नर कथा' सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, (2011) पृ.31
2.नीरजा माधव, 'यमदीप' सुनील साहित्य सदन प्रकाशन, नई दिल्ली, (2009) पृ.16
3.निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी' सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली (2016) फ्लैप पेज से
4.निर्मला भुराड़िया, 'गुलाम मंडी' सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली (2016) पृ.57

5.प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली' वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,(2011) पृ.5
6.ममता कालिया, नवभारत टाइम्स, समाचार पत्र, सितम्बर (2016) नवीनता से

- वंदना शर्मा

सर्वाधिकार सुरक्षित © हस्ताक्षर
यह पत्रिका साहित्य को समर्पित पूर्णतः अव्यावसायिक उपक्रम है |इसमें प्रकाशित सभी रचनाओं के सर्वाधिकार पत्रिका के पास सुरक्षित है | बिना स्वीकृति के इसके किसी भी अंक के पुनर्प्रकाशन की अनुमति नहीं है |
Designed by Imran

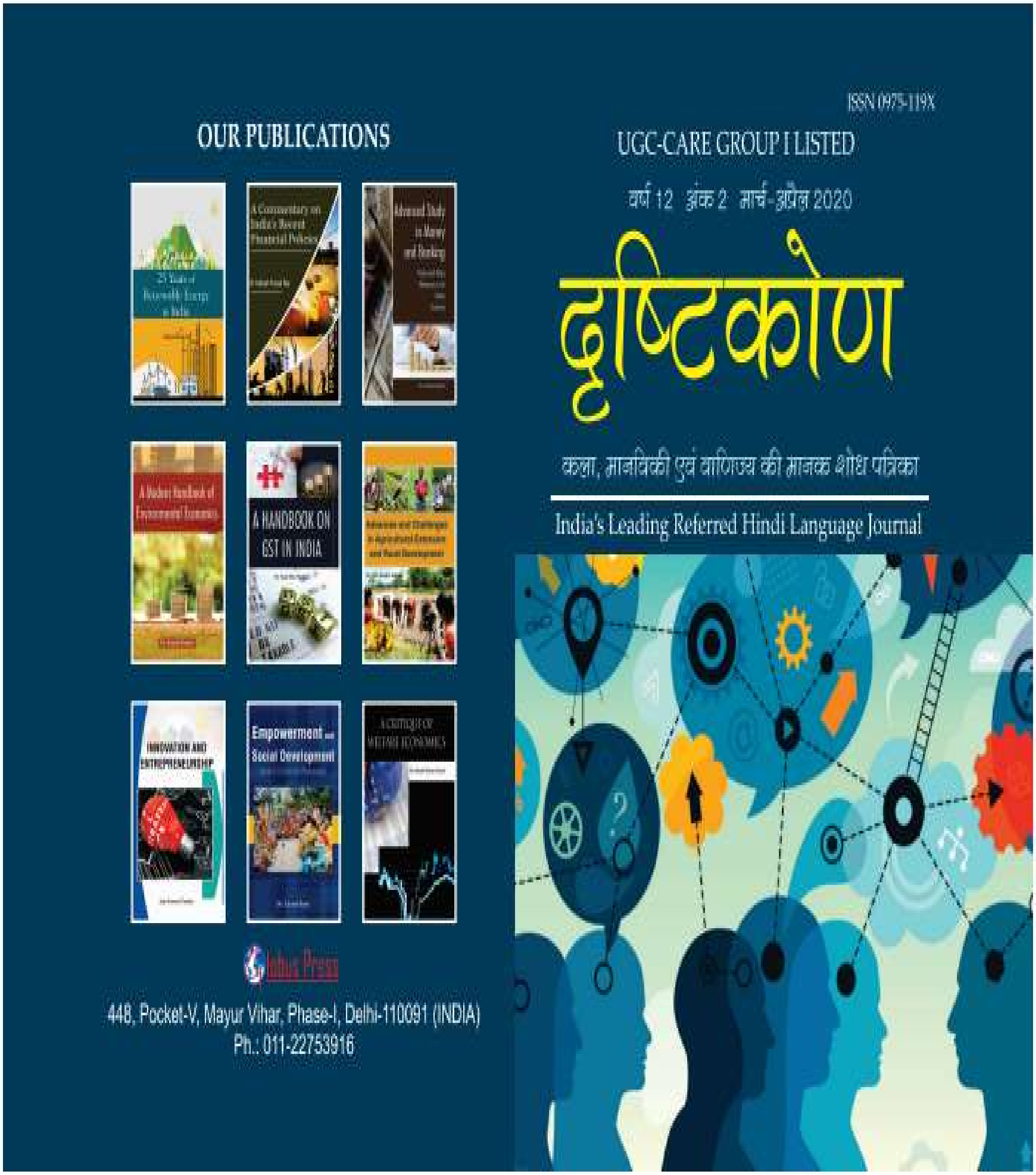
OUR PUBLICATIONS
A Commentary on India's Recent Financial Policies
A HANDBOOK ON GST IN INDIA
INNOVATION AND ENTREPRENEURSHIP
Empowerment and Social Development
Indus Press
448, Pocket-V, Mayur Vihar, Phase-I, Delhi-110091 (INDIA)
Ph.: 011-22753916
ISSN 0975-119X
UGC-CARE GROUP I LISTED
वर्ष 12 अंक 2 मार्च-अप्रैल 2020
दृष्टिकोण
कला, मानविकी एवं वाणिज्य की मानक शोध पत्रिका
India's Leading Referred Hindi Language Journal

थर्डजेंडर कानून के दायरे में (वैधानिक प्रावधान)

वंदना शर्मा

पीएच. डी. शोधार्थी- हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय, एम. ए. (स्वर्ण पदक) नेट. जे.आर.एफ, एम. फिल.

किन्नर समुदाय संबंधी वैधानिक प्रावधान

समाज को अपराधों से बचाने और असामाजिक तत्वों से दूर रखने हेतु कुछ नियम बनाये जाते है, जिनसे उनकी रक्षा की जा सकें। यदि कोई उनको नुकसान पहुंचाने की कोशिश करता है तो कानून के माध्यम से उनको बचाया जा सकें। इसी प्रकार किन्नर समुदाय के लिए भी संवैधानिक उपबंध निर्धारित किये गये है जिनसे इनके हितों की रक्षा की जा सकें। यह उपबंध वैश्विक स्तर पर अलग है और भारत में अलग है। इनके माध्यम से इनको सुरक्षा प्रदान की जाती है।

वैश्विक स्तर पर वैधानिक प्रावधान

किन्नर जीवन के उत्थान हेतु वैश्विक स्तर पर कानूनों का निर्माण किया गया। ताकि इनकी जीवन शैली और स्थिति में कुछ सुधार लाया जाए। समय-समय पर अलग-अलग देशों में इनके उत्थान हेतु कानून बनाये गए जिनके माध्यम से इनको पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की गई है। ईरान के सर्वोच्च नेता अयातुल्ला रूहल्लाह खुमैनी ने आश्वासन दिया कि फिर से सर्जरी कराने पर कोई धार्मिक प्रतिबंध नहीं है। आज ईरान सर्जरी के लिए शीर्ष गंतव्य है, लेकिन इस प्रवृति में एक अँधेरा है। कोई समलैंगिक ईरानी समलैंगिकता उत्पीड़न से बचने के लिए सर्जरी का चयन करते हैं लेकिन ईरान अभी तक वैकल्पिक लिंग को मान्यता नहीं देता है।

नेपाल का सर्वोच्च न्यायालय यह कहता है कि सरकार नागरिकता संबंधी दस्तावेजों पर एक तृतीय लिंग श्रेणी (अन्य) को स्थापित करती है।

सन् 23 दिस. 2009 को पाकिस्तान हाई कोर्ट ने पहचान पत्र जारी किया जिससे किन्नरों को अलग लिंग के रूप में पहचान मिल सकें।

15 दिसंबर 2011 आस्ट्रेलिया सरकार ने घोषणा कि की पासपोर्ट में तीसरे लिंग का विकल्प दिया जायेगा। इसके लिए मेडीकल रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि करनी पड़ेगी।

1.नवंबर 2013 को जर्मनी सरकार ने इनके हितों के लिए कानून बनाए।

फेसबुक पर भी अन्य न्यूट्रोसिस का विकल्प दिया जाता है।

भारतीय संविधान और थर्ड जेंडर

अप्रैल 2014 में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के.एस. राधाकृष्णन ने नालसा बनाम भारत सरकार पर निर्णय देते हुए कहा था कि अब मानसिकता बदलने की आवश्यकता है। सार्वजनिक स्थानों पर किन्नरों का अपमान किया जाना, उनके साथ गाली-गलौच करना गलत है। साथ ही उनके साथ प्रत्येक मानवीय अधिकारों का प्रयोग होना जरूरी है। "1.भारतीय संविधान के तीन भाग तथा भारतीय संसद तथा राज्यों की विधानसभाओं में पारित नियमों के तहत तृतीय लिंगियों की सुरक्षा के लिए उन्हें अधि कार दिए जाने जरूरी है। 2.तृतीय लिंगी लोगों को यह स्वतंत्रता दी जाए, भारत सरकार तथा राज्य सरकार को निर्देशित किया जाता

है कि वे उनके चयन को कानूनी मान्यता दें।" लेकिन क्या इससे उनके जीवन स्तर में कोई बदलाव आ पाया है? उनकी स्थिति तो इसके उपरांत भी वही की वही स्थिर मालूम होती है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में केन्द्रीय कैबिनेट ने 19 जुलाई 2016 को ट्रांसजेंडर पर्सन्स (प्रोटेक्शन ऑफ राइट्स) बिल 2016 को मंजूरी दे दी। भारत सरकार की कोशिश इस बिल के जरिए एक व्यवस्था लागू करने की है, जिससे किन्नरों को भी सामाजिक जीवन, शिक्षा और आर्थिक क्षेत्र में आजादी से जीने के अधिकार मिल सकें। यह उम्मीद की जा रही है कि यह विधेयक भारतीय किन्नरों के लिए मददगार साबित होगा। हमारे देश में ऐसे लोगों को सामाजिक कलंक के रूप में देखा जाता है। इनके लिए काफी कुछ किए जाने की आवश्यकता है। यह विधेयक भी इसी दिशा में एक प्रयास है। एक ऐतिहासिक कदम के तहत केंद्र सरकार ने लोकसभा में किन्नर (ट्रांसजेंडर) समुदाय के लिए अलग पहचान और इस समुदाय के साथ लगे सभी धब्बों को दूर करने के लिए एक विधेयक पेश किया। केन्द्रीय सामाजिक न्याय मंत्री थावरचंद गहलोत ने यह विधेयक पेश किया। इससे पहले लोकसभा अध्यक्ष सुमित्रा महाजन ने रिवोल्यूशनरी सोशलिस्ट पार्टी के सदस्य एन. के. प्रेमचंद्रन के इस विधेयक को पेश करने के विरोध को खारिज कर दिया। ट्रांसजेंडर पर्सन बिल 2016 में किन्नरों को शोषण से रक्षा करने के लिए तंत्र स्थापित करने और इस समुदाय के साथ भेदभाव दूर करने और इन्हें खुद अपनी लैंगिक पहचान का अधिकार देने की कोशिश है।

अप्रैल में इस बारे में राज्यसभा में इस बिल को पारित किया था। जिसे अकस्मात द्रविड़ मुनेत्र कड़गम के सदस्य तिरुची शिवा ने एक निजी सदस्य विधेयक के रूप में उच्च सदन में पेश किया। इस फैसले से किन्नर समुदाय को थोड़ी बहुत दिलासा मिली है। यथा- "चलते-चलते उच्चतम न्यायालय का फैसला तृतीय लिंगी लोगों को दिलासा देने वाला है। उच्चतम न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसले में किन्नर समाज को नई पहचान दी है। कोर्ट ने आदेश दिया कि हर सरकारी दस्तावेज में महिला और पुरुष के साथ एक कालम थर्ड जेंडर या किन्नर का भी हो। किन्नर समाज इस फैसले से काफी उत्साहित है। इसलिए इन लोगों के लिए अच्छे दिन आ गए है।" इस विधेयक को अब सरकार ने लोकसभा में पेश किया है। इस विधेयक का मकसद किन्नर समुदाय को सशक्त बनाना और भारत में किन्नरों के खिलाफ अपराध करने वाले को कड़ी सजा देने का प्रावधान है। साल 2011 की जनगणना के मुताबिक देश में छह लाख किन्नर है। प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में हुई केन्द्रीय मंत्रिमंडल की बैठक में इस विधेयक को 20 जुलाई को ही स्वीकृति दी जा चुकी थी। आधिकारिक सूत्रों का कहना है कि नए कानून से इस समुदाय को समाज की मुख्य धारा में लाने में मदद मिलेगी।

प्रमुख प्रावधान

ट्रांसजेंडर पर्सन्स बिल 2016 को नौ अध्याओं में विभक्त किया गया है-

प्रथम अध्याय- प्रारम्भिक

द्वितीय- कतिपय कृत्यों का प्रतिषेध

तृतीय- उभयलिंगी व्यक्तियों की पहचान को मान्यता

चतुर्थ-सरकार द्वारा कल्याणकारी उपाय

पंचम- स्थापनाओं और व्यक्ति की बाध्यता

षष्ठम-उभयलिंगी व्यक्ति की शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य

सप्तम-उभयलिंगी व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय परिषद

अष्टम- अपराध और शक्तियाँ

नवम-प्रकीर्ण

आपराधिक प्रावधान

सन् 1857 में अंग्रेजी राज के समय इनको अपराधिक श्रेणी में लाकर और इनके खिलाफ कानून बनाकर इन्हें अपराधी घोषित किया गया। समय और समाज से अलग करने की पूरी कोशिश की गई।

धारा 377- आईपीसी की धारा 377 के अनुसार यदि कोई भी व्यक्ति अप्राकृतिक रूप से किसी के साथ यौन संबंध बनाता है तो उसे उम्रकैद या जुर्माने के साथ दस साल तक कि कैद हो सकती है। यह कानून लगभग 150 वर्ष पुराना है। महारानी विक्टोरिया के काल में नैतिकता का हवाला देकर बनाया गया था। इस धारा पर लंबे समय से विवाद चल रहा था। 2009 में दिल्ली हाईकोर्ट ने इसे अपराध के दायरे से हटाया। 2013 में सुप्रीम कोर्ट ने इसे दोबारा अपराध घोषित किया। 2016 में धारा 377 के खिलाफ 30 से अधिक याचिकाएं दर्ज हो गई। 2018 में सुप्रीम कोर्ट ने नोटिस भेजकर जवाब माँगा। सन् 2017 में सुप्रीम कोर्ट ने सेक्सुअलिटी को निजता का अधिकार माना।

सुप्रीम कोर्ट में इस मामले की सुनवाई तत्कालीन चीफ जस्टिस दीपक मिश्र, एवं अन्य न्यायाधीश रोहिंगटन नरीमन, जस्टिस ए. एम कविलकर, डीवाय चंद्रचूड, और जस्टिस इंदु मल्होत्रा की पीठ ने की। इस पीठ ने यह जाँच की कि क्या मौलिक अधिकार और जीवन जीने के अधिकार में यौन स्वतंत्रता भी शामिल है। तब सुनवाई के दौरान निम्न प्रकार से निष्कर्ष निकला-

सुनवाई के दौरान

अंतिम तीन दिनों की सुनवाई में सुप्रीम कोर्ट ने माना कि इस धारा को असंवैधानिक करार देकर समलैंगिकों को आजादी के साथ जीने का अधिकार दिया जायेगा। कोर्ट ने इसके लिए तर्क दिया कि वह जीवनसाथी चुनने के अधिकार को पहले ही स्वीकृति दे चुका है इसलिए यह तर्क यहाँ प्रयोग में लाया जा सकता है। उनका कहना है कि "एलजीबीटी समुदाय इसे कलंक के रूप में देखती है और ये सेक्स की आपराधिकता खत्म होने के बाद वे आजादी से एक साथ रह सकते हैं। यह कलंक इसलिए है क्योंकि उनके साथ अलग तरह से व्यवहार किया जाता है। एक बार समलैंगिकों के बीच संबंध को अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया गया तो फिर वे अपने-आपको सशक्त महसूस करेंगे।" इस बात पर कोर्ट के सामने कई याचिकाएं आयी जिनमें कहा गया कि इन पर फैसला लेने से पूर्व जनमत कराया जाए। लेकिन कोर्ट ने इस बात को मानने से इनकार कर दिया और कहा कि बहुसंख्यक नैतिकता की जगह संवैधानिक नैतिकता को तरजीह देगी और आईपीसी के सेक्शन 377 को संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 के आधार पर देखेगी।

समलैंगिक होना कोई बीमारी नहीं है इसलिए इसका इलाज नहीं किया जा सकता। यह यौन रूझान व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करता है जो उसके जीन पर आधारित होता है। इस समुदाय की शिकायत रहती है कि उन्हें स्कूल से लेकर काम करने की हर जगह काफी भेदभाव का सामना करना पड़ता है। बाल अधिकार संरक्षण आयोग, अपोस्टोलिक चर्च संघ और दो अन्य ईसाई संस्थाओं ने समलैंगिकों के बीच सेक्स को कानूनी अधिकार दिए जाने का विरोध किया है। आल इंडिया मुस्लिम पर्सनल ला बोर्ड ने इसका विरोध किया था। विश्व में लगभग 76 देश इसे अपराध की दृष्टि से देखते हैं। धार्मिक ग्रंथों कुरान, बाइबिल, अर्थशास्त्र और मनु स्मृति जैसे धार्मिक ग्रंथ भी समलैंगिकता की निंदा करते है। इसके लिए सामाजिक नैतिकता की स्वीकृति मिलना भी आवश्यक था। केंद्र सरकार ने इस प्रक्रिया की खास जिम्मेदारी नहीं ली और कई बीमारियों का हवाला दिया गया यथा- "अगर समलैंगिकता को इजाजत दी गई तो एड्स और ष्ट जैसी बीमारियां बढ़ने के साथ-साथ लोगों को मेंटल डिसऑर्डर का भी सामना करना पड़ेगा, समलैंगिकता समाज की नैतिकता को चोट पहुंचाएगी और इससे बड़े स्तर पर स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएँ सामने आ सकती है। समलैंगिक संबंधों का जैविक उद्देश्य कुछ नहीं है क्योंकि वे बच्चे को जन्म नहीं दे सकते। अगर सभी समलैंगिक होते तो अब तक इंसानों की नस्ल खत्म हो गई होती। ये बहुत खतरनाक है और तमाम सामाजिक विकृतियों से जुड़ी हुई, यह एक भद्दी और पूरी तरह से गलत चीज है।" इस प्रकार का सरकार का रवैया रहा लेकिन बाद में सरकार ने सब कुछ कोर्ट के फैसले पर छोड़ दिया। कोर्ट ने इस मसले पर 6 सितंबर 2018 को फैसला सुनाते हुए इसे अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया है। लेकिन कई बार किन्नर समुदाय अपने लिए बनाए गये नियमों का विरोध करते हैं क्योंकि उनके लिए कानूनों का निर्माण तो कर दिया गया है लेकिन उन कानूनों की अनुपालना उनके अनुसार उनके हितों में नहीं की जा रही है।

एक साक्षात्कार में पूछे गए प्रश्न पर सलोनी नामक किन्नर पीड़ा इस प्रकार झलकती है- "किन्नर समाज के नियम-कानून और यहाँ का परिवेश हमें दुखी भी करता है। कई बार यहाँ से निकलने की बहुत इच्छा होती है, पर सवाल यही है कि हम यहाँ से निकलने के बाद जाएंगे कहाँ? रहेंगे कहाँ? इसलिए मन मारकर चाहे सुखी हो या दुखी, हम इस परिवेश में रहने के लिए मजबूर हैं।" इस प्रकार से वे नियमों का विरोध करते हैं, जो उनकी दृष्टि में उनके लिए किसी काम नहीं आते। इस प्रकार से न्यायालय के निर्णय को लेकर सहइज समुदाय में पूरी तरह से उत्साह भर गया है, उनको अब लगने लग गया कि उनके अधिकारों की रक्षा

हो पायेंगी, जो भी अपनी आजादी के साथ अपने जीवन साथी का चुनाव कर सकते हैं। कहीं भी रह सकते है। इन्हें भी निजता के अधिकार में शामिल कर लिया गया है।

इस प्रकार से स्पष्ट है कि किन्नरों हेतु विविध स्तरों पर कानूनों का निर्माण किया गया है। इन कानूनों के माध्यम से उनके जीवन स्तर में सुधार की आशा की गई है। यह वैधानिक प्रावधान भारतीय और अंतराष्ट्रीय स्तर पर बनाए गये। अलग-अलग देशों में अलग-अलग समय पर किन्नर समुदाय के हितों के लिए कानूनों का निर्माण किया गया। भारत, नेपाल, पाकिस्तान, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी आदि देशों में इनके उत्थान हेतु कानूनों का निर्माण किया गया।

संदर्भ

1. सूरज पालीवाल, सघन अनुभूतियों में रचा-बसा सजग तृतीय लिंगी समाज पहल-107 पृ.सं.224
2. डॉ. राधिका के.एन., तृतीय लिंगी की समस्याएं, पुद्धरत आम आदमी, सं.सूरज बड़त्या-53 (जन-2018) नई दिल्ली पृ.82
3. www-bbc-com
4. www-bbc-com
5. मोहम्मद हुसैन डायर, 'किन्नरों का सामूहिक साक्षात्कार', सरस्वती, अप्रैल-सित. 2018 सं.महेश भारद्वाज, पृ.सं.23

'ज्ञान, विज्ञान आणि सुसंस्कार यांसाठी शिक्षणप्रसार'
-शिक्षणमहर्षी डॉ. बापूजी साळुंखे

श्री स्वामी विवेकानंद शिक्षण संस्था, कोल्हापुर संचालित

विवेकानंद कॉलेज, कोल्हापुर

Reaccredited by NAAC wih "A" Grade
College with Potential for Excellence by U.G.C.
'Star College' by D.B.T., New Delhi, NIRF Ranking - 58th in India

हिंदी विभाग एवं
शिवाजी विद्यापीठ हिंदी प्राध्यापक परिषद के संयुक्त तत्त्वावधान में परिषद का तृतीय अधिवेशन तथा राष्ट्रीय संगोष्ठी

21 वीं सदी के हिंदी साहित्य में नव विमर्श : विविध आयाम

शनिवार दिनांक 9 सितंबर, 2017

प्रमाणपत्र

श्री./श्रीमती/डॉ./प्रा. वंदना शर्मा

~~हैदराबाद~~ हैदराबाद विश्वविद्यालय हैदराबाद से एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में बीजभाषक/अध्यक्ष/विषयतज्ञ/आलेख प्रस्तोता (विषय: किन्नर समाज: सम्मान की दरकार) प्रतिभागी /संयोजन समिति सदस्य के रूप में उपस्थित रहकर संगोष्ठी को सफल बनाया ।

डॉ. आर. जी. देसाई	डॉ. एस. बी. बनसोडे	डॉ. आरिफ महात	प्राचार्य डॉ. एस. वाय. होनगेकर
अध्यक्ष शिवाजी विद्यापीठ हिंदी प्राध्यापक परिषद	सचिव शिवाजी विद्यापीठ हिंदी प्राध्यापक परिषद	समन्वयक, अध्यक्ष, हिंदी विभाग विवेकानंद कॉलेज, कोल्हापुर	प्राचार्य, विवेकानंद कॉलेज, कोल्हापुर

अंग्रेज़ी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय

हैदराबाद - ५०० ००७, भारत

हिन्दी विभाग

(साहित्यिक अध्ययन संकाय)

दो-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी

10-11 अक्तूबर, 2018

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री / श्री / श्रीमती / डॉ. / प्रो. ......वंदना शर्मा...... ने दिनांक 10-11 अक्तूबर, 2018 को 'इक्कीसवीं सदी का हिन्दी साहित्य एवं विमर्श के विविध आयाम' विषय पर आयोजित दो-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रमुख अतिथि/सत्राध्यक्ष/आलेख-प्रस्तोता/सत्र-संचालक/ प्रतिभागी के रूप में भाग लिया।

संगोष्ठी निदेशक एवं संयोजक
डॉ. श्यामराव राठोड़

संकाय अध्यक्ष
प्रो. टी. सेमसन

AS PER THE UNIVERSITY POLICY, ANTI-PLAGIARISM SCREENING IS NOT REQUIRED FOR THE REGIONAL LANGUAGES

Librarian
Indira Gandhi Memorial Library
UNIVERSITY OF HYDERABAD
Central University P.O.
HYDERABAD-500 046.